अनुक्रमणिका/Index

01. अनुक्रमणिका /Index 01

02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल/सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 06/07

03. निर्णायक मण्डल 08

04. प्रवक्ता साथी 10/11

(Science / विज्ञान)

05. Synthesis and Biological Evaluation of p-Ehyl Malon Anilic Acid Hydrazones 12
(Malti Dubey (Rawat))

06. A Review- Remediation of soil with special reference to phytoremediation (Dr. Bindu Gandhi) ... 15

(Home Science / गृह विज्ञान)

07. The Footprint Of Social Media On Online Shopping Consumer's Outlook In Jabalpur City 19
(Saumya Mishra, Dr. Mamta Sharma, Dr. Abha Tiwari)

08. Effects Of Coarse Grains On Blood Pressure And Haemoglobin Level Of Type II 24
Diabetic Patients Of Urban Area Of Bhopal (M.P.) (Neetu Pal, Dr. Meenal Phadnis)

09. A Study on Role of Education in Women Empowerment (Rashmi Kandare) 27

10. स्तनपान का महत्त्व (डॉ. मीनल फड़नीस, नेहा श्रीवास्तव) 29

11. कानपुर शहर के विद्यालयों में संचालित मध्यान्ह भोजन व्यवस्था (पूनम रानी, कंचन दुबे, डॉ. मंजू दुबे) 33

12. इंदौर शहर की कामकाजी महिलाओं में व्यावसायिक तनाव एंव चिंता का अध्ययन, उनके परिवार के प्रकार 35
के संदर्भ में (डॉ.छाया हार्डिया, महेन्द्रप्रताप लोखण्डे)

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

13. Problems And Prospects Of Women Entrepreneurship (A Study On Bhopal District) 38
(Dr. Anu Mehta)

14. A Study On Services Provided By Anganwadi Centres And Its Impact On Social 41
Empowerment Of Beneficiaries (With Special Reference To Indore City)(Shraddha Tambe)

15. Effect and Importance of Cashless Transaction in India(Dr. Vishal Purohit) 45

16. The Effects Of Globalization On Women In Developing Nations (Dr. Rajesh Jain) 48

17. Business Ethics And Impact On Society (Roshni Siddiqui, Rupesh Dwivedi) 51

18. उपभोक्ता संरक्षण की दिशा में प्राप्त अधिकारों का अध्ययन (वीरेन्द्र सिंह ठाकुर) 53

19. धार जिले कि महिला उद्यमियों को लघु ऋण में बैंक का क्या योगदान एवं आर्थिक विश्लेषण 56
(डॉ. महेश गुप्ता, सन्तोष कटारे)

20. बड़वानी जिले में इंदिरा आवास योजना का लागत लाभ विश्लेषण (डॉ. पुरूषोत्तम गौतम, डॉ. परमजीत सिंह सलुजा) .. 59

21. शासकीय महिला औद्योगिक प्रशिक्षण संस्था नन्दानगर इन्दौर म.प्र. का स्वरोजगार एवं रोजगार में योगदान 62
(डॉ. आभा सिंह, दीपक जैन)

22. उमरिया जिले के झुग्गी झोपडी में निवासरत बच्चों में कुपोषण का आर्थिक सर्वेक्षण (डॉ. राजू रैदास, डॉ. हर्षा चचाने) ... 65

23. खरगोन जिले में संचालित जीनिंग फैक्ट्रीज में कार्यरत् महिला श्रमिकों का उनके परिवारों में आर्थिक योगदान 68
(डॉ. संध्या आमगा)

24. मध्यप्रदेश में पारेषण–वितरण हानियों का विद्युत दर पर प्रभाव (डॉ. अनूप कुमार व्यास, सुरभि ढिंगरा) 71

25. छिन्दवाडा जिले की जनजातियों के विकास में विभिन्न योजनाओं एवं समितियों की भूमिका (डॉ. सुरेखा तेलकर) 74

26. भारतीय जीवन बीमा निगम के विपणन प्रबन्ध में विक्रय नियोजन (डॉ. मनीषा ग्रेवाल) 76

27. मध्य प्रदेश के बीड़ी उद्योग श्रमिकों की श्रम कल्याण योजनाओं का आर्थिक आलोचनात्मक अध्ययन 79
(इन्दौर जिले के संदर्भ में)(डॉ. विजय ग्रेवाल)

28. पश्चिम निमाड में म.प्र. शासन द्वारा संचालित स्वरोजगार योजनाएँ (डॉ. एन.एल. गुप्ता, रणजीत सिंह रावत) 81

29. शहरों के आर्थिक विकास में स्थानीय कार्यपालिका नगर निगम की भूमिका का अध्ययन 83
(इन्दौर शहर के विशेष संदर्भ में)(वैभव शर्मा)

30. किसान क्रेडिट कार्ड योजना का मूल्यांकन (देवास जिले के संदर्भ में) (निलेश कुमार टेलर, डॉ. राकेश महाजन) 85

31. जवाहरलाल नेहरू के आर्थिक चिन्तन के विविध आयाम (डॉ. प्रवीण ओझा) 87

(Economics / अर्थशास्त्र)

32. भविष्य में विकास का पर्याय – अक्षय ऊर्जा (डॉ. खुमेशसिंह ठाकुर) 89

33. भारत में आर्थिक उदारीकरण के पश्चात राष्ट्रीयकृत बैंको द्वारा प्रदत्त वैकल्पिक सुविधाओं के प्रभाव का अध्ययन 93
(अनिता उपाध्याय)

34. पंचायती राज व्यवस्था के संदर्भ में गांधी जी का विचार दर्शन (डॉ. रूपा मिश्रा) 95

35. जनमानस का संकल्प – जल संरक्षण (डॉ. वसुधा अग्रवाल) 97

36. नाबार्ड बैंक द्वारा बैंकों को कृषि वित्त वितरण एक मूल्यांकन (वन्दना सोनी) 99

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

37. अनुसूचित जनजातियों का शैक्षिक आंकलन (धार जिले के संदर्भ में) (डॉ. मीनाक्षी पँवार) 101

38. म.प्र. के धार जिले में अनुसूचित जनजाति वर्ग का भौगोलिक एवं सांस्कृतिक स्वरूप का अध्ययन 105
(दीवानसिंह बारिया)

39. सूचना के अधिकार अधिनियम 2005 की जनजातीय क्षेत्र में उपयोगिता का अध्ययन 108
(धार जिले के विशेष सन्दर्भ में) (बल्लुसिंह मुवेल, डॉ. अनिल कुमार जैन)

40. पंचायतों में अनुसूचित जनजातीय महिला नेतृत्व एवं ग्रामीण विकास में भूमिका का अध्ययन 112
(धार जिले के विशेष सन्दर्भ में)(सीमा सस्त्या)

41. भारत–चीन संबंध एवं गहराता सामरिक संकट (डॉ. संजय कुमार यादव) 115
42. लोकतंत्र में जनप्रतिनिधियों की राजनीतिक संस्कृतियों का अध्ययन (डॉ. जितेन्द्र पाटीदार) 117
43. आदिवासी विकास की चुनौतियाँ एवं संभावनाएं (राकेश पटेल) 119
44. भारत–रूस बदलते संबंध (डॉ. संजय कुमार यादव) 121
45. आधुनिक समाज के निर्माता डॉ. भीमराव अम्बेडकर (डॉ. आनंद भारतीय) 123

(History / इतिहास)

46. History And Causes Of Global Recession (Prof. Bhavik Vora, Dr. Asgar Ali Adil) 125
47. राष्ट्रीय एकता के वाहक सरदार पटेल (डॉ. शुक्ला ओझा) 128
48. जन योद्धा खाज्या नायक का स्वतंत्रता संग्राम में योगदान (डॉ. प्रवीण मालवीया) 130

(Geography / भूगोल)

49. Residential Structure Of Bilaspur City (Dr. Kajal Moitra, Prasanta Paul) 131
50. Economic Features of Bilaspur District 135
(Dr. Kajal Moitra, Nihar Rajan Maity, Sanjit Kisku)
51. मध्यप्रदेश के उमरिया जिले की अधोसंरचना का भौगोलिक अध्ययन (भौगोलिक स्थिति,कृषि एवं 137
खनिज संसाधन के विशेष संदर्भ में) (डॉ. फरखन्दा नूरीन फिरदौसी)
52. उज्जैन जिले में जनसंख्या वृद्धि का स्थानिक–कालिक विश्लेषण (डॉ. प्रीति परमार) 140

(Sociology / समाजशास्त्र)

53. Juvenile Delinquency and Society (Dr. Jyoti Saxena) 143
54. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में समाज में महिलाओं की स्थिति (प्रो. मीना जैन, हेमा परमार) 144
55. सामाजिक आदत तथा पर्यावरण प्रदूषण (सोनकच्छ के गंजपुरा ग्राम के विशेष संदर्भ में) (डॉ. ऋचा एस. मेहता) 147
56. नारी उद्धार मानव अधिकार (डॉ. ज्योति सक्सेना) 150
57. वैश्वीकरण के दौर में महिला उद्यमिता के अवसर एवं परिणाम(डॉ. निधि माहेश्वरी) 152
58. घरेलू हिंसा और कानून (फरहत मंसूरी, डॉ. अर्चना गौर) 154
59. गर्भपात महिला अधिकार एवं कानून (डॉ. ज्योति मेहता) 156
60. महिला सशक्तिकरण एवं स्वयं सेवी संगठन (नवनीता तिवारी) 158

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

61. Technique of Narration in R K Narayan's "Annamalai" (Dr. Manisha Verma) 160

62. An Analytical Study of the Treatment of Love in Ravinder Singh's Selected Novels- "I Too Had a Love Story" and "Can Love Happen Twice?" (Dr. Digvijay Pandya, Apurva Upadhyay) 162

63. Every Man In His Humour as a classical comedy (Dr. Rashmi Nagwanshi) 164

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

64. हरिशंकर परसाई की व्यंग्य रचनाओं में यर्थाथवाद (सोनिया राठी) 165

65. मालती जोशी की कहानियों में शिल्प– वैविध्य (जगदीश चौहान, डॉ. श्रीमती मंजुला जोशी) 168

66. वैश्वीकरण और समकालीन हिन्दी कविता (सविता) 171

67. सार्वभौमिक मानव मूल्य और लोक साहित्य (डॉ. अमित शुक्ल) 175

68. बाल साहित्य की संस्कार क्षमता एवं उपादेयता (अनिता बिरला) 178

69. भाषा को प्रभावित करने वाले तत्व (डॉ. निरुपमा व्यास) 180

70. राजेन्द्र यादव के कथा साहित्य में वस्तु और शिल्प (डॉ. गीता तिवारी) 182

71. साहित्यिक शोध की प्रविधियाँ और उनका अध्ययन (अशोक बैरागी) 184

72. अमृतराय के 'धुआँ ' उपन्यास में सामाजिक चेतना (विद्या बिसेन) 186

73. पंत का प्रकृति प्रेम और उनकी काव्य यात्रा के विविध सोपान (ममता चण्डाला) 188

74. मैत्रीय पुष्पा के कथा–साहित्य में बदलते जीवन–मूल्य और नारी (डॉ. रश्मि प्रीति गुरु) 190

(Sanskrit / संस्कृत)

75. वैदिक पर्यावरण विज्ञान : आधुनिक सन्दर्भ (डॉ. चारू मिश्रा) 192

(Music / संगीत)

76. सितार वादन में गायन की बंदिशों का महत्व (डॉ.अंकित भट्ट) 194

(Drawing & Design / चित्रकला)

77. Overview of Historical collections of Bombay School (Douglas M. John) 196

78. Evolution of moving images from mainstream to Video art and further ahead (Ritesh Kumar, Prof. Himadri Ghosh) 200

79. Aesthetics sense of designing Jewellery (Dushyant Dave) 203

80. कागज के कतरन का कला संसार : चित्रकार उमा शर्मा (मोहम्मद वसीम) 206

81. भारतीय चित्रकला में नारी आकृतियों की भूमिका और सौंदर्य (डॉ. यतीन्द्र महोबे) 208

82. सांची स्तूप में अंकित नारी के वस्त्राभूषण (सोनाली टोके, डॉ. अल्पना उपाध्याय) 210

(Law/ विधि)

83. White Collar Crime - A Study (Dr. Neelesh Sharma) 212
84. Remedies against infringement of patent - A judicial approach (Lok Narayan Mishra) 215
85. Right To Water : Prospects And Possibilities - An Over View (Dr. Neelesh Sharma) 218
86. Child Labour And Law (Deeksha Dubey) 220
87. पर्यावरण संरक्षण के लिए किए गए अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास – एक अध्ययन (अमृत कौर बाबरा, डॉ. जे. के पटेल) 222

(Education / शिक्षा)

88. वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय के शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति शिक्षकों के दृष्टिकोण का अध्ययन..... 224
(प्रांजल शेखर, डॉ. अन्जनी कुमार मिश्र)
89. अन्त: पारस्परिक संबंध (डॉ. रिटा बिश्ट)..... 227
90. श्रीमद्भगवद्गीता में निहित मानव की व्यवसायात्मिका बुद्धि की वर्तमान में प्रासंगिकता का अध्ययन (लक्ष्मी चौहान)... 230
91. मानव अधिकार शिक्षा: आवश्यकता एवं विवेचन (गिरधारीलाल भालसे, शोभाराम सोलंकी)..... 232
92. अनुसंधान उपकरण : साक्षात्कार (डॉ. अनिता भदौरिया) 234

(Physical Education / शारीरिक शिक्षा)

93. A study on anxiety behavior among the Basketball Players and non Basketball Players 236
(Dr. Ramneek Jain)
94. खेल मनोविज्ञान एवं खेल नीतिशास्त्र (संजय कुमार) 239

(Others / अन्य)

95. Intellectual Property Rights and We in India (Sudhish Kumar) 242

****

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

(01) डॉ. मनीषा ठाकुर ..... फुल्टन कॉलेज, एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका
(02) श्री अशोककुमार ..... एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम
(03) प्रो. डॉ. सिलव्यू बिस्यू ..... वाईस डीन (वाणिज्य एवं प्रबन्ध) कृषि एवं ग्रामीण विकास महाविद्यालय, बूचारेस्ट, रोमानिया
(04) श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी ..... सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमाँडू, नेपाल
(05) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा ..... पूर्व प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव ..... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
(07) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. ..... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(08) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. ..... (पूर्व) संकायाध्यक्ष, वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. संजय भयानी. ..... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत
(11) प्रो. डॉ. प्रताप राव कदम ..... अध्यक्ष, वाणिज्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ..... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत
(13) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा ..... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत
(14) प्रो. डॉ. संजय खरे ..... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय ..... परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत
(17) प्रो. अखिलेश जाधव ..... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत
(18) प्रो. डॉ. कमल जैन ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(19) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत
(20) प्रो.डॉ. वन्दना जैन ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. हरदयाल अहिरवार ..... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
(22) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी ..... सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत
(23) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव ..... अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत
(24) प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत
(25) प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया ..... प्राध्यापक, वनस्पति, टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत
(26) प्रो. डॉ. विवेक पटेल ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत
(27) प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(28) प्रो. डॉ. आर.के. गौतम ..... प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय मानकुंवर बाई कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
(29) प्रो. डॉ. जितेन्द्र के. शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य एवं प्रबंध, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय केन्द्र, पालवाल (हरियाणा) भारत
(30) प्रो. डॉ. गायत्री वाजपेयी ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत
(31) प्रो. डॉ. अविनाश शेन्द्रे ..... विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, प्रगति कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, डोम्बीवली, मुम्बई (महाराष्ट्र) भारत
(32) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता ..... पूर्व अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(33) प्रो.डॉ. बी.एस. मक्कड़ ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(34) प्रो.डॉ. पी.पी. मिश्रा ..... विभागाध्यक्ष, गणित, छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना, (म.प्र.) भारत
(35) प्रो.डॉ. सुनील कुमार सिकरवार.... प्राध्यापक, रसायन, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
(36) प्रो.डॉ. के.एल. साहू ..... प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(37) प्रो.डॉ. मालिनी जॉनसन ..... प्राध्यापक, वनस्पति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत
(38) प्रो.डॉ. विशाल पुरोहित ..... एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.) भारत

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. नरेन्द्र श्रीवास्तव ..... प्रसिद्ध वैज्ञानिक 'इसरो' बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत
(02) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत ..... निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, भोपाल (म.प्र.) भारत
(03) प्रो. डॉ. संजय जैन ..... पूर्व सहायक नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल, भोपाल (म.प्र.) भारत
(04) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी ..... प्राचार्य, शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
(05) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय ..... प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. सुमित्रा वास्केल ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(07) प्रो. डॉ. पी.आर. चन्देलकर ..... प्राचार्य, शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. मंगल मिश्र ..... प्राचार्य, श्री क्लॉथ मार्केट, कन्या वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ.आर.के. भट्ट ..... प्राचार्य, शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा ..... पूर्व संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(11) प्रो. डॉ. टी.एम. खान ..... प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला–धार (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड ..... संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(13) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी ..... अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
(14) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल ..... अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. मंजु दुबे ..... संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी ..... प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(17) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव ..... प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला–रतलाम (म.प्र.) भारत
(18) प्रो. डॉ. पी.के. मिश्रा ..... प्राध्यापक ,प्राणी शास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत
(19) प्रो. डॉ. के. के. श्रीवास्तव ..... प्राध्यापक ,अर्थशास्त्र, विजया राजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(20) प्रो.डॉ. कान्ता अलावा ..... प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. एस. के. जैन ..... प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
(22) प्रो. डॉ. किशन यादव ..... एसोसिएट प्रोफेसर (राजनीति विज्ञान) शोध केन्द्र, बुन्देलखण्ड कॉलेज, झांसी (उ.प्र.) भारत
(23) प्रो. डॉ. बी.आर.नलवाया ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(24) प्रो. डॉ. नत्वरलाल गुप्ता ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(25) प्रो.डॉ. पुरुषोत्तम गौतम ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय,इन्दौर (म.प्र.) भारत
(26) प्रो. डॉ. एस. सी. मेहता ..... प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, शासकीय भगत सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जावरा (म.प्र.) भारत
(27) प्रो.डॉ. तपन चौरे..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल, अर्थशास्त्र, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

****

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

**** विज्ञान संकाय ****

गणित:– ..... **(1) प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित**, शासकीय होल्कर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

(2) प्रो.डॉ. नीरज दुबे, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह,** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. मनमीत कौर मक्कड़,** शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

वनस्पति:– ..... **(1) प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

(2) प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:– ..... **(1) प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा,** एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)

(2) प्रो. डॉ. अमृता खत्री, माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:– ..... **(1) डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. आर.एस. रघुवंशी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. सुयश कुमार, शासकीय आदर्श महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:– ..... **(1) डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

सूक्ष्म जीव विज्ञान:– ..... **(1) अनुराग झँवेरी,** बायो केयर रिसर्च (आई) प्रा.लि., अहमदाबाद (गुजरात)

**** वाणिज्य संकाय ****

वाणिज्य :– ..... **(1) प्रो. डॉ. पी.के. जैन,** शासकीय हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. शैलेन्द्र भारल , शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

**** प्रबंध एवं व्यवसाय प्रशासन संकाय ****

प्रबंध :– ..... **(1) प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी** , अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. आनन्द तिवारी , शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

मानव संसाधन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. हरविन्दर सोनी** , पैसेफिक बिजनेस स्कूल, उदयपुर (राज.)

व्यवसाय प्रशासन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा ,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

**** विधि संकाय ****

विधि:– ..... **(1) प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** प्राचार्य, शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन, प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

**** कला संकाय ****

अर्थशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. अंजना जैन, एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.)

राजनीति:– ..... **(1) प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. अनिल जैन, शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. सुलेखा मिश्रा, मानकुंवर बाई शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

समाजशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. इन्दिरा बर्मन , शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. उमा लवानिया , शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला-सागर (म.प्र.)

हिन्दी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(2) प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)
(3) प्रो. डॉ. कला जोशी, श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

अंग्रेजी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. अजय भार्गव,** शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मंजरी अग्निहोत्री, शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)

संस्कृत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. बालकृष्ण प्रजापति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंजबासौदा जिला विदिशा (म.प्र.)

इतिहास:– ..... **(1) प्रो. डॉ. नवीन गिडियन,** शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोल:– ..... **(1) प्रो. डॉ. राजेन्द्र श्रीवास्तव,** शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी, जिला मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. काजल मोइत्रा , डॉ. सी वी रामन् विश्वविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.)

मनोविज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कामना वर्मा,** प्राचार्य, शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. सरोज कोठारी, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकला:– ..... **(1) प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव, महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक),** स्वामी विवेकानन्द सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. श्रीपाद अरोणकर, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.)

****** गृह विज्ञान संकाय ******

आहार एवं पोषण विज्ञान:– .... **(1) प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मधु गोयल, स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. संध्या वर्मा, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकास:– ..... **(1) प्रो. डॉ. मीनाक्षी माथुर,** अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) प्रो. डॉ. आभा तिवारी, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंध:– ... **(1) प्रो. डॉ. मंजु शर्मा,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. नम्रता अरोरा, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

****** शिक्षा संकाय ******

शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर,** महींद्रा कॉलेज ऑफ एजुकेशन, बैंगलुरू (कर्नाटक)
(2) प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर, प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. नीना अनेजा, प्राचार्य, ए.एस. कॉलेज ऑफ एजुकेशन,खन्ना (पंजाब)
(4) प्रो. डॉ. सतीश गिल, शिव कॉलेज ऑफ एजुकेशन, तिगाँव, फरीदाबाद (हरियाणा)

****** आर्किटेक्चर संकाय ******

शारीरिक शिक्षा ..... **(1) प्रो. किरण पी. शिंदे ,** प्राचार्य, स्कूल ऑफ आर्किटेक्चर, आई.पी.एस. एकडेमी, इंदौर (म.प्र.)

****** शारीरिक शिक्षा संकाय ******

शारीरिक शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. जोगिंदर सिंह,** पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

****** ग्रन्थालय विज्ञान संकाय ******

ग्रन्थालय विज्ञान ..... **(1) डॉ. अनिल सिरौठिया,** शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01) प्रो. डॉ. देवेन्द्र सिंह राठौड़ ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) प्रो. श्रीमती विजया वधवा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) डॉ. सुरेंद्र शक्तावत ..... ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर ..... शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला नीमच (म.प्र.)
(05) श्री आशीष द्विवेदी ..... शासकीय महाविद्यालय, मनासा, जिला नीमच (म.प्र.)
(06) प्रो. डॉ. मनोज महाजन ..... शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ, जिला देवास (म.प्र.)
(07) श्री उमेश शर्मा ..... कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला– नीमच (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ. एस.पी. पंवार ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. क्षितिज पुरोहित ..... जैन कला–वाणिज्य–विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ.एन.के. पाटीदार ..... शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा ..... शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. अभय पाठक ..... शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान ..... शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)
(16) प्रो. डॉ. गेंदालाल चौहान ..... शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र ..... शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन ..... शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. कमला चौहान ..... शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(20) प्रो. डॉ.आभा दीक्षित ..... शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(21) प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी ..... शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(22) प्रो. डॉ. डी.सी. राठी ..... स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(23) प्रो. डॉ. अनिता गगराड़े ..... शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(24) प्रो. डॉ. संजय पंडित ..... शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(25) प्रो. डॉ. रामबाबू गुप्ता ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(26) प्रो. डॉ. अंजना सक्सैना ..... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(27) प्रो. डॉ. सोनाली नरगुन्दे ..... पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(28) प्रो. डॉ. भारती जोशी ..... आजीवन शिक्षण विभाग देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(29) प्रो. डॉ. एम.डी. सोमानी ..... शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(30) प्रो. डॉ. प्रीति भट्ट ..... शासकीय एन.एस.पी. विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(31) प्रो. डॉ. संजय प्रसाद ..... शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(32) प्रो. डॉ. मीना मटकर ..... सुगनीदेवी कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(33) प्रो. मोहन वास्केल ..... शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला – झाबुआ (म.प्र.)
(34) प्रो. डॉ. नितिन सहारिया ..... शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(35) प्रो. डॉ. मंजु राजोरिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(36) प्रो. डॉ. शहजाद कुरैशी ..... शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, मूंदी, जिला खण्डवा (म.प्र.)
(37) प्रो. डॉ. शैल बाला सांधी ..... महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(38) प्रो. डॉ. प्रवीण ओझा ..... श्री भगवत सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(39) प्रो. डॉ.ओमप्रकाश शर्मा ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्योपुर (म.प्र.)
(40) प्रो. डॉ. एस.के. श्रीवास्तव ..... शासकीय विजया राजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(41) प्रो. डॉ. अनूप मोघे ..... शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(42) प्रो. डॉ. हेमलता चौहान ..... शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(43) प्रो. डॉ. महेशचन्द्र गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(44) प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह, जिला खरगोन (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर ..... शासकीय महाविद्यालय, सनावद, जिला खरगोन (म.प्र.)
(46) प्रो. डॉ. आर.के. यादव ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(47) प्रो. डॉ. आशा साखी गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

(48) प्रो. डॉ. बी. एस. सिसोदिया ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला– सतना (म.प्र.)
(50) डॉ. राजेश कुमार ..... शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला–सतना (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. रावेन्द्रसिंह पटेल ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(53) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश ..... शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला–विदिशा (म.प्र.)
(54) प्रो. युवराज श्रीवास्तव ..... सी.वी. रमन विश्वविद्यालय, कोटा–बिलासपुर (छ.ग.)
(55) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी ..... शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(56) प्रो. डॉ. ए.के. पाण्डे ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(57) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे ..... शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(58) प्रो. डॉ. शशि प्रभा जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर–मालवा (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी ..... शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. अर्जुनसिंह बघेल ..... शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(61) डॉ. सुरेश कुमार विमल ..... शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. अमरचन्द्र जैन ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. रश्मि दुबे ..... शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(64) प्रो. डॉ. ए.के. जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(65) प्रो. डॉ. संध्या टिकेकर ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(66) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा ..... शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(67) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव ..... शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(68) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला ..... शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(69) प्रो. डॉ. बलराम सिंगोतिया ..... शासकीय महाविद्यालय सौंसर, जिला–छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(70) प्रो.डॉ. विम्मी बहल ..... शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल, जिला – शाजापुर (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. अमित शुक्ल ..... शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(72) प्रो. डॉ. मीनू गजाला खान ..... शासकीय महाविद्यालय, मक्सी, जिला–शाजापुर (म.प्र.)
(73) प्रो. डॉ. पल्लवी मिश्रा ..... शासकीय महाविद्यालय, नई गढ़ी, जिला– रीवा (म.प्र.)
(74) प्रो. डॉ. एम.पी. शर्मा ..... शासकीय महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)
(75) प्रो. डॉ. जया शर्मा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(76) प्रो. डॉ. सुशील सोमवंशी ..... शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला बुरहानपुर (म.प्र.)
(77) प्रो. डॉ. इशरत खान ..... शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.)
(78) प्रो. डॉ. कमलेशसिंह नेगी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(79) प्रो. डॉ. भावना ठाकुर ..... शासकीय महाविद्यालय रेहटी, जिला सीहोर (म.प्र.)
(80) प्रो. डॉ. केशवमणि शर्मा ..... पंडित बालकृष्ण शर्मा नवीन शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.)
(81) प्रो. डॉ. रेणु राजेश ..... शासकीय नेहरु अग्रणी महाविद्यालय, अशोक नगर (म.प्र.)
(82) प्रो. डॉ. अविनाश दुबे ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)
(83) प्रो. डॉ. वी.के. दीक्षित ..... छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)
(84) प्रो. डॉ. राम अवेधश शर्मा ..... एम.जे.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.)
(85) प्रो. डॉ. मनोज कुमार अग्निहोत्री ..... सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(86) प्रो. डॉ. समीर कुमार शुक्ला ..... शासकीय चन्द्र विजय महाविद्यालय, डिण्डोरी (म.प्र.)
(87) प्रो. अपराजीता भार्गव ..... अध्यापक ,आर. डी. पब्लिक स्कूल, बैतूल (म.प्र.) भारत
(88) प्रो. डॉ. अनूप परसाई ..... शासकीय जे. योगानन्दन छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(89) प्रो. डॉ. अनिलकुमार जैन ..... वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
(90) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ ..... राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(91) प्रो. डॉ. कल्पना पारीख ..... एस.एस.जी. पारीख स्नातकोत्तर कॉलेज, जयपुर (राज.)
(92) प्रो. डॉ. गजेन्द्र सिरोहा ..... पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(93) प्रो. डॉ. कृष्णा पैन्सिया ..... हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला– प्रतापगढ़ (राज.)
(94) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह ..... केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)
(95) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल ..... शोध सलाहकार, नई दिल्ली
(96) प्रो. डॉ. कविता भदौरिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

Synthesis and Biological Evaluation of p-Ehyl Malon Anilic Acid Hydrazones

Malti Dubey (Rawat) *

Abstract - Acid hydrazides and their condensation products have frequently been investigated for tuberculostatic activity, Newly synthesised compounds have been tested for their antibacterial activity, anthfungal activity and tuberculostatic activity, The synthesis p-ethyl melon anilic acid hydrazde and hydrazones have been established,
Key words - Acid hydrazide, Acid hydrazones, Synthesis, biologica1 activity.

Introduction - Acid hydrazides and their derivatives are well known for their antituberculostatic activity[1]. Several derivatives are also known to possess Antimicrobial[2,3] Antifungal activity[4,12]. Anthelmntic[13] and Anticonbvisant[14]. So l have prepared a large number of hydrazides and their Condensation products with various aldehydes and Ketones under the impression That there was a possibility of their being less toxic as result of the blocking of the free- NH_2 group present in the parent hydrazide. Hydrazides have also been tested for antibacterial activity[5,6,7].

p-Ethyl malon anilic acid hydrazide and their substituted hydrazones were Synthesised by the following sequence of the reaction.

p-ethyl aniline(I) was refluxed with diethyl malonate to get malon-p-ethyl dianilde (II) and ester (III), compound (III) treated with hydtrazine hydrate. The hydraide was obtained (IV) malon-p-ethyl anilic acid hydrazide has been condensed with a number of adehydes. Acid hydrazones of the type (V) were obtained

Experimental

All chemicals used were of A.R grade. (ether of B.D.H, Extra pure quality)

(a) Preparation of p-ethyl melon anilic acid hydrazide

P-Ethyl aniline (1 Part) was refluxed with diethyl malonate (2 part) for forty minutes after cooling ethanol was added and the contents were left overnight when malon-p-ethyl dianilide (II) separated The filterate containing the ester (III) was concentrated and treated with hydrazide hydrate when the hydrazide was obtained in 73.3% yield.

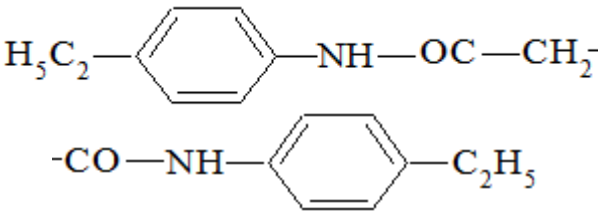

(II)

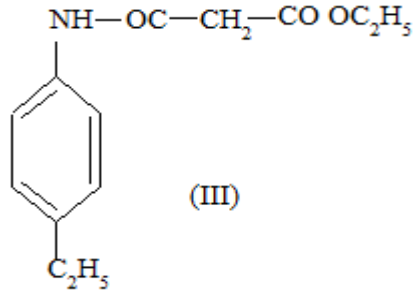

(III)

(b) Preparation of substituted aryl hydrazone from p-ethyl-malon anilic acid hydrazide.

In order to see the effect of different substituents on the physiological activity, the new acid hydrazide (IV) has been condensed with number of aldehydes and ketones. Acid hydazones of the type (V) have been obtained in 1.3% to 74.0% yield

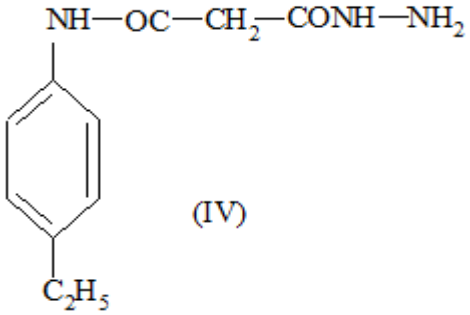

(IV)

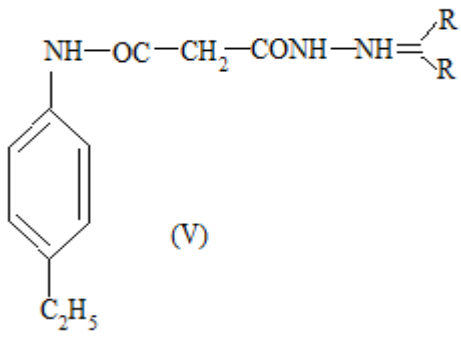

(V)

* Asst. Professor (Chemistry) Govt. Auto. Girls P.G. College of Excellence,Sagar (M.P) INDIA

Hydrazide (1 mole) in alochol was added to substituted benzaldehyde (1 mole) in alcohol in presence of one drop conc. H_2SO_4, The contents were warmed when the title compounds were obtained as crystalline solid and recrystallised from alcohol.

The compounds thus prepared are listed along with their relevant data in table (Table III)

Most of the hydazones are coloured looking to the variation in colours of acid hydrazones and their well defined melting points the acid hydrazide may be used as a reagent for the detection of compounds

The structure of the above compounds are confirmed by IR (Table I, II) supported by correct elemental analysis (Table III)

IR are recorded on a Perkin Elmer 283 spectrophotometer Melting points of the compound are determined in open capillary tubes. Purity of compounds in checked on TLC using silica Gel-G. Elemental analysis is performed on Carlo-Erba 1108 analyser.

Table I and II IR data of acid hydra zones derived from malon p-ethyl acid hydrazide, Table III physical and analytical data of compound of type III

Table I

S.	Band or group	Absorption band (cm^{-1})	Bend intensity
1	-CONH	1652	Strong and sharp
2	$=C-CH_2-C-$	1710	Strong and sharp
3	-NH-	1635	Medium
4	$-CH_2-$	1460	Strong and sharp
5	$O-NO_2$ (in aromatic ring)	1370	Strong and shar
6	-N=C <	1570 1685	Strong and sharp Sharp
7	Phenyl - sub-stituted (1, 4)	834	Strong and sharp
8	Phenyl tetra substituted (1.2:3:4)	800 815	Strong and sharp Medium and sharp

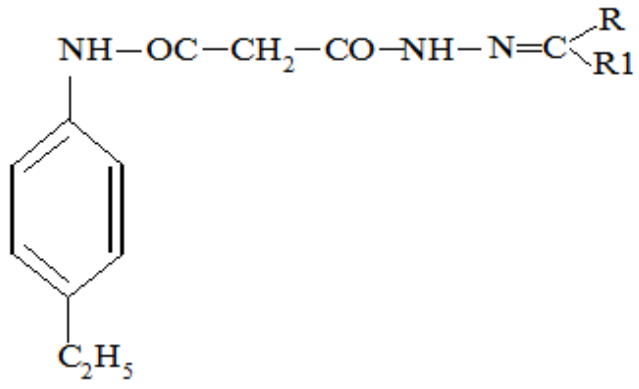

Table II (See in next page)

Biological Evaluation - Tuberculostatic activity some new compounds have been tested for antitubercular activity in vitro using Mycobacterium tuberculosis. The compound (1 to 5 table III) inhibited the growth of Mycobacterium tuberculosis at 100 mg/ml concentration other compound were found to be inactive. (Table IV)

Antifungal activity - Newly synthesised compound (6 to 9, table III) have been tested for their antifungal activity against candida albicans, Aspergillas Niger and Alternaria Alternata at concentration of 30mg/ml using sabouraced dextrose agar media. All the other compounds did not show significant activity against the fungi at the concentration used.

Tuberculostatic Activity (Table III)

S.	Compound	Growth at [mg/ml]10	Concentration 100
1		+	0
2		+	+
3		+	0
4		+	+
5		+	+

+ and 0 indicate presence and inhibition of growth respectively.

Conclusion

New acid hydrazones have been synthesised by the reaction of malon-p-ethyl acid hydrazide with various carbonyl compounds, in 1.3 to 74% yield. Most of the hydrazones are coloured, solids having high melting points the Structure of all compounds are confirmed by IR and supported by correct elemental analysis newly synthesized compounds (1 to 6) have been tested for their tuberculostatic activity other compound were found to be inactive.

Acknowledgment - Thanks are due to the Director, C.D.R.I Lucknow for providing IR spectra.

References :-

1. H.H. fox and J.T Gibes: J.Org chem. 1952, 17, 1653-1660
2. K.F. Modi, N. Krishna Kumar: 26th Session Indian Pharmaceutical congren. Dec 28-30, 1974, Madras.
3. S. Bahadur, A.K. Goal and R.S. Verma: J Ind. Chem. Soc, 15, 526 (1974)
4. Rollas S, Kucukguzel, S.G. Moloecules 12, 1910-1939 (2007)
5. Kalsi, R. Shrimaili, M, Bhalla, T.N. Barthwal J.P. Indian J. Pharrn, Sci 41, 353-359 (2006)
6. Nayyar, A.Jain, R. Med Chem. 12, 1873-1886 (2005).
7. Bhat, AK., Bhamaria, R.P Patel, M.R. Bellare. R.A. and Dulwalia, C.V. Indian J. chem. 10694 (1972)
8. Kucukguzd. S G., Mazi, A sahin. F Ozturk, S Stables. J.P. Eur. J. Med Chem 38, 1005-1009 (2003).
9. Sriram, D. Yogeswari, P. Madhu, K bioarg, Med Chem Lett 15, 4502-4502 (2005)
10. Terzioglu N., Gursoy A., Eur J., Med Chem 38. 781-786 (2003) 26, 5235 (1970)

11. I. Mir. MT Siddqui, A.Come Tetrahedron, 26, 5235 (1970)
12. E. Degner, H. Scheinplug, H.G. Schemelzer Brit Patent, 1035. 474 (1967).
13. R. Cavier, R. Rips, J Med. Chem 8. 706-709 (1965)
14. A Aylward, M. sawistowska Chem. and Indus 54, 404 (1961)
15. Janin, Y. Antituberculosis drugs, boarg, Med. chem. 2007, 15, 2479-2513
16. Nayyar, A. Jain R. Recent advances in new structural classes of antituberculosis agent. curr Med chem. 2005. 12, 1873-1886.

Table II

S.	Aldehyde	Acid Hydrazone	Color	M.P. ^{0}C	Yield %
1.	p NN Bis-chloroethyl- amino benzaldehyde	$C_6H_4(CH_2\text{-}CH_2Cl)_2 4CH_3$	Orange	180	25.0
2	p-N-Methyl Cyanoethyle-5-bromo benzaldehyde	$C_6H_4\left[\begin{matrix}CH_3\\CH_2CH_2CN\end{matrix}\right]4Br_5CH_3$	Orange	179	26.0
3	p-N-Methyl-N-2-cyano-ethol amino benzaldehyde	$C_6H_4N\left[\begin{matrix}CH_3\\CH_2CH_2CN\end{matrix}\right]4$	Orange	170	35.0
4	4-NN-bis-2'-cyanoethyl-amino benzaldehyde	$C_6H_4N(CH_2CH_2CN)_2 4$	Red	202	43.0
5	3-(O tolyl) diazo-5-hydroxy benzaldehyde	$C_6H_4(C_6H_5CH_3)3N(OH)_5$	Brown	210	22.7
6	Pyrene-3-aldehyde	C_5H_9	Yellow	197	54.5
7	p-Nitro pipronal	$C_6H_2(NO_2P(OCH_2\text{-}O)5{:}6$	Yellow	215	61.9
8	2-Napthaldehyde	$C_{10}H_7(OH){:}2$	Yellow	181	23.4
9	2-Hydroxy-5-(O-Methyl -phenylazo) - benzaldehyde	$C_6H_3(OH){:}2(OCH_3.C_6H_4N){:}5$	Dark Brown	208	47.0

****

A Review- Remediation of soil with special reference to phytoremediation

Dr. Bindu Gandhi *

Abstract - Use of living plants to remove or degrade contaminants from soil is called phytoremediation.This method is used to remove heavy metals, radioactive wastes,pesticides organic contaminants like chlorinated solvents,nonaromatic petroleum hydrocarbons etc. Phytoremediation of contaminated sites supports the goal of sustainable development by helping to conserve soil as a resource, bring soil back into beneficial use, preventing the spread of pollution to air and water, and reducing the pressure for development on green or agricultural field sites. Phytoremediation offers the possibility of a cost effective remediation means for a wide range of contaminated sites. It will be most applicable to soil contaminations that not so deep from soil surface, relatively non-leachable, and cover a large area. Phytoremediation are expected to be used as a vital tool in sustainable management of contaminated soils.

Introduction - Land, surface waters, and ground water are increasingly affected by contaminations from industrial, research experiments, military, and agricultural activities either due to ignorance, lack of vision, carelessness, or high cost of waste disposal and treatment. The rapid build-up of toxic pollutants (metals, radionuclide, and organic contaminants in soil, surface water, and ground water) not only affects natural resources, but also causes major strains on ecosystems.

Soil is the fundamental foundation of our agricultural resources, food security, global economy and environmental quality [1]. With the development of urbanization and industrialization, soils have become increasingly polluted by heavy metals and organic pollutants, which threaten ecosystems, surface and ground waters, food safety and human health . Hence, there is a great need to develop effective technologies for sustainable management and remediation of the contaminated soils.

The process of removal of contaminants from soil is called soil remediation.the most common contaminants are petroleum hydrocarbons ,solvents,pesticides and heavy metals.

Soil remediation is necessary to maintain quality of soil for commercial cultivation and for wild flora and fauna.
Following soil remediation techniques are used to remove contaminants from soil-

1. Bioremediation
2. Phytoremediation
3. Air sparging
4. Thermal soil remediation

Phytoremediation - Phytoremediation is an emerging technology that uses various plants to degrade, extract, contain, or immobilize contaminants from soil and water. The term phytoremediation (phyto = plant and remediation = correct evil) is relatively new, coined in 1991. Phytoremediation technologies have generated much interest as cost-effective and environmental-friendly technologies for the cleanup of organic and inorganic pollutants . Plant-based environmental remediation technology has been widely accepted by academic and industrial scientists as a sustainable cleanup technology . Phytoremediation uses plants to clean up polluted soil, groundwater, and wastewater. Phytoremediation is defined as the use of green plants, including grasses and woody species, to remove, contain, or render harmless such environmental contaminants as heavy metals, metalloids, trace elements, organic compounds, and radioactive compounds in soil or water. This definition includes all plant-influenced

Biological chemical, and physical processes that aid in the uptake, sequestration, degradation, and metabolism of contaminants, either by plants, soil microbes, or plant and microbial interactions. Phytoremediation takes advantage of the unique and selective uptake capabilities of plant root systems, together with the translocation, bioaccumulation, and contaminant storage/degradation abilities of the entire plant body. Plant-based soil remediation systems can be viewed as biological treatment systems with an extensive, self-extending uptake network (i.e., the root system) that enhances the below-ground ecosystem for subsequent productive use. Phytoremediation avoids excavation and transport of polluted media thus reducing the risk of spreading the contamination and has the potential to treat sites polluted with more than one type of pollutant. Some drawbacks associated with phytoremediation are dependency on the growing conditions required by the plant

* Deptt. Of Chemistry, Mata Jija Bai Govt. Girls P.G. College, Indore (M.P.) INDIA

(i.e., climate, geology, altitude, temperature); large-scale operations require access to agricultural equipment and knowledge; tolerance of the plant to the pollutant affect the success for remediation; contaminants collected in senescing tissues may be released back into the environment in certain seasons; time taken to remediate sites far exceeds that of other technologies and contaminant solubility may be increased leading to greater environmental damage and the possibility of leaching.

Although relatively slow, phytoremediation is environmentally friendly, cheap, requires little equipment or labor, is easy to perform, and sites can be cleaned without removing the polluted soil; it is an in situ method. In addition, precious metals, such as gold, zinc and chromium, collected by the hyperaccumulator can be harvested and extracted as phytoextraction. However, the key factor for successful phytoremediation is identification of a plant that is tolerant and suitable for each area, one which can accumulate high concentrations of the required metal. In addition, the mechanism of heavy metal accumulated in the plant should be studied before the application.

The mechanisms and efficiency of phytoremediation depend on the type of contaminant, bioavailability and soil properties. There are several ways by which plants clean up or remediate contaminated sites. The uptake of contaminants in plants occurs through the root system, in which the principal mechanisms for preventing toxicity are found. The root system provides an enormous surface area that absorbs and accumulates water and nutrients essential for growth along with other non-essential contaminants.

The processes in phytoremediation includes–

1. Phytoextraction
2. Phytodegradation
3. Phytostabilization
4. Phytovolatilization

Phytoextraction - This also called phytoaccumulation, it refers to the uptake of metal contaminants in the soil by plant roots and accumulation in leaves or stem of the plants. Phytoextraction is primarily used for the treatment of heavy metal contaminated soils. This approach uses plants to absorb, concentrate, and precipitate toxic metals from contaminated soils into the above ground biomass (shooandts, leaves, etc.). Discovery of metal hyperaccumulator species demonstrates that plants have the potential to remove metals from contaminated soils. A hyperaccumulator is a plant species capable of accumulating 100 times more metal than a common non-accumulating plant. Metals such as nickel, zinc and copper are the best candidates for removal by phytoextraction because it has been shown that they are preferred by a majority of plants (approximately 400) that uptake and absorb large amounts of metals. There are several advantages of phytoextraction. The cost of phytoextraction is fairly low, when compared to conventional methods. Another benefit is that the contaminant is permanently removed from the soil. In addition, the amount of waste material that must be disposed of is substantially decreased (up to 95%) and in some cases, the contaminant can be recycled from the contaminated plant biomass. The use of hyperaccumulator species is limited by slow growth, shallow root system, and small biomass production. In addition, the plant biomass must also be harvested and disposed of properly. There are several factors limiting the extent of metal phytoextraction including:

1. Metal bioavailability within the rhizosphere
2. Rate of metal uptake by roots
3. Proportion of metal “fixed” within the roots
4. Rate of xylem loading/translocation to shoots
5. Cellular tolerance to toxic metals

The method is also usually limited to metals and other inorganic compounds in soil or sediment. In order for this clean-up method to be feasible, the plants must

(1) extract large concentrations of heavy metals into their roots,
(2) translocate the heavy metal into the surface biomass, and
(3) produce a large quantity of plant biomass.

In addition, remediative plants must have mechanisms to detoxify and/or tolerate high metal concentrations accumulated in their shoots.

Green plants such as specific strains of Indian Mustard can accumulate heavy metals when grown in Cr contaminated soil.

Phytovolatilization - This involves the use of plants to take up contaminants from the soil, transforming them into volatile forms and transpiring them into the atmosphere. Phytovolatilization may also refer the diffusion of contaminants from the stems or other plant parts that the contaminant travels through before reaching the leaves. Phytovolatilization can occur with contaminants present in soil, sediment, or water. Mercury is the primary metal contaminant that this process has been used for. It has also been found to occur with volatile organic compounds, including trichloroethene, also as well as inorganic chemicals that have volatile forms, such as selenium, and arsenic.The advantage of this method is that the contaminant,mercuric ion, may be transformed into a less toxic substance. The disadvantage to this is that the mercury released into the atmosphere is likely to be recycled by precipitation and then redeposited back into lakes and oceans, repeating the production of methylmercury by anaerobic bacteria.

Phytostabilization - This is also referred to as in-place inactivation. It is used for the remediation of soil, sediment, and sludge. It is the use of certain plant species to immobilize contaminants in the soil and ground water through absorption and accumulation by roots, adsorption onto roots, or precipitation within the root zone of plants (rhizosphere). This process decreases the mobility of the contaminant and prevents migration to the ground water and it reduces bio-availability of metal into the food chain. This technique can also be used to reestablish vegetation

cover at sites where natural vegetation fails to survive due to high metals concentrations in surface soils or physical disturbances to surface materials. Metal-tolerant species is used to restore vegetation at contaminated sites, thereby decreasing the potential migration of pollutants through wind erosion and transport of exposed surface soils and leaching of soil contamination to ground water. Phytostabilization can occur through the sorption, precipitation, or metal valence reduction. It is useful for the treatment of lead (Pb), arsenic (As), cadmium (Cd), chromium (Cr), copper (Cu) and zinc (Zn). Advantage ofthis method is the changes that the presence of the plant induces in soil chemistry and environment. These changes in soil chemistry may induce adsorption of contaminants onto the plant roots or soil or cause metals precipitation onto the plant root. Phytostabilization has been successful in addressing metals and other inorganic contaminants in soil and sediments. Some of the advantages associated with this technology are that the disposal of hazardous material/biomass is not required and it is very effective when rapid immobilization is needed to preserve ground and surface waters. The presence of plants also reduces soil erosion and decreases the amount of water available in the system. However, this clean-up technology has several major disadvantages including: contaminant remaining in soil, application of extensive fertilization or soil amendments, mandatory monitoring is required, and the stabilization of the contaminants may be primarily due to the soil amendments.

Phytodegradation - This is also referred to as phytotransformation. It involves the degradation of complex organic molecules to simple molecules or the incorporation of these molecules into plant tissues In the phytodegradation mechanism contaminants are broken down after they have been taken up by the plant. As with phytoextraction and phytovolatilization, plant uptake generally occurs only when the contaminants' solubility and hydrophobicity fall into a certain acceptable range. Phytodegradation has been showed to remediate some organic contaminants, such as chlorinated solvents, herbicides, and munitions, and it can address contaminants in soil, sediment, or groundwater.

Rhizodegradation - This is also referred to as phytostimulation. Rhizodegradation refers to the breakdown of contaminants within the plant root zone, or rhizosphere. It is believed to be carried out by bacteria or other microorganisms. Studies have documented up to 100 times as many microorganisms in rhizosphere soil as in soil outside the rhizosphere. Microorganisms may be so prevalent in the rhizosphere because the plant exudes sugars, amino acids, enzymes, and other compounds that can stimulate bacterial growth. The roots also provide additional surface area for microbes to grow on and a pathway for oxygen transfer from the environment. The localized nature of rhizodegradation means that it is primarily useful in contaminated soil, and it has been investigated and found to have at least some successes in treating a wide variety of mostly organic chemicals, including petroleum hydrocarbons, polycyclic aromatic hydrocarbons (PAHs), chlorinated solvents, pesticides, polychlorinated biphenyls (PCBs), benzene, toluene, ethylbenzene, and xylenes. It can also be seen as plant-assisted bioremediation, the stimulation of microbial and fungal degradation by release of exudates/enzymes into the root zone (rhizosphere).

Conclusion - The pollution of soil and water with heavy metals is an environmental concern today. Metals and other inorganic contaminants are among the most prevalent forms of contamination found at waste sites, and their remediation in soils and sediments are among the most technically difficult. The high cost of existing cleanup technologies led to the search for new cleanup strategies that have the potential to be low-cost, low-impact, visually benign, and environmentally sound. Phytoremediation is a new cleanup concept that involves the use of plants to clean or stabilize contaminated environments. Phytoremediation is an emerging technology for contaminated sites that is attractive due to its low cost and versatility. it shows tremendous potential in several applications for treatment of metals and organics at sites where contamination is shallow. In conclusion, there are real risks associated with phytoremediation that require assessment and identification of management options prior to implementation of any field based operations Risks of phytoremediation must also be assessed compared to the more traditional methods of remediation including, excavation and landfilling, soil incineration, soil washing and vitrification. Traditional methods of remediation have many real risks, both to human and environmental health that must also be considered. Thus, while acknowledging that there are risks associated with phytoremediation, these risks are temporary that last only during the process of phytoremediation

The Future of Phytoremediation - Though phytoremediation technologies are still primarily in research and development phases, various applications have shown potential for success. This has helped to increase interest and research in both public and private sectors, in an attempt to develop phytoremediation into a commercially viable industry. Some key technical hurdles that must be overcome for an industry to develop and grow are: identifying more species that have remediative abilities, optimizing phytoremediation processes, such as appropriate plant selection and agronomic practices, understanding more about how plants uptake, translocate, and metabolize contaminants, identifying genes responsible for uptake and/or degradation for transfer to appropriate high-biomass plants, decreasing the length of time needed for phytoremediation to work, devising appropriate methods for contaminated biomass disposal, particularly for heavy metals and radio nuclides that do not degrade to harmless substances, and protecting wildlife from feeding on plants used for remediation. How soon phytoremediation will succeed as an industry is also uncertain. It offers many

potential advantages over traditional remediation technologies, particularly its public acceptance and considerably lower cost. If these factors continue to drive government and private research and development, phytoremediation technologies could continue to evolve. If so, some industry experts believe commercialization of certain technologies could occur within the next 5 years.

References :-

1. Pilon-Smits, E.A.H., "Phytoremediation., Annual Review of Plant Biology", 56, 15-39, (2005).
2. Raskin, I. and Ensley, B.D., "Phytoremediation of Toxic Metals—Using Plants to Clean up the Environment". J. Wiley & Sons, New York, 304, (2000).
3. Robinson, B.H., Green, S., Mills T., Clothier, B., Velde, M, Laplane, R., Fung, L., Deurer, M., Hurst, S., Thayalakumaran, T., and Dijssel, C., "Phytoremediation: Using plants as blowups to improve degraded environments"., Australian Journal of Soil Research, 41, 599-611, (2003).
4. Salt, D.E., Smith, R.D., and Raskin, I.,. "Phytoremediation., Annual Review of Plant Physiology and Plant Molecular Biolog"y, 49, 643-68, (1998).
5. Zouboulis, A.I. and Katsoyiannis, I.A., "Recent advances in the bioremediation of arsenic-contaminated groundwaters". Environment International, 31(2), 213-19. (2005).
6. Mudhoo A., Sharma S. K., Lin Z. Q., and Dhankher O. P., "Phytoremediation of Arsenic-Contaminated Environment An Overview", (Eds. Sharma S.K., Mudhoo A.,), Green chemistry for environmental sustainability, Taylor and Francis Group, Boca ratan London, New York, 127, (2010).
7. Cunningham, S. D., and Ow, D. W. "Promises and prospect of phytoremediation". Plant Physiol., 110, 715-719, (1996).
8. Raskin, I., and Ensley, B. D., "Recent developments for in situ treatment of metal contaminated soils. In:Phytoremediation of Toxic Metals: Using Plants to Clean Up the Environment". John Wiley & Sons Inc., New York, (2000).
9. United States Environmental Protection Agency (USEPA)., "Introduction to Phytoremediation". EPA, U.S. Environmental Protection Agency, Office of Research and Development, Cincinnati, OH., (2000).
10. Zhang, X., Xia, H., Li, Z., Zhang, P., and Gao, B.," Potential of four forage grasses in remediation of Cd and Zn contaminated soils", Bioresour. Technol., 101, 2063-2066, (2010).
11. Wuana, R. A, Okieimen, F. E., and Imborvungu, J. A.," Removal of heavy metals from contaminated soil using chelating organic acids". Int. J. Environ. Sci. Tech., 7, 485-496, (2010).
12. EPA, "A Citizen's Guide to Phytoremediation", United States Environmental Protection Agency, 6, (2000).

****

The Footprint Of Social Media On Online Shopping Consumer's Outlook In Jabalpur City

Saumya Mishra * Dr. Mamta Sharma ** Dr. Abha Tiwari ***

Abstract - Nowadays social media is a very vast medium to spread any type of information. It is helpful to elaborate not only important news rather advertisement is a big deal.

Many researches found that increasing online shopping with the big factor of social media. This research was undertaken to understand the consumer's outlook to purchase through online shopping with influencing social media. A survey of 100 consumers of Jabalpur city was conducted through Questionnaire method. Research focuses on understanding the online shopping trend of affected by social media . The results indicates that the consumers intention to purchase online is influenced by social media because it's a very big medium of interact to any person . According to this paper mostly online shopping consumers accepted that social media changes their outlook. In this study, results drawn out consumers choose designer clothes and footwear with the help of social media .They mostly distract by advertisement of social media.

Key words - Footprint , Social Media, Online Shopping, Outlook

Footprint- " The impact on the environment of human activity in terms of pollution, damage to ecosystems, Internet and the depletion of natural resources."

Social Media- "Websites and applications that enable users to create and share content or to participate in social networking."

online shopping- "online shopping or e-shopping is a form of electronic commerce which allows consumers to directly buy Goods and Services from a seller over the internet using a web browser . Alternative names are – e-web store, e-shop, e-store, Internet shop, web –shop , web store, online store, and online storefront etc."

Outlook- "A person's point of view or general attitude to life."

Introduction - Social media, especially social networking sites, provide a virtual space for people to communicate through the Internet, which also might be an important agent of consumer socialization.

consumers are increasingly moving to social media not only to be inspired, but to also buy products from. Buy buttons . Digital buyers worldwide are turning to social networks for a variety of things, like reading reviews and staying on top of fashion trends. According to September 2015 research, these social media activities influence their shopping behavior.

The Internet and especially social media have changed how consumers and marketers communicate. The Internet has distinct characteristics (Peterson et al., 1997), such as:

1. The ability to inexpensively store vast amounts of information at different virtual locations
2. The availability of powerful and inexpensive means of searching, organizing, and disseminating such information
3. Interactivity and the ability to provide information on demand
4. The ability to serve as a transaction medium
5. The ability to serve as a physical distribution medium for certain goods (e.g. software)
6. Relatively low entry and establishment costs for sellers.

One of the advantages of internet is that it enables businesses to reach a worldwide customer population, so that customers can survey, select, and purchase products and services from businesses around the world (Al Kailani & Kumar, 2011).

In particular, peer communication through social media, a new form of consumer socialization, has profound impacts on consumer decision making and thus marketing

* Research Scholar (Resource Management) Govt. M.H. College Of Home Science And Science For Women (Autonomous) Jabalpur (M.P.) INDIA

** Professor (Home Science) Govt. M.K.B.College Of Arts And Commerce For Women (Autonomous) Jabalpur (M.P.) INDIA

*** Professor (Human Development) Govt. M.H. College Of Home Science And Science For Women (Autonomous) Jabalpur (M.P.) INDIA

strategies. Consumer socialization theory predicts that communication among consumers affects their cognitive, affective, and behavioral attitudes (Ward, 1974).

Objectives of the Study :

1. To know the percentage of consumers, which are influenced by social media and turn to online shopping
2. To investigate that social media really helps to change the online shopping consumer's outlook.
3. To know which product or service is mostly buy from online shopping with the help of Social media.
4. To study which medium mostly effects on online shopping consumers in social media.
5. To identify which social networks is mostly influenced of consumers.

Hypothesis of the Study :

1. Social media increased online shopping .
2. Social media is a positive factor for online shopping.
3. Social media is very effective medium to change consumer' outlook on online shopping.

Limitations of the Study - The study has following limitations :

1. The sample was selected from few consumers of Jabalpur city.
2. The sample was limited to 100 respondents.
3. The range limited only age group- 15 to 50years.
4. Randomly selected respondents had been used for filling the questionnaire.

Plan, Methodology/ Research Design-

i) Selection of method of Inquiry - The universe being too large and time & other resources being limited, Convenience Sampling method were selected for the present study.

ii) Selection of Samples- The sample selected on purposive random basis

iii) Selection of method for collection of Data- Questionnaire method used for collection of data .A trival survey was done to get an idea of the various problems. In the trival survey the same procedure was followed as was to be adopted in actual survey. The no. of cases in it was five on the basis of this pilot study necessary amendments are done in the schedule.

iv) Sources of Information-

a) Primary Sources - consumers from age group 15 to 50 years were selected as the primary sources. It was collected from 100 respondents in different areas of Jabalpur city through questionnaire.

b) Secondary Sources - It may be termed as "Documentary Sources". The information was gathered from different books, magazines, journals, news scripts and websites etc.

Scope of the Study - This study helps firms, organizations and websites improve their marketing strategies . Helpful for problem recognition and awareness of need through online shopping with the help of social media. For social marketing getting idea across to consumers rather than selling something.

Review of Literature - Lee *et al.*(2011) stated that this research motivated by the need to better understand consumers' decision of online shopping, they explored the moderating effect of positive informational social influence on the relationships among consumer's beliefs, attitudes of online shopping. Their findings showed that positive informational social influence strengthened the relationship between consumer's attitude toward online shopping and their intention to shop, as well as on the relationship between consumer's demographic profile and their attitude. In this research, they focus on the direct effect of social influence on consumer online shopping behavior, their study drew heavily on social influence theory and argued for an alternative theory focusing on the moderating role of social influence. In particular, they explored how positive messages in online discussion forums may affect consumers' decisions to shop online. They used a laboratory experiment in which the treatment group was required to read positive messages about online shopping experience in an online discussion forum and interview. Positive social influence was found to reinforce the relationship between beliefs about and attitude toward online shopping, as well as the relationship between attitude and intention to shop. They believe their alternative theory provides new insight into the complex processes through which social influence is brought to bear on consumers' online shopping decisions.

Vinerean *et al.*(2013) stated that Social media allows customers and prospects to communicate directly to your brand representative or about their brand with their friends. However, the obvious question is: who are the people interacting online and how engaged are they in online activities? In This paper aims to answer this question based on a study regarding the online activities of 236 social media users, by identifying different types of users, a segmentation of these users and a linear model to examine how different predictors related to social networking sites have a positive impact on the respondents' perception of online advertisements. The answer can help discover how to engage with different types of audiences in order to maximize the effect of the online marketing strategy. The result founds in this research that social media is a big factor for increasing online shopping.

Analysis of Data - After the data was collected it was tabulated and analyzed statistically, wherever needed statistical tests were applied to get the final results .The information gathered was from the 100 respondents surveyed from Jabalpur city. The age running 15 to 50 years.

TABLE NO. 01 : No. of Respondents according to assuming online shopping influenced by social media

Sr.	Adoption of online shopping	No. of Resp -ondents	Percentage%
1.	**Yes**	70	70%
2.	**No**	30	30%

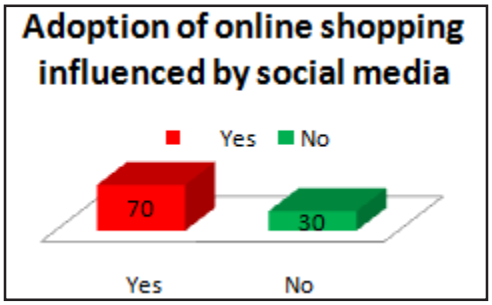

Here 70 % consumers of Jabalpur city accept the adoption of online shopping influenced by social media. They use online shopping like a Fashion because its restraints for them and 30% consumers do not accept this adoption, because of some reasons (like- not knowledge about internet, limited resources, don't want to take any Risk etc.)

TABLE NO.02 : No. of Respondents according to social media really helps to change the online shopping consumer's oulook.

Sr.	Social media change the online shopping consumer's outlook	No. of Res -pondents	Percen-tage%
1.	Yes	70	70 %
2.	No	30	30 %
3.	Don't know	06	06 %

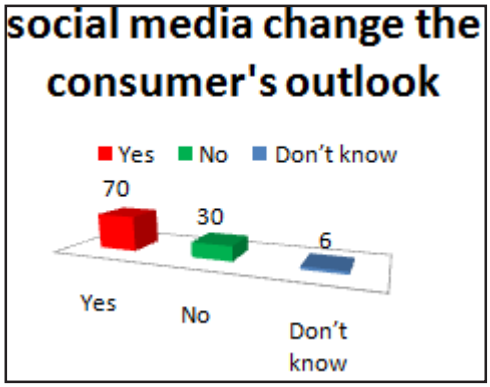

Here 70 % consumers accepted that social media really helps to change consumer's outlook . 30% consumers do not accepted that social media helps in online shopping .06 % consumers don't want to say anything in the topic. But according to the paper online shopping mostly affected by social media.

TABLE NO.03 : No. of Respondents according to buying different products and services from online shopping with the help of social media

Sr.	Buying Products / services from online shopping with the help of social media	No. of Respo -ndents	Percen -tage%
1.	Clothes(Designer)	80	80 %
2.	Grocery	20	20 %
3.	Jewellery	45	45 %
4.	Mobile recharge	05	05 %
5.	Electronic items	12	12 %
6.	Gift Items	64	64 %
7.	Reading Materials	12	12 %
8.	Ticket	36	36 %
9.	Foot wears	68	68 %
10.	Cosmetics	26	26 %
11.	Other	30	30 %

Here ,consumers mostly buy designer clothes,70 % , 68% buy foot wears, 64 % gift items. jewellery buys 45 % ,book online tickets 36% consumers. They also buy cosmetics(26%), grocery (20%) electronic items(12%), Reading materials(12%), mobile recharge (05%) and other(30%) respectively.

TABLE NO.04 : No. of Respondents according to social media's effective medium used by consumers for online shopping

Sr.	Social media's effective medium	No. of Resp ondents	Percentage%
1.	Advertisement	90	90 %
2.	Online survey	50	50 %
3.	Posts and Tags	68	68 %
4.	Short videos	29	29 %
5.	Online pages	49	49%
6.	Friends	70	70 %
7.	Services	35	35 %
8.	Other	24	24 %

Here explain to social media's effective medium used by consumers for online shopping, respondents affected by Advertisement (90%) ,Friends (70%), Posts and tags(68%),online surveys(50%), online pages (49%) , services (35%),short videos (29%) and others (24%)respectively.

TABLE NO.05 : No. of Respondents according to social networks is mostly influenced of consumers

Sr.	Social Networks	No. of Resp -ondents	Percentage%
1.	Facebook	72	72 %
2.	Messenger	42	42 %
3.	Twitter	26	26 %
4.	What's app	65	65 %
5.	Youtube	66	66 %
6.	Other	32	32%

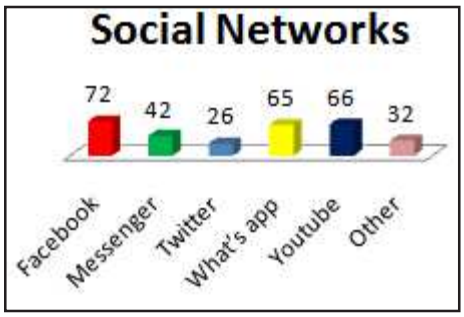

Here 72 % consumers of Jabalpur city accept mostly facebook social network affected for online shopping. After that Youtube (66%), What's app (65%), Messenger (42%),

Twitter (26%) and others (32%) most affected social network to change outlook of online shopping consumers

Conclusion - social networks throughout the world has made new place of interaction and communication among people. Individuals can share their knowledge, experience and opinions with each other using features provided by these social media sites and creates significant impact on people's behavior of shopping online. Today, with the growth of Internet, social media sites have become important communication channels for the users. Groups that may never meet in physical world but nevertheless they are able to affect the behavior of other people including online purchasing decisions. The social media sites provides facilities for consumers to interact with one another, accessing to information, comments, reviews, and rates that helps them in purchasing decisions in several ways.

Social media shopping refers to the use of virtual social networks, peer reviews and other online social tools in the purchasing process. Today's consumer is heavily influenced by the choices ,which is further reflected in the way brands are using social media to capture attention. Facebook has been a primary vehicle for brands in not only the promotion of products. This research found that social media and online shopping both are inter- related and this bonding changes consumer's outlook very silently.

References :-

1. Lee, Mathew K.O., Na Shi., Christy M.K. Cheung, Kai H. Lim and Choon Ling Sia. 2011. Consumer's decision to shop online: The moderating role of positive informational social influence. Journal of information and management. 48(11): 185-191. .
2. Nunnally, J. C. (1978). Psychometric testing. New York: McGraw Hill.
3. Peterson, R. A., Balasubramanian, S., & Bronnenberg, B. J. (1997). Exploring the Implications of the Internet for Consumer Marketing. Academy of Marketing Science, 25(4), 329-346. http://dx.doi.org/10.1177/0092070397254005
4. Ross, C., Orr, E. S., Sisic, M., Arseneault, J. M., Simmering, M. G., & Orr, R. R. (2009). Personality and motivations associated with Facebook use. Computers in Human Behavior, 25, 578-586. http://dx.doi.org/10.1016/j.chb.2008.12.024
5. Trusov, M., Bucklin, R. E., & Pauwels, K. (2009). Effects of Word-of-Mouth Versus Traditional Marketing: Findings from an Internet Social Networking Site. Journal of Marketing, 73, 90-102. http://dx.doi.org/10.1509/jmkg.73.5.90
6. Vellido, A, Lisboa, P. J. G., & Meehan K. (1999). Segmentation of the on-line shopping market using neuralnetworks. Expert Systems with Applications, 17, 303-14.http://dx.doi.org/10.1016/S0957-4174(99)00042
7. Vinerean Simona, Iuliana Cetina, Luigi Dumitrescu & Mihai Tichindelean. 2013. The Effects of Social Media Marketing on Online Consumer Behavior. International Journal of Business and Management;. 08(14): 66-79.

Website Referred-

1. www.google.com
2. www.googlescholar.com
3. www.wikipedia.com

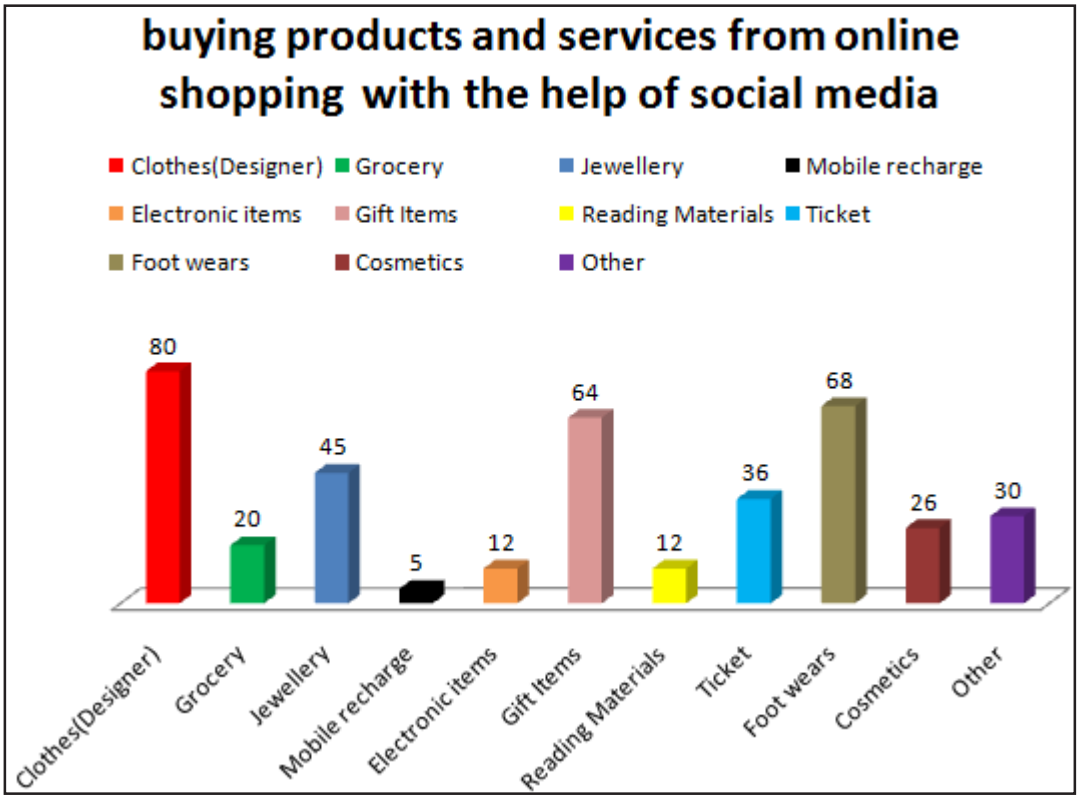

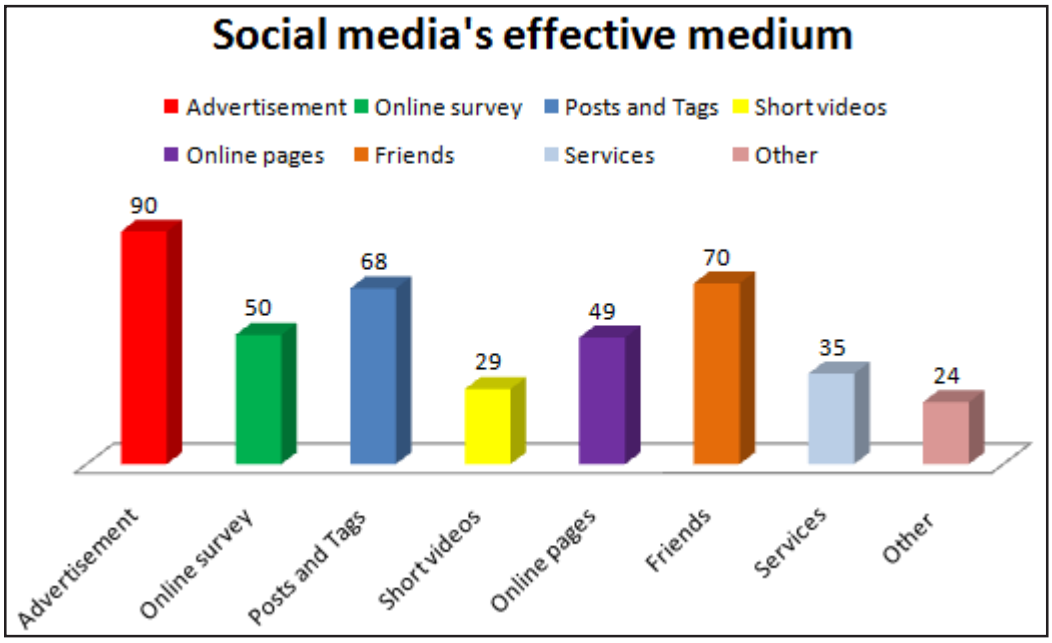
Social media's effective medium
Advertisement
Online survey
Posts and Tags
Short videos
Online pages
Friends
Services
Other
90
50
68
29
49
70
35
24
Advertisement
Online survey
Posts and Tags
Short videos
Online pages
Friends
Services
Other

****

Effects Of Coarse Grains On Blood Pressure & Haemoglobin Level Of Type II Diabetic Patients Of Urban Area Of Bhopal (M.P.)

Neetu Pal * Dr. Meenal Phadnis **

Abstract - The benefits of coarse grains one or many had been researched in past to prove their beneficial effects on Type II diabetes, weight,CVD,B.P.But no research had been done on collective effect of all coarse grains(black gram,,cracked wheat, corn meal,,millets,pulses,oats, soy) on blood pressure and hemoglobin level of type II diabetic individuals.So,this topic is chosen for research after finding the need of this research for type II diabetic individuals. The hypothesis is that their will be no effect on blood pressure and hemoglobin level of type II diabetic patients.The result indicates maintenance of blood pressure at optimum level of 130/80mmHg and increase in the hemoglobin level of the type II diabetic patients after consumption of coarse grains.

Key words - black gram, cracked wheat, corn meal,,millets,pulses,oats, soy, Type II diabetic patients ,B.P,hemoglobin.

Introduction - The prevalence of diabetes is increasing in word and India tremendously .Soon making India diabetic hub.(Joshi SR et al 2007,Kumar A et al 2013).Hence the need of widely applicable strategies to reduce diabetes and the complications associated with it . Diabetes is fundamentally a condition of disordered metabolism(Walter willett et al 2002) in which the amount of glucose(sugar) in the blood is too high because the body can't use it properly. IN type II diabetes B.P problem is also common and it is a first sign of CVD.So it is also important to manage B.P of the patient to keep the complications of type II diabetes at bay .Hemoglobin level is important for normal individual so much but still the importance of hemoglobin had not been considered for type II diabetic patients and there is no research work found for type II diabetic patients.

In this research coarse grains were considered as all dried grains(pulses and cereal) consumed either in powdered form or broken but with its all physical components intact as whole grain atta,cracked wheat etc. The whole of grain consist of so many vital nutrients which help in reducing maintaining proper B.P level and help in improving haemoglobinlevelof type II diabetic patients.The benefits of coarse grain(cereals) in form of whole ,cracked for atta with all physical constituents intact documented in many repeated and recent studies studies are

1. Reduction in stroke risk by 30-36% ,
2. Reduced type 2 diabetes risk by 21-30%
3. Reduced heart disease risk by 25-28%
4. Better weight maintenance or weight loss to some extent
5. Healthier blood pressure levels

Benefits of pulses with its husk intact in whole form like kidney beans or split form like black gram.

Dietary fibre has a range of health benefits:

1. Lower risk of heart disease
2. Manage and reduce risk of type 2 diabetes
3. Improved weight control
4. Improved digestive health
5. lower risk of digestive disorders (grains & legumes nutrition council 2016).

The possible components of coarse grains which makes them good for type II diabetic patients is that they are rich in energy-giving carbohydrates, with a low glycemic index rating for blood glucose control,a good source of B-group vitamins (especially folate), iron, zinc, calcium and magnesium,Abundance in fibre, including both insoluble and soluble fibre, plus resistant starch for colonic health benefits.

Despite so many health benefits of coarse grains they are not abundantly consumed by the individuals. So it become necessary to do the research to make people aware of benefits of coarse grains, to give them variety in their diet, to make their daily diet plan interesting and help them manage their blood pressure , hemoglobin level and to minus the monotonicity of their diet.

Cereal And Pulses-Blood Pressure (B.P) - Blood pressure problem ia also associated with type 2 diabetes.The beneficial effects of whole grains and pulses is also seen on blood pressure of type 2 diabetic individuals and many researches have been done to support the blood pressure lowering effects of whole grains and pulses.Oat or oats fiber consumption reduces insulin concentrations,the reduction in insulin concentration may provide a mechanism by which blood pressure could be reduced in response to oats consumption(Saltzman et al 2001)).,low glycemic index of oats may help in regulating blood sugar levels(Varma et al2016).The consumption of wholegrain oat cereal was associated with improved blood pressure control and reduced the need for antihypertensive medications(pins et al 2002).The whole grains consumption reduces blood pressure(Appel et al 1997).Studies have confirmed that barley lowers blood pressure(Hallfriser et al 2003).

Cereal And Pulses-H.B% - No studies were found where the effect of whole grain and pulses was studied on haemoglobin level of diabetic and non diabetic individuals.Where as whole cereals and pulses are rich sources of protein,iron,folicacid,magnesium,copper which

* Research Scholar (HomeScience) Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA
** Professor, Govt. Maharani Laxmibai Girls (Auto) College, Bhopal (M.P.) INDIA

help in the formation of blood with good amount of Hb%.

Methodology - For the purpose urban area of Bhopal(M.P) is taken as sample area.Then the area was divided into five zones i.e north ,east,south,west and center. As the research work is experimental so the sample size taken was 30 -30 so that statistics could be used to its best to verify the work, with 6-6 patients from each zone.

Sample Size - The sample thus selected was divided into two groups:-

A - Control group B - Experimental group

Eligibility criteria of sample - The sample thus taken was supposed to be type II diabetic,resident of Bhopal,s urban area because the study was on type II diabetic patients of urban area of Bhopal,also their lipid profile was also considered as one of the factor for the study to be chosen as sample.

Locations where the data were collected - The required data was collected from Krishana diabetic clinic and research center near matamandir,Bhopal M.P (India)

Sampling technique -The sampling method used to select the sample was purposive as specific type of sample was required for the research work. **Period**:-The sample was observed for the time period of 3-4 months for the required data . Everything was recorded at the prescribed time decided previously for the different attributes/variables. For this the sample of experimental was asked to consume 200-250gm of coarse grain(daliya,whole wheat atta, makki ka atta,oats,jawar, bajra, moong ,urad, kidney beans,lentil,blackgram,etc).The improvement was tested on different variables after a period of 3-4 months.First reading was taken the time the sample was selected for the sudy,then the follow up was made regularly every month and then after 3rd month final reading was taken.

Other Effects Of Study - There was no harmful effect of the study on the sample where as it had some beneficial effects as relieve in constipation, less time taken in morning ,long satiety .

Generalization of result - The result could be generalized for the whole Bhopal or M.Ps or on Indias urban area as the sample taken represents whole Bhopal in best possible way.

Tools Used - Different sort of tools were used to collect the required data for the proposed research work. Those tools are listed below:-

1. Questionnaire 2. Blood pressure 3. Hb%

Result (see in bottom)

Blood Pressure - The result indicates in both the cases with slight difference the B.P of type II diabetic individuals is maintained at the almost near to 130/80 mmHg level as desired the individuals by increase of 5.90 mmHg in control groups systole pressure & decrease of 1.60mmHg in systole of experimental group.Whereas the diastole of both the cases remain near to 80 mmHg with minute differences.

Haemoglobin - The result shows minute increase of 0.36% in average haemoglobin level of male of control group with initial of 13.07% to final of 13.96%.The result shows increase of 1% in average haemoglobin level of male of experimental group with initial of 13.81% to final of 14.81% The result shows minute decrease of 0.04%in average haemoglobin-levelof female of control group with initial of 12.48% to final of 12.44%.The result indicates minute increase of 0.95% in average haemoglobin level of female of experimental group with initial of 11.89 % to final of 12.84%.

Conclusion - The conclusion drawn from the research work is that the consumption of whole grains in regular diet enables type II diabetic patients to maintain their B.P levels at desired levels.It also helps in improving haemoglobin level of both male and female type II diabetic patient.

References :-

1. *Appel LJ, Moore TJ, Obarzanek E, et al. A clinical trial of the effects of dietary patterns on blood pressure. DASH Collaborative Research Group.* N Engl J Med 1997;336:1117–*24.*
2. Hallfrisch JG, Scholfield DJ, Behall KM. Blood pressure reduced by whole grain diet containing barley or whole wheat and brown rice in moderately hypercholesterolemic men. Nutr Res. 2003;23:1631-42.
3. Joshi SR, Parikh RM. India - diabetes capital of the world: now heading towards hypertension. J Assoc Physicians India. 2007;55:323–4.
4. Kumar A, Goel MK, Jain RB, Khanna P, Chaudhary V. India towards diabetes control: Key issues.Australas Med J. 2013;6(10):524–31.
5. Pins JJ, Geleva D, Leemam K, Frazer C, O'Connor PJ &Cherney LM (2002) Do whole-grain oat cereals reduce the need for antihypertensive medications and improve blo
6. Varma P, Bhankharia H, Bhatia S. Oats: A multi-functional grain. J ClinPrevCardiol 2016;5:9-17
7. Saltzman E, Das SK, Lichtenstein AH, Dallal GE, Corrales A, Schaefer EJ, et al. An oat-containing hypocaloric diet reduces systolic blood pressure and improves lipidprofilebeyond effects of weight loss in men and women. JNutr2001;131:1465-70
8. *Sacks FM, Svetkey LP, Vollmer WM, et al. Effects on blood pressure of reduced dietary sodium and the Dietary Approaches to Stop Hypertension (DASH) diet. DASH-Sodium Collaborative Research Group.* N Engl J Med2001;344:3–*10.*
9. Willet walter,Joann Manson and SiminLiu; Glycemic Index,glycemic load and risk of type II diabetes 1'2'3.American society for clinical Nutrition 2002

	Blood pressure mmHg	
	CONTROL GROUP	EXPERIMENTAL GROUP
INITIAL(avg)systole (mmHg)	123.83	131.26
FINAL(avg)systole(mmHg)	124.733	129.66
INITIAL(avg) Diastole (mmHg	80	80.76
FINAL(avg)Diastole (mmHg)	79.93	80.63

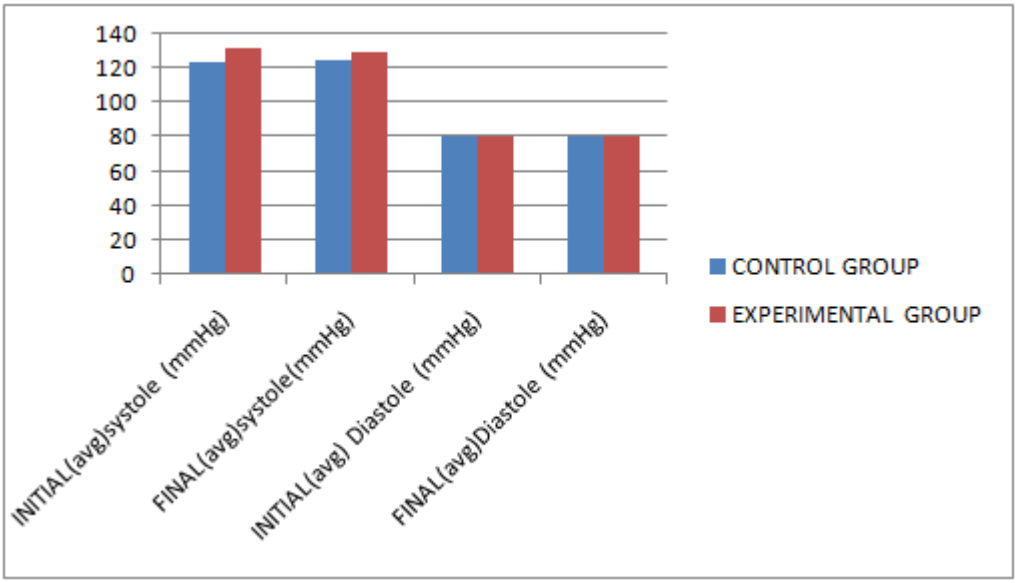

	Haemoglobin Hb%	
AVERAGES	CONTROL GROUP	EXPERIMENTAL GROUP
INITIAL(avg) Male(Hb%)	13.07	13.81
FINAL(avg) Male(Hb%)	13.96	14.81
Diff(avg) Male(Hb%)	0.36	1
INITIAL(avg) Female(Hb%)	12.48	11.89
FINAL(avg) Female(Hb%)	12.44	12.84
Diff(avg) Female(Hb%)	-0.04	0.95

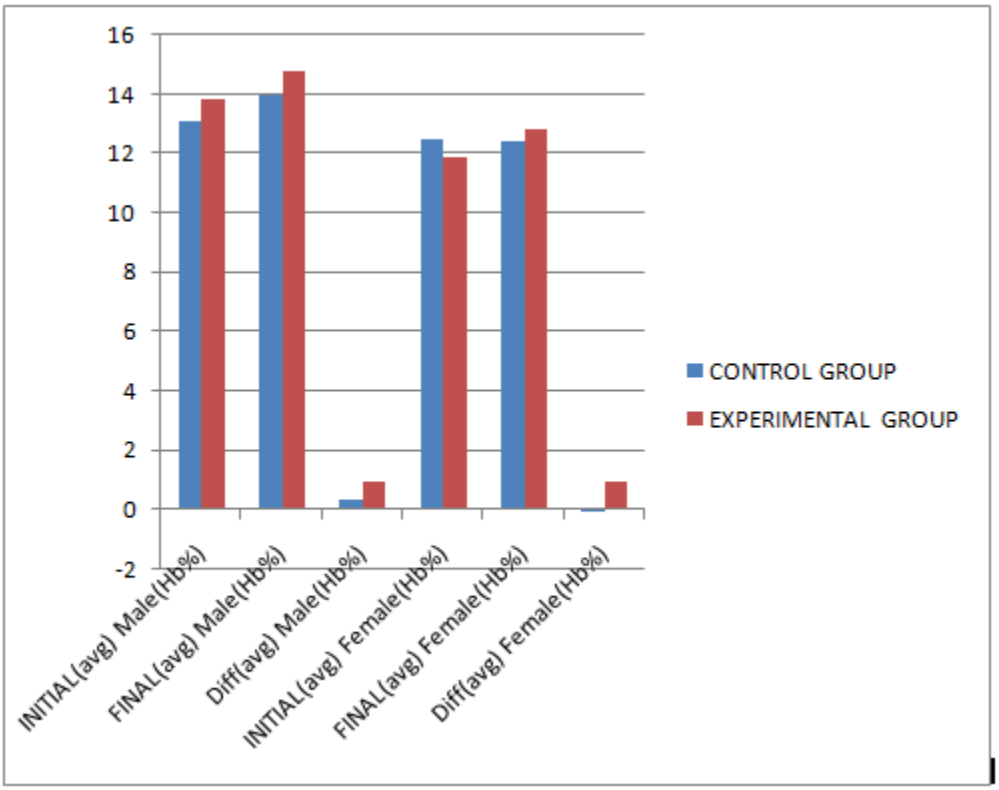

A Study on Role of Education in Women Empowerment

Rashmi Kandare *

Abstract - Women education is a catch all term for a complex set of issues and debates surrounding education. It is a field that finds top priority in the modern India. There is no tool for development more effective than the education of girls. Education not only brings equalities but it also improves their status within the family and in the society. In this study, we discuss the barriers of the women education, literacy rate of the women and policies for women education implemented by the Indian government.
Keywords - Education, woman, nation, development, participation and empowerment.

Introduction - : Education is the process of facilitating learning or the acquisition of knowledge, skills, values, beliefs and habits. It is the fundamental right of every individual. Women education is equally important to the male education. Educating a woman means educating the family, the society and the entire nation. We must understand the value of the female education. Women education is the very essential tool in the women empowerment. An educated women aware of her rights. She can fight for her rights. Empowering women has become the focus of considerable discussion and attention all over the world. Women empowerment not only means to empower the women but it also means to empower our nation. Women play very essential role in our society but still she holds second position. As we are living in a male-dominant society, women deprive from their basic rights. Women must be given the freedom to live their lives in the manner they prefer.

Every woman has a special care to build something like they can make a family how nicely. So, if they can get the equal power in every sphere in society then they can make a beautiful society. A woman has a lot of patience and wisdom than a man and these two great qualities can make a peaceful developed nation.

Famous leader Pt. Jawaharlal Nehru- had said we can tell the condition of the nation by looking at the status of woman.

Need of the Study - In India, still discrimination is present between men and women. Nowadays, newspaper and visual media often report about the girl abuse. This study is aimed to evaluate women status in the society.

Objective of the Study :

1. To know the no. of educated women and make them capable of participating in the economic and social development of the country.
2. To know social status of the female in the society.

Problems in women education - (a) Early marriage (b) Lack of security (c) Conservative traditionalism (d) Eve-teasing is a major factor for breaking the female education. (e) Poverty (f) Lack of adequate education facilities (g) Problem of transport (h) Problem of co-education (i) Expectations of domesticity (j) Child Labour (k) Women trafficking (l) Lack of women teachers for women education (m) Infrastructure barriers.

Women Literacy Rate in India - Gender discrimination still persists in our society. The gap in the male-female literacy rate is just a simple indicator. While the male literacy rate is more than 82.14% and the female literacy rate is just 65.46%.

Let's see the difference in the literacy rate since 1951 between men and women in given table are as under :

Literacy Rate by sex in India (1951- 2011)

Census Year	Persons	Males	Females
1951	18.33	27.16	8.86
1961	28.30	40.40	15.35
1971	34.45	45.96	21.97
1981	43.57	56.38	29.76
1991	52.21	64.13	39.29
2001	64.84	75.26	53.67
2011	74.04	82.14	65.46

Results show that at no point could the literacy rate of women match that of men. That's why women can't enjoy their rights due to lack of education. Therefore, women education is must for the better future of women society.

Welfare Schemes for Women in India - Indian government is seriously working to increase the ratio of women education. The following measures have been taken by the Indian government towards women education :

1. The National Plan of Action for Women (NPA) adopted in 1976 became a guiding document for the development of women till 1988. When a national perspective plan for women was formulated.

* **Research Scholar (Home Science) Jai Narain Vyas University, Jodhpur (Rajasthan) INDIA**

2. The National Perspective Plan for women (NPP) (1988-2000) drafted by a core-group of experts is more or less a long term policy document advocating a holistic approach for the development of women.
3. Article 42 directs the state to make provision for ensuring just and humane conditions of work and maternity relief.
4. Above all, the constitution imposes a fundamental duty on every citizen through Article 15(A) (e) to renounce the practices derogatory to the dignity of women.
5. Article 39(a) further mentions that the state shall direct its policy towards securing all citizens, men and women, equally, the right to means of livelihood,
6. Article 39(c) ensures equal pay for equal work.
7. Article 14 confers on men and women equal rights and opportunities in the political, economic and social spheres.
8. Article 15 prohibits discrimination against any citizen on the grounds of religion, race, caste, sex etc.
9. Article 15(3) makes a special provision enabling the state to make affirmative discriminations in favour of women.

Conclusion - The review has not only covered a very broad range of issues and regions but has also attempted to address the literature from the perspective of both challenges and opportunities for women and girls through education.

The educated woman aware of her civil, social, political and economic rights. This will help improve the overall condition of women in the society. Importantly education may be an empowering experience in and of itself. If girls access good quality education which is provided in gender-sensitive, safe and supportive environments, they may be able to develop self-awareness and confidence to overcome the very broad challenges they face as a result of gender inequality.

References :-

1. ‘‘Constitutition of India” (PDF). December 2007. Retrieved 21 June 2014.
2. Suguna M. (2011). Education and Women Empowerment in India. International journal of Multidisciplinary Research: VOL. 1. Issue 8.
3. ‘‘Empowering the Adolescent Girls- Sabla”. Government of India Press Information Bureau.2012. Retrieved 21 June 2014.
4. Shindu J. (2012). Women’s Empowerment through Education. Abhinav journal: Vol. 1. Issue- 11.p.3.
5. ‘‘Indira Gandhi Matritva Sahyog Yojana”. Government of India Press Information Bureau. 1 March 2013, Retrieved 21 June 2014.
6. Bhat T. (2014) Women’s Education in India Need of the Ever. Human Rights International research journal: Vol. 1 p.3.
7. ‘Policy Department C: Citizens’ Rights And Constitutional Affairs (2015) Empower women and girls through education.

****

स्तनपान का महत्त्व

डॉ. मीनल फड़नीस * नेहा श्रीवास्तव **

शोध सारांश – मां का दूध स्वच्छ और रोगाणु रहित होता है। जन्म के तुरंत बाद शिशु को स्तनपान कराएं 06 माह तक शिशु को सिर्फ मां का दूध दें। मां का दूध बच्चे के लिए संपूर्ण आहार है, जो बच्चे को स्वस्थ एवं प्रसन्न रखता है। मां का दूध उत्तम है शिशु को स्वस्थ रखने के लिए यह प्रकृति की देन है। पौष्टिक तत्वों की समस्त आवश्यकताएं इससे पूर्ण होती हैं और बच्चे का संपूर्ण विकास होता है, साथ ही इसमें ऐसे विशेष तत्व होते हैं, जो बच्चे का रोगों से बचाव करते हैं।

शब्द कुंजी – महिला शिशु स्तनपान कोलस्ट्रम।

प्रस्तावना – नवजात को सही समय पर स्तनपान, उसे कुपोषण से बचाने की उत्तम सहायता है। स्तनपान परिहार्य संक्रमणों से बच्चे का बचाव भी सुनिश्चित करता है। मां का दूध नवजात शिशु के लिए अमृत समान होता है, बच्चे का शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य का आधार माँ का प्रथम कोलस्ट्रम युक्त दूध होता है।

'हेवल एलिस के अनुसार'

'बालक के लिए मां का दूध का महत्व है, वह किसी अन्य प्रकार से प्राप्त नहीं किया जा सकता'

बचपन में और शैशावास्था के आरंभ में होने वाली समस्त मौतों के 50%से अधिक मौतों का प्रत्यक्ष व परोक्ष कारण कुपोषण है। कुपोषण बच्चों को संक्रमण के लिए पहले से तैयार कर देता है जिससे प्रभावित बच्चा और भी अधिक कुपोषित होता चला जाता है। प्राय: सोचा जाता है कि गरीबी और अभाव के कारण अपर्याप्त आहार लेने से कुपोषण होता है, किंतु नवजात और छोटे शिशु को खिलाने पिलाने संबंधी अज्ञान और बच्चों के पोषण से जुड़े कुछ सांस्कृतिक विवाद जैसे– स्तनपान में देरी, प्रथम स्तन्य कोलस्ट्रम (खीस)का परित्याग और नवजात को प्रथम दूध का रंग पीला देखकर उसे बच्चे को ना पिलाना, पूरक आहार के रूप में शहद और बोतल का दूध देना, पानी पिलाना और प्रसव के कुछ माह बाद स्तनपान बंद करना प्रचलित प्रथाएं हैं।

कोलस्ट्रम का महत्व – कोलस्ट्रम शिशु के लिए शुरुआती आहार के लिए उत्तम भोजन है क्योंकि उसका पेट इसे आसानी से पचा लेता है। कोलस्ट्रम में ल्यूकोसाइट WBC भी उच्च मात्रा में होता है, जो संक्रमणों से शिशु की रक्षा करते है। कोलस्ट्रम बिलिरुबिन को बाहर निकालने में मदद करता है, जिससे पीलिया होने की संभावना घटती है। कोलस्ट्रम पोषक तत्वों जैसे– जिंक कैल्शियम और विटामिनों से जैसे A,B6,B12,घसे समृद्ध होता है, जो शिशु के संपूर्ण वृद्धि विकास के लिए आवश्यक है। कोलस्ट्रम में कोलेस्ट्रॉल की मात्रा भी उच्च होती है, जो शिशु के तंत्रिकातंत्र के विकास के लिए अनिवार्य है।

स्तनपान में रखें इन बातों का ध्यान – जन्म के एक घंटे के भीतर स्तनपान कराएं, जन्म के पहले दिन दिन–रात मिलाकर 24 घंटे में बच्चे को कम से कम 10 से ज्यादा बार स्तनपान कराएं, इससे दूध बनने की प्रक्रिया तेज हो जाती है और मां को ज्यादा दूध उतरना शुरू हो जाता है। इसलिए स्तनपान अवश्य कराएं शहद, घुट्टी, जायफल, गाय या बकरी का दूध कुछ भी ना दें। 06 माह की आयु तक बच्चे को सिर्फ स्तनपान कराएँ। स्तनपान से बच्चे का संपूर्ण विकास होता है, चाहे बच्चा बीमार हो या मां, तो भी स्तनपान जारी रखें, 06 माह की उम्र पूरी होने से पहले बच्चे को ऊपर से कुछ भी खाने पीने को ना दे, बोतल का दूध, चुसनी भी ना दें और बच्चे को किसी भी मौसम में पानी भी ना दें।

गर्भावस्था में स्तनपान का महत्व – गर्भवती स्त्रियों और परिवार के अन्य सदस्यों को जो जन्म पूर्व अस्पतालों में आते हैं, स्तनपान के लाभ और स्तनपान की विधि की जानकारी दी जानी चाहिए, जिससे कि कोई भी बच्चा प्रथम स्तनपान से वंचित ना हो सके और उसके लिए सरकार द्वारा प्रयास भी किए जा रहे हैं।

बोतल से दूध पिलाने पर रोक – बोतल से दूध पिलाने को सख्ती के साथ हतोत्साहित करना चाहिए। बोतल से दूध पीने वाले बच्चों को डायरिया का खतरा 14 गुना रहता है, साथ ही साथ यदि बच्चा बोतल का आदी हो जाता है, तो उसे स्तनपान कराना और कठिन हो जाता है। कम जन्म भार के और समय पूर्व उत्पन्न बच्चे भी स्तनपान कर सकते हैं, यदि बच्चा स्तनपान नहीं

* प्राध्यापक (गृह विज्ञान) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई गर्ल्स स्नातकोत्तर (स्वशासी) महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (गृह विज्ञान) बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

कर पा रहा तो एक कप और चम्मच की सहायता से उसे स्तन से निकला हुआ दूध पिलाएं जैसे बच्चा स्तनपान करने लगे उसे स्तन से लगा देना चाहिए परंतु बोतल का उपयोग कभी नहीं करना चाहिए।

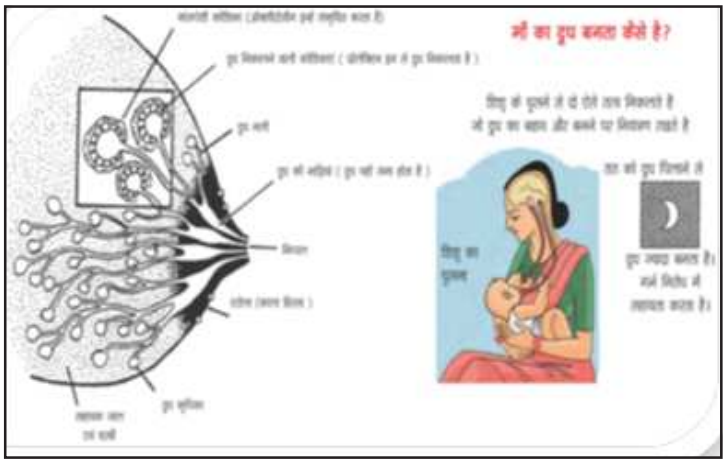

ऊपरी आहार 6 माह पूर्ण होने पर – 06 माह तक हमें केवल मां का दूध ही देना चाहिए। पानी भी नहीं मां के दूध में पर्याप्त पानी होता है परंतु 06 माह पूर्ण होने पर शिशु को मां के दूध के साथ-साथ ऊपरी आहार देना भी अति आवश्यक है, इस समय केवल मां का दूध ही पर्याप्त नहीं हो पाता, उसके आहार में अर्द्धठोस पदार्थों का समावेश किया जाना चाहिए परंतु स्तनपान 02 वर्ष तक जारी रखना चाहिए। शिशु के सम्पूर्ण स्वास्थ्य वृद्धि के लिए यह अति आवश्यक है, जिससे कि जीवन के पहले वर्ष में पर्याप्त भार वृद्धि हो।

ऊपरी आहार कब शुरू करें – 06 माह का एक निष्ठस्तनपान के पश्चात बच्चे को अर्द्धठोस ऊपरी आहार की आवश्यकता होती है। यदि इस उम्र में ऊपरी आहार की शुरुआत नहीं की गई तो शिशु की समुचित वृद्धि नहीं हो पाएगी।

ऊपरी आहार के गुण :

1. ऊर्जा का उत्तम स्त्रोत
2. पचने में आसान
3. अर्द्धठोसावस्था
4. ताजा व स्वच्छ
5. तैयार करने में सरल और बहुत गाढ़ा नहीं

तालिका 1 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

सुरक्षित तैयारी और साफ रख-रखाव – शिशु के लिए खाना बनाने एवं खिलाने से पहले और शिशु को शौच के बाद अपने एवं शिशु के हाथ साबुन एवं साफ पानी से अवश्य धोएं।

1. भोजन साफ जगह पर पकाएं और पके भोजन को ढक्कर रखें।
2. शिशु के लिए अलग बर्तन का उपयोग करें।
3. भोजन बनाने के तुरंत बाद परोसे।
4. पीने का पानी साफ बर्तन में लाएं एवं पानी को ढककर रखें।
5. पीने के पानी में हाथ, उंगलियां ना डुबोएं।
6. एक लंबे डंडे वाले साफ लोटे से पानी निकाले।

शिशु के मल को शौचालय में डालें या फिर जमीन में गाड़ दें, मल को छूने या शिशु का मल धोने के तुरंत बाद अपने हाथों को साबुन एवं साफ पानी से अवश्य धोएं।

बीमारी के दौरान आहार :

1. बीमारी के दौरान शिशु को कम मात्रा में लेकिन बार बार भोजन एवं तरल पदार्थ दें।
2. शिशु को ज्यादा बार स्तनपान कराएं।
3. मां की बीमारी में भी स्तनपान कराते रहें, इससे शिशु बीमार नहीं पड़ता है, बीमारी के बाद कम से कम02 हफ्ते तक शिशु के भोजन की मात्रा एवं बारंबारता बढ़ा दें।

निष्कर्ष – वर्ष 2014-15 में समस्त जिला पर अस्पताल को शिशु हितैषी अस्पताल के रूप में अभिप्रमाणित किया गया है। इसी तारतम्य में वर्ष 2015-16 में प्रदेश के समस्त डिलीवरी पॉइंट पर पदस्थ स्टाफ को **आए. वाय. सी. एफ.** परामर्श विषय पर उन्मुखीकरण किया गया, इस कार्यक्रम का उद्देश्य-नवजात शिशुओं को प्रसव के एक घंटे के अंदर स्तनपान सुनिश्चित किया जा सके , 06 माह की उम्र तक अनन्य स्तनपान एवं 06 माह के उपरांत पूरक पोषण आहार संबंधी सलाह दी जाती है। जिससे समुदाय में बाल मृत्यु दर, कुपोषण व नवजात शिशु को होने वाले रोगों से बचाया जा सके। इस पहल का व्यापक असर भी दिखाई देने लगा है। अब महिलाओं के मन में स्तनपान से जुड़ी भ्रांतियों में कमी आई है। महिलाएं स्वयं आगे आकर अपने बच्चे को प्रथम स्तनपान कोलस्ट्रम व **''06 माह तक अनन्य स्तनपान इसके पश्चात पूरक आहार'** के महत्व को समझ कर शासन की पहल पर इस नई दिशा में आगे बढ़ रही है। जिसके परिणाम स्वरुप बाल मृत्यु दर, कुपोषण में कमी परिलक्षित है।

(नेशनल फैमिली हेल्थ सर्वे)NFHS III और NFHS IV **अनुसार**

1. **ग्राफ 1 नवजात शिशुओं को प्रसव के एक घंटे के अंदर स्तनपान**
2. **ग्राफ 2 छः माह का उम्र तक अनन्य स्तनपान**
3. **ग्राफ 3 छः माह के उपरांत पूरक पोषण आहार**
4. **ग्राफ 4 बाल मृत्यु दर कुपोषण**

संबंधी आकड़ों से यह प्रतीत होता है की स्तनपान से जुड़ी भ्रांतियों में कमी आई है।

उपसंहार – आए. वाय. सी. एफ.कार्यक्रम के द्वारा स्तनपान के महत्व को घर घर तक पहुंचाया जा रहा है। अब माँ भी अपने शिशु को प्रथम स्तनपान (कोलस्ट्रम) से वंचित नहीं रख रही है। अब **आए. वाय. सी. एफ.**प्रोग्राम से हर माँ प्रोत्सहित होकर 06 माह तक केवल अनन्य स्तनपान एवं 06 माह पश्चात पूरक पोषण अपने शिशु को दे रही है। जिसके परिणाम स्वरूप बाल म्रत्यु दर में कमी परिलक्षित हो रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सुरक्षित मातृत्व कार्यक्रम, स्वास्थ्य परिवार कल्याण मंत्रालय, नई दिल्ली।
2. स्वास्थ्य संवाद पत्रिका, मध्यप्रदेश।
3. स्वास्थ्य सबके लिये, डॉ. जीवनलाल गांधी।
4. आहार एवं पोषण, स्वामी नाथन।
5. स्वास्थ्य कुंजी, राष्ट्रीयग्रामीण स्वास्थ्य मिशन, मध्यप्रदेश।

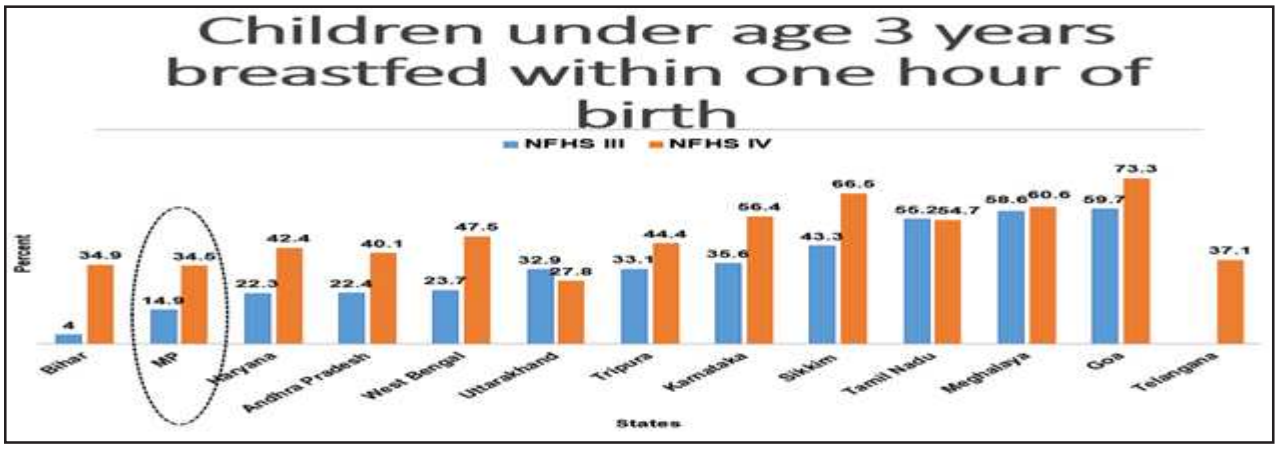

ग्राफ 1 : नवजात शिशुओं को प्रसव के एक घंटे के अंदर स्तनपान

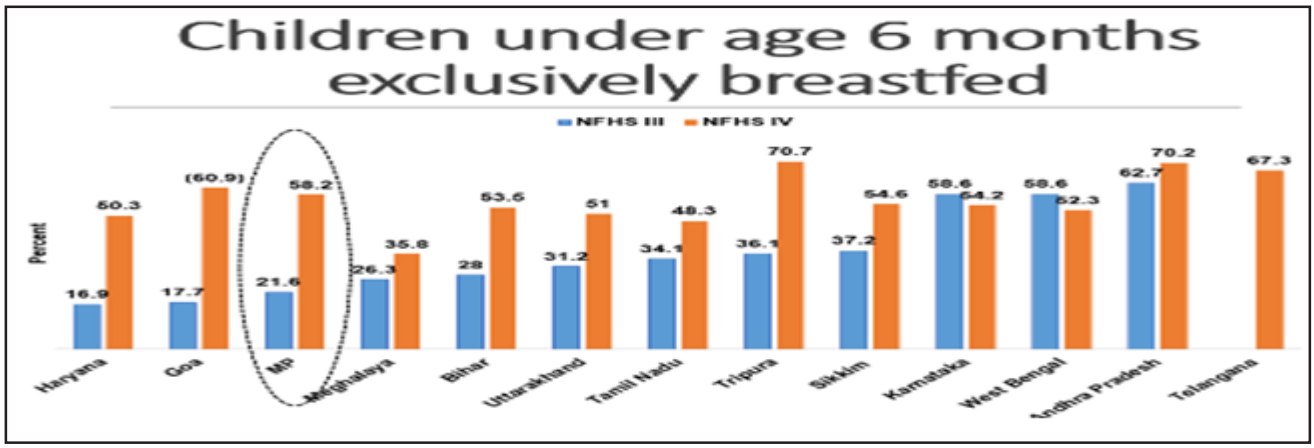

ग्राफ 2 : छ: माह का उम्र तक अनन्य स्तनपान

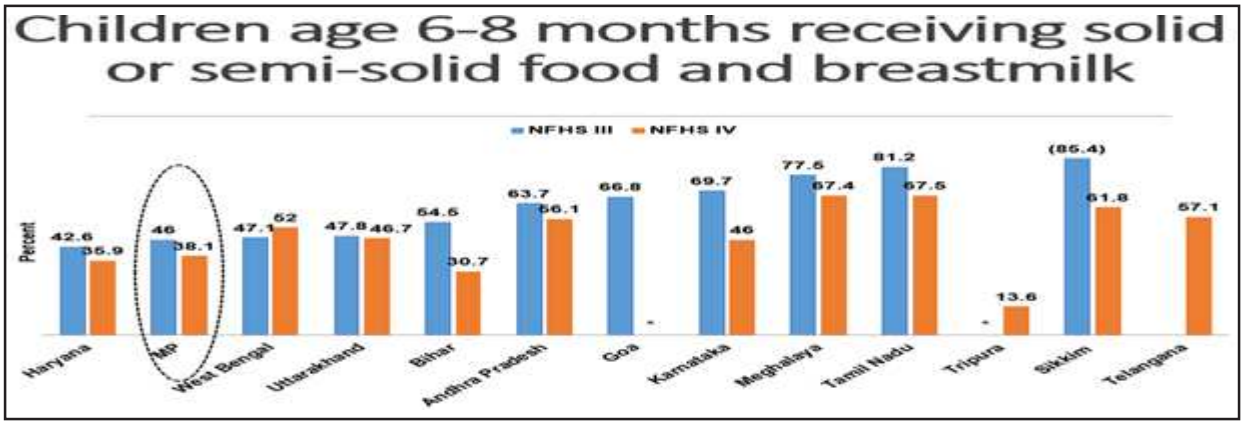

ग्राफ 3 : छ: माह के उपरांत पूरक पोषण आहार

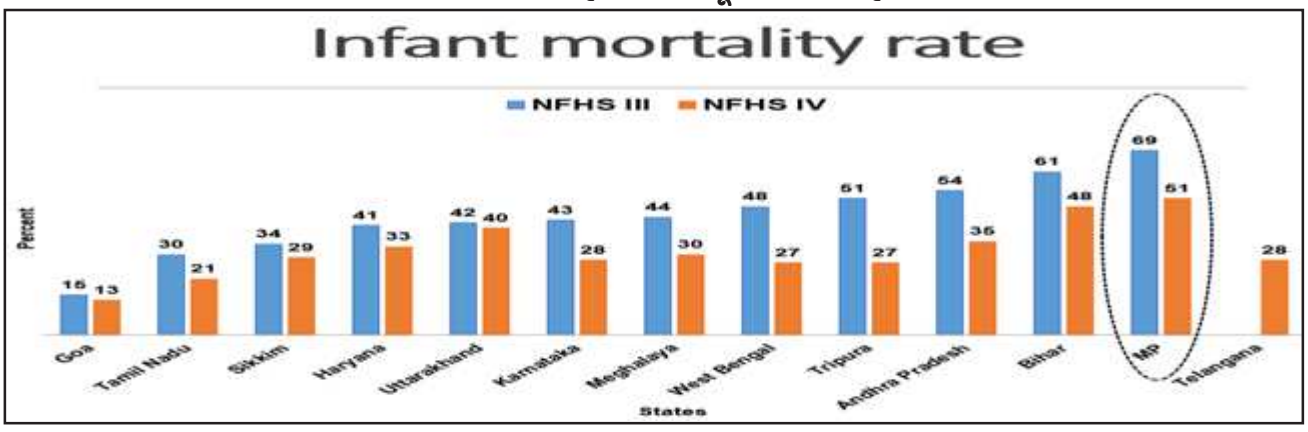

ग्राफ 4 : बाल मृत्यु दर कुपोषण

तालिका1

क्या खिलाएं

आयु	मात्रा	कितनी बार	क्या खिलाएं
06 से 09 माह	¾कटोरी एक बार में	02–03 बार आहार	● नरम दाल , दाल, चावल, दाल ,रोटी, खीर, खिचड़ी, मसली हुई सब्जियां, मौसमी फल । ● दिन रात शिशु की मांग अनुसार स्तनपान जारी रखें।
09 से 12 माह	01 कटोरी एक बार में	03–04 बार आहार और 1–2 बार नाश्ता	● नरम दाल , दाल, चावल, दाल–रोटी, कटे हुए फल आदि। ● भोजन में हरी सब्जियां एवं अच्छी तरह कटे हुए मौसमी फल खासकर पीले फल जैसे आम, पपीता, इत्यादि का उपयोग अवश्य करें। ● शिशु के इस उम्र में दांत निकलने लगते हैं, इसलिए उसे चबाने के लिए डबल रोटी गाजर का टुकड़ा दे। ● दिन–रात शिशु की मांग अनुसार स्तनपान जारी रखें। ● शिशु को अलग बर्तन में खाना खिलाए जिससे पता चलेगा कि शिशु ने कितना खाना खाया है। ● शिशु को पर्याप्त भोजन करने के लिए प्रोत्साहित करें। ● भोजन कराते वक्त शिशु को प्यार से देखें उससे बातचीत करें उसे गाने एवं कहानियां सुनाएं।
01 से 02वर्ष	1/2 कटोरी एक बार में	03–04बार आहार और 1–2 बार नाश्ता	● घर पर पका खाना दे। ● भोजन में हरी सब्जियां एवं अच्छी तरह कटे हुए मौसमी फल खासकर पीले फल जैसे आम, पपीता इत्यादि का उपयोग अवश्य करें। ● दिन–रात शिशु की मांग अनुसार स्तनपान जारी रखें।

****

कानपुर शहर के विद्यालयों में संचालित मध्यान्ह भोजन व्यवस्था

पूनम रानी * कंचन दुबे ** डॉ. मंजू दुबे ***

प्रस्तावना – जनसंख्या की दृष्टि से उत्तर प्रदेश भारत वर्ष का सबसे बड़ा प्रदेश है जिसकी आबादी 2001 की जनगणना के अनुसार 16.62 करोड़ है। विश्व का हर छठवां व्यक्ति भारत में निवास करता है तथा भारत में निवास करने वाला हर छठवां व्यक्ति उत्तर प्रदेश का निवासी है। प्रदेश में विकास के संकेतकों के अनुसार 40 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी की रेखा से नीचे है तथा कुपोषण का शिकार है। विशेषकर 6–11 आयु वर्ग के बच्चों पर कुपोषण का गंभीर प्रभाव पड़ता है। कुपोषण के कारण बच्चों में 4 प्रमुख तत्वों की कमी हो जाती है जिसके कारण बच्चों के शरीर पर पड़ने वाला कुप्रभाव तालिका–1 में प्रदर्शित है–

तालिका 1 : पौष्टिक तत्वों की कमी एवं उसके प्रभाव

क्र.	तत्व की कमी	शरीर पर प्रभाव
1.	विटामिन 'ए'	मस्तिष्क विकास एवं शरीर की प्रतिरोधक क्षमता में कमी
2.	प्रोटीन	आयु के अनुसार वजन का न बढ़ना
3.	आयोडीन	शारीरिक विकास में कमी, घेंघा रोग
4.	लौह तत्व (आयरन)	रक्त अल्पता (एनीमिया)

प्रदेश के लगभग 1.061 लाख परिषदीय प्राथमिक एवं 0.46 लाख उच्च प्राथमिक विद्यालयों में क्रमश: 1,58,65,317 बच्चे प्राथमिक विद्यालयों में एवं 44, 80, 139 बच्चे उच्च प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षा गृहण कर रहे हैं। प्रदेश की जनता का अधिकांश भाग ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करता है। शासन का यह संकल्प है कि उत्तर प्रदेश की परिकल्पना को साकार करने हेतु प्रदेश के प्राथमिक/उच्च प्राथमिक विद्यालयों, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों के प्राथमिक/उच्च प्राथमिक विद्यालयों को सुदृढ़ता प्रदान की जाए।

प्रदेश के निम्न आय वर्गीय अभिभावकों के अधिकांश बच्चे परिषदीय प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षा गृहण कर रहे हैं। एक सर्वे के अनुसार आर्थिक रूप से कमजोर परिवारों के 60 प्रतिशत बच्चे प्रात: काल बिना भोजन किए विद्यालयों में पढ़ने आते हैं।

यदि बच्चे कुपोषण का शिकार हैं, तो उनकी शिक्षा गृहण करने की क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। ऐसे छात्र सामान्यत: चार प्रकार के व्यवहार करते पाए गए हैं–

- विद्यालय में नियमित रूप से न आना।
- पढ़ाई पर ध्यान केंद्रित न कर पाने के कारण पिछड़ जाना।
- परीक्षाओं में खराब परिणाम प्रदर्शित करना।
- पढ़ाई पूर्ण करने से पूर्व विद्यालय छोड़ देना (ड्राप आउट) हो जाना।

अत: स्वस्थ्य एवं विकसित समाज की संकल्पना को साकार करने हेतु स्कूली बच्चों में कुपोषण दूर करना शीर्ष प्राथमिकता है। मध्यान्ह भोजन योजना इस दिशा में सर्वाधिक महत्वूपर्ण कदम है।

भोजन में विटामिन 'ए', प्रोटीन, आयोडीन तथा लौह तत्व (आयरन) जैसे महत्वपूर्ण तत्वों की कमी के कारण बच्चों के शारीरिक एवं मानसिक विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

वर्ष 1995 में मध्यान्ह भोजन योजना प्रारम्भ हुई थी। तत्समय प्रत्येक छात्र को इस योजना के अंतर्गत हर माह तीन किलोग्राम गेहूँ या चावल उपलब्ध कराया जाता था। केवल खाद्यान्न उपलब्ध कराए जाने से बच्चों का स्वास्थ्य एवं उनकी स्कूल में उपस्थिति पर अपेक्षित प्रभाव नहीं पड़ा।

भारत सरकार द्वारा निर्देशित किया गया था कि बच्चों को समस्त प्रदेशों में मध्यान्ह अवकाश में पका–पकाया भोजन उपलब्ध कराया जाए।

प्रदेश में दिनांक 01 सितम्बर, 2004 से पका–पकाया भोजन प्राथमिक विद्यालयों में उपलब्ध कराने की योजना आरम्भ कर दी गई थी। कालान्तर में उच्च प्राथमिक विद्यालयों में यह योजना अक्टूबर 2007 से प्रदेश के 66 जनपदों के शैक्षिक रूप से पिछड़े विकासखण्डों में स्थित विद्यालयों में लागू की गई। अप्रैल, 2008 से प्रदेश के समस्त जनपदों एवं विकासखण्डों में स्थिति उच्च प्राथमिक विद्यालयों में यह योजना विस्तारित की गयी। वर्तमान में भारत सरकार द्वारा निर्धारित किया गया है कि प्राथमिक विद्यालयों में बच्चों को उपलब्ध कराए जा रहे भोजन में कम से कम 450 कैलोरी ऊर्जा व 12 ग्राम प्रोटीन तथा उच्च प्राथमिक विद्यालयों में बच्चों को उपलब्ध कराए जा रहे भोजन में कम से कम 700 कैलोरी ऊर्जा व 20 ग्राम प्रोटीन उपलब्ध हो।

- **मध्यान्ह भोजन योजना कार्यक्रम के मुख्य उद्देश्य –** प्रदेश सरकार शिक्षा की विभिन्न योजनाओं में अत्यधिक पूंजी निवेश कर रही है। इस पूंजी निवेश का पूर्ण लाभ तभी प्राप्त होगा जब बच्चे कुपोषण से मुक्त होकर अपनी पूर्ण क्षमता से शिक्षा निर्बाध रूप से गृहण करते रहें। मध्यान्ह भोजन योजना इस लक्ष्य को प्राप्त करने में महत्वपूर्ण कड़ी है। इस योजना के माध्यम से शिक्षा के सार्वभौमीकरण के निम्न लक्ष्यों की प्राप्ति होगी–
- नामांकन में वृद्धि।

* शोधार्थी (गृह विज्ञान) शा.क.रा.क. स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (भूगोल) शा.क.रा.क. स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
*** प्राध्यापक एवं विभाध्यक्ष (गृह विज्ञान) शा.क.रा.क. स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

- छात्रों को स्कूल में पूरे समय रोके रखना तथा विद्यालय छोड़ने की प्रवृत्ति (ड्राप आउट) में कमी।
- निर्बल आय वर्ग के बच्चों में शिक्षा गृहण करने की क्षमता विकसित करना।
- छात्रों को पौष्टिक आहार प्रदान करना।
- विद्यालय में सभी जाति एवं धर्म के छात्र-छात्राओं को एक स्थान पर भोजन उपलब्ध करा कर उनके मध्य सामाजिक सौहार्द्र, एकता एवं परस्पर भाई-चारे की भावना जागृत करना।
- **योजना का आच्छादन**

यह योजना निम्न प्रकार के विद्यालयों में संचालित है-

- परिषदीय प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालय।
- राजकीय एवं राज्य सरकार से सहायता प्राप्त प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालय।
- समाज कल्याण विभाग से अनुदानित/सहायता प्राप्त प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालय।
- ई.जी.एस. एवं ए.आई.ई. केन्द्र।
- अल्प संख्यक कल्याण विभाग द्वारा अनुदानित कक्षा 1 से 8 तक की शिक्षा उपलब्ध कराने वाले मदरसे।

योजना का नया स्वरूप – यह अनुभव किया गया कि थोड़ी धनराशि और अधिक व्यय करने पर भोजन को और पौष्टिक एवं सुस्वादु बनाया जा सकता है। अत: 26 दिसम्बर, 2009 से परिवर्तन लागत में वृद्धि करते हुए प्राथमिक विद्यालयों हेतु रू. 2.50 प्रति छात्र प्रतिदिन एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों हेतु रू. 3.75 प्रति छात्र प्रति दिन की दर निर्धारित की गयी है। इससे भोजन में पौष्टिक तत्व, स्वाद, गुणवत्ता एवं मात्रा में वृद्धि होना स्वाभाविक है। रसोइयों के लिए मजदूरी की व्यवस्था परिवर्तन लागत से अलग करते हुए रू. 1000/- प्रतिमाह निर्धारित की गयी है।

प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों में पके-पकाये भोजन की उपलब्धता सुनिश्चित करने हेतु निम्नांकित समितियों का गठन किया गया है-

- ग्राम पंचायत स्तर पर गठित समिति
- नगर क्षेत्रों के स्तर पर गठित वार्ड समिति
- जनपद स्तरीय समिति
- राज्य स्तरीय समिति

उद्देश्य –कानपुर शहर के विद्यालयों में संचालित मध्यान्ह भोजन व्यवस्था एंव उसके कार्मिक प्रबंध का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि –कानपुर शहर के विद्यालयों में संचालित मध्यान्ह भोजन व्यवस्था एवं उसके कार्मिक प्रबंध का अध्ययन करने हेतु शहर से देव निदर्शन (Random sampling) द्वारा मध्यान्ह भोजन व्यवस्था संचालित 09 विद्यालयों का चयन किया गया। तथ्यों का संकलन अनुसूची द्वारा किया गया। प्राप्त तथ्यों के वर्गीकरण एवं विश्लेषण के पश्चात् निष्कर्ष प्राप्त किए गये।

निष्कर्ष :

- सर्वेक्षित विद्यालयों के संस्था प्रमुखों में महिला संस्था प्रमुखों का प्रतिशत **66.65%** तथा पुरूष संस्था प्रमुखों का प्रतिशत **33.33%** पाया गया।
- सर्वेक्षित विद्यालयों में मार्गदर्शिता के अनुरूप वार्ड समितियों का गठन किसी भी विद्यालयों में नहीं किया गया।
- शत प्रतिशत विद्यालयों में भोजन पकाने एवं सामग्री के संग्रहीकरण हेतु पर्याप्त स्थान पाया गया।
- समस्त विद्यालयों में गैस के चूल्हों का प्रयोग किया जा रहा है। पारम्परिक मिट्टी के चूल्हों का प्रयोग होता नहीं पाया गया।
- शासन द्वारा मध्यान्ह भोजन व्यवस्था युक्त विद्यालयों में गैस एवं बर्नर, भोजन पकाने हेतु बर्तन आदि पर्याप्त मात्रा में पाए गए।
- मध्यान्ह भोजन व्यवस्था हेतु प्रति छात्र प्रतिदिन 100 ग्राम खाद्यान प्रदान किया गया। वर्ष 2011-2012 में चयनित विद्यालयों में 1 क्विंटल 33 किलो 800 ग्राम खाद्यान उपलब्ध कराया गया।
- विद्यालयों में शासन के निर्धारित मापदण्डों के अनुकूल 'ए' ग्रेड चावल का उपयोग पाया गया।
- शत प्रतिशत विद्यालयों में आयोडाइड नमक का उपयोग होता पाया गया।
- समस्त विद्यालयों में एग्मार्क युक्त मसालों का उपयोग होता पाया गया।
- शत प्रतिशत विद्यालयों में सील्ड एवं पैक्ड तेल का उपयोग होता पाया गया तथा 11.11 प्रतिशत विद्यालयों में सील्ड एवं पैक्ड तेल का प्रयोग होता नहीं पाया गया।
- मध्यान्ह भोजन व्यवस्था के अन्तर्गत उच्च स्तर के खाद्यान्न का प्रयोग होना पाया गया।
- शत प्रतिशत विद्यालयों में शासन द्वारा निर्धारित मेन्यू के अनुसार भोजन वितरित होता पाया गया।
- शत प्रतिशत विद्यालयों में शुद्ध जल की व्यवस्था सन्तोषजनक पाई गई।
- मध्यान्ह भोजन व्यवस्था हेतु 33 रसोईयों (Cooks) के स्थान पर 22 नियुक्तियाँ की गई। इस प्रकार 11 रसोईयों की कमी पाई गई।
- अधिकांश रसोईये (Cooks) 35 वर्ष से अधिक आयु के पाए गए।
- शत प्रतिशत रसोईये महिलाए पायी गई जिनमें सामान्य जाति की महिलाओं का प्रतिशत सर्वाधिक 36.6% पाया गया। अनुसूचित जाति एवं पिछड़ा वर्ग की महिलाओं का प्रतिशत एक समान 31.81% पाया गया तथा अनुसूचित जनजाति की महिलाओं का प्रतिशत निरंक पाया गया।
- समस्त महिलाए विवाहित पाई गईं जिनमें 4.54% तलाकशुदा तथा 31.81% विधवा शामिल हैं।
- शत प्रतिशत महिलाओं को प्रतिमाह 1000 रूपये वेतन प्रतिमाह चैक द्वारा भुगतान किया जाता है।
- शत प्रतिशत विद्यार्थी मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित हुए पाए गए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. मध्यान्ह भोजन योजना संदर्शिका, मध्यान्ह भोजन प्राधिकरण, उत्तरप्रदेश।
2. पूनम रानी, दुबे एम., ''कानपुर जिले के प्राथमिक विद्यालयों की मध्यान्ह भोजन व्यवस्था का बालकों के पोषण स्तर पर प्रभाव का अध्ययन'', अप्रकाशित शोध प्रबंध, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)।
3. कानगो, मंगला, ''पोषण एवं पोषण स्तर'', पुर्नमुद्रण 2008, रिसर्च पब्लिकेशन्स, त्रिपोलिया बाजार, जयपुर-2।
4. पल्टा, अरूणा, ''आहार एवं पोषण'', शिवा प्रकाशन, आगरा।

इंदौर शहर की कामकाजी महिलाओं में व्यावसायिक तनाव एंव चिंता का अध्ययन, उनके परिवार के प्रकार के संदर्भ में

डॉ.छाया हार्डिया * महेन्द्रप्रताप लोखण्डे **

शोध सारांश – व्यावसायिक तनाव व चिंता महिलाओं में आज एक विशेष समस्या बनकर उभर रही है। राष्ट्रीय सर्वेक्षण के अनुसार महिलाओं में पुरूषों कि तुलना में उच्च व्यावसायिक तनाव व चिंता का स्तर पाया गया है। 60 प्रतिशत बीमारियों का कारण नौकरी से संबंधित तनाव व चिंता हैं। अत: यदि कामकाजी महिलाओं को उनके व्यावसायिक तनाव एवं चिंता का ज्ञान हों तो कुछ हद तक उन्हें इससे उत्पन्न प्रभावों से बचाया जा सकता हैं। अत: प्रस्तुत शोध का मुख्य उद्देश्य कामकाजी महिलाओं में व्यावसायिक तनाव व चिंता को उत्पन्न करने वाले कारकों पर प्रकाश डालना हैं। जिससे वह अपने तनाव व चिंता को कम कर या दूर कर स्वास्थ्यप्रद वातावरण में अपनी कार्यक्षमता को बड़ा कर कार्य कर सकने में सक्षम हो सकती हैं। अत: प्रस्तुत शोध प्रबंध 'इंदौर शहर की कामकाजी महिलाओं में व्यावसायिक तनाव एवं चिंता का अध्ययन, उनके व्यावसायिक स्तर, परिवार के प्रकार एवं शैक्षणिक स्तर के संदर्भ में' को करने हेतु इन्दौर शहर के विभिन्न संस्थानों में कार्यरत 300 महिलाओं का चयन उद्देश्यपरक विधि द्वारा किया गया। प्रदत्तों का संकलन डॉ. ए. के. श्रीवास्तव एवं ए. पी. सिंह (1981) द्वारा निर्मित 'व्यावसायिक तनाव मापनी'' और डॉ. ए. के. श्रीवास्तव एवं एम. एम. सिन्हा द्वारा निर्मित 'कार्य चिंता मापनी' द्वारा किया गया। जिसके निम्न परिणाम 0.05 सार्थकता पर प्राप्त हुए–एकांकी एवं संयुक्त परिवार की महिला कर्मचारियों में व्यावसायिक तनाव तुलनात्मक रूप से बराबर होता हैं।एकांकी एवं संयुक्त परिवार की महिला कर्मचारियों में कार्य चिंता तुलनात्मक रूप से बराबर होती हैं।

प्रस्तावना – वर्तमान में भारत में स्त्रियाँ प्राय: प्रत्येक व्यवसाय करती हुई देखी जा सकती है। आज मध्यमवर्गीय व उच्चवर्गीय महिलाएँ भी स्वयं जीविकोपार्जन कर रही है। वे वकील, डॉक्टर, लेखापाल, भारतीय प्रशासनिक अधिकारी, प्रोफेसर, न्यायाधीश, नर्स, पुलिस अधिकारी, मैनेजर आदि है, यहाँ तक की वायुयान चालक भी है। इस नारी ने विकास की वर्तमान स्थिति तक पहुँचने में अनेक विरोधों का सामना किया है। परिवार की महिलाओं को शिक्षा का उपयोग करने के लिए उनके सामने कई समस्याएँ भी आ रही है, मुख्यत: व्यवसाय से उत्पन्न तनाव व चिन्ता।

कामकाजी महिलाओं की परिवार व व्यवसाय अथवा नौकरी के बीच सामंजस्य स्थापित करने में कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है, क्योंकि समाज में उनकी उपयोगिता और महत्त्व को तो स्वीकार कर लिया है, लेकिन कामकाज़ी महिलाएं आज भी महरूम है। उच्च वर्ग की महिलाओं की स्थिति शायद कुछ अलग हो लेकिन मध्यम वर्ग की अधिकांश कामकाज़ी महिलाओं को आज भी कार्यालय के बाद घर के कार्यों में जुट जाना पड़ता है। घर एवं नौकरी दोनों की दोहरी भूमिका व तनाव के कारण पारिवारिक व वैवाहिक जीवन में संकट का सामना करना पड़ता है। ऐसा विशेषकर उन स्थितियों में होता है, जब वह पुरुष सहभागियों के अनुसार ही कार्य करने की योग्यता एवं इच्छा रखती है।

यह स्थिति उन कार्यकारी विवाहित एवं अविवाहित महिलाओं के लिए और समस्या उत्पन्न करती है, जब उनके कार्य स्थल पर तनाव व चिंता की स्थिति उत्पन्न होती है, जिसे आधुनिक भाषा में व्यावसायिक तनाव एवं कार्य चिंता कहा जाता है। घर व नौकरी दोनों के उत्तरदायित्वों को निभाते रहने से तनाव व चिंता की स्थिति पैदा हो जाती है और समझ में नहीं आता कि घर और नौकरी दोनों जगहों में वे कैसा आचरण करें ? दोनों स्थानों की अपेक्षाओं की पूर्ति के लिए अथवा विशेष लक्ष्यों व उत्तरदायित्वों को पूरा करने हेतु कई प्रकार के तनाव उभरकर सामने आते है, जो कई पारिवारिक, वैवाहिक व व्यवस्थापन संबंधी समस्या उत्पन्न करते है।

संबंधित साहित्य का अध्ययन –शारदा एवं देवी (2006), ने विभिन्न व्यवसायों में कार्यरत महिलाओं की व्यावसायिक संतुष्टि और तनाव के संभाव्य अनुपात पर अध्ययन किया। शोध का उद्देश्य था – विभिन्न व्यवसायों में कार्यरत महिलाओं की व्यावसायिक संतुष्टिकरण और तनाव का संभाव्य अनुपात ज्ञात करना। शोध का प्रारूप खोजपरक था। न्यादर्श के रूप में 120 कार्यरत महिलाओं को लिया गया। जिनमें 30 वकील, 30 इंजीनीयर व 60 क्लर्क के पद पर कार्यरत थी। शोध का निष्कर्ष था – भूमिका निष्पत्रि के संदर्भ में संतुष्टिकरण की तुलना में तनाव का अनुपात सभी वर्गों की महिलाओं में अधिक था।

जॉन्स, मीलाने के.; लेटरेल पी. एल. एवं सलोने, पीटर जे. (Jones, Melanie k.; Latreille, P. L.; Sloane, Peter J.; 2011) ने कार्य चिंता, कार्य संबंधी मनोवैज्ञानिक बीमारी और कार्य स्थल प्रदर्शन का अध्ययन किया। अध्ययन का मुख्य उद्देश्य कर्मचारियों में कार्य चिंता, कार्य संबंधी मनोवैज्ञानिक बीमारी और कार्य स्थल प्रदर्शन का अध्ययन करना था। अध्ययन के परिणाम से स्पष्ट होता है कि कार्य चिंता व्यवसाय के प्रकार, शिक्षा और कार्य के घण्टों अथवा उच्च रूप से कार्य की मांग से सार्थक रूप से सहसंबंधित पायी गयी। कर्मचारियों में कार्य चिंता का स्तर धनात्मक रूप से कार्य संबंधी मनोवैज्ञानिक बीमारी व कार्य दबाव से सहसंबंधित पाया गया।

शोध अध्ययन के उद्देश्य :

1. एकांकी एवं संयुक्त परिवार की महिला कर्मचारियों में व्यावसायिक

* विभागाध्यक्ष एवं सहायक प्राध्यापक (पारिवारिक संसाधन प्रबंध) श्री रेवा गुर्जर बाल नि. महाविद्यालय, सनावद (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (मनोविज्ञान) शासकीय अटल बिहारी वाजपयी कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

तनाव का तुलनात्मक अध्ययन करना।

2. एकांकी एवं संयुक्त परिवार की महिला कर्मचारियों में कार्य चिन्ता का तुलनात्मक अध्ययन करना।

उपकरण एवं शोध प्रविधि –प्रस्तुत शोध इंदौर शहर के निजी एवं शासकीय संस्थानों में कार्यरत 300 महिला कर्मचारियों को न्यादर्श के रूप में चुना गया। जिनमें निजी संस्था में कार्यरत 150 महिला कर्मचारी एवं शासकीय संस्थान में कार्यरत 150 महिला कर्मचारी न्यादर्श के रूप में चुने गये। न्यादर्श का चयन उद्देश्यपरक न्यादर्श विधि द्वारा किया गया।

प्रस्तुत शोध को करने के लिए प्रो. डॉ. ए. के. श्रीवास्तव और प्रो. डॉ. ए. पी. सिंह (1981) द्वारा निर्मित **'व्यावसायिक तनाव मापनी'** (Occupational Stress Index)अथवा प्रो. डॉ. ए. के. श्रीवास्तव और डॉ. एम. एम. सिन्हा द्वारा निर्मित **'कार्य चिन्ता मापनी'**(Job Anxiety Scale) का उपयोग किया गया।

परिकल्पनाएँ :

1. एकांकी एवं संयुक्त परिवार की महिला कर्मचारियों में व्यावसायिक तनाव के माध्यों में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जाएगा।
2. एकांकी एवं संयुक्त परिवार की महिला कर्मचारियों में कार्य चिन्ता के माध्यों में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जाएगा।

परिणाम तथा विवेचना :

1. एकांकी एवं संयुक्त परिवार की महिला कर्मचारियों में व्यावसायिक तनाव के माध्यों की तुलना करना – प्रस्तुत शोध का प्रथम उद्देश्य एकांकी एवं संयुक्त परिवार की महिला कर्मचारियों में व्यावसायिक तनाव के माध्यों की तुलना करना था। व्यावसायिक तनाव को मापने हेतु इन्दौर शहर के निजी एवं शासकीय संस्थानों की एकांकी एवं संयुक्त परिवार की कार्यरत 300 महिला कर्मचारियों को डॉ. ए. के. श्रीवास्तव और डॉ. ए. पी. सिंह द्वारा निर्मित **'व्यावसायिक तनाव मापनी'**(occupational stress index) को प्रदान किया गया। प्राप्त आंकडों का विश्लेषण t-test द्वारा किया गया। इसके परिणाम तालिका क्रमांक 1 में दिए गए है –

तालिका क्रमांक 1 : एकांकी एवं संयुक्त परिवार की कार्यरत महिला कर्मचारियों में व्यावसायिक तनाव के माध्य, मानक विचलन, स्वतंत्रता का अंश और टी मूल्य

परिवार	N	M	S.D.	Df	t-value
एंकांकी	150	125.66	30.60	298	1.57
संयुक्त	150	131.43	32.80		

t-value = 1.57

t-value 0.05 स्तर पर सार्थक नहीं

तालिका क्रमांक 1 से स्पष्ट है की टी का मान 1.57 है ,जो की 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक नहीं है। जबकी df = 298 हैं। अर्थात् एकांकी एवं संयुक्त परिवार की कार्यरत महिला कर्मचारियों के माध्य, व्यावसायिक तनाव प्राप्तांकों से सार्थक रूप से भिन्न नहीं है। अत: शून्य परिकल्पना(H_0)'एकांकी एवं संयुक्त परिवार की कार्यरत महिला कर्मचारियों में व्यावसायिक तनाव के माध्यों में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जाएगा', स्वीकार की जाती है। एकांकी परिवार की कार्यरत महिला कर्मचारियों में व्यावसायिक तनाव का माध्य प्राप्तांक 125.66 है, जो कि संयुक्त परिवार की कार्यरत महिला कर्मचारियों में व्यावसायिक तनाव के माध्य प्राप्तांक 131.43 से सार्थक रूप से उच्च नहीं है। अत: संभवत: इस उद्देश्य के परिणाम का कारण यह हो सकता है कि एकांकी एवं संयुक्त परिवार दोनों ही प्रकार के परिवार की कामकाजी महिलाओं को कार्य स्थल के कार्यों के साथ–साथ स्वयं के परिवार के प्रति भी उत्तरदायित्व निभाने होते हैं, जैसे परिवार के प्रति जिम्मेदारी, बच्चों की देखभाल, दाम्पत्य जीवन के प्रति उत्तरदायित्व आदि। इस तरह दोनों ही प्रकार के परिवारों की कामकाजी महिलाओं के समक्ष कार्य स्थल व पारिवारिक भूमिकाओं के मध्य समायोजन की समस्या उत्पन्न होने लगती है और इस दोहरी भूमिका के निर्वहन में कार्यरत महिला कर्मचारियों में चाहे वह एकांकी परिवार की हो या संयुक्त परिवार की स्वयं को असहज महसूस करने लगती है और यही असहजता उनमें अनचाहा तनाव उत्पन्न करती है जो आगे चलकर व्यावसायिक तनाव के रूप में परिलक्षित होता है।

इस प्रकार स्पष्ट है, एकांकी एवं संयुक्त परिवार की महिला कर्मचारियों में व्यावसायिक तनाव तुलनात्मक रूप से बराबर होता हैं।

2. एकांकी एवं संयुक्त परिवार की महिला कर्मचारियों में कार्य चिंता के माध्यों की तुलना करना।

प्रस्तुत शोध का दुसरा उद्देश्य एकांकी एवं संयुक्त परिवार की महिला कर्मचारियों में कार्य चिंता के माध्यों की तुलना करना था। कार्य चिंता को मापने हेतु इन्दौर शहर के निजी एवं शासकीय संस्थानों की एकांकी एवं संयुक्त परिवार की कार्यरत 300 महिला कर्मचारियों को डॉ. ए. के. श्रीवास्तव और डॉ. एम. एम. सिन्हा द्वारा निर्मित**'कार्य चिंता मापनी'**(job anxiety) को प्रदान किया गया। प्राप्त आंकडों का विश्लेषण द्वारा किया गया। इसके परिणाम तालिका क्रमांक 2 में दिये गये है –

तालिका क्रमांक 2 : एकांकी एवं संयुक्त परिवार की कार्यरत महिला कर्मचारियों में कार्य चिंता के माध्य, मानक विचलन, स्वतंत्रता का अंश और टी मूल्य

परिवार	N	M	S.D.	Df	t-value
एंकांकी	150	29.34	23.59	298	1.61
संयुक्त	150	33.91	25.36		

t-value = 1.61

t-value 0.05 स्तर पर सार्थक नहीं

तलिका क्रमांक 2 से स्पष्ट है की टी का मान 1.61 है जो की 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक नहीं है। जबकी df = 298 हैं। अर्थात् एकांकी एवं संयुक्त परिवार की कार्यरत महिला कर्मचारियों के माध्य, कार्य चिंता प्राप्तांकों से सार्थक रूप से भिन्न नहीं है। अत: शून्य परिकल्पना(H_0)'एकांकी एवं संयुक्त परिवार की कार्यरत महिला कर्मचारियों में कार्य चिंता के माध्यों में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जाएगा', स्वीकार की जाती है। एकांकी परिवार की कार्यरत महिला कर्मचारियों में कार्य चिंता का माध्य प्राप्तांक 29.34 है, जो की संयुक्त

परिवार की कार्यरत महिला कर्मचारियों में कार्य चिंता के माध्य प्राप्तांक 33.91 से सार्थक रूप से उच्च नहीं है।संभवत: इस परिणाम का कारण यह हो सकता है कि एकांकी एवं संयुक्त परिवार कि कामकाजी महिलाओं को परिवार और कार्यस्थल के उत्तरदायित्वों का निर्वाह करना होता है। घर की अपेक्षा नौकरी में सामान्यत: तनाव कार्य की मांगों, कार्यभार, कार्य नियंत्रण में कमी, भौतिक स्थितियों, भेदभावपूर्ण व्यवहार व अनुचित प्रबंधन के कारण होता है। जिससे उनमें मानसिक अस्थिरता उत्पन्न होती है और यही मानसिक विचलन को लेकर जब महिला कर्मचारी अपने घर पहुंती है, तो वह चाहती है कि घर का वातावरण उसकी इस मानसिक अस्थिरता को कम या दूर करने मे मदद करे परंतु यदि उन्हें अपने परिवार के सदस्यों का सहयोगपूर्ण व्यवहार प्राप्त नहीं होता है, तो यह मानसिक विचलन उनमें तनाव उत्पन्न करता है। इस दोहरी भूमिका के कारण उनमें कार्य दबाव होने लगता है और यही कार्य दबाव आगे चलकर कार्य चिंता में बदल जाता है।

इस प्रकार स्पष्ट है, एकांकी एवं संयुक्त परिवार की महिला कर्मचारियों में कार्य चिंता तुलनात्मक रूप से बराबर होती हैं।

निष्कर्ष :

1. एकांकी एवं संयुक्त परिवार की महिला कर्मचारियों में व्यावसायिक तनाव तुलनात्मक रूप से बराबर होता हैं।
2. एकांकी एवं संयुक्त परिवार की महिला कर्मचारियों में कार्य चिंता तुलनात्मक रूप से बराबर होती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. **Dr. Lilhare, Rekha and Dr. Borka,r Sunita (2009);** "A Comparative Study of stress and Anxiety in working women performing clerical and shift hour duties.' International Referred Research Journal. Vol. 3, No. 30.
2. Hen Selye (1979) ; "The Stress of Life'.
3. अरुण कुमार सिंह, आधुनिक असामान्य' मनोविज्ञान, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणासी।
4. अरुण कुमार सिहं, यमनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियां' 2006, पेज न. 4-5 और 528-529.

****

Problems And Prospects Of Women Entrepreneurship (A Study On Bhopal District)

Dr. Anu Mehta *

Abstract - During the last five decades, Indian women have entered the field of entrepreneurship in a greatnumber. With thegrowth of their businesses, they are contributing to the global economy and to their surrounding communities. Today we find women in different types of industries, traditional as well as non-traditional. The routes women have followed to take leadership roles in business are varied. The process of change for women in the context of the complexity being women globally and nationally. It helps us to know key change for women over the last five decades. In the advanced countries of the world, there is a phenomenal increase in the number of self employed women after the world war. Women Entrepreneur's have been making a significant impact in all segments of the economy in Canada, Great Britain, Germany, Australia and the U.S. They have made their mark in business for the following reasons : They want new challenges and opportunities for self-fulfillment, They want to prove themselves in innovative and competitive jobs.

Many studies have undergone to study the emergence and growth of women entrepreneurs. This research paper concentrates on the types of problems faced by women entrepreneurs in Bhopal district.

Key words - Women, Entrepreneur, Bhopal District and Business.

Introduction - The transitions to this millennium, where the women are creating and will create new image as an Entrepreneur who builds an enterprise and discovers her relevance and meaning of her life in herself. The women of this millennium is more confident and will discover the voice, which has been silenced for centuries, but this path will not be bed of roses for them. Their are many challenges and various types of problems which are faced by them. The researcher has selected few categories of women entrepreneurs to study the types of problems faced by them, which are categorize below:

Objectives :

1. To study the basic problems of women entrepreneurs in business of Bhopal district.
2. To study the types of problems faced by women entrepreneurs.

Research Methodology - Research related to field of commerce is social research. For such research social research methodologies are employed. As social events and facts are complex and ever changing, methodology of the study is selected on the basis of nature of study.

For this research paper, the researcher has collected Primary Data from District Industries Center Bhopal.

Q.1 Which type of problems did you face during planning?

Table No. 01 Types of problems faced

S.	Options	Answer	Percentage
1.	Technical problems	05	10
2.	Managerial problems	11	22
3.	Financial problems	23	46
4.	Any other	11	22
	Total	**50**	**100**

Source: On the basis of Questionnaire

When the question was asked about the kind of problems women entrepreneurs faced during their planning period then out of hundred per cent, 10%, of them said they faced technical problems. 22% said that they faced problems regarding managing their business. 6% said they faced problem while arranging finance for their business and 22% of the lady entrepreneurs said that they faced other types of problems. The result of the above question shows that the women entrepreneurs belonged to Bhopal district faced more of financial problem.

Q.2 **What kind of technical problems you faced?**

Table No.02 Kind of technical problem faced

S.	Options	Answer	Percentage
1.	Inadequate power supply	07	14
2.	Inadequate water supply	03	06
3.	Lack of technical knowledge	22	44
4.	Any other	18	36
	Total	**50**	**100**

Source: On the basis of Questionnaire

While asking about the kind of technical problems faced by women entrepreneurs, majority said i.e. 36% of them said they faced other types of technical problems like operating machines, repairing etc. 44% said they were having no technical knowledge when they entered the business. 14% said they faced power problems and 6%

* **Assistant Professor, IPS Academy, Indore (M.P.) INDIA**

said they faced problems related to inadequate water supply.So, the overall result shows that there were various technical problems which were faced by women entrepreneurs.

Q.3 **What type of financial problem you faced?**

Table No.03 Kind of financial problem faced

S.	Options	Answer	Percentage
1.	Shortage of working capital	19	38
2.	Accounting problem	17	34
3.	Inability to repay loans	02	04
4.	Any other	12	24
	Total	50	100

Source: On the basis of Questionnaire

While starting a new business there are problems for arranging finance, asking on the matter 38% of women entrepreneurs said they faced problems related to shortage of working capital. 34% said they faced accounting problems as they don't know how to maintain proper records. 24% of them said they faced other type of financial problems like getting loan from the banks etc. and only 4% said they had problems in the beginning in repaying loan as business was not responding so good.Result of the question shows that arranging for the finance is the major problem faced by the entrepreneurs when they started a new business.

Q.4Different types of marketing problems faced by you?

Table No.04 Kind of marketing problem faced

S.	Options	Answer	Percentage
1.	Availability of cheaper substitutes in the market	15	30
2.	Stiff competition	19	38
3.	Distribution problem	05	10
4.	Inability to advertise and immobility	11	22
	Total	**50**	**100**

Source: On the basis of Questionnaire

While doing a business there are some sort of marketing problems which are faced by women entrepreneurs. Among the above options given to women entrepreneurs to choose majority i.e. 38% of women entrepreneurs has replied that there is stiff competition now a days in the market. 30% of them replied that there are many cheaper substitutes of their products available in the market. 22% of the women entrepreneurs said there were problems related to advertising and 10% said they faced problems related to distribution of their products. The result in the above table shows that as the time and environment has changed the competition in business has also increased a lot.

Q.5 What kind of legal problems faced by you?

Table No.05 Kind of legal problem faced

S.	Options	Answer	Percentage
1.	Restrictive rules and regulations of the government	06	12
2.	Lack of knowledge related to industrial policies	18	36
3.	Harsh and stringent tax policies	20	40
4.	Not applicable	06	12
	Total	**50**	**100**

Source: On the basis of Questionnaire

Whenever we do some kind of business, we have to deal with government rules and regulations, tax policies etc. and it is not important that whoever does business also have knowledge about rules and regulations made by government. When the question was asked to women entrepreneurs their response was 12% women entrepreneurs replied that they faced problems regarding restrictive rules and regulations of government. 36% of women entrepreneurs said that they do not had knowledge about industrial policies made by government. 40% of women entrepreneurs said that policies made by government are very harsh and stringent and 12% were those women entrepreneurs who said that they either not yet faced any legal problems or do not yet come under the category.We can conclude that most of the women entrepreneurs have faced some or the other legal problems related to their business, among them the common problem was harsh and stringent tax policies.

Q.6 What are the different types of labour problems faced by you?

Table No.06 Kind of labour problem faced

S.	Options	Answer	Percentage
1.	Labour absenteeism	20	40
2.	Lack of labour laws and knowledge	19	38
3.	Non-availability of skilled labour	11	22
4.	Not applicable	Nil	Nil
	Total	50	100

Source: On the basis of Questionnaire

Handling labour is a difficult task, there are various types of problems while handling labour. The most important problem faced by women entrepreneurs was labour absenteeism which was faced by 40% of women entrepreneurs another major problem faced by them was, lack of labour laws which were faced by 38% of women entrepreneurs. 22% of them said they faced problems related to non-availability of skilled labours. None of the women entrepreneurs have opted for the fourth option.Overall result of the question shows that lack of labour laws and labour absenteeism are the major problems faced by them.

The Women Entrepreneurs single handedly faces a plethora of seemingly endless problems. Infact, from the moment she conceives the idea to start her unit, she has to work hard against heavy odds. The problems of industries whether in small, medium or large sector are almost similar but their nature & scope vary. In the case of Women Entrepreneurs, the problem gets compounded because certain problems have gender dimensions attached to it.

The management of domestic commitment & child care support are the two issues where women have to play a more active role. This coupled with the narrow vision of the society is still accepting women in a separate entity as an entrepreneur makes the life of a Women Entrepreneurs all the more difficult.

The main problems faced by the Women Entrepreneurs may be analyzed as follows :

(a) Technical Problem : The aggrevating problem under this description seemed to be the one of lack of knowledge. 44% of women entrepreneus from Bhopal district voiced their frustration regarding the nagging problem of lack of technical knowledge which often paralyzed the normal functioning of their units. Frequent breakdown of machinery, lack of maintenance & servicing facilities were other problems that disturbed their routine functioning.

(b) Financial Problem: The most prominent problem regarding this aspect seemed to be the one of inadequate / shortage of working capital. Women Entrepreneurs also spoke of the problems of collection of bills / recoveries, problem in accounting etc. Probably since these entrepreneurs **sold** their goods / services on credit, they faced the problem of shortage of working capital. Money was often locked up with the debtors. Entrepreneurs also complained of high interest rates on loans.

(c) Marketing Problem: Women Entrepreneurs also complained of stiff competitions &and the availability of cheaper substitutes in the market. They said the customers are ignorant about the quality of products / services and go in for the price factor alone. This had a negative effect on their business.

(d) Legal Problem: Industrial policy restriction was the most common problem faced by the women entrepreneurs, along with it harsh & stringent tax polices was also the major problem.

(e) Labour Problem: Under this head, the problem was of labour absenteeism & lack of labour laws & knowledge. Other problems were of non-availability of skilled labour & problem relating to labour turnover. Most of them found this experience very frustrating as it not only disturbed the normal and smooth functioning of the organization but also invested all the time & effort that was spent in training those workers.

Suggestions given by women entrepreneurs of Bhopal district to Overcome Problems :

Entrepreneurs felt that they had to work themselves towards solving various business problems. Following are the suggestions given by those Entrepreneurs :

A) For Technical Problems :

a. Fixing days for the servicing of each machine / vehicle.
b. Increasing working hours so that the plan of production does not change.
c. Employing technical persons so that the normal functions of their units does not paralyze.
d. Creating awareness for producing quality products.
e. Giving appointments / dates of delivery after taking into account the frequency & time of power cuts.

B) For Financial Problems :

a. Rigorous follow-up for collections should be done.
b. Insisting on advance payments of product delivery so that unnecessary delays can be avoided.
c. Obtaining loans from relatives & friends for overcoming shortage of working capital.
d. Establishing better relations with bankers so that whenever there is a need of capital or other requirements can be fulfilled easily.
e. Managing finance more effectively so that it can be utilized in a productive work.

C) For Marketing Problems :

a. Creating awareness among consumer for quality products rather than poor quality products.
b. Giving after sales service for the products so that more and more customers can be attracted.
c. Introducing installment buying system so that consumers feel comfortable in buying products.
d. Accessing market for price fixations.
e. Giving publicity to the goods because it has become a need of time.
f. Searching new markets for their products so that sales can be increased.

D) For Legal Problems :

a. Studying law to understand and solve problem in a better way.
b. Following government rules & regulations so that it does not hamper business.
c. Consulting legal experts for export advises related to matter concerned.
d. Compromising with government officials sometimes & fighting for rights at other times.

E) For Labour Problems :

a. Giving incentives to workers from time to time as per their performances so that they can feel motivated and perform better.
b. Having regular conversations with workers so that their problems can be understood in a better way as well as they also have feeling of belongingness to the firm.
c. Training workers.
d. Keeping alternate labour force ready for the problems like labour absenteeism or labour turnover etc.
e. Paying wages / salaries as per prevailing rates.

References :-

1. Dynamics of enterpreneurship Development & management – Sahitya Bhavan Publications 2005
2. Fundamentals & enterpreneurship – G.R. Dasotia
3. Enterpreneurship & Effective Marketing – Sandeep Verma
4. Enterprenuer Development - New Venture Creations 2006 Satish Taneja and S.L. Gupta
5. Principles of Business Management & Enterpreneurship – Ramesh Book Depot 2006 – G.S. Sudha

A Study On Services Provided By Anganwadi Centres And Its Impact On Social Empowerment Of Beneficiaries (With Special Reference To Indore City)

Shraddha Tambe *

Abstract - A number of Government departments at the Central and the State levels have initiated programmes for the social and economic empowerment of society. This paper has examined Integrated Child Development Services (ICDS) Scheme through which the Government of India not only provides services to children but also endeavours to empower women socially. ICDS is implemented with the help of local Anganwadi Centres. In this study services and facilities provided by the Anganwadi centres to the beneficiaries were measured and determined how these factor were important for social empowerment. Through the applying of correlation and regression, the impact was measured. For this study total 200 beneficiaries were chosen on the basis of random sampling method. The findings concluded that the services and facilities in lieu of education, medical, food are make them socially empowered.

Keywords - Social empowerment, Facilities & Services, Integrated Manner, Effective Implementation, AWCs.

Introduction - Integrated Child Development Services (ICDS) scheme - ICDS launched in 1975-76, is a centrally sponsored Child Welfare Programme that provides package of six services to children and considers that the overall impact of these services is more if they are provided in an integrated manner with the related services. It aims at providing welfare to the children and their mothers who are caught in the grip of malnutrition, diseases, illiteracy, ignorance and poverty. ICDS provides these services to the beneficiaries at their doorstep.

Beneficiaries of ICDS - ICDS provides services to all the stakeholders i.e. the pregnant and lactating mothers, adolescent girls – the future mothers, infants in 0-3 years of age, young children in 3-6 years of age, through the AWCs. This community outreach programme being implemented with the help of local women, tries to elicit community participation in the provision of the services to the beneficiaries.

Empowerment by ICDS Functionaries - The ICDS functionaries also empower local women through the other welfare programmes that converge or are being implemented from this platform in the following manner:

Improving Infant and Young Child Feeding: According to a study conducted by International Baby Food Action Network (IBFAN) exclusively breast feeding for 6 months has been one of the single most effective child survival interventions as it reduces < 5 mortality by 13%. The AWW trains, counsels and creates awareness among women, nursing mothers and grandmothers about the need to breast feed infants and also provide them with nutrition after 6 months of age.

Self Help Groups (SHGs) - Self Help Groups organized at the rural and urban slum level help the AWW in providing supplementary nutrition to children and other beneficiaries in the AWCs. These groups cook and serve supplementary nutrition in centres and are given a small sum of money for carrying out these activities. SHGs may include mothers of the children visiting the AWCs

An AWW, the key functionary of the ICDS, performs the following activities to empower women:

1. organises supplementary nutrition feeding for the beneficiaries;
2. provides health and nutrition education and counselling on breast feeding / infant and young children feeding practices to mothers;
3. visits the homes of the villagers to educate mothers for an effective role in the growth and development of the child with special emphasis to the new born child;
4. Assists the Primary Health Centre Staff in the implementing immunisation programme, health check-ups, ante natal and post natal checkups.

Table No. 1 (see in last page)

Objectives Of The Study

1. To study the social empowerment of the beneficiaries from low level income group.
2. To suggest some measures for improvement in the administration of the Anganwadi Centres.

Research Methodology - In this study, survey research design is adopted. Survey research design was chosen because the sampled elements and the variables that are being studied are simply being observed as they are without making any attempt to control and manipulate them.

Study Area - In the study, the researcher has included

* **Research Scholar (Commerce) Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore (M.P) INDIA**

beneficiaries of AWCs located in Indore as the study area.
Data Collection - Primary Data collection was collected through Specific self-designed Questionnaire based on the 5-Point Likert Scale to measure the impact of facilities and services provided by the AWCs on the Social Empowerment of beneficiaries belonged to the low level income group. Also, Secondary Data was procured from Internet Websites, Journals and E-Journals, Books / Magazines, Research Papers.
Sampling Technique - For effective coverage and lower cost purposive sampling techniques were used to select the participating respondents.
Sample Size - 200 beneficiaries were selected from the above mentioned segments.
Data Collection Instrument - The questionnaire was developed into many parts in such a way as to reflect the perception of beneficiaries towards the facilities and services provided by the AWCs as the researcher aimed to keep the parts of questionnaire similar in content in order to get a comprehensive view.

The results of the reliability analyses determined that the Cronbach's á values was 0.832. This value is higher than 0.7, meeting the requirement suggested by Guielford ÿ1965 ÿ. Thus, it is concluded that the questionnaire used in this study has high reliability.
Data Analysis Tests - Correlation & regression analysis were applied to examine the impact of facilities and services provided by the AWCs on the social empowerment of beneficiaries belonged to low level income group.
Result Of Hypothesis - H_{01}: There is no significant impact of facilities and services provided by the AWCs on the social empowerment of beneficiaries belonged to low level income group.
Model Summary[b] on facilities and services by the AWCs and the social empowerment of beneficiaries
Table 2 (see in last page)
table 2 shows the correlations and it is evident from this table that Pearson's correlation coefficient between facilities and services by the AWCs and the social empowerment of beneficiaries is 0.234 which is significant since the significant value (p- value) 0.001 is less than 0.05. Therefore, we may conclude that there is significant association between facilities and services by the AWCs and the social empowerment of beneficiaries. Furthermore, since the value of correlation coefficient r suggests a strong positive correlation, we can use a regression analysis to Model the relationship between the variables.

Over all model summary shows the value of multiple correlation coefficient R=0.234, it is the linear correlation coefficient between observed and model predicted values of the dependent variable, Its large value indicates a strong relationship. $R^{2,}$ the coefficient of determination is the squared value of the multiple correlation coefficients. Adjusted R^2=0.055, R^2 change is also 0.050 and these values are significant which shows that overall strength of association is noteworthy. The coefficient of determination R^2 is 0.055; therefore, 55% of the variation in social empowerment of beneficiaries is explained by facilities and services by the AWCs**.**
Table 3 & 4 (see in last page)

ANOVA is used to exhibit model's ability to explain any variation in the dependent variable. ANOVA table exhibits that the hypothesis that all model coefficients are 0 is rejected at 1% as well as 5% level of significance which means that the model coefficients differ significantly from zero. In other words we can say that there exists enough evidence to conclude that slope of population regression line is not zero and hence, facilities and services by the AWCs are useful as predictor of the social empowerment of beneficiaries.

From the table of coefficients, the regression equation can be obtained as Social empowerment of beneficiaries **= (Y) 6.945 + .300 (X_1)*** facilities and services by the AWCs

The above null hypothesis is not supported and found that beneficiaries are socially empowered through the facilities and services provided by the AWCs and also further discussed that if more improvements are to be made in the system of the AWCs, the more beneficiaries would be benefitted with the services.
Findings - The researcher interacted with a large number of beneficiaries who have taken services from the AWCs in Indore City through the self-constructed questionnaire. The findings of their responses were as follows:

1. It provides them job opportunities at their doorstep;
2. They are also allowed to work at the centres as they have to deal with basically children and women;
3. Some who were uneducated/less educated felt that they would not have got any job had the centre not been there (ICDS centres even employ uneducated women);
4. A few widows and deserted women felt that the centres were very good opportunities for them to earn money and also spend their time amongst children in a worthwhile manner;
5. The functionaries felt that it gave them a sense of responsibility and they felt more confident; and
6. A large majority of women felt that though the honorarium they received was very meagre yet they see this work as an opportunity to earn their livelihood in a respectable manner.

Conclusions - ICDS centres have played an important role in empowering women in a male dominated society. Working for women and children is considered to be respectable in the rural and urban areas, so the AWWs also felt that they are performing a worthwhile task. There is a dire need to keep up the good work by periodically assessing their role and empowering them to enable them to empower other women.
Suggestions - This study has given some suggestions are as follows:

1. There should be created more awareness among the beneficiaries so that they can register themselves.

2. Campaigns should be organized to make them more empowered and inform their rights.

References :-

1. Ministry of Women and Child Development, Implementation of ICDS Scheme, Press Information Bureau Government of India, Krishna Ram Tirath, 15 March 2013, 17 March 2013. http://pib.nic.in/newsite/PrintRelease.aspx.
2. Evaluation Report on Integrated Child Development Services, Programme Evaluation Organization, Planning Commission, New Delhi, p-18
3. Other Schemes, Department and Women and Child Development, Haryana, 12 December 2012 http://wcdhry.gov.in/new_schemes_htm
4. Department of Women and Child Development, "Role and Responsibilities of an Anganwadi Worker", Government of Haryana, 11 March 2013, http://wcdhry.govin/job_responsibility.htm
5. Meenal M Thakare et al., (2011) A Study of functioning of anganwadi centers of urban icds block of Aurangabad city
6. Economic and Statistical Organization, (2004)

Table No. 1 : Package of Services provided through ICDS

Target Group / Beneficiary	Health Check up and Treatment	Nutrition Related Services	Educational Services
Children below 3 years	• Health Check up • Immunisation • De-worming • Basic Treatment of Minor Diseases • Referral Services for more severe illnesses	• Supplementary Feeding • Growth Monitoring (monthly weighing, weight record on growth charts • Take home rations	
Children 3-6 years	• Health Check up • Immunisation • De-worming • Basic Treatment of Minor Diseases • Referral Services for more severe illnesses	• Supplementary feeding • Growth Monitoring (quarterly weighing, weight record on growth charts	• Early childhood Care (day care) • Pre-school Education • Nutrition and Health Education
Adolescent Girls (11-18 years)	• Health check-ups • Treatment of Minor Illnesses • Referral services for more severe illnesses	Take Home Rations	• Non-Formal Education focussed on home based and vocational skills • Nutrition and Health Education
Pregnant Women	• Health Check up • Immunisation • Referral Services	Take Home Rations	Nutrition and Health Education
Nursing Mothers	• Health Check up • Referral Services	Take Home Rations	Nutrition and Health Education
All Women (15-45 years)			Nutrition and Health Education

Source: Evaluation Report on ICDS Service, Programme Evaluation Organisation, Planning Commission.

Table 2

Model	R	R Square	Adjusted R Square	Std. Error of the Estimate	Change Statistics				
					R Square Change	F Change	df1	df2	Sig. F Change
1	.234[a]	.055	.050	1.17834	.055	11.491	1	198	.001

a. Predictors: (Constant), FS

b. Dependent Variable: SE

ANOVA[a] on facilities and services by the AWCs and the social empowerment of beneficiaries

Table 3

Model	Sum of Squares	df	Mean Square	F	Sig.
Regression	15.955	1	15.955	11.491	.001[b]
Residual	274.920	198	1.388		
Total	290.875	199			

a. Dependent Variable: SE

b. Predictors: (Constant),FS

Coefficients[a] on facilities and services by the AWCs and the social empowerment of beneficiaries

Table 4

Model		Unstandardized Coefficients		Standardized Coefficients	t	Sig.
		B	Std. Error	Beta		
	(Constant)	6.945	1.207		5.755	.000
1	FS	.300	.089	.234	3.390	.001

a. Dependent Variable: SE

****

Effect and Importance of Cashless Transaction in India

Dr. Vishal Purohit *

Abstract - The Research paper focuses on impact and importance of cashless policy in India. According to Government of India the cashless policy will increase employment, reduce cash related robbery thereby reducing risk of carrying cash. Cashless policy will also reduce cash related corruption and attract more foreign investors to the country. In many countries introduction of cashless economy can be seen as steps in the right direction. It is expected that its impact will be felt in modernization of payment system, Reduction in the cost of banking service, Reduction in high security and safety risk and also curb banking related corruption. Electronic banking will be made banking transaction to be easier by bringing services closer to its customers hence improving banking industry performance. The financial safety over the digital payment channel is important for pushing the cashless economy idea. A major obstacle for the quick adoption of alternate mode of payment is mobile internet penetration, which is crucial because point of sale terminal works over mobile internet connection, while banks have been charging money on card-based transaction which is seen in hurdle. India has been using electronic payment system for many years now, However the retail sector still has predominance of cash transaction and payment through cash is yet to pick up card is the one of the most secure, convenient mode of cashless payment in retail market.

Keywords - Cashless Transactions, Unified Payments Interface, Information Technology, Cashless Economy, Economic Growth, Electronic-payment.

Introduction - The Indian payment system is rapidly transiting to more and more IT based systems. In the retail sector we have very high volumes of money transactions. Other than cash, one of the growing payment methods adopted by merchants in the sector is payment cards. However, the whole isometrics of moving from cash-driven economy to cashless economy has somehow been assorted with demonetization that was aimed to extract liquidity from the system to unearth black money. With increasing adoption of electronic payments, particularly those driving e-commerce and M-Commerce, there is a growing demand for faster payment services which, in turn, facilitate ease in doing financial transactions. Reducing Indian economy's dependence on cash is desirable for a variety of reasons. India has one of the highest cash to gross domestic product ratios in the word, and lubricating economic activity with paper has costs.

Objectives Of The Study - The aim behind this Research is

1. To know what a Cashless Transaction means.
2. Effect and importance of Cashless Transaction System.
3. Analyze the future trend of Cashless Transaction

Research Methodology - The study is based on secondary sources of data/ information. Different books, journals, newspapers and relevant websites have been consulted in order to make the study an effective one. The study attempts to examine the Impact and Importance of Cashless Transaction in India.

What is Cashless Transaction - "A cashless economy is one in which all the transactions are done using cards or digital means. The circulation of physical currency is minimal." A Cashless Society describes an economic state whereby financial transactions are not conducted with money in the form of physical banknotes or coins, but rather through the transfer of digital information (usually an electronic representation of money) between the transacting parties.

Process of Cashless Transaction - In this increasingly digital world, it's not surprising that money will follow suit as well. Recent trends show that digital money kept in mobile wallets will soon replace physical cash and even credit cards.

Example - Online Mobile Recharge System.

1. Log in with user name and password-: User enters the username and password.
2. Select the Telecom Operator:-Select the user which telecom operator he want.
3. Enter Recharge amount, phone number and connection type:-Enter the recharge amount, mobile number and connection type of the user.
4. Select one of the payment options:-Select one of the payment option like ATM card, Debit card etc.
5. Enter card Information:-Enter the card information like pin number.

* Professor, S.J.D.M., Indore (M.P.) INDIA

6. Payment Processor:-The payment is proceeding.
7. Authenticate it is confirm or not:-the authenticate when it is confirm or not when it is yes then receive Success message. Or No then receive Failure message.

Importance of Cashless Transaction

1. Taxation: with lesser availability of hard cash at homes and more in banks, there is lesser scope of hiding income and evading taxation and when there are more tax payers it ultimately leads to a lesser rate of taxation for the whole country.
2. Transparency and accountability: it becomes a lot easier to track the flow of money with every transaction being recorded with the buyer, seller as well as regulatory bodies, making the system much more transparent and compliant. In the long term it leads to better business and investment prospects for the economy as a whole.
3. More currency in bank will mean more circulation of money in the economy, leading to greater liquidity and would eventually mean lesser interest rates (according to the monetary policy of the country).
4. Reduced red tapism and bureaucracy:
5. with cashless transactions through electronic means the wire transfers are tracked and people are accountable which in turn reduces corruption and improves service time.
6. Less availability of cash for illegal activities:

when people are encouraged to go cashless, there is lesser cash available with the people and there won't be a means to invest in other activities to use the idle cash. Channels like hawala (illegal remittance) will ultimately suffer the brunt of a cashless economy.

1. **Pack of cards -** No need to carry bulky notes in a case. Just carrying the required cards or mobile banking will suffice. More sense of safety with a PIN protected card etc. which will work only with your own credentials.
1. No fear of being robbed unlike carrying cash and letting everyone know that there could be something worth snatching.
2. Tracking of expenses: it becomes easier to determine how much was spent where.
3. The exact amount in small denominations can be paid. Unlike cash transactions, there is no need to pay fringe amount in case the exact amount is not available with either of the parties.An important, though seemingly insignificant issue is that of hygiene of the notes.
4. Easier accounting Direct payment to bank account. You don't need to go every day to deposit cash to your current account.
5. Easier transactions:-We can easily do any transaction with security.

Impact of Cashless Transaction - Business Process-: The impacts of Cashless Transaction on the Business sector are as following :-

1. Businesses are legally strong.
2. Proper audit. Not hidden excess liability.
3. Increase use of e-payment.
4. Wallet hold business gets an advantage.

Education Process - The impact of Cashless Transaction on the education sector is likely to be minimal. Some of the foreseeable fallouts of demonetization on the Indian education sector are as following:

1. The decision of the central government to withdraw high-value bank notes to curb unaccounted cash will hurt education institutions that accept donations or capitation fees for admissions.
2. Accepting and accounting donations will become difficult because of the demonetisation drive. Education sector was not immune to the Indian theory of 'you can buy everything with money'. This move of demonetisation will definitely curb this mentality of many in the country.
3. Nursery admissions, private education institutions and professional higher education including medical and engineering are the segments which accept donations widely. For the first time, these segments are going to feel the impact in a big way.
4. Private educational institutions take huge of amount of donations in Cash which is 40% to 50% more than the fees of the course. We expect that demonetisation will impact the recipient.
5. Admissions in private educational institutions and medical college admissions comes tagged along with donations without a glitch. The donations in medical colleges is usually more than 100% of the fees. Demonetisation will impact both admissions and also the receipt.
6. MBBS seats is some colleges goes for Rs40 lakh to Rs60 lakh, while MD seats has a range of Rs 2 crore price tag on it. Similarly, engineering and management stream seats have a price tag between Rs 2 lakh to Rs 10 lakh each. This move can change the course of expensive education which can be made more affordable devoid of the capitation fee.

Economic Growth - The impact of Cashless Transaction on Economic Growth in India is as following:

1. According to the Bank, India's growth in the first half of FY 2017 was underpinned by robust private and public consumption, which offset slowing fixed investment, subdued industrial activity and lethargic exports.
2. The medium-term may be liquidity expansion in the banking system, helping to lower lending rates and lift economic activity," the World Bank noted. 4.4.4. Impact of Information Technology in cashless economy-:
3. The impact of Information Technology on in cashless economy in India is as following:
4. Because of information technology the cost of bank will reduce that will result in lower service charges for customers.
5. Making Transaction is very easy by using information technology.

6. New IT Technology like biometric are help to do secure and transparent transaction.

Results And Findings - Future Trend of Cashless Transaction - The payment industry in itself keeps on evolving with the ever changing consumer sentiments and the needs of the businesses. An innovation in this space is thus a continuous process, while the adoption of each of new development takes its own pace to penetrate.

According to the survey conduct by Cash-karo India (cash-back and coupons site), After Demonetization i.e. from NOV-2016, E-wallet payment method is more preferred by customers than any other payment methods. According to this survey, 1% users preferred cash as payment method, 18% for debit/credit cards,23 % for Net banking and 59% users preferred E-wallet as payment method. And in future also E-wallet system will be more preferable.

Conclusion - However, the benefits of this move have now started trickling in with more and more people switching to digital modes of receiving and making payment. India is gradually transitioning from a cash-centric to cashless economy. Digital transactions are traceable, therefore easily taxable, leaving no room for the circulation of black money. The whole country is undergoing the process of modernization in money transactions, with e-payment services gaining unprecedented momentum. A large number of businesses, even street vendors, are now accepting electronic payments, prompting the people to learn to transact the cashless way at a faster pace than ever before.

References :-

1. Alvares, Cliford,(2009) ¯The problem regarding fake currency in India. Business Today;
2. Jain, P. M. (2006). E.-payments and E- Banking. Indian Banker, March. pp.108-113.
3. Srinivas, N. (2006). An Analysis of the Defaults in Credit Card Payments, Southern Economics.
4. RBI Bulletin.
5. https://www.x.com/.../future-money-cashless-economy—part-i.

****

The Effects Of Globalization On Women In Developing Nations

Dr. Rajesh Jain *

Abstract - The trend of debate is more towards dynamics of gender exploitation and social security aspects of labour force within a symbiotic postwar relation of "capital" and "labour".The present content of theoretical proposition is that the impact of globalization on gender is explicit and geared to gender discrimination and inequalities in terms of access to and control over capital and resources. A majority of the employees in such industries are Malay women. A study (in Chowdhury, 2008, p: 53) shows a significant fall in the wage earning by former textile workers who are presently employed in the informal sector. Gujarat has established minimum wages in 61 activities in the informal sector where the wage varied from Rs. 49 to Rs.57 in 2015. In the case of women, the wage is even lesser (i.e less than Rs. 39), with an increasing number of daily wage earners with approximately 37.24% female workforce below poverty the line (Brenan, 2014).

Introduction - Since last two decades the processes of globalization and the opening up of market economy have given rise to many philosophical and policy crisis especially in the context of developing economies. It is so because it provides a life-world, i.e in the form of social reality as well as the world view which initiates several conceptual approaches and theoretical debates to understand: globalization. One of these theoretical approaches relates globalization with two broad macro processes, i.e. the globalization of trade and trade culture and the changing nature of labour and gender struggle in the transforming economy. The trend of debate is more towards dynamics of gender exploitation and social security aspects of labour force within a symbiotic postwar relation of "capital" and "labour".The present content of theoretical proposition is that the impact of globalization on gender is explicit and geared to gender discrimination and inequalities in terms of access to and control over capital and resources. While some women have gained work opportunity in terms of newly emerging forms of employment, especially in the IT and service sectors the semiskilled or the unskilled ones have lost the control over their natural recourses (land etc), resulting in the loss of traditional livelihood and sustainability.

Literature Review - The argument illuminates from several feminist critiques (Dex, 1998; Sanderson, 2002; Walby, 2006; Cecilia, 2008; and Jain, 2010) that the globalization process is not necessarily integrating 'men ' and 'women' into a homogenous entities in the sphere of economy, culture, technology and governance. On the contrary, many of these feminist writers consider that the globalization and neo-liberalization have geared the process of euphemism for ultra imperialism (Ceilina, 2011). Indeed, neo-liberalization and globalization have led to severe fragmentations and the emergence of divergent views and identity politics. In that sense, globalization certainly gets ambiguous to be entitled as esoteric, universal and equal. In the Second Global Knowledge Conference held in Kuala Lumpur (2010), two of the main themes of the conference were the 'indigenization of knowledge' and 'sovereignty' — a counter discourse to that of globalization (ibid). The forces of globalization might have to contend with other forms of social and cultural resistance, thus making its spread a much more complex process. As Diana Wong (2007) puts it aptly: "the challenge of globality today may not lie in the attainment of convergence, but in the recognition and acceptance of difference"

Feminization Of Employment, Sub-Contracting And Flexibility Of Labour Structure - The world of flexible labour, sub-contracting and the process of casualisation raise many other complex issues in the context of "gender"exploitation in global economy. The informal sector is one of the most affected areas which even otherwise has been plagued by arbitrary gender discrimination, low wages and lack of job security. Then there is a trend towards in formalization of women's labour. In India, there have been major changes since 2005 in implementing policies leading to reduction in the industrial licensing and opening up of the economy. The major thrust of the liberalization process has been wide-ranging trade reforms and restructuring custom duties with a gradual elimination of restrictions on trade. In the pre-reform regime the import duties in India were the highest in the world (NCAER, 2011). Since 2005, the tariff has been brought down from 60% in 2004-2005 to 45% in 2007-2008, and 40% in 2009- 2010 to 35% in 2010-

* Asst. Professor (Commerce) IPS Academy, Indore (M.P.) INDIA

2011 (Chowdhury, 2011). Indian government is virtually compelled to protect the interests of the global corporates, otherwise it is argued that capital would go to Mayanmar, Bangladesh or other countries where wages are lower and workers have even fewer rights (Ceilina, 2010; Gosh 2009). In the area of 'foreign trade sector' (FTS), both export and import policies have been restructured paying attention mainly to keep the capital productive and globally mobile both by national and international agencies. This severely affects the status of working women and their work situations. For example, export has boomed up in Southeast and East Asia in the last quarter of the 20th Century, as fuelled by the contribution in export related activities and through the remittances made by migrant workers.

Breakdown Of Traditional Family Structure And Kinship Network - The era of globalization has accelerated the pace of migration more so in last 15 years .The pull-push factors have uprooted millions of Asians especially the north – east Asians towards comparatively advanced countries to secure better means of livelihood. The trend of outsourcing and supply of cheap labour mainly from Asian labour market, is one of major trends of advanced countries like America, Europe and Australia. In Asia, migration for economic reasons has denuded poor families leaving children to care for themselves with either father or mother away in a foreign land. The problems faced by female migrant workers have not received much attention by the researchers, activists or administrators. In India, such compulsive migration has multifaceted impact on women. For example, migration of rural men towards urban areas and later to outer countries has led to an increasing proportion of feminization of household, with a majority of them belonging to extreme poverty. For instance, 39-43% of the rural households in India are female-headed households, compared to the 29% in Cambodia, 18.23 in Korea and 26.4% in Mongolia (Rasheda, 2005). However, moving out for rural men is not a-typical in the history of migration in India, but the recent trend makes newly emerging phenomenon, which pushes thousands of rural women coming to cities and engaging themselves in unskilled labour (mainly in the construction and infrastructure- building projects) due to the lure of earning better Livelihood.

Commodification Of Women And Sexuality - The ideology of consumerism and marketisation envisages world as market where individuals can access anything in the market what 'he' or 'she' wants to consume. It enhances the logic that everything in the world can be commercialized and commoditised. This rising trend of individualism and consumerism comes hand in hand with the neo- liberalized philosophy. The economic globalization in the form of market democracy has commoditised women and sexuality as never before. Women are commonly employed as models, films stars, telemarketers, servers and entertainers in bars and restaurants. This is because the service sector has always shared a very thin borderline with entertainment industries. Women are thus portrayed as ever-available sex objects in an endlessly repetitive male dominated world. These jobs are not only unstable, low waged and physically strenuous but also reinforce the use of feminity and sexuality to raise sales, making women more vulnerable to possibilities of sexual abuse and exploitation. The total number of reported rape cases in Malaysia increased from 1478 in 2007 to 4742 in 2013 - a 61.08% increase (AWAM, 2011). Rape of teenage girls rose from 1049 in 2005 to 941 in 2006. As police reports that 64.29 % of the victims were the minor girls.

Market Liberalization In Agriculture And Status Of Women - The shift in production towards cash crops from household subsistence production is one of the defining characteristics of commercialization in agriculture, associated with globalization. In many regions of sub-Saharan Africa, the introduction of cash crops has changed the gender division of labour and management of household resources. Women are increasingly put to manage the household food production while men's primary economic activity has become cash crop production (Tibaijuka, 2007). In India, feminization of poverty has been atypical in the rural sector. About 92.74% women workers are employed in the primary sector in India (ILO, 2011). In the rural informal sector, women usually engage themselves traditionally in agricultural and para -agricultural activities, like transplanting paddy, seedling by long hours of standing, bending in the slush of the field, winnowing and dying of grains, weeding and caring of cattle etc. All these farm activities related to the subsistence of agriculture. A Study conducted by the National Council for Applied Economic Research (NCAER, 2010) has shown that there is a very large section of women workers (74.91 %) in agriculture as compared to men (61.38%) and the share of casual workers belongs more to women than the men. As women have been the primary seed keepers and processors, WTO policies have made their impact throughout the food chain. The impact of WTO in agriculture has adversely affected women due to implementation of a few policies like AOA (Agreement on Agriculture), TRIP (Trade Related Property Rights), and the SPA (Sanitary and Photo –sanitary Agreement). Commercial farming, massive production of agricultural food and cash crop production are the growing trends among the rich farmers.

Conclusion - A more drastic and sensational change that is emerging on Indian scene is the process of liberalization and globalization, which are influencing traditional socio-economic institutions and the people in multiple ways. The above processes are happening under broader capitalist formations, and first time in India, capitalism is taking deep roots. The free economy and the above processes enhance marketisation and consumerism as interwoven factors, ruling the new changing economy. The rising trend of consumerism comes hand in hand with new liberalized economic policies. Amongst the most visible changes in economic institutions, is the status of labour, production processes and the work culture. While the dominance of

'trade union' movement is on decline due to onslaught of capitalist forces, the lowly skilled labourers are the worst victims of this change in 'industrial democracy' and the labour market. Labour flexibility, casualisation of labour and feminization of labour are a few dangerous consequences of the processes of globalization and liberalization. Migrating to comparative advanced countries has emerged another phenomenon where skilled and even unskilled women are hired more on contractual basis , and many of them face new kind of challenges and exploitations. Along with more career oriented opportunities for women in 'dynamic' 'globalized' economy — with their extending benefits to well educated career oriented women, there is also a compulsion for couples ton earn together to mange household across various strata of society. Similar to the urban front, the situation in rural areas is equally alarming. Emerging globalization and liberalization policies (like, under the WTO) have severely impinged upon the traditional sustainability of vulnerable sections of rural India. Expectedly, the worse affected are the women

References :-

1. Agnihotri, Indu (2011) "Globalisation and the State", paper presented at DAWN Asia-Pacific Workshop on Political Restructuring and Social Transformation, 8-11 October, Thailand.
2. All Women's Action Society (AWAM) (2000) Draft Report on Rape Research.
3. Asian Women Workers Newsletter, Committee for Asian Women CAW) , Globalisation and Informalisation, International Women Workers Workshop South Korea October 2010, Korean Women Worker Association United, Committee for Asia Women and Women Working Worldwide.
4. Becky Ellis, Feminism, Online Journal, Globalisation, Sweatshops and Indonesian Women Workers
5. Blanchard, Eric. 2010. Gender, International Relations, and the development of Feminist Security Theory. Signs: Journal of Women in Culture and Society 28, n.4:1289-1313.
6. Ghosh, J (2013) "Globalisation and Economic Liberalisation", ISIS Women in Action.
7. www.globalimpactsector.com
8. www.indianwomenculture.org
9. www.womenpowerclub.org

****

Business Ethics And Impact On Society

Roshni Siddiqui * Rupesh Dwivedi **

Abstract - Business ethics is the study of good and evil, right and wrong and just and unjust actions of businessman. Business ethics is an extension of values of personal life to business. Theory of amorality suggest that business actions should not be judged by general ethical standards. But the theory is not acceptable to many. People who are is business are bound by the same ethical principles that apply to others. Business ethics comeout from three sources religious, cultural experience and legal system. All religious force to follow honesty in the business the business is not done for own selfish but for the welfare of the society. Cultural experiment are the collection of human behaviours accepted by the society civilasation itself is a cumulative cultural experience in which people have passed through three district phase of moral codification, These to source are our traditional moral values and third the legal system is forced by the administration. Law and rules of conduct approved by legislature that guide human behaviour in any society.

The importance of business ethics is for the society and belong to human values, moral values and create confidence between businessman and consumer, employer and employee, company and sonsumer, company and shareholder as well. It bounds to whole society and brings to integration of nation. Sweet mutual relation, trust and future development depend on the business ethics.

Business ethics forced to create consumer protection act. Due to the decreasing business ethics social responsibility of ethics promotes to businessman to behave honesty, help to society etc. The importance of business will remain with increasing complexity of business.

Introduction - Business ethics is very important for business operation. Business ethics is the study of good and Evil, Right and Wrong, Just and Unjust of action of business. Business ethics is an extension of values of personal life to business. People who are in business are bound by the same ethical principle that apply to other business ethics came out from three sources religious, cultural, experience and legal system.

The importance of business ethics is for the research scholar society and belong to human values moral values and create confidence between man and consumer employer and employee, company and shareholder, company and consumer as well.

Business ethics past to create consumer protection act. Due to decresing business ethics, social responsibility of ethics promote to businessman to behave honesty and help the society.

Research Methodology - Statistical methods are generally adopted in the research. All informations are taken by the system of secondary data collection, practical, interviews are created with consumer and businessman. By looking the large number of consumers and businessman random sampling method adopted.

Hypothesis :

1. Business ethics generally not helpful to progress of business.
2. Most of the businessman company managers etc. Do not accepts business ethics.
3. Business ethics is not easy to accept all time of business and business.

Objectives :

1. To study the concept of business ethics.
2. To study how long business ethics accepted by the businessman and other parties.
3. To find out the merits and demerits of business ethics applied in business.
4. To suggest to more acceptation of business ethics in every behaviors of businessman.
5. To search out the difficulties during following business ethics.

Description - Business ethics is a board word to study of all aspect of business because its effect is very strong for the business and it also belong to the culture and behaviors of animation. In business ethics Japan is the best example here every businessman follows the ethics. Not considering that consumer knows or not. This is the reason that Japan

* Research Scholar (Commerce) A.P.S. University, Rewa (M.P.) INDIA
** Research Scholar (Commerce) A.P.S. University, Rewa (M.P.) INDIA

is famous in the world in business ethics matter.

Business ethics has three kinds of sources religious, cultural, experience and the legal system. Religious effect forces to businessman to follow the business ethics. About in all religions business ethics is very important for the Business honesty, population and other moral values came out from religious.

Culture as was stated curlier, refers to a set of values, rules and standards transmitted among generations and accepted upon to produce behaviors that fall within acceptable limits.

Civilization itself is a cumulative cultural experience in which people have passed through three distinct phases of moral codification. These stages correspond codification. These stages correspond to the changing economic and social arrangement in human history.

How rules of conduct are approved by legislatures that guide human behaviours in any society? They codify ethical expectations and keep changing as new evils emerge. But laws cannot cover all ethical expectation of society. Law is reactive new statutes and enforcement always lags behind the opportunity for corporate expediency.

Importance of Business ethics :

1. Ethics corresponds to basic human needs. It is a human trait that man desires to be ethical not only in his private life but also in his business affairs where being a manager he knows his decisions may affect the lives of thousands of employees. Moreover most people want to be part of an organization which they can respect and be publicly proud of be caused they perceive its purpose and activities to be honest and beneficial to the society.
2. Values create credibility with the public a company perceived by the public to be ethically and socially responsive will be honoured and respected even by those. Who have no intimate knowledge of its actual working.
3. Values give management credibility with employers values are supposed to be a common language to bring leaderships and its people together organizational ethics when perceived by employees as genius create common goals value and language. The management has credibility with its employees precisely because it has credibility with the public.
4. Values help better decision making another point of great importance is that an ethical attitude helps the management make better decisions le decisions which are in the interest of the public their employees and the company's own long term goods even though decision making is slower.
5. Ethics and profit ethics and profit go together. A company which is inspired by ethical conduct is also profitable one value driven companies are sure to be successful in the long run though in the short run, they may lose money.

Difficulties of business ethics - It is very difficult to accept right aspect of business ethics. There are two much difficulties. Here businessman and company manager fail to remain best side of business ethics. Business is complicated behaviors between businessman and consumer, some consumers also forces to accept evil aspect of ethics.

Suggestion - To remain business in business world, it is important to maintain ethical's behaviours. Businessman and company manager should remain alert in business ethical matter and always try to accept moral values in the business.

To Sumup - Business ethics is the study of both aspect of goodness, right and just business ethics is very valuable for person and society. Business ethics belong to human values, moral values and to create confidences. Business ethics are very essential to developed business and get popular to in the business environment.

References :-

1. Essential of Business Environment, K. Aswathappa Himalaya Publishing House 2008.
2. Business Environment, Francis Cherunilam, Himalaya Publishing House, 2008.
3. Business Environment, Dr. P.C. Jain & Dr. S.S. Verma, Sahitya Bhawan Publication 2009.
4. Business Environment, S.M. Shukla, Sahitya Bhawan Publication 2012.

****

उपभोक्ता संरक्षण की दिशा में प्राप्त अधिकारों का अध्ययन

वीरेन्द्र सिंह ठाकुर *

शोध सारांश – उपभोग की प्रवृत्ति देश की अर्थव्यवस्था एवं समाज को बड़े स्तर पर प्रभावित करती है। अंतर्राष्ट्रीय व्यापार एवं वाणिज्य के विकास में व्यापार तथा व्यवसाय को बड़े स्तर पर व्यापार के लिए प्रेरित किया है। परिणामस्वरूप उपभोक्ताओं की जरूरतों को पूरा करने के लिए विभिन्न प्रकार की वस्तुएं तथा सेवाएं जैसे बैंकिंग, बीमा, वाहन, परिवहन, घरेलू इलेक्ट्रानिक उत्पाद, बिजली, मनोरंजन, गृह निर्माण आदि उपभोक्ताओं के लिए बाजार में उपलब्ध है। बेहतर ज्ञान के साथ विनिर्माताओं एवं व्यापारियों का संगठन अस्तित्व में आ गया है। इससे व्यापारियों एवं उपभोक्ताओं के बीच के रिश्ते प्रभावित हो रहे हैं तथा उपभोक्ता संप्रभुता का सिध्दांत को दरकिनार कर दिया जा रहा है। टेलीविजन, समाचार पत्रों एवं पत्रिकाओं में वस्तुओं तथा सेवाओं के विज्ञापन उपभोक्ताओं की मांग को प्रभावित कर रहे हैं साथ ही वस्तुओं के विनिर्माण में दोष, खामियां व उनकी गुणवत्ता, मात्रा एवं शुध्दता में गिरावट तथा सेवाओं में कमी होने की संभावना भी बढ़ी है। सूचना तकनीक में आई क्रांति की वजह से उपभोक्ताओं को कई प्रकार की नई चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। साईबर अपराध, प्लास्टिक मुद्रा, आभाषी लेनदेन, बैंकिग तथा एटीएम धोखाधड़ी जैसे अपराधों का ग्राफ दिनोंदिन बढ़ रहा है। जिस उपभोक्ता को राजा के रूप में माना जाता है, वह वास्तव में बाजार के कदाचारों का शिकार हो रहा है। उत्पादक व विक्रेता का एकमात्र उद्देश्य अधिक से अधिक मुनाफा कमाना हो गया है, चाहे इसके लिए उन्हें हानिकारक प्रथाओं को अपनाना, स्वीकृत मानकों के विपरीत उत्पादों का विनिर्माण एवं विक्रय करना आम बात हो गई है। अधिक मुनाफा कमाने के लिए व्यापारी उपभोक्ताओं का शोषण करते हैं और खराब वस्तुओं का अधिक कीमत में आपूर्ति कर देते हैं। जनसामान्य के हित के लिए बाजार में मिलावटी एवं अमानक वस्तुओं की सतत् जांच की जानी चाहिए तथा उपभोक्ताओं को शोषण से बचाने, मिलावटी एवं घटिया वस्तुओं तथा सेवाओं से दूर रखने के लिए यह जरूरी है ताकि उपभोक्ता के हितों को संरक्षित किया जा सके। उपभोक्ताओं के संरक्षण के लिए वर्ष 1986 में उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम बनाया गया है।

प्रस्तावना – उपभोक्ताओं को सशक्त, सक्षम एवं आत्मनिर्भर बनाना उपभोक्ता शिक्षा का उद्देश्य है। वर्तमान में बाजार तेजी से जटिल होते जा रहे है, जिस कारण उपभोक्ताओं को शिक्षित करने की आवश्यकता है, ताकि वे अपने अधिकारों और जिम्मेदारियों को समझ सकें।

शोध पत्र का उद्देश्य :

1. उपभोक्ताओं को उत्पादों की गुणवत्ता, माप, शुध्दता एवं मापदण्डों में त्रुटि, अपूर्णता, अनैतिक व्यापार व्यवहार अथवा सेवाओं में कमी के लिए जागरूक करना।
2. नकली उत्पादों की पेशकश, विनिर्माण एवं सेवाओं के प्रति उपभोक्ताओं को सजग रखना।
3. सक्षम प्राधिकारी द्वारा प्रमाणित सुरक्षा मानकों के अनुरूप उत्पाद एवं सेवाओं का उपभोग को बढ़ावा देना।
4. मिथ्या और भ्रामक विज्ञापनों से उपभोक्ताओं को बचाना।
5. उत्पाद एवं सेवाओं में कमी के लिए उपभोक्ता विवाद निवारण एजेंसियों के माध्यम से क्षतिपूर्ति प्राप्त करने उपभोक्ताओं को प्रोत्साहित करना।

उपभोक्ता अधिकार – व्यापारियों तथा उद्यमियों द्वारा उपभोक्ताओं को विभिन्न तरीके से ठगा जाना एक आम बात हो गई है। उपभोक्ता के साथ हुए अन्याय के लिए अंकुश लगाकर उपभोक्ता के साथ हुए शोषण अथवा उत्पीड़न के लिए क्षतिपूर्ति की मांग करना ही उपभोक्ता अधिकार है। उत्पाद गुणवत्ता में कमी व वस्तुओं तथा सेवाओं में कमी के विरूध्द उपभोक्ताओं को मिला कानूनी संरक्षण ही उपभोक्ता का अधिकार है।

संयुक्त राष्ट्र का उपभोक्ता संरक्षण के लिए दिशा निर्देश – संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा में 09 अप्रैल 1985 को एक प्रस्ताव पारित कर उपभोक्ता संरक्षण से संबंधित मार्गदर्शक सिध्दांतों का प्रारूप को स्वीकार किया तथा सदस्य देशों को उपभोक्ता हितों के संरक्षण के लिए नीतियों एवं कानूनों को अपनाने में प्रोत्साहित किया। इन मार्गदर्शक सिध्दांतों के प्रारूप में उपभोक्ता संरक्षण के बुनियादी उद्देश्यों को परिभाषित किया गया है। जिसके आधार पर सरकारों को राष्ट्रीय स्तर पर नीतिगत व्यवस्था लागू करने में मदद मिल सके।

मार्गदर्शक सिध्दांतों में कहा गया है कि सरकारों को इन दिशा निर्देशों को ध्यान में रखकर देश की आर्थिक, सामाजिक एवं पर्यावरणीय परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए उपभोक्ताओं के सुरक्षा के लिए उपभोक्ता संरक्षण से संबंधित मजबूत नीतियों को विकसित करना व बनाए रखना हैं।

1. उपभोक्ताओं को स्वास्थ्य एवं सुरक्षा के खतरों से संरक्षण प्रदान करना।
2. उपभोक्ताओं के आर्थिक हितों का संरक्षण करना तथा उसे बढ़ावा देना।
3. उपभोक्ताओं को पर्याप्त सूचनाएं मुहैया कराना जिससे वे अपनी इच्छाओं और जरूरतों के अनुसार सूचित एवं चयन करने में सक्षम हो सके।
4. उपभोक्ता शिक्षा के साथ ही उपभोक्ता के चयन को प्रभावित करने वाले प्रभावों पर शिक्षा।
5. उपभोक्ता शिकायत निवारण की उपलब्धता।
6. टिकाऊ उपभोग की प्रवृत्तियों को बढ़ावा देना।

उपभोक्ता सुरक्षा के लिए विभिन्न संवैधानिक शक्तियां :

* वार्डन सह संपदा अधिकारी, क्षेत्रीय पंचायत एवं ग्रामीण विकास, प्रशिक्षण केन्द्र कुरूद जिला–धमतरी (छ.ग.) भारत

1. औषधी नियंत्रण अधिनियम 1950
2. खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम 1954
3. औषधी और चमत्कारिक उपचार (आपत्तिजनक विज्ञापन) अधिनियम 1954
4. आवश्यक वस्तु अधिनियम 1954
5. निर्यात गुणवत्ता नियंत्रण और निरीक्षण अधिनियम 1963
6. एकाधिकार तथा अवरोधक व्यापारिक व्यवहार अधिनियम 1969
7. बाट और माप मानक अधिनियम 1976
8. चोर बाजारी निवारण एवं आवश्यक वस्तु प्रदाय अधिनियम 1980

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 – भारतीय संसद द्वारा वर्ष 1986 में उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम पारित कर उपभोक्ताओं के हितों को बेहतर तरीके से संरक्षित करने के उद्देश्य को ध्यान में रखकर इस अधिनियम को बनाया गया है। यह निजी, सार्वजनिक एवं सहकारी क्षेत्र के सभी प्रकार की वस्तुओं एवं सेवाओं पर लागू होता है तथा उपभोक्ताओं की शिकायतों का सरल, शीघ्र एवं कम खर्च में समाधान तथा होने वाली असुविधा एवं नुकसान के लिए क्षतिपूर्ति का प्रावधान किया गया है। जिसके लिए उपभोक्ता परिषदों एवं अर्धन्यायिक प्राधिकारियों की स्थापना का भी प्रावधान है। इस अधिनियम को अधिक सशक्त बनाने के लिए वर्ष 1991, 1993 एवं वर्ष 2002 में संशोधित किया गया है।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 में उपभोक्ताओं को प्राप्त अधिकार :

1. जीवन एवं संपत्ति के लिए खतरनाक वस्तुओं एवं सेवाओं के विपणन के विरूध्द सुरक्षा प्राप्त करने का अधिकार।
2. उपभोक्ता को अनुचित व्यापारिक व्यवहारों से संरक्षण प्रदान करने के लिए वस्तुओं एवं सेवाओं की गुणवत्ता, मात्रा, क्षमता, शुध्दता, मानक और कीमत के बारे में सूचना पाने का अधिकार।
3. प्रतिस्पर्धात्मक मूल्यों पर वस्तुओं एवं सेवाओं तक पहुंच का प्राधिकार सुनिश्चित करने का अधिकार।
4. उपभोक्ताओं के शिकायतों की सुनवाई का अधिकार।
5. अनुचित व्यापार व्यवहारों एवं धोखाधड़ी पूर्ण शोषण के विरूध्द शिकायत निवारण का अधिकार।
6. सशक्त, सक्षम एवं आत्मनिर्भर बनने उपभोक्ता शिक्षा का अधिकार।

उपभोक्ता संरक्षण परिषद – केन्द्र, राज्य तथा जिला स्तर पर उपभोक्ता संरक्षण परिषदों का स्थापना उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम में प्रावधानित है।

1. केन्द्र स्तर पर उपभोक्ता मामले विभाग के मंत्री उपभोक्ता संरक्षण परिषद के अध्यक्ष होते हैं तथा अन्य सरकारी और गैर सरकारी सदस्य होते हैं।
2. राज्य स्तर पर राज्य उपभोक्ता मामले, विभाग के मंत्री की अध्यक्षता में राज्य उपभोक्ता संरक्षण परिषद तथा
3. जिला स्तर पर जिला कलेक्टर की अध्यक्षता में जिला उपभोक्ता संरक्षण परिषद का गठन होता है।

इन परिषदों की प्रकृति सलाहकारी होती है तथा इनका उद्देश्य अधिनियम में प्रदत्त उपभोक्ता के अधिकारों की सुरक्षा करना है।

उपभोक्ता विवाद निवारण एजेंसियां – उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 के तहत तीन स्तरीय उपभोक्ता विवाद निवारण एजेन्सी स्थापित किया गया है, जिनमें निम्नलिखित हालातों में शिकायत दर्ज करायी जा सकती है।

1. व्यापारी या सेवा प्रदाता द्वारा अनैतिक या प्रतिबंधित व्यापारिक व्यवहार से उपभोक्ता को हुई क्षति या नुकसान पर।
2. खरीदी गई उत्पाद में दोष होने पर।
3. किसी सेवा में कमी होने पर।
4. उपभोक्ता को प्रदान की गई वस्तु अथवा सेवा के बदले अधिक कीमत लेने पर।
5. उपभोक्ता के जीवन तथा सुरक्षा के लिए खतरा उत्पन्न होने वाले वस्तुओं एवं सेवाओं को बेचने के लिए आग्रह करने पर।

1. **जिला स्तर पर जिला उपभोक्ता विवाद निवारण फोरम, (जिला फोरम)** 20 लाख रू0 तक के दावे के लिए।
2. **राज्य स्तर पर राज्य उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग, (राज्य आयोग)** 20 लाख रू0 से अधिक तथा 1 करोड़ रू0 तक के दावे के लिए।
3. **राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग, (राष्ट्रीय आयोग)** 1 करोड़ रू0 से अधिक दावे के लिए।

उपभोक्ता निम्नलिखित एजेंसियों में निर्धारित शुल्क अदा करके एक सादे कागज पर शिकायत दर्ज कर सकता है, जिसमें विरोधी पक्ष एवं शिकायतकर्ता का पूर्ण विवरण देकर स्वयं या उसकी ओर से अधिकृत व्यक्ति या शिकायत निवारण एजेंसी को डाक के माध्यम से पत्र भेजकर भी शिकायत दर्ज करायी जा सकती है तथा वकील की सेवा लेने की कोई बाध्यता नहीं है। जिसमें शिकायतकर्ता का नाम व पूरा पता, विरोधी पक्ष का नाम व पूरा पता, उत्पाद को खरीदने या सेवा प्राप्त करने की तिथि, भुगतान की गई राशि, उत्पाद की संख्या या सेवाओं का विवरण के साथ अनुचित व्यापार व्यवहार/दोषपूर्ण उत्पाद की आपूर्ति/सेवा में कमी या अधिक मूल्य लिए जाने संबंधी विवरण सहित बिल, रसीद एवं संबंधित पत्राचार की प्रति के साथ जिला फोरम एवं राज्य आयोग में शिकायत 03 प्रतियों में तथा राष्ट्रीय आयोग में शिकायत की 04 प्रतियों मे प्रस्तुत किया जाता है।

शुल्क तालिका

क्र.	विवरण	देय शुल्क
	जिला फोरम	
1	1 लाख रू0 तक गरीबी रेखा के अधीन अंत्योदय, अन्य योजना कार्ड धारक शिकायतकर्ता के लिए	कोई शुल्क नहीं
2	1 लाख रू0 तक अन्य शिकायतकर्ताओं के लिए	100/–
3	1 लाख रू0 से अधिक तथा 5 लाख रू0 तक	200/–
4	5 लाख रू0 से अधिक तथा 10 लाख रू0 तक	400/–
5	10 लाख रू0 से अधिक तथा 20 लाख रू0 तक	500/–
	राज्य आयोग	
1	20 लाख रू0 से अधिक तथा 50 लाख रू0 तक	2000/–
2	50 लाख रू0 से अधिक तथा 1 करोड़ रू0 तक	4000/–
	राष्ट्रीय आयोग	
1	1 करोड़ रू0 से अधिक तक	5000/–

फोरम/आयोग से उपभोक्ताओं को मिलने वाली राहत :–

1. उत्पाद के दोष को दूर कराना।
2. उत्पाद को बदलकर दूसरी उत्पाद दिलाना।
3. उत्पाद की कीमत वापस कराना।
4. सेवाओं के दोष एवं त्रुटियों को दूर कराना।

5. नुकसान के लिए क्षतिपूर्ति दिलाना।
6. अनुचित व्यापार व्यवहार न दोहराने आदेशित करना।
7. खतरनाक वस्तुओं की बिक्री पर रोक तथा उसे बाजार से वापस लेने के लिए आदेश देना।
8. खतरनाक वस्तुओं के विनिर्माण एवं सेवाओं की पेशकश को रोकना।
9. भ्रामक विज्ञापनों के प्रभाव को निष्फल करने के लिए सुधारात्मक विज्ञापन जारी कराना।
10. पीड़ित पक्षों को पर्याप्त मूल्य प्रदान कराना।

उपभोक्ताओं के लिए सुझाव :-

1. मिथ्या व भ्रामक विज्ञापनों से सतर्क रहें।
2. खरीदी से पहले उत्पाद की पूरी जानकारी लेवें।
3. उत्पाद और सेवा की गुणवत्ता से समझौता न करें।
4. ऑनलाईन खरीदी करते समय बैंकिंग सुरक्षा मानकों का ध्यान रखें।
5. आईएसआई, एगमार्क, एफएसएसएआई, बीईई, एवं हॉलमार्क आदि मानक चिन्हों को देखकर ही उत्पाद का चयन करें।
6. उत्पाद की मात्रा, वजन, विनिर्माण की तिथि, समाप्ति की तिथि तथा पोषण संबंधी जानकारी आदि देखकर क्रय करें।
7. उत्पाद की उपयोग, वापस करने, बदलने एवं वारंटी गारंटी की नियम एवं शर्तों आदि की जानकारी लेकर क्रय करें।
8. उत्पाद का पैकेट/सील के साथ छेड़छाड़ या टुटा-फूटा तो नहीं है, आवश्यक रूप से जांच लेवें।
9. अधिकतम खुदरा मूल्य से अधिक भुगतान न करें तथा मूल्य के ऊपर कोई स्टीकर न लगा हो जांच लेवें।
10. उत्पाद एवं सेवा की रसीद/बिल आवश्यक रूप से मांगे।

निष्कर्ष - किसी देश की अर्थव्यवस्था में उपभोक्ता की महत्वपूर्ण भूमिका है। उपभोक्ता की उपभोग की प्रवृत्तियां किसी देश की अर्थव्यवस्था एवं समाज को बड़े स्तर पर प्रभावित करती है। विपणन के आधुनिक परिवेश में उपभोक्ता सर्वोपरि है तथा व्यापार से अपेक्षा है कि वह उपभोक्ता को संतुष्टि प्रदान करने का हर संभव प्रयास करे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राव, डॉ0 रेगा सुर्या, व्याख्यान माला, अपकृत तथा उपभोक्ता संरक्षण कानून।
2. बांगिया, आर.के., अपकृत विधि।
3. गुप्ता, श्री प्रकाश, उपभोक्ता संरक्षण विधि।
4. सागर, अरूण, उपभोक्ता समझें अपने अधिकार।
5. एडवोकेट, महर्षि, दीपक कुमार, जागो ग्राहक, उपभोक्ता कानून आपके लिए।

****

धार जिले कि महिला उद्यमियों को लघु ऋण में बैंक का क्या योगदान एवं आर्थिक विश्लेषण

डॉ. महेश गुप्ता * सन्तोष कटारे **

प्रस्तावना – किसी भी देश की अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ीकरण में उस देश की बैंकिग व्यवस्था का महत्वपूर्ण योगदान होता है। बैंक लोगों के बीच ऋण का प्रमुख जरिया होते है। तथा बैंकों के माध्यम से लोग अपनी वित्तिय आवश्यकताओं की पूर्ति आसानी से कर सकते है। अत: बैंक आर्थिक सुदृढ़ीकरण का प्रमुख आधार है। भारत एक कृषि प्रधान देश हैं, यहाँ की आबादी का 70 प्रतिशत भाग गांवों में निवास करता है। अत: ग्रामीण जनता के विकास एवं सामाजिक उन्नायन हेतु ग्रामीण क्षेत्रों में भी बैंकिंग प्रणाली के विकास की बहुत आवश्यकता है। ग्रामीण क्षेत्र को विकास की बुनियाद मानते हुए पिछड़े क्षेत्रों के विकास हेतु कई आयोगों का गठन किया गया, जिसके अंतर्गत कई कार्यक्रमों के द्वारा गाँवों की माली हालात सुधारने के प्रयास किए गए। किंतु किसी भी विकास कार्यक्रम में अपेक्षित सफलता प्राप्त नहीं हुई।

ग्रामीण विकास में बैंकिंग प्रणाली के महत्व को स्वीकारते हुए, तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूती देने व राष्ट्रीय उत्पादन में वृद्धि की जरुरत को देखते हुये 1950 में ग्रामीण बैंकिंग जांच समिति का गठन किया गया इससे बैंकों का विकास तो तेजी से हुआ किंतु ये बैंक व्यावसायिक दृष्टिकोण से शहरों तक ही केन्द्रित रहे ग्रामिण क्षेत्र साहुकार व महाजनों के भरोसे ही छुट गए। पूँजी निर्माण में ग्रामीण अर्थव्यवस्था के महत्वपूर्ण योगदान की जरुरत को समझते हुए सन् 1969 में तत्कालिन प्रधानमंत्री स्व. इंदिरा गांधी ने 14 व्यवसायिक बैंकों के राष्ट्रीकरण का निर्णय लिया ताकि ग्रामिण अर्थव्यवस्था को मजबूत किया जा सके । इस सबके बावजूद ग्रामिण अर्थव्यवस्था में कोई सुधार नहीं आया। अत: सन् 1975 में वित विभाग के तात्कालिक संयुक्त सचिव एम.नरसिंहम् की अध्यक्षता में एक समिति गठित की गई, जिसके अनुसार ग्राम आधारित बैंकिंग व्यवस्था का श्री गणेष हुआ व 26 सितम्बर 1975 को ग्रामीण की स्थापना का अध्यादेश अमल में लाया गया। जिसके तहत ग्रामीण क्षेत्रों में ग्रामीण बैंकिंग व्यवस्था का शुभारंभ हुआ। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का प्रमुख उद्देश्य, ग्रामिण अर्थव्यवस्था का विकास कर, समाज के कमजोर वर्गो, विशेषकर लघु एवं सीमातं कृषकों, खेतिहर मजदूरों ग्रामीण दस्तकारों, नवीन उधमियों को लघु ऋण, आदि को उनके उत्पादन तथा वितरण संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु ऋण उपलब्ध कराना है, जिससे उनकी आर्थिक – समाजिक स्थिति में सुधार लाया जा सके। इस उद्देश्य की पूर्ति बैंक द्वारा फसल, भूमि सुधार ऋण, नये कुएँ खुदवाना, पुराने कुओं की मरम्मत, पंपसेट, सिंचाई, नाली–निर्माण, कृषि उपकरण, थ्रेसर, रोलर, गोबर–गैस संयंत्र, मुर्गीपालन, बकरीपालन, मछलीपालन, भैंसपालन, बैलगाड़ी, भंड़ारण, उपभोगग्रहण हेतु ऋण, दर्जी कार्य, दस्तकारी, ठेला, तांगा, रिक्शा, किराना दुकान, इत्यादी कार्यो हेतु ऋण प्रदान कर उत्पादक कार्यो में वृद्धि करना और ग्रामीण निर्धनों व बेरोजगारों को रोजगार उपलब्ध कराना है। निर्धन, साधनहीन तथा र्नियोग्यताओं से ग्रस्त व्यक्तियों के लिये आर्थिक सशक्तिकरण सदैव ही दुष्कर कार्य रहा है। निर्धनता उन्मूलन के व्यक्तिगत प्रयास सदैव ही निम्न परिणाम देने वाले रहे है। प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र ऋण के माध्यम से एवं भारत शासन म.प्र. शासन द्वारा प्रायोजित अनेक गरीबी उन्मूलन एवं ग्रामीण विकास की योजना में वित पोषण के माध्यम से बैंको ने, हमेशा समाज में महत्वपूर्ण निभाई है। वैश्वीकरण, आर्थिक उदारीकरण के वर्तमान परिदृश्य में विकास प्रक्रिया को अधिक सुदृढ़ पारदर्शी एवं जन – उपयोगी बनाने की दिशा में बैकिंग – तंत्र द्वारा निरतंर प्रयास किये जा रहे हैं। इसी व्यवस्था के तहत् राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास – बैंक (नाबार्ड) के द्वारा फरवरी 1992 में बचत एवं साख – समूह अर्थात स्व – सहायता समूह को बैंकों से जोड़ने के लिये एक पायलेट प्रोजेक्ट बैंक – संयोजन कार्यक्रम की शुरूआत की गई। स्वतंत्रता प्राप्ति के 6 दशको के बाद आज भी शरत की 30 करोड़ आबादी गरीबी रेखा के नीचे जिवन – यापन कर रही हैं। अत: इन लोगों को गरीबी से निकालने हेतु सरकार द्वारा बैंकों के माध्यम से लघु ऋण उपलब्ध करवाकर इनकी गरीबी दूर करने के प्रयास किए जा रहे है।

बैंकों का महत्व – देश के आर्थिक विकास में बैंक एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। बैंक ,मुद्रा बाजार के एक महत्वपूर्ण घटक होते है। बैकिंग प्रणाली व्यापर, वाणिज्य एवं उद्योग को वित्तीय सहायता प्रदान करती है। बैंक बचत को गतिषीलता प्रदान करके उन्हे उत्पादक बनाते है। बैंको का महत्व निम्नलिखित कारणों से स्पष्ट हो जाएगा :–

1. **बचत को बढ़ावा –** बैंक जनता से उनकी बचत एकत्र करके व्यापार, वाणिज्य व उद्योग में धन निवेश करते है। बैंक विभिन्न प्रकार की आकर्षक बचत योजनाएं बनाकर ग्राहकों को राष्ट्र निर्माण करने के लिए धन बचाने को प्रोत्साहित करते है।
2. **मुद्रा का हस्तांतरण –** मुद्रा, चैक, ड्राफ्ट के माध्यम से एक स्थान से दूसरे स्थान पर सरलता, सुरक्षित रख सकता है।
3. **मूल्यवान वस्तुओं की सुरक्षा –** ग्राहक अपनी मूल्यवान वस्तुओं को लॉकर्स में सुरक्षित रख सकता है।
4. **चैक द्वारा सुरक्षित भुगतान –** चैक द्वारा किया गया भुगतान न केवल सुरक्षित है, बल्कि भुगतान का एक अच्छा प्रमाण है।
5. **चैकों का संग्रहण –** बैंक अपने ग्राहकों के द्वारा जमा किए गए चैक, ड्राफ्ट आदि का भुगतान प्राप्त करता है। इससे ग्राहकों के मूल्यवान समय व

* निर्देशक ,शासकीय महाविद्यालय, खण्ड़वा (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, श्री अटलबिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

खर्चे की बचत होती है जो कि ग्राहक को अपने चैक का भुगतान व्यक्तिगत रुप से जाकर प्राप्त करने में व्यर्थ करना पड़ता है।

6. ऋण की सुविधा – बैंक अपने ग्राहक की अल्पकालीन, मध्यकालीन व दीर्घकालीन वित्तीय आवश्यकताओं को ऋण देकर पूरा करते है। ग्राहक निजी सहायक प्रतिभूति के बदले अधिविकर्ष, नगद साख, व अग्रिम के द्वारा बैंक से वित्तीय सहायता प्राप्त कर सकता है।

7. ग्राहक को विविध सेवाएं – इसके अतिरिक्त बैंक ग्राहकों को विभिन्न प्रकार की अन्य सेवाएं उपलब्ध कराता है जैसे – भुगतान करना, षेयर खरीदना व बैचना, ट्रस्टी अथवा प्रबंधक के रुप कार्य करना आदि।

8. व्यापार व उद्योग को सहायता – बैंक सूचना व आंकड़े एकत्र करके, वित्तीय संदर्भ देकर नये शेयरों और डिवेन्चरों का अभिगोपन करके व्यापार तथा उद्योग की सहायता करता है।

9. सरकार को सहायता – बैंक सरकार के एजेन्ट के रुप में कार्य करता है। उदाहरण के लिए – कर एकत्रित करना, टेलीफोन, जल, व बिजली का भुगतान प्राप्त करना आदि।

10. विदेशी व्यापार को वित्तीय सहायता – बैंक केवल देशी व्यापार को ही सहायता नहीं करता बल्कि विदेशी व्यापार को भी वित्तीय सहायता प्रदान करता है। विदेशी व्यापार में बैंक साख – पत्र के द्वारा तथा आयात व निर्यात के लिए ऋण देकर सहायता करता है। इस प्रकार बहुपयोगी विदेशी मुद्रा कमाने में राष्ट्र की सहायता करता है।

धार जिले में लघु.ऋण में बैंक का योगदान – किसी भी स्वरोजगार योजना के सफल क्रियान्वयन में बैंकर्स की भूमिका अत्यधिक महत्व रखती है। किसी भी योजना की सफलता इस बात पर निर्भर करती है। कि उस योजना के लिए बैंकों द्वारा लघु ऋण प्रबंधन किस प्रकार से किया जाता है। क्योकि बैंकों के द्वारा स्वरोजगारियों को ऋण उपलब्ध कराए जाने के उपरांत ही स्वरोजगार से संबधित किसी भी योजना को क्रियान्वित किया जा सकता है और स्वरोजगारियों कों अपना स्वयं का व्यवसाय प्रांरम्भ करने का अवसर प्राप्त हो सकता है।

तालिका 1 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 1 में स्पष्ट है कि वर्ष 2012 – 13 में स्टेट बैंक ऑफ इंडिया बैक द्वारा 2 महिला स्वरोजगारियों को 17.00 लाख रुपये का ऋण दिया गया।

- वर्ष 2012 – 13 में नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक द्वारा 0 महिला भी स्वरोजगारियों को 0 लाख रुपये का ऋण दिया। समूह को ऋण प्रदान किया गया
- वर्ष 2012 – 13 में बैंक ऑफ बड़ौदा द्वारा 1 महिला स्वरोजगारियों को 1 लाख रुपये का ऋण दिया गया
- वर्ष 2012 – 13 में युनियन बैंक द्वारा 0 महिला स्वरोजगारियों को 0 लाख रुपये का ऋण दिया गया
- वर्ष 2012 – 13 में बैंक ऑफ इण्ड़िया द्वारा 7 महिला स्वरोजगारियों को 38.50 लाख रुपये का ऋण दिया गया
- इस प्रकार वर्ष 2012 – 13 में धार जिले की उक्त सभी बैंको द्वारा 10 महिला स्वरोजगारियों को 56.5 लाख रु. का ऋण प्रदान की गई।
- वर्ष 2013 – 14 में स्टेट बैंक ऑफ इंडिया द्वारा 1 महिला स्वरोजगारियों को 7.00 लाख रुपये का ऋण दिया गया।
- वर्ष 2013 – 14 में नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक द्वारा 1 महिला स्वरोजगारियों को 11 लाख रुपये का ऋण दिया। समूह को ऋण प्रदान किया गया।
- वर्ष 2013 – 14 में बैंक ऑफ बड़ौदा द्वारा 1महिला स्वरोजगारियों को 9.50 लाख रुपये का ऋण दिया गया
- इस प्रकार वर्ष 2013 – 14 में धार जिले की उक्त सभी बैंको द्वारा 3 महिला स्वरोजगारियों को 27.5 लाख रु. का ऋण प्रदान की
- तालिका 1 में स्पष्ट है कि वर्ष 2014 – 15 में कार्पोरेशन बैंक द्वारा 1 महिला स्वरोजगारियों को 1.00 लाख रुपये का ऋण दिया गया।
- वर्ष 2014 – 15 में स्टेट बैंक ऑफ इंडिया द्वारा 12 महिला स्वरोजगारियों को 11 लाख रुपये का ऋण दिया गया।
- वर्ष 2014 – 15 में नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक द्वारा 9 महिला स्वरोजगारियों को 26 लाख रुपये का ऋण दिया। समूह को ऋण प्रदान किया गया
- वर्ष 2013 – 14 में बैंक ऑफ बड़ौदा द्वारा 17 महिला स्वरोजगारियों को 75.36 लाख रुपये का ऋण दिया गया।
- वर्ष 2014 – 15 में बैंक ऑफ इंडिया द्वारा 14 महिला स्वरोजगारियों को 52 लाख रुपये का ऋण दिया गया।
- वर्ष 2014 – 15 में बैंक ऑफ महाराष्ट्र द्वारा 1 महिला स्वरोजगारियों को 5 लाख रुपये का ऋण दिया गया।
- वर्ष 2014 – 15 में स्टेट सिंडिकेट बैंक द्वारा 2 महिला स्वरोजगारियों को 5 लाख रुपये का ऋण दिया गया।
- वर्ष 2014 – 15 में कैनरा बैंक द्वारा 1 महिला स्वरोजगारियों को 9.80 लाख रुपये का ऋण दिया गया।
- वर्ष 2014 – 15 में केन्द्रीय सहकारी बैंक द्वारा 1 महिला स्वरोजगारियों को 7 लाख रुपये का ऋण दिया गया।
- वर्ष 2014 – 15 में यनियन बैंक द्वारा 6 महिला स्वरोजगारियों को 17.50 लाख रुपये का ऋण दिया गया।
- वर्ष 2014 – 15 में पंजाब नेशनल बैंक द्वारा 2 महिला स्वरोजगारियों को 5 लाख रुपये का ऋण दिया गया।
- वर्ष 2014 – 15 में ऐक्सिस बैंक द्वारा 1 महिला स्वरोजगारियों को 0.50 लाख रुपये का ऋण दिया गया।
- वर्ष 2014 – 15 में आन्द्रा बैंक द्वारा 1 महिला स्वरोजगारियों को 3.50 लाख रुपये का ऋण दिया गया।
- इस प्रकार वर्ष 2014 – 15 में धार जिले की उक्त सभी बैंको द्वारा 68 महिला स्वरोजगारियों को 218.66 लाख रु. का ऋण प्रदान की गई।
- तालिका 1 में स्पष्ट है कि वर्ष 2015 – 16 में कार्पोरेशन बैंक द्वारा 4 महिला स्वरोजगारियों को 15.50 लाख रुपये का ऋण दिया गया।
- वर्ष 2015 – 16 में स्टेट बैंक ऑफ इंडिया द्वारा 13 महिला स्वरोजगारियों को 56 लाख रुपये का ऋण दिया गया।
- वर्ष 2015 – 16 में नर्मदा झाबुआ ग्रामीण बैंक द्वारा 35 महिला भी स्वरोजगारियों को 111.7 लाख रुपये का ऋण दिया। समूह को ऋण प्रदान किया गया।
- वर्ष 2015 – 16 में बैंक ऑफ बड़ौदा द्वारा 5 महिला स्वरोजगारियों को 27.37 लाख रुपये का ऋण दिया गया।
- वर्ष 2015 – 16 में बैंक ऑफ इंडिया द्वारा 18 महिला स्वरोजगारियों को 73.41 लाख रुपये का ऋण दिया गया।
- वर्ष 2015 – 16 में बैंक ऑफ महाराष्ट्र द्वारा 5 महिला स्वरोजगारियों को 17 लाख रुपये का ऋण दिया गया।
- वर्ष 2015 – 16 में सिंडिकेट बैंक द्वारा 1 महिला स्वरोजगारियों को

5 लाख रुपये का ऋण दिया गया।

- वर्ष 2015 – 16 में कैनरा बैंक द्वारा 6 महिला स्वरोजगारियों को 23 लाख रुपये का ऋण दिया गया।
- वर्ष 2015 – 16 में केन्द्रीय सहकारी बैंक द्वारा 1 महिला स्वरोजगारियों को 7 लाख रुपये का ऋण दिया गया।
- वर्ष 2015 – 16 में युनियन बैंक द्वारा 3 महिला स्वरोजगारियों को 14.72 लाख रुपये का ऋण दिया गया।
- वर्ष 2015 – 16 में पंजाब नेशनल बैंक द्वारा 5 महिला स्वरोजगारियों को 26.8 लाख रुपये का ऋण दिया गया।
- वर्ष 2015 – 16 में ऐक्सिस बैंक द्वारा 1 महिला स्वरोजगारियों को 0.50 लाख रुपये का ऋण दिया गया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

तालिका क्रमांक :– 1

क्र.	बैंक का नाम	वर्ष (2012 –13)		(2013 – 14)		(2014 – 15)		(2015– 16)	
		महिलाओं की संख्या	ऋण	महिलाओं की संख्या	ऋण	महिलाओं की संख्या	ऋण	महिलाओं की संख्या	ऋण
1	कार्पोरेशन बैंक	0	0	0	0	1	1.00	4	15.50
2	स्टेट बैंक ऑफ इंडिया	2	17	1	7	12	11	13	56
3	नर्मदा झाबुआ ग्रामिण बैंक	0	0	1	11	9	26	35	111.7
4	आईसीआईसीआई बैंक	0	0	0	0	0	0.00	0	0.00
5	बैक ऑफ बड़ौदा	1	1	1	9.50	17	75.36	5	27.37
6	बैकं ऑफ इड़िया	7	38.50	0	0	14	52	18	73.41
7	बैक ऑफ महाराष्ट्र	0	0	0	0	1	5	5	17
8	सिंडिकेट बैंक	0	0	0	0	2	5	1	5
9	कैनरा बैंक	0	0	0	0	1	9.80	6	23
10	केन्द्रीय सहकारी बैंक	0	0	0	0	1	7	1	7
11	युनियन बैंक	0	0	0	0	6	17.50	3	14.72
12	पंजाब नेशनल बैंक	0	0	0	0	2	5	5	26.8
13	ऐक्सीस बैकं	0	0	0	0	1	0.50	1	0.50
14	आन्द्रा बैंक	0	0	0	0	1	3.50	1	3.50
	योग	10	56.5	3	27.5	68	218.86	98	381.5

स्त्रोत :– जिला उद्योग कार्यलय धार

****

बड़वानी जिले में इंदिरा आवास योजना का लागत लाभ विश्लेषण

डॉ. पुरूषोत्तम गौतम * डॉ. परमजीत सिंह सलुजा **

शोध सारांश – मानव के जीवन निर्वाह के लिए आवास बुनियादी जरूरतों में से एक हैं। एक साधारण नागरिक के लिए आवास उपलब्ध होने से उसे महत्वपूर्ण आर्थिक सुरक्षा और समाज में प्रतिष्ठा मिलती हैं। एक बेघर व्यक्ति को आवास उपलब्ध हो जाने से उसके अस्तित्तव में सामाजिक परिवर्तन आता हैं तथा उसकी पहचान बनती हैं और इस प्रकार वह शीघ्र ही अपने सामाजिक वातावरण से जुड़ जाता हैं। ''इंदिरा आवास योजना' भारत सरकार की कार्यनीति भारत निर्माण जैसे कार्यक्रमों में परिलक्षित होती हैं जिसका उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में रह रहे लोगों की जीवन शैली की गुणवत्ता को सुधारना हैं। इसके अतिरिक्त उक्त जनकल्याणकारी योजना ने सुनिश्चित किया हैं कि ग्रामीण गरीब लोगों के पास गारंटी युक्त रोजगार के माध्यम से अपनी बुनियादी जरूरतों विशेष रूप से खाद्य के लिए पर्याप्त मात्रा में क्रय शक्ति बची रहती हैं।

शब्द कुंजी – इंदिरा आवास योजना, हितग्राही, लागत लाभ विश्लेषण, अनुदान, गरीबी रेखा।

प्रस्तावना – इंदिरा आवास योजना का परिचय – मानव के जीवन निर्वाह के लिए आवास बुनियादी जरूरतों में से एक हैं। एक साधारण नागरिक के लिए आवास उपलब्ध होने से उसे महत्वपूर्ण आर्थिक सुरक्षा और समाज में प्रतिष्ठा मिलती हैं। एक बेघर व्यक्ति को आवास उपलब्ध हो जाने से उसके अस्तित्तव में सामाजिक परिवर्तन आता हैं तथा उसकी पहचान बनती हैं और इस प्रकार वह शीघ्र ही अपने सामाजिक वातावरण से जुड़ जाता हैं।

इंदिरा आवास योजना की उत्पत्ति ग्रामीण रोजगार कार्यक्रमों से हुई हैं, जो 1980 के शुरू में प्रारंभ हुए। 1980 में शुरू होने वाले राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम और 1983 में शुरू होने वाले ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम के अंतर्गत मुख्य गतिविधियों में से एक गतिविधि आवासों का निर्माण था। हालांकि, राज्यों में ग्रामीण आवास के लिए कोई समरूप नीति नहीं थी। जैसे, कुछ राज्यों में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम/ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम की निधियों में से निर्माण लागत का एक हिस्सा देना ही मंजूर किया और शेष राशि की पूर्ति लाभार्थियों द्वारा अपनी बचत अथवा स्वयं हासिल किए गए ऋणों से की जानी थी। दूसरी ओर अन्य राज्यों ने संपूर्ण खर्च को राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम तथा ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम की निधियों में से पूरा करना मंजूर किया। कुछ राज्यों ने नए आवासों के निर्माण की मंजूरी दी, जबकि कुछ ने लाभार्थियों के मौजूद आवासों के मरम्मत की अनुमति दी। जून, 1985 में भारत सरकार ने एक घोषणा की, जिसमें ग्रामीण भूमिहीन गारंटी कार्यक्रम की निधियों के एक हिस्से को अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों तथा मुक्त बँधुआ मज़दूरों के लिए मकानों का निर्माण करने हेतु अलग रखा गया। इस घोषणा के परिणामस्वरूप ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम की एक उपयोजना के रूप में इंदिरा आवास योजना 1985-86 में शुरू हुई थी, जो अप्रैल 1989 से शुरू हुई जवाहर रोजगार योजना की एक उपयोजना के रूप में जारी रही। जवाहर रोजगार योजना की कुल निधियों का 6 प्रतिशत भाग इंदिरा आवास योजना के क्रियान्वयन के लिए आबंटित किया जाता था। वर्ष 1993-94 से इंदिरा आवास योजना के क्षेत्र को बढ़ाकर ग्रामीण क्षेत्रों के गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले गैर-अनुसूचित जातियों/जनजातियों के लोगों को भी शामिल कर लिया गया तथा इस योजना के क्रियान्वयन के लिए निधियों के आवंटन को राष्ट्रीय स्तर पर जवाहर रोजगार योजना के अन्तर्गत उपलब्ध कुल संसाधनों के 6 प्रतिशत से बढ़ाकर 10 प्रतिशत कर दिया गया, परन्तु शर्त यह थी कि गैर-अनुसूचित जातियों/जनजातियों (आरक्षित वर्ग) के गरीबों को दिया जाने वाला लाभ जवाहर रोजगार योजना के कुल आवंटन का 4 प्रतिशत से अधिक न हो। इंदिरा आवास योजना को जवाहर रोजगार योजना से अलग कर 1 जनवरी, 1996 से एक स्वतंत्र योजना बना दी गई हैं।

1999-2000 से जीर्ण-शीर्ण कच्चे मकानों को सुधारने के प्रावधान बना कर तथा गरीबों के कतिपय वर्गों को अनुदान के साथ ऋण देकर ग्रामीण आवास कार्यक्रम में सुधार लाने के अनेक प्रयास किए गए हैं। ग्रामीण आवास में किफायती, आपदा-रोधी और पर्यावरण के अनुकूल प्रौद्योगिकी के उपयोग पर भी बल दिया गया हैं।

उद्देश्य –इंदिरा आवास योजना (आईएवाई) का उद्देश्य मुख्य रूप से अनुसूचित जातियों अनुसूचित जनजातियों, मुक्त बँधुआ मज़दूरों के सदस्यों को और भी गैर-अजा/अजजा ग्रामीण गरीबों की गरीबी रेखा के नीचे के लिए घरों के निर्माण के लिए अनुदान प्रदान करने के लिए हैं।

ग्रामीण लोगों को एक मुश्त वित्तीय सहायता देकर आवासीय इकाइयों के निर्माण उन्नयन में मदद करना।

शोध परिकल्पना – प्रस्तुत शोध अध्ययन के परीक्षण हेतु यह परिकल्पना की जाती हैं कि,

1. इंदिरा आवास योजना आवासहीन बी.पी.एल. आदिवासी परिवारों को आवास सुविधा उपलब्ध कराकर उनके जीवन स्तर में सुधार लाने में सहायक रही हैं।
2. योजना द्वारा संचालित कार्यक्रमों में रोजगार अवसरों में वृद्धि हुई हैं।
3. योजना में ग्राम पंचायत स्तर से/जनपद पंचायत स्तर का पूर्ण योगदान होता हैं।

* प्राचार्य, शासकीय कन्या महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) एवं डीन (वाणिज्य) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** 49 जवाहर मार्ग, बड़वानी (म.प्र.) भारत

शोध विधि – प्रस्तुत शोध अध्ययन के अनुसंधान में निर्देशन पद्धति के आधार पर संकलित प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों का उपयोग किया जावेगा। प्राथमिक समंकों को संकलित करने के लिए निमाड़ में जिला स्तर से प्रत्येक विकास खण्ड अन्तर्गत ग्रामों के 50–50 चयनित पात्र हितग्राहियों का साक्षात्कार प्रश्नावली के अनुसार सर्वेक्षण कार्य किया गया हैं।

लक्ष्य समूह – लक्ष्य समूह में गरीबी रेखा के नीचे के बीच लाभार्थियों के चयन के लिए प्राथमिकता के क्रम इस प्रकार हैं –

1. मुक्त बँधुआ मज़दूर
2. अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति परिवारों, जिसमें मुखिया विधवा और अविवाहित महिला हो तथा परिवार की उनके द्वारा अध्यक्षता की जाती हो।
3. अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के ऐसे परिवारों को, जो किसी अत्याचार के शिकार हैं।
4. अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति परिवारों को, जो बाढ़, आग, भूकंप, चक्रवात और इसी तरह की प्राकृतिक आपदाओं से प्रभावित हो।
5. अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के अन्य परिवारों।
6. गैर–अजा/अजजा परिवारों।
7. शारीरिक रूप से विकलांग।
8. परिवारों/विधवाओं की कार्रवाई में मारे गए रक्षा सेवाएँ तथा अर्द्ध सैन्य बलों के कर्मियों को।
9. विकासात्मक परियोजनाओं, खानाबदोश, अर्द्धघुम्मकड़ और न्यून जनसंख्या वाला आदिवासी समुदाय का सदस्य, विकलांग सदस्यों और आंतरिक शरणार्थियों के साथ परिवारों के कारण विस्थापित व्यक्तियों के अधीन गरीबी रेखा के नीचे जा रहे परिवारों के लिए।

तालिका 1 – बड़वानी जिले में लाभान्वितों की संख्या व प्रतिशत –

क्र.	विकास खण्ड	जनसंख्या	लाभान्वित	प्रतिशत
1	बड़वानी	115983	2370	2.04
2	सेंधवा	232883	4652	2.00
3	निवाली	85116	1921	2.26
4	राजपुर	153113	3340	2.18
5	पानसेमल	129044	2696	2.09
6	ठीकरी	113451	2516	2.22
7	पाटी	108506	2480	2.29
	योग :–	**938096**	**19975**	**2.13**

तालिका 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

प्राप्त लाभ की गुणवत्ता तथा औचित्य –

1. स्वास्थ्य एवं पोषण
2. कृषि विकास
3. शिक्षा एवं दक्षता विकास
4. परिवहन हेतु सड़क सुविधा में विस्तार

प्राप्त लाभ का परिणाम –

1. सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम –
2. ग्रामीण अवसंरचना एवं विकास –
3. भारत निर्माण –

योजना का पिछड़े क्षेत्रों पर प्रभाव – साथ ही हम यह भी कह सकते हैं कि मानव विकास के संकेतक, जैसे साक्षरता एवं शिक्षा और मातृत्तव व शिशु मृत्यु दर सतत् सुधार दर्शाते हैं, लेकिन वे यह भी दर्शाते हैं कि प्रगति धीमी हैं और हम एशिया में अन्य अनेक देशों से लगातार पिछड़े हैं। जबकि साक्षरता दर, जो वर्ष 1951 में 18.3 प्रतिशत थी, जो बढ़कर वर्ष 2001 में 64.80 प्रतिशत हो गई हैं। अभी भी अशिक्षित व्यक्तियों की संख्या 304 मिलियन से अधिक हैं, जिससे भारत विश्व में सर्वाधिक अशिक्षित जनसंख्या वाला देश हो गया हैं। जीवन प्रत्याशा दर वर्ष 1951 में 18.30 प्रतिशत थी, यह वर्ष 2001 तक बढ़कर 64.80 प्रतिशत हो गई हैं।

भारत विश्व में सर्वाधिक अशिक्षितों की संख्या वाला देश माना गया हैं। जीवन प्रत्याशा दर वर्ष 1951 की तुलना में लगभग 32 वर्ष से बढ़कर वर्ष 2001–06 की अवधि में पुरूषों के लिए 63.90 वर्ष व महिलाओं के लिये 66.90 वर्ष हुई हैं। यह औद्योगीकृत देशों में यह 80 वर्ष हैं। चीन में जहाँ यह 72 वर्ष हैं, की तुलना में काफी नीचे हैं। यद्यपि औद्योगीकृत देशों के समान भारतीय महिलाओं की जीवन प्रत्याशा दर भारतीय पुरूषों से उच्च हैं, फिर भी भारत में प्रत्येक 1000 पुरूषों पर केवल 933 महिलाओं का प्रतिकूल लिंगानुपात हैं। सबसे शोचनीय हैं कि बाल लिंगानुपात (0–6 आयु वर्ग में), जो 1981 में 962 था, वह तेजी से गिरकर 2001 में 927 रह गया हैं। भारत में मातृत्तव व बाल मृत्यु दरें पूर्वी एशियाई देशों की तुलना में काफी अधिक हैं, जो आवश्यक स्वास्थ्य सेवाओं तक अपर्याप्त पहुँच को दर्शाती हैं। नौवीं योजना से लेकर अब तक कृषि क्षेत्र की वृद्धि काफी धीमी रही हैं, जिससे ग्रामीण शहरी क्षेत्रों के बीच का अंतर गहराया हैं और इससे ग्रामीण क्षेत्र के कुछ इलाकों में बहुत असंतोष उत्पन्न हुआ हैं। यद्यपि वर्ष 2004 के बाद बीते कुछ सालों में विकास में कुछ बदलाव दिखा हैं। अर्थव्यवस्थागत कुल रोजगार में तेज बढ़ोत्तरी हुई हैं, लेकिन मानव श्रम संबंधी स्थायी रोजगार घटा हैं, यद्यपि इस क्षेत्र की फर्में अनौपचारिक रोजगार को बढ़ावा दे रही हैं, जिससे आर्थिक विकास का क्षेत्रीय संतुलन नहीं हुआ हैं और कई अत्यधिक पिछड़े क्षेत्रों में बुनियादी स्तर पर आवश्यक सामाजिक सेवाओं का प्रदाय अपर्याप्त हैं। यह असमान विकास लिया जाए, तो अर्थव्यवस्था के वर्तमान ढाँचे के भीतर ही मानव विकास के और उच्चतर स्तर प्राप्त किए जा सकते हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् उल्लेखनीय आर्थिक उपलब्धियाँ हासिल हुई हैं। जिन पर अपनी स्वतंत्रता के 60 वर्ष पूर्ण हो चुके हैं, तथापि पंडित जवाहरलाल नेहरू ने स्वतंत्रता प्राप्ति की पूर्व संध्या पर गरीबी, अज्ञान, बीमारी और अवसर की असमानता को समाप्त करने के लिए प्रयास किया था। 11 वीं योजना, दसवीं योजना में हासिल उपलब्धियों को और सबल बनाने और दर्शित खामियों को सुधारने के लिए निर्णयात्मक रूप से काम करने का अवसर प्रदान करती हैं।

तालिका 3– कार्यक्रम के क्रियान्वयन में आने वाली समस्याएं

क्र.	विवरण	प्रतिशत
1	हितग्राहियों के चयन की समस्या	8
2	आदिवासी बी.पी.एल. परिवार के चयन की समस्या	6
3	आदिवासी बी.पी.एल. परिवारों को प्रदान की गई योजना के पूर्ण लाभ दिलाने में समस्या	5
4	राशि के आवंटन एवं वितरण की समस्या	12
5	हितग्राही द्वारा उपयुक्त योजना में राशि का विनियोजन	15
6	हितग्राही परिवार को योजना की व्यापक सूचना का अभाव	17
7	हितग्राही परिवार को व्यापक प्रचार प्रसार का अभाव	37

निष्कर्ष – ''इंदिरा आवास योजना'' अन्तर्गत ग्रामीण इलाकों में अवसंरचना और बुनियादी सुविधाएँ निर्मित करते हुए आवासहीन परिवारों को आवास प्रदाय करने का सरकार का प्रमुख कार्यक्रम हैं, जिसका उद्देश्य गरीब और नि:सहाय वर्गों को मानवीय सुरक्षा प्रदान करना हैं। यह योजना का जन्म के संबंध मे कहा जा सकता हैं कि अनेक योजना में शामिल होकर 1980 के शुरू में हुआ। बीतते समय के साथ-साथ योजना अपने मूर्त रूप में आते आते 01 जनवरी, 1996 को एक स्वतंत्र योजना बना दी गई हैं। जो वर्तमान तक प्रचलित होकर अनेकों आवासहीन परिवारों को प्रदाय लक्ष्यानुसार प्रतिवर्ष आवास प्रदाय किया जा रहा हैं।

1999-2000 से जीर्ण-शीर्ण कच्चे मकानों को सुधारने का प्रावधान बना कर तथा गरीबों के कतिपय वर्गों को सब्सिडी के साथ ऋण देकर ग्रामीण आवास कार्यक्रम में सुधार लाने के अनेक प्रयास किए गए हैं। ग्रामीण आवास में किफायती, आपदा-रोधी और पर्यावरण के अनुकूल प्रौद्यौगिकी के उपयोग पर भी बल दिया गया है।

''इंदिरा आवास योजना'' भारत सरकार की कार्यनीति भारत निर्माण जैसे कार्यक्रमों में परिलक्षित होती हैं, जिसका उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में रह रहे लोगों की जीवन शैली की गुणवत्ता को सुधारना हैं। इसके अतिरिक्त उक्त जनकल्याणकारी योजना ने सुनिश्चित किया हैं कि ग्रामीण गरीब लोगों के पास गारंटी युक्त रोजगार के माध्यम से अपनी बुनियादी जरूरतों विशेष रूप से खाद्य के लिये पर्याप्त मात्रा में क्रय शक्ति बची रहती हैं।

''इंदिरा आवास योजना'' विकास कार्यों में सहायता प्रदान करना अथवा अन्य कार्यक्रमों के महत्तव को बढ़ाना हैं, जैसे कि भारत निर्माण और राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी कार्यक्रम, जो प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से ग्रामीण अवस्थापना संबंधी जरूरतों को पूरा करने के लिये तैयार किया गया हैं, किन्तु जैसे क्रान्तिक अन्तरों को पाटने के लिए पूरकता की ज़रूरत हैं। इसका उद्देश्य पिछड़े क्षेत्रों में विकास को उत्प्रेरित करना तथा अवस्थापना की व्यवस्था करके 2- सुशासन तथा कृषि सुधारों को प्रोत्साहित करके 3- पूरक ढाँचे और क्षमता निर्माण के जरिए अभिसरण, इन जिलों में पर्याप्त विद्यमान विकास अप्रवाह करके आदि।

नीतियों की चरम कसौटी गरीबी को कम करने में उनकी सफलता के संदर्भ में होती हैं, परन्तु गरीबी के मोर्चे पर मध्यप्रदेश को काफी रास्ता तय करना है। मध्यप्रदेश की कुल गरीबी 37.20 प्रतिशत होने का अनुमान लगाया गया हैं। अर्थात् जनसंख्या का 37 प्रतिशत से थोड़ा अधिक हिस्सा गरीबी रेखा के नीचे निर्वाह कर रहा हैं तथा खासकर ग्रामीण जनसंख्या का 41.80 प्रतिशत और शहरी जनसंख्या का 25.70 प्रतिशत हिस्सा गरीब हैं।

'इंदिरा आवास योजना' में भारत निर्माण कार्यक्रम में आश्रयहीनता को समाप्त करने की आवश्यकता को स्वीकार कर लिया और इसे उचित प्राथमिकता प्रदान की गई। इस कार्यक्रम ने 2005 से 2009 तक 02 लाख मकान बनाने का लक्ष्य निर्धारित किया हैं। भारत निर्माण के पहले दो वर्षों में 1.69 लाख मकानों का निर्माण किया गया हैं।

इंदिरा आवास योजना ग्रामीण क्षेत्रों में आवास सुरक्षा की प्रतिबद्धता को मज़बूत बनाने के लिए लागू किया गया हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 चौधरी, सी. एम. : अनुसंधान प्रविधियाँ,2006, सबलाईन पब्लिकेशन, जयपुर
2 प्रधान डॉ. हरीश जैन, डॉ. जी.एल. खिमेसरा, डॉ. एस.जी.: भारत में कृषि उद्योग एवं नियोजन,संदीप प्रकाशन, इन्दौर
3 राय, करूणा : भारतीय कृषि विपणन,2005, मित्तल पब्लिकेशन, नई दिल्ली

तालिका 2 – योजना हेतु शासन द्वारा जारी राशि (लागत) का विश्लेषण

क्र.	वर्ष	प्रारंभिक शेष	वित्तीय वर्ष में आवंटित	कुल उपलब्ध	व्यय
1	2000-01	0	116.05	116.05	86.13
2	2001-02	2.34	143.89	146.23	101.09
3	2002-03	45.14	42.00	87.14	138.03
4	2003-04	-50.89	218.27	167.38	152.51
5	2004-05	14.87	268.95	283.82	108.93
6	2005-06	174.89	366.96	541.85	470.56
7	2006-07	71.29	199.39	270.68	391.85
8	2007-08	-121.17	528.83	407.66	410.77
9	2008-09	-3.11	332.58	329.47	328.05
10	2009-10	1.42	675.10	676.52	666.85
11	2010-11	9.67	689.14	698.81	692.93

****

शासकीय महिला औद्योगिक प्रशिक्षण संस्था नन्दानगर इन्दौर म.प्र. का स्वरोजगार एवं रोजगार में योगदान

डॉ. आभा सिंह * दीपक जैन **

शोध सारांश – भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र देश होने के साथ–साथ सर्वाधिक युवा जनसंख्या वाला देश है। भारत की युवा शक्ति पूरे विश्व में अपनी प्रतिभा बिखेर रही है। जब विश्व के अनेक देशों में भीषण आर्थिक मंदी का वातावरण था उस समय इन विकट परिस्थितियों में भी भारत उद्यमिता विकास एवं कौशल विकास में आर्थिक एंव सामाजिक रूप तेजी से विकास कर रहा है। आज भारत की आर्थिक विकास दर विश्व के विकसित देशों से भी अधिक है। इस विकास में शासकीय महिला औद्योगिक प्रशिक्षण संस्था का महत्वपूर्ण योगदान है। इसी जिज्ञासावश मैने उपरोक्त विषय जिसके अर्न्तगत शासकीय महिला औद्योगिक प्रशिक्षण संस्था नन्दानगर इन्दौर म.प्र का स्वरोजगार एवं रोजगारमें योगदान का चयन किया हे।

प्रस्तावना – प्रारंभ में भारत व्यावसायिक दृष्टि से विश्व में सोने की चिड़ियाँ के नाम से प्रसिध्द था। भारत में अपार धन–दौलत थी। किन्तु हमारे देश में पूर्तगाली,फ्रांसिसी एवं अंग्रेज भारत में व्यापार करने आये। अंग्रेजों ने षड़यंत्रपूर्वक भारत पर अपना कब्जा कर भारत को वर्षो अपना गुलाम बनाकर भारत पर कब्जा किया। भारत के मूलभूत उद्योग जैसे दस्तकारी, कुटीर, लघु, मध्यम एवं वृहद् उद्योग चौपट हो गए। अनेक देशभक्तों के बलिदानों के बाद 15 अगस्त 1947 को भारत को स्वतंत्रता मिल गई, परंतु भारत आर्थिक दृष्टि से काफी कमजोर हो गया था। भारत में तीव्र जनसंख्या वृध्दि, गरीबी एवं बेरोजगारी की मुख्य समस्याएँ थी। अत: अनेक बेरोजगारों को रोजगार एवं स्वरोजगार दिलाने पर विशेष जोर देना था।

आज बेरोजगारी भारत की ही नहीं विश्व की मुख्य ज्वलंत समस्या है। केन्द्र एवं राज्य सरकार ने अनेक प्रशिक्षण संस्थाओं की स्थापना की। जो तकनीकी शिक्षा एवं उचित कौशल एवं प्रशिक्षण के द्वारा मानवीय संसाधन का सद्पयोग कर देश में बेरोजगारी एवं अन्य समस्याओं का निदान करनें में सफल रही आज विश्व के अनेक देशों में भारत के उद्यमियों की मॉग तेजी से बढ रही हैं। आज शासकीय महिला औद्योगिक प्रशिक्षण संस्था नन्दानगर इन्दौर म.प्र. भारत में उद्यमिता विकास एवं कौशल विकास की आत्मा हैं। जिस प्रकार बिना आत्मा के शरीर निष्क्रिय एवं निष्प्राण हो जाता हैं। ठीक इसी प्रकार बिना प्रशिक्षण संस्थान के भारत का उद्यमी विकास एवं कौशल विकास निष्प्राण होने लगेगा तथा विश्व के देशों की तरह भारत में भीषण आर्थिक मंदी का वातावरण बन जाएगा। आज भारत में तेजी से औद्योगिकरण एवं आधुनिकीरण पर जोर दिया जा रहा है। जिसमें प्रशिक्षण एवं तकनीकी प्राप्त उद्यमी की आवश्यकता हैं। इस कारण भारत सरकार अनेक प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना कर रही हैं। जिसमें आधुनिकता के अनुसार विभिन्न इकाईयों में प्रशिक्षण पाठ्यक्रम प्रारंम्भ कर रही हैं। जिससे रोजगार के अवसर एवं स्वरोजगार में शासकीय महिला औद्योगिक प्रशिक्षण संस्था नन्दानगर इन्दौर म.प्र.का योगदान बढ़ सके।

अध्ययन का औचित्य एवं उद्देश्य – इन्दौर म.प्र. का एक जागरुक शहर है। केन्द्र एवं म.प्र. सरकार ने इन्दौर शहर में महिला प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षा एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण को अधिक महत्व दिया है। इस संदर्भ में केन्द्र सरकार ने 1992 में म.प्र. के एकमात्र इन्दौर शहर में आई.टी.आई परिसर में क्षेत्रीय महिला व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थान की स्थापना की। इस अध्ययन का उद्देश्य शिक्षित बेरोजगार महिला प्रशिक्षणार्थियों को स्वरोजगार उपलब्ध करने में संस्थान के योगदान का मूल्यांकन करना है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु निम्न सहायक उद्देश्य निर्धारित किए गए है–

1. संस्थान द्वारा शिक्षित बेरोजगार महिला प्रशिक्षणार्थियों को दी जाने वाली सुविधाएँ एवं प्रशिक्षण का अध्ययन करना।
2. प्रशिक्षण के उपरांत महिला प्रशिक्षणार्थियों में आत्मनिर्भरता का अध्ययन करना।
3. स्वरोजगार में महिला प्रशिक्षणार्थियों को होने वाली विभिन्न समस्याओं का अध्ययन करना।
4. प्रशिक्षण के उपरांत महिला प्रशिक्षणार्थियों को स्वरोजगार एवं रोजगार उपलब्ध कराने में संस्था की भूमिका का अध्ययन करना।

परिकल्पना – प्रस्तुत शोध में उपरोक्त उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु निम्न परिकल्पनाएँ रही है जिनका परीक्षण एवं अध्ययन किया जायेगा

1. महिला प्रशिक्षणार्थियों को व्यावसायिक प्रशिक्षण देने में संस्थान की भूमिका प्रभावशाली एवं सार्थक रही हैं।
2. प्रशिक्षण के पश्चात् अनेक महिला प्रशिक्षणार्थी आत्मनिर्भर हुई है तथा उनकी आर्थिक स्थिति में पहले की तुलना में सुधार हुआ है।
3. प्रशिक्षण के पश्चात् महिला प्रशिक्षणार्थियों को स्वरोजगार एवं रोजगार उपलब्ध कराने में संस्थान की भूमिका महत्वपूर्ण रही हैं।

शासकीय महिला औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानन्दानगर इन्दौर म.प्र का स्वरोजगार एवं रोजगार में योगदानका मूल्यांकन – सन 1977 में भारत सरकार के श्रम एवं रोजगार मंत्रालय द्वारा नोएडा में राष्ट्रीय महिला व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थान महानिषधालय की स्थापना एक शीर्ष केन्द्र के रुप में की गई इसका मुख्य उद्देश्य महिलाओं को विभिन्न व्यावसायिक क्षेत्रों में कौशल प्रशिक्षण एवं आवष्यक ऋण उपलब्ध कराकर स्वरोजगार एवं रोजगार हेतु प्रेरित कर आत्मर्निभर बनाना था। इसी उददेश्य की पूर्ति हेतु सन् 1992 में इसकी शाखा म.प्र. के एक मात्र इन्दौर शहर में क्षेत्रीय महिला व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थान के रुप मे की गई चूकि इन्दौर म.प्र.

* प्राध्यापक (वाणिज्य) एम.एल.बी शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक,श्री जैन दिवाकर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

की औद्योगिक राजधानी मानी जाती हैं। यहॉ उद्योगों एवं स्वरोजगार के विकास की बहुत संभावना है। इसी कारण म.प्र. में महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने की अधिक आवश्यकता थी इस कारण इन्दौर आई.टी.आई परिसर परदेशीपुरा में शासकीय महिला औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानन्दानगर इन्दौर की स्थापना की गई। सन् 1992 से यह संस्थान महिलाओं को विभिन्न प्रकार के कौशल प्रशिक्षण देता आ रहा हैं। इस संस्थान में विभिन्न ट्रेंडों के अंतर्गत व्यावसायिक प्रशिक्षण दिया जा रहा है। वर्तमान में यहाँ निम्न प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित किए जा रहे है।

तालिका 1 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

इसके अलावा म.प्र. शासन तकनीकी शिक्षा एवं कौशल विकास विभाग द्वारा कौशल विकास हेतु मुख्यमंत्री कौशल संवर्धन योजना एवं मुख्यमंत्री कौषल्या योजना प्रशिक्षण के मॉड्यूल

1. फील्ड इंजीनियर(रेफ्रिजरेशन एयर कंडीषनर वर्क्स)
2. मोबाईल फोन हार्डवेयर रिपेयर टेक्नीशियन
3. सोलर पैनल इस्ट्रॉलेशन टेक्नीशियन

आदरणीय मुख्यमंत्रीजी ने रोजगार की पढ़ाई चले आई.टी.आई का संदेश दिया। आदरणीय मुख्यमंत्रीजी की योजना के तहत सेमसंग कम्पनी अनेक शिक्षित महिला प्रशिक्षणार्थियों को अपनी कम्पनी में प्रशिक्षण देकर रोजगार देगी। जिसका शुभारंभ 8 जून को होने वाला है।

तालिका 2 एवं ग्राफ – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 2 एवं ग्राफ के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि प्रशिक्षण के पष्चात् सफल महिला प्रशिक्षणार्थियों की संख्या तेजी से बढ़ रही है।महिला प्रशिक्षणार्थियों को कौशल प्रशिक्षण देने में शासकीय महिला औद्योगिक प्रशिक्षण संस्था, नंन्दानगर, इन्दौर, म.प्र.की भूमिका सार्थक रही क्योंकि प्रशिक्षण प्राप्त महिलाए या तो रोजगार में लग गई या वे स्वंय का रोजगार कर रही है। उनकी आर्थिक स्थिति मजबूत हो गई है।इसी कारण संस्था की लोकप्रियता दिन-प्रतिदिन तेजी से बढ़ रही है।प्रत्येक वर्ष प्रशिक्षण प्राप्त करने वाली महिला प्रशिक्षणार्थियों की संख्या बढ़ रही है। अत: यह परिकल्पना करना कि महिला प्रशिक्षणार्थियों को कौशल प्रशिक्षण देने वाली संस्था की भूमिका सार्थक रही, सत्यसिध्द हुई।

महिला प्रशिक्षणार्थियों को स्वरोजगार एवं रोजगार उपलब्ध कराने में प्रशिक्षण संस्थान महिला प्रशिक्षणार्थियों को प्रशिक्षण देने साथ-साथ अनेक प्रकार के मार्गदर्शन देती रहती है तथा विभिन्न कम्पनियों को प्रशिक्षण प्राप्त महिला प्रशिक्षणार्थियों को रोजगार देने हेतु प्रशिक्षण संस्था मे बुलाती है वे साक्षात्कार द्वारा अनेक महिला प्रशिक्षणार्थियों को रोजगार प्रदान करती है।

सुझाव – चूँकि विभिन्न प्रशिक्षण संस्थानों के मूल्यांकन से यह ज्ञात हुआ है कि विभिन्न संस्थाएँ महिला प्रशिक्षणार्थियोंको आत्मनिर्भर बनाने एवं उनमें उद्यमिता जागृत करने में काफी सीमा तक सफल रही फिर भी इससे और अधिक सफल बनाने के लिए निम्न सुझाव इस प्रकार है।

1. वर्तमान में क्षेत्रीय महिला प्रशिक्षण संस्थान म.प्र. में केवल इन्दौर में ही संचालित है इसे अन्य शहरों मे भी संचालित करना चाहिए।
2. महिला प्रशिक्षण संस्थानों में और आधुनिक प्रशिक्षण देना चाहिए ताकि अनेक महिला प्रशिक्षणार्थी को उसका लाभ मिल सके।

2. प्रशिक्षण सीटों में वृध्दि-विभिन्न प्रशिक्षण संस्थानों में महिला प्रशिक्षणार्थियों की सीटें कम होने के कारण अनेक महिला प्रशिक्षणार्थी प्रशिक्षण प्राप्त करने से वंचित रह जाती है। अत: संस्थानों में महिला प्रशिक्षणार्थियों की सीटों में वृध्दि करना चाहिए ताकि अधिक से अधिक महिला प्रशिक्षणार्थी प्रशिक्षण प्राप्त कर सके।

3. महिला प्रशिक्षणार्थियों द्वारा प्रशिक्षण बीच में छोड़कर चले जाने के कारणों का पता लगाकर उपाय करना – विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि कुछ महिला प्रशिक्षणार्थी विभिन्न कारणो से पाठ्यक्रम बीच में छोड़कर चली जाती है। इसके लिए निम्न उपाए करना चाहिए।

1. महिला प्रशिक्षणार्थियों को उनकी योग्यता के अनुसारप्रशिक्षण पाठ्यक्रम मे प्रवेश देना चाहिए।
2. महिला प्रशिक्षणार्थियों को प्रवेश के समय ली जाने वाली काशन मनी की राशि बढ़ाकर लेनी चाहिए तथा बीच मे छोड़ने वाली प्रशिक्षणार्थियों की काशन मनी जब्त कर लेनी करनी चाहिए।
3. महिला प्रशिक्षणार्थियों को सुविधा - दुरस्त स्थानों से आने वाली महिला प्रशिक्षणार्थियों को बस सुविधा उपलब्ध कराना चाहिए। ताकि वे सुरक्षित आ-जा सके।

4. रिक्त सीटों को पुन: भरना – एक निष्चित अवधि के पष्चात् रिक्त सीटों को नई महिला प्रशिक्षणार्थियों द्वारा भरा जाना चाहिए। ताकि वर्ष भर सीटें रिक्त न रह सके और इच्छुकप्रशिक्षणार्थी को प्रशिक्षण मिल सके।

5. आँगनवाडी द्वारा महिलाओं को विभिन्न प्रकार से प्रशिक्षण देना आदरणीय लोकप्रिय मुख्यमंत्री ने महिला आई.टी.आई. द्वारा महिलाओं को घरेलु उपकरण के रखरखाव एवं उनके रिपेयरिंग का अल्पकालीन प्रशिक्षण दिया जा रहा है, इसी प्रकार यदि आँगनवाडी द्वारा अन्य महिलाओं को प्रशिक्षण दिया जाए तो धीरे-धीरे पूरे राज्य की लगभग सभी महिलाएँ विभिन्न प्रशिक्षण प्राप्त कर आत्मनिर्भर हो जाएगी और यह प्रशिक्षण पूर्णत: सार्थक सिध्द होगा।

6. छात्रावास-सभी संस्थानों में छात्रावास सुविधा उपलब्ध कराना चाहिए ताकि अधिक से अधिक महिला प्रशिक्षणार्थी विभिन्न इकाईयों में प्रवेश ले सकें।

उपसंहार –प्रस्तुत शोध का अध्ययन प्राथमिक एवं द्वितीयक संमकों एवं सामाग्री के आधार पर किया गया। संस्था का स्वरोजगार में योगदान का मूल्यांकन करने हेतु प्राथमिक सूचनाएँ एवं तथ्य प्रश नावली के माध्यम से महिला प्रशिक्षणार्थियों से स्वयं चर्चा कर एकत्रित किए गए। शासकीय महिला ओद्यौगिक प्रशिक्षण संस्था द्वारा महिला प्रशिक्षणार्थियों को रोजगार एवं स्वरोजगार हेतु क्या प्रयास किए गए एवं वे उद्देश्यों के अनुरुप संचालित हो रहे है या नहीं इसके अध्ययन हेतु द्वितीयक सामग्री का प्रयोग किया गया। इस प्रतियोगिता में बेरोजगार महिला प्रशिक्षणार्थियों को स्वरोजगार एवं रोजगार मिलना काफी कठिन कार्य था, किंतु शासकीय महिला ओद्यौगिक संस्थाके प्रयास एवं महिला प्रशिक्षणार्थियों की मेहनत एवं लगन से अनेक महिला प्रशिक्षणार्थी स्वयं का स्वरोजगार प्रारंभ कर चुकी है और वे आत्मनिर्भर हो गई है तथा अनेक महिला प्रशिक्षणार्थी को शासकीय एवं अशासकीय नौकरी प्राप्त हो चुकी है एवं शेष महिला प्रशिक्षणार्थी प्रशिक्षण प्राप्त कर संबंधित कार्य घर पर ही कर घर खर्च बचा रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उद्यमिता विकास,प्रथम सेमेस्टर : कोठारी डॉ.मिलिन्द, रमेश बुक डिपो, जयपुर नई दिल्ली, 2006-07
2. उद्यमिता विकास,प्रथम सेमेस्टर : चंदेल डॉ.योगिता, देवी अहिल्या प्रकाशन,इन्दौर, 2006-07

पत्रिकाएँ

1. प्रतियोगिता दर्पण : प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली
2. प्रतियोगिता निदेशिका: प्रकाशन विभाग, वैशाली नगर,इन्दौर
3. वार्षिक पत्रिका : शासकीय महिला औद्योगिक प्रशिक्षण संस्था, इन्दौर

तालिका 1 – शासकीय महिला औद्योगिक प्रशिक्षण संस्था नन्दानगर इन्दौरम.प्र. में संचालित प्रशिक्षण कार्यक्रम की जानकारी

क्र.	इकाई पाठ्यक्रम का नाम	अवधि	शैक्षणिक योग्यता	सीट
1	कोपा	1 वर्ष	10 वी उत्तीर्ण	26
2	स्टेनोग्राफर हिन्दी एण्ड सेक्रेटेरियल असिस्टेंट	1 वर्ष	10 वी उत्तीर्ण	26
3	सेक्रेटेरियल प्रेक्टिस	1 वर्ष	10 वी उत्तीर्ण	21
4	ऑफिस असिस्टेंट कम कम्प्यूटर आपरेटर	1 वर्ष	10 वी उत्तीर्ण	26
5	इलेक्ट्रॉनिक मेकेनिक्स	2 वर्ष	10 वी उत्तीर्ण	21
6	इन्फॉरमेशन टेक्नोलॉजी एण्ड इलेक्ट्रॉनिक सिस्टम मैनेजमेंट	2 वर्ष	10 वी उत्तीर्ण	21

स्त्रोत :– शासकीय महिला औद्योगिक प्रशिक्षण संस्था, इन्दौर (म.प्र.)

तालिका 2 – महिला प्रशिक्षणार्थियों की संख्या

इकाई पाठ्यक्रमों	पंजीकृत संख्या	महिला प्रशिक्षणार्थियों की संख्या									
		2012		2013		2014		2015		2016	
		सफल	असफल	सफल	असफल	सफल	असफल	सफल	असफल	सफल	असफल
कोपा	26	20	6	21	5	24	2	23	3	24	2
स्टेनोग्राफर हिन्दी एण्ड सेक्रेटेरियल असिस्टेंट	21	14	7	15	6	17	4	18	3	18	3
सेक्रेटेरियल प्रेक्टिस	21	16	5	17	4	17	4	18	3	19	2
ऑफिस असिस्टेंट कम कम्प्यूटर आपरेटर	26	21	5	21	5	22	4	23	3	24	2
इलेक्ट्रॉनिक मेकेनिक्स	21	15	6	17	4	17	4	18	3	19	2
इन्फॉरमेशन टेक्नोलॉजी एण्ड इलेक्ट्रॉनिक सिस्टम मैनेजमेंट	21	17	4	17	4	18	3	19	2	19	2

स्त्रोत :– शासकीय महिला औद्योगिक प्रशिक्षण संस्था, इन्दौर (म.प्र.)

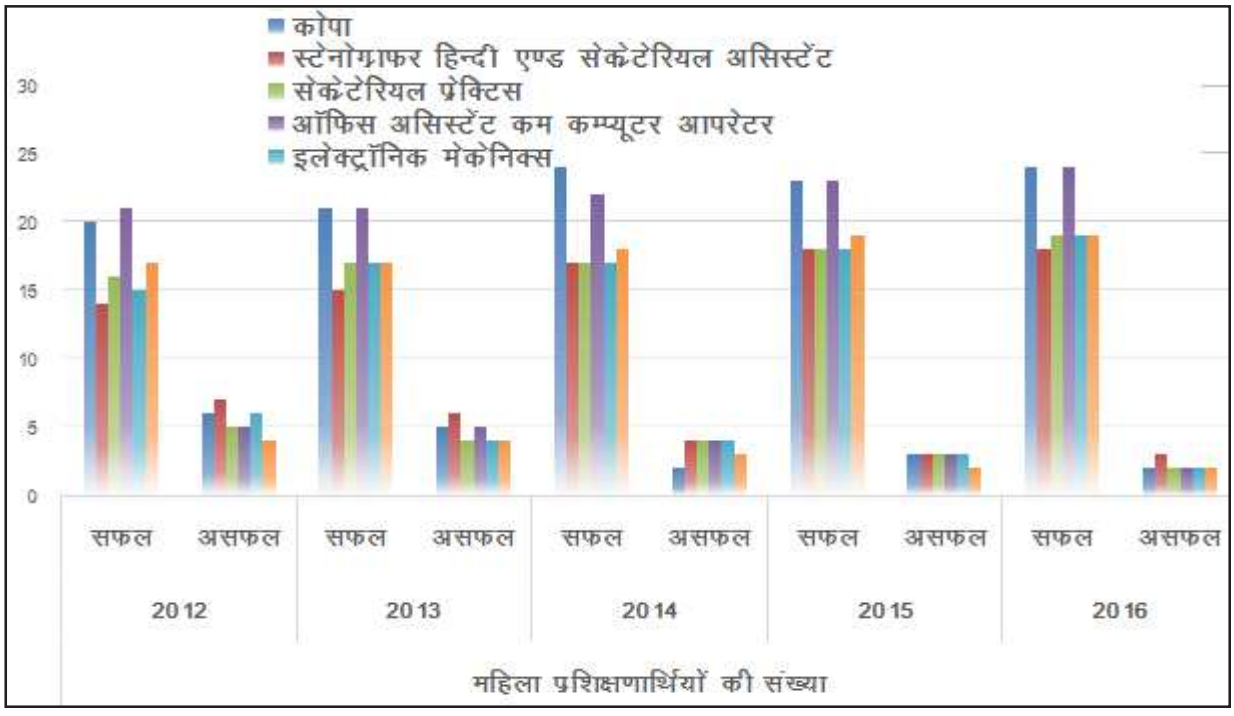

उमरिया जिले के झुग्गी झोपडी में निवासरत बच्चों में कुपोषण का आर्थिक सर्वेक्षण

डॉ. राजू रैदास * डॉ. हर्षा चचाने **

शोध सारांश – उमरिया जिला समुद्र सतह से 489 मीटर ऊँचाई पर तथा 230-31 -37 उत्तरी अक्षांश 800-50'-10 पूर्वी देशान्तर के बीच स्थित है। उमरिया जिले के उत्तर में सतना, उत्तर पच्चिम में कटनी, उत्तर पूर्व में शहड़ोल, पश्चिम दक्षिण में जबलपुर, उत्तर पूर्व में शहड़ोल, दक्षिण में डिंड़ौरी जिलों से घिरा हुआ है।

भारत के मानचित्र पर उमरिया जिले का नामकरण स्वतंत्रता के पश्चात हुआ है, स्वाधीनता के उपरान्त देशी राज्यों के विलीनीकरण प्रक्रिया में बुन्देलखण्ड और बघेलखण्ड की छोटी – बड़ी 36 रियासतों को मिलाकर विन्ध्यप्रदेश का गठन किया गया, जुलाई 1998 में करकेली, पाली एवं मानपुर तहसीलों को मिलाकर यह जिला बना। 1 नवम्बर 1956 को महाकौषल, मध्यभारत, विन्ध्यप्रदेश एवं अन्य सीमावर्ती क्षेत्र के 43 हिन्दी भाषी जिलों को मिलाकर मध्यप्रदेश राज्य बनाया गया।

प्रस्तावना – उमरिया जिला उत्तर से दक्षिण लगभग 115 किलोमीटर लम्बा तथा पूर्व से पश्चिम लगभग 95 किलोमीटर चौड़ा है। इसका कुल क्षेत्रफल 4503 वर्ग किलोमीटर है। उमरिया जिले को पूर्व में 3 तहसीलों में विभक्त किया गया था। मानपुर, बॉधवगढ़ एवं पाली तथा बाद में चौथी तहसील के रूप में चंदिया, नौरोजाबाद को दर्जा दिया गया। इस प्रकार वर्तमान में कुल 5 तहसीलों एवं 03 विकासखण्ड है। तहसीलों का क्षेत्रफल क्रमश: मानपुर 1952, करकेली 1678 एवं पाली 873 किलोमीटर है।

उमरिया जिले में कुपोषण आज भी विकासशील एवं विकसित राष्ट्रों की एक ज्वलन्त समस्या बना हुआ है। कुपोषण का कारण अशिक्षा, अज्ञानता, गरीबी, उत्पादन में कमी, भोज्य पदार्थों की कम उपलब्धि, क्रयशक्ति कम होना, अधिक जनसंख्या, असमान वितरण, अकाल, बाढ़, (आदि है। ये सभी किसी ना किसी रूप में कम या अधिक मात्रा में हर देश में व्याप्त हैं। बाल्यावस्था में अपर्याप्त आहार से उत्पन्न होने वाली खाधोज ऊर्जा कुपोषण एक गंभीर समस्या है। प्रोटीन कॅलोरी दोनों की कमी से एवं प्रोटीन की मात्रा एवं गुणों में कमी के परिणाम स्वरूप पाया जाता है।

कुपोषण से अविकसित जिलों में बालकों की मृत्यु दर 10-15 गुना अधिक है। जो कम पोषण के कारण व्याप्त है, वहीं विकसित राष्ट्रों में यह अधिक पोषण के रूप में देखा जाता है। भारत में 5 साल की उम्र के 37 प्रतिशत बच्चे कुपोषित हैं। दुनिया के हर तीन कुपोषित बच्चों में से एक भारत में है। कुपोषण एक गंभीर समस्या है। जिसके निवारण के लिए म.प्र. सरकार बहुत सारी योजनाएं संचालित कर रही है। प्रदेश में बहुत सारी आंगनबाड़ी केन्द्र संचालित हैं जहां 0-5 वर्ष के बच्चों, गर्भवती व धाती माताओं के लिए विशेष पोषण आहार नीति बनाई गई है।

अध्ययन का उद्देश्य – प्रस्तुत शोध कार्य का मुख्य उद्देश्य उमरिया जिले के झुग्गी झोपड़ी में निवासरत बच्चों में कुपोषण का आर्थिक सर्वेक्षण करना एवं कुपोषण से ग्रसित बच्चों का आंकलन करने हेतु मुख्य तीन विषय है :

1. कुपोषित बच्चे गरीबी से संबंधित है।
2. कुपोषित बच्चों के माता पिता अज्ञानता से संबंधित है।
3. कुपोषित बच्चे पोषण से संबंधित है।

परिकल्पना – शोध कार्य हेतु उमरिया जिले के झुग्गी झोपड़ी में निवासरत बच्चों में कुपोषण का आर्थिक सर्वेक्षण करना क्षेत्र लिया गया है। इसकी परिकल्पना है :

1. बच्चों में कुपोषण गरीबी के कारण होता है।
2. बच्चों में कुपोषण उनके अभिभावकों, माता, पिता के अज्ञानता के कारण होता है।

अनुसंधान योजना एवं क्षेत्र – अध्ययन के लिए उमरिया जिले में स्थित मानपुर, बॉधवगढ़ एवं पाली तथा बाद में चौथी तहसील के रूप में चंदिया, नौरोजाबाद की झुग्गी झोंपड़ी में निवासरत बच्चों को लिया गया है।

तथ्य संकलन के उपकरण :

1. स्वयं द्वारा निर्मित अनुसूची।
2. स्वयं द्वारा लिया गया साक्षात्कार।

परिणामों की व्याख्या – प्रस्तुत शोध अध्ययन उमरिया जिले के झुग्गी झोंपड़ी में निवासरत बच्चों में कुपोषण का आर्थिक सर्वेक्षण में कुपोषण का आंकलन करने के लिए बच्चों एवं माताओं के पोषण और देखभाल से संबंधित प्रश्न लिए गए हैं जिन्हें बच्चों की माताओं से पूछकर स्वयं अनुसूची में भरवाया गया है।

1. क्या आपका विवाह 18 वर्ष से कम उम्र में हुआ था ?

उमरिया जिले के झुग्गी झोंपड़ी में निवासरत तहसील एवं विकासखण्ड स्तर की महिलाओं में 60 प्रतिशत का विवाह 18 वर्ष से कम उम्र में हुआ ओर 40 प्रतिशत का विवाह 18 वर्ष के बाद हुआ।

2. आपका प्रथम गर्भधारण किस उम्र में हुआ ?

उमरिया जिले के झुग्गी झोंपड़ी बस्ती में निवासरत तहसील एवं विकासखण्ड स्तर की महिलाओं में 80 प्रतिशत महिलाओं ने 20 वर्ष की उम्र के पहले गर्भधारण किया और 20 प्रतिशत महिलाओं ने 20 वर्ष के बाद।

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, उमरिया (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, उमरिया (म.प्र.) भारत

3. गर्भ का पता चलते ही आपने अपना नाम आंगनबाड़ी में दर्ज करवाया था?

उमरिया जिले के झुग्गी झोंपड़ी बस्ती में निवासरत तहसील एवं विकासखण्ड स्तर की महिलाओं ने 60 प्रतिशत महिलाओं ने आंगनबाड़ी में नाम दर्ज करवाया था। 40 प्रतिशत ने नहीं।

4. क्या आपने गर्भावस्था के समय आयरन एवं फोलिक एसिड़ कैलिसियम की गोलियां खाई थीं?

उमरिया जिले के झुग्गी झोंपड़ी बस्ती में निवासरत तहसील एवं विकासखण्ड स्तर की महिलाओं ने 60 प्रतिशत महिलाओं ने गोलियां खाई 40 प्रतिशत ने नहीं खाई।

5. क्या आप गर्भावस्था के समय आयोडिन युक्त नमक का प्रयोग करते थे?

उमरिया जिले के झुग्गी झोंपड़ी बस्ती में निवासरत तहसील एवं विकासखण्ड स्तर की महिलाओं ने 60 प्रतिशत महिला आयोडिन नमक का प्रयोग करती थी। 40 प्रतिशत उपयोग नहीं करती थी।

6. क्या आप गर्भावस्था के समय हरी सब्जियां, फल, दूध आदि अपने आहार में शामिल करते थे?

उमरिया जिले के झुग्गी झोंपड़ी बस्ती में निवासरत तहसील एवं विकासखण्ड स्तर की महिलाओं ने 30 प्रतिशत महिलाओं ने सब्जी, फल, दूध आदि सेवा किया। 70 प्रतिशत महिलाओं ने नहीं किया।

7. आपने गर्भावस्था के समय स्वास्थ्य की जांच करवायी थी?

उमरिया जिले के झुग्गी झोंपड़ी बस्ती में निवासरत तहसील एवं विकासखण्ड स्तर की महिलाओं ने 40 प्रतिशत महिलाओं ने स्वास्थ्य की जांच करवाई, 60 प्रतिशत महिलाओं ने जांच नहीं करवाई।

8. क्या आपने बच्चे के जन्म के तुरन्त बाद स्तनों से स्त्रावित होने वाला पीले रंग का स्त्राव ;कोलेस्ट्रमद्ध पिलाया था?

उमरिया जिले के झुग्गी झोंपड़ी बस्ती में निवासरत तहसील एवं विकासखण्ड स्तर की महिलाओं ने 70 प्रतिशत महिलाओं ने कोलेस्ट्रम का सेवन बच्चे को कराया एवं 30 प्रतिशत महिलाओं ने नहीं करवाया।

9. आपने बच्चे को कब तक स्तनपान करवाया?

उमरिया जिले के झुग्गी झोंपड़ी बस्ती में निवासरत तहसील एवं विकासखण्ड स्तर की महिलाओं ने 40 प्रतिशत महिलाओं ने 6 माह की अवधि तक स्तनपान करवाया। 60 प्रतिशत महिलाओं ने 18 माह तक। मजदूरी स्तनपान ना करवाने का मुख्य कारण सामने आया।

10. क्या आपने बच्चे का सही समय पर संपूर्ण टीकाकरण करवाया था?

उमरिया जिले के झुग्गी झोंपड़ी बस्ती में निवासरत तहसील एवं विकासखण्ड स्तर की महिलाओं ने 60 प्रतिशत महिलाओं ने बच्चे का टीकाकरण करवाया। 40 प्रतिशत महिलाओं ने टीकाकारण नहीं करवाया।

11. आपका बच्चा बार-बार बीमार पड़ता है ?

उमरिया जिले के झुग्गी झोंपड़ी बस्ती में निवासरत तहसील एवं विकासखण्ड स्तर की महिलाओं ने 75 प्रतिशत महिलाओं ने कहा हाँ एवं 25 प्रतिशत महिलाओं ने कहा नहीं।

12. क्या आप अपने बच्चे को प्रतिदिन दूध देते हैं ?

उमरिया जिले के झुग्गी झोंपड़ी बस्ती में निवासरत तहसील एवं विकासखण्ड स्तर की महिलाओं ने 70 प्रतिशत ने कहा नहीं 30 प्रतिशत ने कहा हाँ कभी-कभी।

13. क्या आप अपने बच्चे को आंगनबाड़ी का खाना खिलाते हैं?

उमरिया जिले के झुग्गी झोंपड़ी बस्ती में निवासरत तहसील एवं विकासखण्ड स्तर की महिलाओं ने 60 प्रतिशत महिलाओं ने कहा हॉ और 40 प्रतिशत महिलाओं ने कहा नहीं।

14. क्या आपके घर में शौचालय है?

उमरिया जिले के झुग्गी झोंपड़ी बस्ती में निवासरत तहसील एवं विकासखण्ड स्तर की महिलाओं ने 40 प्रतिशत महिलाओं ने कहा हॉ परन्तु 60 प्रतिशत महिलाओं ने कहा नहीं।

15. क्या आपके घर के आसपास का वातावरण स्वच्छ है?

उमरिया जिले के झुग्गी झोंपड़ी बस्ती में निवासरत तहसील एवं विकासखण्ड स्तर की महिलाओं ने 50 प्रतिशत ने कहा हॉ स्वच्छ है परन्तु 50 प्रतिशत ने कहा नहीं है।

16. क्या आप भोजन बनाते समय व बच्चे को खिलाते समय स्वच्छता का ध्यान रखते है ?

उमरिया जिले के झुग्गी झोंपड़ी बस्ती में निवासरत तहसील एवं विकासखण्ड स्तर की महिलाओं ने 45 प्रतिशत महिलाओं ने कहा हाँ और 55 प्रतिशत महिलाओं ने कहा नहीं।

निष्कर्ष – अध्ययन के दौरान पाया गया कि लगभग 37 प्रतिशत बच्चों में कुपोषण पाया गया। मुख्य रूप से गरीबी ओर अज्ञानता ही कुपोषण का कारण है। इस प्रकार एक विशेष चक्र के रूप में कुपोषण चलता ही जाता है। मॉ में कुपोषण कम कार्य दक्षता कम उत्पादन प्रतिव्यक्ति आय में कमी क्रय शक्ति में कमी उचित पोषण ना मिल पाना एवं अज्ञानता कुपोषित बच्चा।

उमरिया जिले में कुपोषण के मुख्य कारण – प्रस्तुत शोध अध्ययन उमरिया जिले के झुग्गी झोंपड़ी में निवासरत बच्चों में कुपोषण का आर्थिक सर्वेक्षण में कुपोषण का आंकलन करने के बाद पता चला कि मुख्य रूप से निम्न करारण सामने आये है :

1. आहार एवं पोषण संबंधी अज्ञानता।
2. कम आयु में विवाह एवं कम अंतराल में गर्भधारण करना।
3. अपर्याप्त आहार।
4. अपर्याप्त एवं गलत तरीके से स्तनपान और पोषण संबंधी आदतें।
5. पीने के लिए साफ पानी का अभाव।
6. शौचालयों का अभाव।
7. साफ सफाई के संबंध में जागरूकता का अभाव।
8. गर्भावस्था के समय अति रक्ताल्पता भी कुपोषित बच्चे का कारण है।
9. बीमारियों की व्यापकता।
10. शासन की संचालित योजनाओं का सही ढंग से क्रियान्वयन न किया जाना।

उमरिया जिले में कुपोषण से बचाव के लिए मुख्य सुझाव – प्रस्तुत शोध अध्ययन उमरिया जिले के झुग्गी झोंपड़ी में निवासरत बच्चों में कुपोषण का आर्थिक सर्वेक्षण में कुपोषण का आंकलन करने के बाद पता चला कि कुपोषण से बाचाव के लिए मुख्य रूप से निम्न सुझाव है :

1. आहार एवं पोषण शिक्षा सभी के लिए अनिवार्य की जाए।
2. आंगनबाड़ी द्वारा प्रदाय किए गए आहार की गुणवत्ता और मात्रा बढ़ायी जानी चाहिए।
3. साफ सफाई से भोजन पकाना, एवं खाना खाने के लिए स्वच्छ वातावरण होना चाहिए।
4. गंदी बस्तियों का उन्मूलन किया जाना चाहिए।

5. स्वच्छ पेयजल एवं शौचालयों की पर्याप्त व्यवस्था की जाना चाहिए।
6. मौसमी बीमारियों एवं समय –समय पर बीमारियों की रोंकथाम के लिए अभियान चलाया जाना चाहिए।
7. आर्थिक स्तर सुधारने के प्रयास हेतु व्यापक अभियान चलाया जाना चाहिए।
8. सरकार द्वारा चलायी जा रही योजनाओं की निगरानी एवं विकास किया जाना चाहिए।
9. पूरक पोषण आहार कार्यक्रम का सुदृढ़ीकरण किया जाना चाहिए।
10. बच्चों को पर्याप्त ऊपरी पौष्टिक आहार खिलाने एवं स्तनपान की जानकारी माताओं को समय – समय पर देकर जागरूक करना चाहिए।
11. शासन द्वारा संचालित योजनाओं ; आगंनबाड़ी केन्द्रों, अटल बाल स्वास्थ्य, पोषण मिशन, की सफलता के लिए पुनर्विचार की आवश्यकता है। जिससे योजनाओं की गुणवत्ता में सुधार लाया जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. जिला सांख्यिकी पुस्तिका, जिला उमरिया मध्यप्रदेश।
2. आहार एवं पोषण: शिवा प्रकाशन इन्दौर
3. अटल बाल आरोग्य एवं पोषण: महिला बाल विकास विभाग मप्र. शासन भोपाल
4. आंगनबाड़ी समाचारिका: महिला एवं बाल विकास विभाग भोपाल मध्यप्रदेश
5. www.google.com/wikipedia.com

****

खरगोन जिले में संचालित जीनिंग फैक्ट्रीज में कार्यरत् महिला श्रमिकों का उनके परिवारों में आर्थिक योगदान

डॉ. संध्या आमगा *

प्रस्तावना – महिलाएं साधारणतया प्रत्येक समाज का एक महत्वपूर्ण अंग हैं। जिनकी संख्या लगभग पुरुषों के समान ही होती है। जहां तक भारतीय समाज का प्रश्न है, स्त्रियों की स्थिति काफी उच्च रही है। जहां पुरुष के अभाव में स्त्री को तथा स्त्री के अभाव में पुरुष अपूर्ण माना गया है। इसी कारण स्त्री को पुरुष की अर्द्धार्गिनी कहा गया है। जहां तक देश में कार्यशील महिलाओं का प्रश्न है, यह कहा जा सकता है, कि 1991 की जनगणना के अनुसार शहरों तथा गांवों दोनों में घर की चारदीवारी से बाहर निकलकर स्त्रियाँ आर्थिक दृष्टि से उपार्जन का कार्य करने लगी थी। भारत की जनगणना के अनुसार महिला श्रमिकों की संख्या 25.60 प्रतिशत है। इनमें अधिकांश ग्रामीण क्षेत्र से हैं। ग्रामीण क्षेत्र की महिलाएं श्रमिकों में 87 प्रतिशत खेतिहर मजदूर हैं।

खरगोन जिले में 3,365 कारखाने हैं,जिसमें 95 जीनिंग कारखाने हैं। जिनमें लगभग 2,500 महिला श्रमिक कार्यरत् हैं, जो कि जिले की कार्यशील महिला श्रमिकों का 0.67 प्रतिशत है। हमारे शोध अध्ययन का मुख्य उद्देश्य खरगोन जिले में संचालित जीनिंग कारखानों में कार्यरत् विभिन्न महिला श्रमिकों का उनके परिवार की आर्थिक योगदान का मूल्याकंन कर यह ज्ञात करना था कि उनके द्वारा दिए जा रहे आर्थिक योगदान के फलस्वरूप परिवार के जीवन स्तर में सुधार आया हैं। इस हेतु हमने उनके जीनिंग कारखानों में कार्य करने की वजह ज्ञात की ।

किसी भी शोध अध्ययन के पूर्व कुछ परिकल्पनाएँ शोधकर्ताओं द्वारा निर्धारित की जाती है। उसी के आधार पर शोध कार्य किया जाता हैं। इस शोध अध्ययन हेतु हमने कुछ पूर्व निर्धारित परिकल्पनाएँ की थी जो कि इस प्रकार है–

1. जीनिंग कारखानों में कार्य करने वाली महिला श्रमिक गरीब परिवारों से संबंधित है।
2. जीनिंग कारखानों में कार्य करने हेतु किसी प्रकार के तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता नहीं होती है।
3. जीनिंग कारखानों में कार्य करने से महिला श्रमिकों के परिवार की आर्थिक स्थिति में सुधार आया है।
4. जीनिंग कारखानों में कार्य करने से महिला श्रमिकों में आर्थिक आत्मनिर्भरता बढी है।
5. महिला श्रमिकों में सामाजिक जागरूकता बढी है।

शोध कार्य हेतु सर्वप्रथम हमने महिला श्रमिकों के जीनिंग कारखानों में कार्य करने के प्रमुख कारण ज्ञात किए है। शोध कार्य संपादित करने के लिए हमने जीनिंग कारखानों में कार्यरत् लगभग 2500 महिला श्रमिकों में से 20 प्रतिशत महिला श्रमिकों से प्रश्नावली बनाकर स्वविवेक पद्धति से सर्वेक्षण कार्य पूर्ण किया। शोध अध्ययन में पाया गया है कि जीनिंग कारखानों में कार्यरत् महिला श्रमिकों में सर्वेक्षित महिला श्रमिकों में 230 महिला श्रमिक खेतीहर मजदूर या लघु कृषक है चूंकि कृषि पर निर्भर रह कर वे परिवार का भरण पोषाण नहीं कर सकते हैं। वैसे भी भारतीय कृषि को मानसून का जुआं कहा जाता है। मानसून के फेल होने पर फसलों पर बुरा प्रभाव पड़ता है और कृषकों की आर्थिक स्थिती खराब हो जाती है। जीनिंग कारखाने मौसमी कारखाने हैं। अत: वे इन कारखानों में कार्य करके आर्थिक उपार्जन कर परिवार का भरण पोषण करती हैं। अपने सर्वेक्षण कार्य के दौरान जिले के विभिन्न जीनिंग कारखानों में कार्यरत् महिला श्रमिकों से साक्षात्कार के दौरान यह पाया, कि 224 महिला श्रमिकों के परिवार ऋणग्रस्त हैं तथा वे अपने परिवार का ऋण चुकाने में सहयोग देने के लिए भी जीनिंग कारखानों में कार्य कर रही हैं। श्रमिक परिवारों में आय आवश्यकता से कम होने से ऋण लेने की प्रवृत्ति अधिक होती है। इस कारण उनके परिवार के सदस्यों द्वारा मजदूरी कर आर्थिक उपार्जन करना आवश्यक हो जाता है। जीनिंग कारखानों में कार्यरत् अधिकांश महिलाओं ने परिवार नियोजन कार्यक्रम नहीं अपनाया है। हमने अपने सर्वेक्षण कार्य के दौरान पाया, कि जिले के विभिन्न जिनिंग कारखानों में कार्यरत् सर्वेक्षित महिला श्रमिकों की संख्या के 57.6 प्रतिशत महिलाओं के परिवार की संख्या परिवार नियोजन के लिए उपयुक्त सदस्य संख्या यथा 4 सदस्य संख्या से अधिक है। इस कारण भी वे बड़े परिवार के पालन पोषण के लिए पुरूष सदस्य की आय पर निर्भर नहीं रह सकते है अत: वे जीनिंग कारखानों में कार्य कर परिवार का पालन पोषण करने में आर्थिक सहयोग प्रदान करती हैं। वर्तमान में मंहगाई सुरसा के मुंह की तरह बढ़ती जा रही है जिसके कारण परिवार के भरण पोषण के लिए एक व्यक्ति की आय पर निर्भर नहीं रहा जा सकता है। परिवार की आर्थिक अवश्यताओं की पूर्ति के लिए पति–पत्नि दोनों का काम करना आवश्यक हो गया है। अत: परिवार के सही ढंग से पालन पोषण करने के लिए महिलाएं आर्थिक उपार्जन के लिए घर की चार दीवारी से बाहर निकलकर आय प्राप्त कर परिवार को आर्थिक सहायता प्रदान कर रही हैं। श्रमिक वर्ग की सबसे बढ़ी कमजोरी मद्यपान है। नशा खोरी की लत ने श्रमिक वर्ग को बुरी तरह से जकड़ रखा है। उनकी आय का एक बड़ा हिस्सा मद्यपान पर खर्च होता है, इस कारण वे परिवार की सामान्य आवश्कताओं की पूर्ति भी नहीं कर पाते हैं। परिवार के पुरूष सदस्यों के द्वारा मध्यपान करने के कारण परिवार की महिला सदस्यों को परिवार का भरण पोषण करने के लिए काम करना आवश्यक हो गया है। स्त्री एवं पुरूष गृहस्थी रूपी गाड़ी के दो पहिए हैं, जिनके तालमेल से गृहस्थी रूपी गाड़ी व्यवस्थित रूप से चलती है। किसी एक पक्ष के कमजोर होने पर गृहस्थी की गाड़ी डगमगा जाती है। प्राचीन समय से ही भारतीय समाज में

* प्राचार्य, सुभाष यादव मेमोरियल डिग्री महाविद्यालय, बोरावां (म.प्र.) भारत

स्त्री व पुरूष के कार्य का बटंवारा कर दिया गया है। जहाँ पुरूष का कार्य अर्थोपार्जन था वही स्त्री के हिस्से में घर परिवार को संभालने की जिम्मेदारी आयी। समय के साथ परिस्थितियों में परिवर्तन आ गया है। जहां पहले परिवार के पुरूष सदस्य की आमदनी से घर परिवार का पालन पोषण हो जाता था वही वर्तमान परिस्थितियों में परिवार के एक ही सदस्य की आमदनी पर घर खर्च पूरा कर पाना असंभव तो नहीं परन्तु कठिन अवश्य हो गया है। महिलाओं ने प्राचीन समय से ही पुरूषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर परिवार के पालन पोषण में सहयोग दिया है। खरगोन जिले के जीनिंग कारखानों में कार्यरत् महिला श्रमिकों के परिवार के भरण पोषण में दिये गये आर्थिक योगदान के महत्व को निम्न बिन्दुओं से समझा जा सकता है।

जीनिंग कारखानों में महिला श्रमिकों के कार्य करने से उनके परिवार की आर्थिक स्थिति मजबूत हुई है। जैसा कि के.के. फायबर्स में कार्यरत् कमला बाई ने बताया कि उनके परिवार की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं थी फिर वे जीनिंग कारखानों में कार्य करने लगी जिससे उनके परिवार की आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है। अब ऋण नहीं लेना पड़ता तथा वह कुछ पैसा भी बचा पाती हैं, यह बात अनेक महिलाओं ने बताई।

महिला श्रमिकों द्वारा जीनिंग कारखानों में काम करने के कारण अब उनके परिवार में टी.वी., मोबाइल व स्वयं का मकान इत्यादि उपलब्ध हैं।

जीनिंग कारखानों में कार्यरत् महिला श्रमिकों की बढ़ती अधिक आत्मनिर्भरता उनके काम के महत्व की ओर संकेत करती है। महिला श्रमिकों द्वारा आर्थिक उपार्जन करने से आत्मनिर्भरता आयी है। अब उन्हें अपनी आर्थिक जरूरतें पूरी करने के लिए परिवार पर निर्भर नहीं रहना पड़ता है और आत्मनिर्भर होने से उनका आत्मविश्वास बढ़ा है। अब वे अपना निर्णय स्वयं लेने लगी हैं।

जिले के विभिन्न जीनिंग कारखानों में कार्यरत् महिला श्रमिकों से शोधकर्ताओं को ज्ञात हुआ है, कि वे जबसे जीनिंग कारखानों में काम करके अर्थोपार्जन कर रहीं हैं। उन्हें उनके परिवार में विशेष महत्व मिलने लगा है

जीनिंग कारखानों में अर्थोपार्जन करने से महिला श्रमिकों में सामाजिक जागरूकता बढ़ी है। अब वे रूढ़िवादी सामाजिक बंधनो से मुक्त होने के लिए प्रत्यनशील हैं। काम के लिए घर की चार दीवारी से बाहर निकलने से उनके सामाजिक ज्ञान में वृद्धि हुई है अब वे नशे व जुआखोरी व अन्य व्यसनों के बुरे प्रभाव से अपने परिवार को मुक्त करने की कोशिश में लगी हुई हैं।

श्रमिक परिवारों में नशे की लत ने घर कर लिया है लेकिन महिलाओं द्वारा विरोध दर्ज करवाने पर कुछ मात्रा में ही सही परन्तु श्रमिकों में नशे की आदत कम हुई है।

जीनिंग कारखानों में कार्यरत् महिला श्रमिक अब बच्चों की शिक्षा के महत्व को पहचान चुकी हैं। अब वे अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा दिलाना चाहती हैं। उनका स्वयं का अनुभव है, कि उनके कम पढ़े लिखे या अशिक्षित होने की वजह से उन्हें कितनी कठिनाईयां उठाना पड़ रही हैं। यदि वे शिक्षित होती तो उनके लिए और अच्छे रोजगार की संभावनाएं अपार थी। अब वे इस सत्य को समझ चुकी हैं, कि बच्चे का शिक्षित होना कितना महत्वपूर्ण होता है।

जीनिंग कारखानों में कार्यरत् सर्वेक्षित महिला श्रमिकों में 102 महिला श्रमिकों के परिवार में सदस्य संख्या 4 थी अर्थात उनके दो ही बच्चें थे। जो कि कुल सर्वेक्षित महिला श्रमिकों की संख्या का 20.4 प्रतिशत है और ये सभी महिला श्रमिक 18 से 38 आयु समूह की थी। जिससे यह ज्ञात होता है, कि अब नई पीढ़ी की महिलाएं परिवार नियोजन को अपना रही हैं वे छोटे परिवार का महत्व समझने लगी हैं।

जीनिंग कारखानों में कार्यरत् महिला श्रमिकों में कारखानों में कार्य करने से बचत की आदतों का विकास हुआ है। जीनिंग कारखानों में कार्यरत् महिला श्रमिक स्वसहायता के समूह के माध्यम से छोटी-छोटी बचत करके आर्थिक जरूरतें पूरी करने लगी। जब छोटी-छोटी बचत के बाद उन्हें उनकी अपेक्षा से बढ़ी राशि प्राप्त होती है, तो वे उसकी ओर आकर्षित हुई और उनमें बचत की आदतें बढ़ी हैं।

जीनिंग कारखानों में कार्यरत् महिला श्रमिकों द्वारा अर्थोपार्जन करने से उनके परिवार द्वारा ऋण लेने की प्रवृत्ति में उल्लेखनीय कमी आयी है। जहां, पहले उनके परिवार द्वारा आय कम होने पर उधार अधिक लिया जाता था वही अब महिला श्रमिकों द्वारा आर्थिक उपार्जन किए जाने के कारण परिवार को आर्थिक मदद मिली है। जिसके फलस्वरूप परिवार को भरण पोषण के लिए ऋण लेने की आवश्यकता कम पड़ती है।

खरगोन जिले के जीनिंग कारखानों में कार्यरत् महिला श्रमिकों द्वारा आर्थिक योगदान उनके परिवार के भरण पोषण में महती भूमिका निभा रहा है। जहां उनके द्वारा दिए गए आर्थिक योगदान से परिवार की आय में वृद्धि हुई वही उनका जीवन स्तर भी ऊंचा हुआ है।

महिला श्रमिकों द्वारा दिए गए आर्थिक योगदान का मूल्यांकन का आधार सांख्यिकी की सहसंबंध पद्धति से किया है, जो कि उनके द्वारा दिए गए आर्थिक योगदान का परिवार के अन्य सदस्यों द्वारा दिए गए आर्थिक योगदान से उसका संबंध बताता है। इसके लिए महिला श्रमिकों को प्राप्त दैनिक पारिश्रमिक दर में 26 का गुणा करके मासिक आय ज्ञात की गई और फिर उसका परिवार के अन्य सदस्यों द्वारा अर्जित आय से संबंधित किया गया है, जो कि इस प्रकार है -

परिवार के सदस्यों की कुल पारिवारिक आय व महिला श्रमिकों की आय के मध्य संबंध।

परिवार के सदस्यों की आय रूपये में	परिवार के की सदस्यों संख्या (%)	महिला श्रमिकों कीआय रूपये में	महिला श्रमिकों की संख्या की (%) में
1300-1560	12	1300-1560	20.8
1560-1820	13	1560-1820	19
1820-2080	13	1820-2080	8.4
2080-2340	17	2080-2340	17
2340-2600	22	2340-2600	14.6
2600-2860	23	2600-2860	10.2
Total	100	Total	100

उपरोक्त तालिका में सह-संबंध ज्ञात करने हेतु महिला श्रमिकों संख्या में परिवार के सदस्यों की संख्या से विभाजित कर Y श्रेणी का निर्माण किया गया तथा X श्रेणी के लिए महिला श्रमिकों व परिवार के सदस्यों की आय को लिया गया है तथा सह-संबंध ज्ञात किया गया तथा उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि परिवार के सदस्यों की आय व महिला श्रमिकों द्वारा अर्जित आय में उच्चकोटि का धनात्मक संबंध (0.98) है। जो इस बात की और इंगित करता है, कि महिला श्रमिकों द्वारा उनके परिवार में आर्थिक उपार्जन में महत्वपूर्ण योगदान दिया जा रहा है।

इस प्रकार उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है, कि आय के प्रत्येक स्तर पर महिला श्रमिकों का आर्थिक योगदान महत्वपूर्ण है और महिलाओं ने

परिवार की उन्नति के लिए पूरा प्रयास किया है, जिसके कारण उनके परिवार की आर्थिक स्थिति में महत्वपूर्ण सुधार आया है। महिलाओं का परिवार में दिया गया आर्थिक योगदान अविस्मरणीय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 औद्योगिक समाजशास्त्र : डी.एस. बघेल, ,विवेक प्रकाशान
2 श्रम अर्थशास्त्र एवं औद्योगिक संबंध: टी.एन. भगोलीवाल , साहित्य भवन
3 व्यावहारिक अर्थशास्त्र : डॉ.वी.सी.सिन्हा
4 भारत में आर्थिक विकास एवं नीति : मिश्र एवं पूरी
5 भारत की आर्थिक समस्याएँ : डॉ. मामोरिया एवं जैन
6 भारत जनगणना 2001
7 विभिन्न समाचार पत्र
8 www.wikipedia.com

****

मध्यप्रदेश में पारेषण-वितरण हानियों का विद्युत दर पर प्रभाव

डॉ. अनूप कुमार व्यास * सुरभि डिगरा **

शोध सारांश – विद्युत के उद्गम बिन्दु से उपभोग अर्थात् प्राप्ति बिन्दु तक की यात्रा के दौरान ऊर्जा का क्षरण (Loss) अपरिहार्य है। विद्युत उत्पादन, अति उच्च दाब/उच्च दाब पर पारेषण, दाब रूपान्तरण, वितरण आदि प्रणालियों में खामियों/त्रुटियों के कारण तथा अन्तर्वती/अन्तर्निहित या स्वाभाविक प्रवृत्ति के कारण ऊर्जा का रिसाव होता है। यही रिसाव विद्युत ऊर्जा की तकनीकी हानियों के रूप में परिलक्षित होता है। इसी प्रकार माप-यन्त्रण त्रुटिपूर्ण होने जैसे बन्द या जले मापक-यन्त्र समय पर (तत्काल) न बदले जाने के फलस्वरूप या मापक यन्त्रों के वाचन गलत होने के कारण अथवा विद्युत चोरी, गलत देयकों के कारण वाणिज्यिक हानियाँ परिलक्षित होती हैं। शोध पत्र में आँकड़ों की समीक्षा से यह प्रतीत होता है कि प्रदेश में पारेषण-वितरण हानियों में वृद्धि के फलस्वरूप तीनों वितरण कम्पनियों को राजस्व हानि होती है और विद्युत वितरण कम्पनियाँ इन हानियों का मुख्य मुद्दा विद्युत नियामक आयोग के समक्ष पेश कर, प्रतिवर्ष दर वृद्धि का प्रस्ताव अनुमोदित/पारित करवा लेती हैं, जिसका अन्तत: भार उपभोक्ताओं की जेब पर आता है। इससे प्रदेश की आर्थिक वृद्धि बाधित होती है।

विद्युत नियामक आयोग के दिशा-निर्देशानुसार यदि इन हानियों में 01 (एक) प्रतिशत की कमी भी लाई जाए तो तीन सौ करोड़ रूपए की सालाना बचत हो सकती है। जिससे उत्तरोत्तर दर वृद्धि की संभावना भी नहीं रहेगी। विद्युत वितरण कम्पनियों को हानियों के समस्त संघटकों की पहचान कर इसके आँकलन हेतु स्वतंत्र अध्ययन कर, त्रुटियों को कम करने हेतु उपाय करना चाहिए तभी मध्यप्रदेश प्रगति कर सकेगा।

मुख्य शब्द – वितरण हानियाँ, ऊर्जा, नियामक आयोग।

प्रस्तावना – विद्युत ऊर्जा का सही ढंग से उपयोग न करने अर्थात् दुरूपयोग अथवा अपव्यय या अविवेकशील/गैर-कानूनी तरीके से उपयोग अथवा अक्षम माप-यन्त्रण (मीटरीकरण) प्रणाली तथा कमजोर सन्जाल (नेटवर्क) एवं चोरी की प्रवृत्ति के परिणामस्वरूप तकनीकी एवं गैर-तकनीकी हानियाँ बढ़ी हैं। प्रबन्धकीय अव्यवस्था (Mismanagement) व नियन्त्रण एवं तकनीकी कार्यों में व्यवसायिक मापदण्डों (Norms) का पालन नहीं करने से व्यवसायिक हानियाँ (Commercial Losses)अनपेक्षित स्तर तक बढ़ गई, इसका कुल रूप से प्रभाव यह पड़ा कि पूँजी/सन्साधनों की कमी के कारण उनका विकास से सम्बन्धित कार्यों (जिसके जरिए हानियाँ कम की जा सकती हैं) का क्रियान्वयन (Execution) ही बंद हो गया और दीर्घकालीन देयताओं (Long- term debt) का भुगतान नहीं हो सका।

तकनीकी हानियाँ कम करने के लिए पुराने और अतिभार ग्रस्त प्रणाली (Overloaded System) एवं पारेषण-वितरण के अप्रचलित/लुप्त तकनीक (Obsolete Techinique) उपकरणों तथा कमजोर विद्युत सन्जाल/ढाँचे के भरोसे तकनीकी हानियाँ कम करना सम्भव नहीं है। परिणाम (अनेक बार) यह हुआ है कि पुराने (Out-dated) भारयुक्त उपकरणों एवं पुरानी कम क्षमता की विद्युत लाइनों के जलने की घटनाएँ बढ़ने लगी, जिससे पूँजीगत (Capital) हानि भी हुई और विद्युत प्रदाय बन्द होने से राजस्व प्राप्ति में भी भारी कमी हो गयी।

इस प्रकार ऊर्जा प्रणाली (Electric Supply System) में द्विमार्गीय (Two-Way) क्षरण/हानियाँ होती है - (1) तकनीकी (Technical) हानियाँ, (2) गैर-तकनीकी अर्थात् वाणिज्यिक अथवा व्यवसायिक हानियाँ (Commercial Losses)

(अ) तकनीकी हानियाँ (Technical Losses) - ऊर्जा प्रणाली के प्रत्येक अवयव (लाइन एवं ट्रांसफार्मर आदि) में दो कारणों से नैसर्गिक (Inherent) ऊर्जा का क्षय होता है। ये है - (1) ताम्र क्षरण (जिसे हमें I2R कहते हैं) तथा (2) लौह क्षरण (Iron Loss) जो ट्रांसफार्मर आदि के चुम्बकीय परिपथ (Magnetic Circuit) में विद्यमान चुम्बकीय प्रतिरोध (Reluctance) के कारण होता है। इन दोनों अवयवों (लाइनों एवं ट्रांसफार्मरों) में होने वाली सकल ऊर्जा खपत (ताम्र व लौह क्षरण) को तकनीकी हानियाँ कहते हैं।

(ब) वाणिज्यिक हानियाँ (Commercial Losses) –विद्युत उत्पादन, पारेषण, मूलभूत संरचना एवं सन्जाल (Basic Infra-structure and Network) निर्माण, रख-रखाव, स्थापना तथा अन्य शिरोपरि खर्चों (Overhead expenses) के आधार पर उपभोक्ताओं को प्रदाय की गयी बिजली के मूल्य एवं उनके द्वारा वास्तविक भुगतान की गई राशि में जो अंतर होता है, उसे हम वाणिज्यिक हानियाँ कहते हैं। ये हानियाँ दोषपूर्ण माप-यन्त्रण (मीटरिंग) प्रणाली, बिना मापक-यन्त्रों के संयोजनों द्वारा खपत का सही आकलन न किए जाने तथा विद्युत चोरी की प्रवृत्ति के कारण होती है।

शोध का उद्देश्य :-

1. मध्यप्रदेश में पारेषण-वितरण हानियों की स्थिति ज्ञात करना।
2. मध्यप्रदेश में पारेषण-वितरण हानियों में हुई कमी/वृद्धि के घटकों का अध्ययन करना।

* प्राध्यापक, विभागाध्यक्ष एवं निर्देशक, श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म. प्र.) भारत

परिकल्पना :-

1. म.प्र. में पारेषण-वितरण हानियों में वृद्धि हुई है।
2. मध्यप्रदेश में पारेषण-वितरण में हानियों में वृद्धि के फलस्वरूप ऊर्जा दरों में वृद्धि हुई है।

अध्ययन प्रणाली – मध्यप्रदेश पूर्व क्षेत्र, मध्य क्षेत्र एंव पश्चिम क्षेत्र तीनों वितरण कंपनियों की पारेषण-वितरण हानियाँ एवं मध्यप्रदेश राज्य विद्युत नियामक आयोग, भोपाल से प्राप्त दर आदेश वार्षिकांक का संकलन कर परिकल्पना का विश्लेषण किया गया है।

तीनों वितरण कंपनियों के अधिकारियों से विषय-वस्तु सम्बद्ध चर्चा कर एवं मध्यप्रदेश विद्युत नियामक आयोग, भोपाल की दर वृद्धि के फलस्वरूप आपत्ति दर्ज करने या टीप प्रस्तुत वास्ते बैठक में सम्मिलित होकर एवं प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर सुझाव दिए गए हैं।

अध्ययन की सीमाएँ – मध्यप्रदेश पूर्व क्षेत्र (जबलपुर), मध्यक्षेत्र (भोपाल) एवं पश्चिम क्षेत्र (इंदौर, उज्जैन) का कार्यक्षेत्र एवं सीमा।

विश्लेषण एवं निष्कर्ष :-

पारेषण-वितरण हानियाँ (प्रतिशत में)

वर्ष	पूर्व वितरण कंपनी (जबलपुर)	पश्चिम वितरण कंपनी(इंदौर, उज्जैन)	मध्य वितरण कंपनी (भोपाल)	औसत
2009-10	32.50	29.76	33.00	30.70
2010-11	36.62	33.09	32.30	33.80
2011-12	34.94	34.43	45.85	38.40

स्त्रोत :- मध्यप्रदेश राज्य विद्युत वितरण कंपनियों से प्राप्त अनुसार।

ऊर्जा दर

वर्ष	दर वृद्धि (प्रतिशत में)
2009-10	03.61
2010-11	10.66
2011-12	06.14

स्त्रोत:- म.प्र. विद्युत नियमकआयोग भोपाल दर आदेश वार्षिकांक।

तालिका स्पष्ट दर्शाती है कि पारेषण-वितरण हानियों में प्रतिवर्ष वृद्धि हुई है। जिसके फलस्वरूप ऊर्जा दरों में भी प्रतिवर्ष वृद्धि परिलक्षित हुई है अर्थात्

i) पारेषण वितरण हानियों एवं ऊर्जा दर में धनात्मक/प्रत्यक्ष सहसम्बन्ध है।

ii) पारेषण वितरण हानियों के साथ-साथ ऊर्जा दर वृद्धि में अन्य घटक भी जिम्मेदार हैं, जैसे उत्पादन लागत में वृद्धि (कोयले की दरों में बेतहाषा एवं एकतरफा वृद्धि), परिवहन/ढुलाई, निगरानी शुल्क आदि) पारेषण-वितरण लागत में वृद्धि, विक्रय-क्रय की दरों में वृद्धि, भारत एवं म.प्र. सरकार की वित्तीय संस्थाओं द्वारा ऊँची दरों पर ऋण, शिरोपरि व्यय, कृषि एवं एकल बत्ती उपभोक्ताओं को कम दरों पर विद्युत प्रदाय और विद्युत चोरी के कारण भी विद्युत दर में प्रतिवर्ष वृद्धि परिलक्षित होती है।

iii) विद्युत अधिकारियों से चर्चा एवं नियामक आयोग की बैठक में शामिल होने के पश्चात् निम्न कारण सामने आए- मसलन् कम क्षमता के तारों पर अपेक्षा से अधिक भार डाल देना जिससे पारेशण हानियाँ अधिक होती है। वाणिज्यिक हानियाँ मापक-यन्त्रों के ठीक से काम न करने, सही वाचन न होने एवं ऊर्जा चोरी से दृष्टिगोचित हुई हैं।

सुझाव –

अ) तकनीकी हानियों के कारणों की वस्तुस्थिति एवं हानियाँ कम करने के उपाय ऊर्जा क्षेत्र में हानियों का मुख्य कारण प्राथमिक एंव मध्यम वितरण लाइनें हैं। उच्च-पारेषण एवं उप-पारेषण लाइनें केवल 30 प्रतिशत हानियों के लिए जवाबदार है इसलिए प्राथमिक एवं मध्यम वितरण प्रणाली को सुनियोजित रूप से नियोजित करने से हानि मान्य सीमा में रखी जा सकती है। निम्न लाइनों को नियोजित करने से हानियाँ कम हो सकती है :-

- **लम्बी वितरण लाइनें –** ऐसा अनुभव में आया है कि 11 किलो वोल्ट एवं 415 वोल्ट की लाइनें ग्रामीण क्षेत्रों में जल्दबाज़ी में कम क्षमता वाली लाइनों की बहुत लम्बी दूरी तक बढ़ा कर आवश्यकता से अधिक उपभोक्ताओं को संयोजन दे दिए जाते हैं, जिससे लाइनों पर भार बढ़ जाता है। इसके परिणामस्वरूप दाब में कमी (Voltage Drop) के साथ-साथ प्रदाय में बार-बार अवरोध उत्पन्न हो जाता है और विद्युत धारा (Current) की मात्रा बढ़ने से उच्च स्तर पर हानियाँ होने लगती है। अत: उचित क्षमता वाली उचित लम्बाई में लाईने बिछाई जाए।
- **सम्वाहक (कनडक्टर) का अपर्याप्त आकार का होना –** जैसा कि ऊपर लिखा गया है कि ग्रामीण क्षेत्रों में अमानक कार्यों के कारण भार सामान्यत: बढ़ जाता है जो त्रिज्या-रूपक पोषक (Radial Feeder) के द्वारा प्रेषित होता है। इन पोषकों/सम्भारकों के सम्वाहकों (Conductors) का आकार (Size) पर्याप्त होना चाहिए। सम्वाहक का आकार के.व्ही.ए. द कि.मी. के आधार पर चयन किया जाना चाहिए किन्तु बहुधा ऐसा नहीं होता है। आदर्ष सम्वाहक की क्षमता आवश्यक दाब को नियमित करती है।
- **वितरण ट्रांसफार्मरों का भार केन्द्रों पर न होना –** बहुधा, उपभोक्ताओं की संख्या व संयोजित भार के हिसाब से वितरण ट्रांसफार्मरों की स्थापना भार-केन्द्रों (Load Centres) पर नहीं होती है, इसके परिणामस्वरूप दूर के उपभोक्ताओं को बहुत कम दाब में ऊर्जा मिलती है, जबकि वास्तव में ट्रांसफार्मर पर दाब पर्याप्त रहता है, इससे भी लाइनों पर ऊर्जा-हानियाँ ज्यादा होती है। अत: दाब कम होने की समस्या को हल करने के लिए ट्रांसफार्मरों का स्थान उपभोक्ताओं की संख्या तथा भार को देखकर चयन करना चाहिए ताकि सभी उपभोक्ताओं को पर्याप्त दाब पर बिजली मिल सके।

वितरण कम्पनियों को हानियों में सुधार हेतु निम्नलिखित पद्धतियाँ (व्यवस्थाएँ) अपनानी चाहिए – व्यवसायिक प्रबन्धन – किसी भी व्यवसायिक संस्था के लिए यह अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य है कि उसके द्वारा विक्रित वस्तु का सही-सही देयक जारी हो एवं उसकी पूरी-पूरी वसूली हो। विद्युत ऊर्जा की चोरी कर नुकसान पहुँचाने वाले बदमाशों के खिलाफ पुलिस में प्रतिवेदन करना और इनके खिलाफ कानूनी/न्यायालयीन कार्रवाई करना। विद्युत के क्षेत्र में विक्रय का मूल आँकड़ा मापक-यन्त्र वाचन की विश्वसनीयता एवं उनके (कर्मचारियों) द्वारा सही-सही देयक बनाने पर निर्भर करता है, अत: बिलकुल सही-सही मापक-यन्त्र वाचन की क्षमता बढ़ाना विद्युत क्षेत्र की कम्पनियों की सफलता के लिए बहुत महत्वपूर्ण है।

- **मापक-यन्त्र वाचक (Meter Reader) –** मापक-यन्त्र वाचक को हम विद्युत विभाग की रीढ़ की हड्डी (Back-bone) कह सकते हैं। मापक-यन्त्र वाचक का कार्य बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य है। विद्युत कम्पनियाँ मापक-यन्त्र वाचक के कार्य को कभी-कभी बहुत हल्के ढंग से लेती है, जबकि यह बहुत ही जवाबदारी का काम होता है। मापक-यन्त्र वाचक को कभी-कभी तीन प्रकार के कार्य करने होते हैं :-

(क) मापक-यन्त्रों के सही आँकड़े लिखना।
(ख) देयक वितरण करना।
(ग) अनधिकृत रूप से चोरी करने वालों की विद्युत लाइनें काट देना।
(घ) बकायादारों को स्मरण-पत्र भेजना एवं बकाया राषि वसूल करना

- **ऊर्जा अंकेक्षण (Energy Audit) –** अधिक विद्युत हानि के क्षेत्रों की पहचान करने, वाणिज्यिक हानियों में कमी लाने एवं उसकी जिम्मेदारी तय करने के लिए अति उच्च-दाब 33 किलो वोल्ट एवं 11 किलो वोल्ट सम्भारकों पर शत्-प्रतिशत माप-यन्त्रण कर ऊर्जा अंकेक्षण का कार्य संभागीय स्तर पर किया जाने चाहिए। वितरण ट्रांसफार्मरों स्तर पर माप-यन्त्रण कर तकनीकी व वाणिज्यिक हानियों को कम करने हेतु विशेष प्रयास किए जाने चाहिए।

उपभोक्ताओं की विद्युत ऊर्जा संबंधित सभी समस्याओं जैसे मापक यंत्र, देयक संबंधी ट्रांसफार्मर आदि का समय पर उचित निराकरण किया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मध्यप्रदेश पूर्व क्षेत्र (जबलपुर) मध्यक्षेत्र (भोपाल) एवं पश्चिम क्षेत्र (इंदौर, उज्जैन), विद्युत वितरण कंपनियाँ।
2. मध्यप्रदेश विद्युत नियामक आयोग, भोपाल दर आदेश वार्षिकांक।

****

छिन्दवाडा जिले की जनजातियों के विकास में विभिन्न योजनाओं एवं समितियों की भूमिका

डॉ. सुरेखा तेलकर *

प्रस्तावना – आधुनिक समाज जहाँ विकास के नित नये आयाम लिख रहा है वहीं आज भी जनजाति समाज विकास के अंतिम छोर पर है। जनजाति अपनी विशिष्ट सभ्यता एवं संस्कृति के कारण अन्य समाजों से अपनी पृथक पहचान रखता है और यही विशेषता जनजाति समाज को अन्य समाजों की अपेक्षा अधिक आकर्षित भी करती रही है। भौगोलिक स्थिति एवं जनसंख्या की दृष्टि से भारत विश्व का दूसरा बड़ा राष्ट्र है। जनजाति जनसंख्या की दृष्टि से भी अफ्रीका, आस्ट्रेलिया, लैटिन अमेरिका व उत्तरी अमेरिका से भारत आगे है। जिस तरह विश्व में भारत की स्थिति है, वही स्थिति भारत के हृदय स्थली मध्यप्रदेश की भी है। वह अपनी क्षेत्रीय विशालता और जनजाति बहुलता के कारण सदैव ही आकर्षण का केन्द्र रहा है।

जिले के विकास हेतु बैंक द्वारा संचालित योजनाएँ – जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, छिन्दवाड़ा द्वारा बैकिंग कार्यो के अतिरिक्त शासकीय योजनानुसार सार्वजनिक वितरण प्रणाली, समर्थन मूल्य के अंतर्गत सोयाबीन, मक्का, गेहूँ, चना उपार्जन का कार्य, बुनकर सोसायटी को ऋण उपलब्ध कराना, किसान क्रेडिट कार्ड उपलब्ध कराना, आभूषण तारण ऋण, किसानों को फसल की सुरक्षा के लिए फसल बीमा योजना, इत्यादि योजनाओं का वर्तमान में संचालन हो रहा है।

सार्वजानिक वितरण प्रणाली – उपभोक्ताओं को उचित मूल्य पर आवश्यक वस्तुएँ उपलब्ध कराने एवं बढ़ती कीमतों के विरूद्ध राहत मिल सके इस दृष्टि से शासन द्वारा 01 मार्च 1992 से सार्वजनिक वितरण प्रणाली का पूर्ण सहकारीकरण किए जाने से जिले में कुल 433 उचित मूल्य की दुकानें सहकारी समितियों द्वारा संचालित की जा रही है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली के परिचालन हेतु बैंक द्वारा वर्ष 2015–16 में लिंक समितियों को रू. 475.85 लाख की साख सीमा स्वीकृत की गई है। तथा लीड समितियों को रूपये 122 लाख की साख सीमा उपलब्ध कराई गई है।

आभूषणों के तारण पर ऋण – प्राथमिक सहकारी समितियों के सदस्यों एवं लघु कृषकों को साहूकारों के चुंगल से बचाने में बैंक द्वारा दिए जा रहे आभूषणों के तारण ऋणों की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। उपरोक्त उद्देश्य हेतु बैंक की 05 शाखाओं द्वारा 1.82 लाख रू. उपलब्ध कराया गया।

बुनकर एवं औद्योगिक सहकारी समितियों को वित्त प्रदाय – जिले में बुनकर सदस्यों को रोजगार मुहैया कराने में बुनकर सहकारी समितियों की अहम भूमिका रही है। बैंक द्वारा बुनकर सहकारी समितियों को वांछित साख प्रदाय की पूर्ति रियायती ब्याज पर स्वयं के स्त्रोतों एवं राष्ट्रीय कृषि तथा ग्रामीण विकास बैंक से पुनर्वित्त प्राप्त कर सुनिश्चित की गई है। वर्ष 2015–16 में उक्त उद्देश्य हेतु 06 समितियों की 13.35 लाख की साख सीमा स्वीकृत की गई है एवं विकास हेतु प्रयास किए जा रहे हैं।

राष्ट्रीय फसल बीमा योजना – भारत शासन द्वारा भारतीय साधारण बीमा निगम के सहयोग से राष्ट्रीय फसल बीमा योजना लागू की गई है। योजना का मूल उद्देश्य प्राकृतिक विपदाओं के परिणामस्वरूप चयनित क्षेत्रों में विशिष्ट फसलों की क्षति होने पर कृषकों को फसल क्षति से हुई हानि की प्रतिपूर्ति भारतीय साधारण बीमा निगम द्वारा की जाती है। राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना जिले में रबी मौसम 2015–16 से लागू की गई है। जिले में खरीफ फसल के अंतर्गत सोयाबीन, धान असिंचित, तुअर, ज्वार एवं मक्का हेतु तहसील इकाई है। रबी फसल के अंतर्गत गेहूँ सिंचित, गेहूँ असिंचित, चना तथा आलू हेतु तहसील इकाई है।

किसान क्रेडिट कार्ड योजना – कृषकों को विशेष साख सुविधा प्रदान के लिए प्रारंभ में जिले की 22 शाखाओं की 145 समितियों में कृषक क्रेडिट कार्ड योजना लागू की गई है। जिसमें वर्ष 2015–16 तक 101384 सदस्यों को राशि रूपये 42094.45 लाख की साख सीमा स्वीकृत की गई, सदस्यों को राशि रू. 13816.18 लाख ऋण वितरित किया गया है।

छिंदवाड़ा जिले के जनजातीय बाहुल्य विकासखण्डों में कार्यरत सहकारी समितियाँ :–

1. विपणन सहकारी समितियाँ
2. दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियाँ
3. मत्स्योद्याग सहकारी समितियाँ
4. सहकारी उपभोक्ता भण्डार
5. विपणन सहकारी समितियाँ

छिंदवाड़ा जिले के जनजातीय बाहुल्य विकासखण्डों में प्राथमिक विपणन सहकारी समिति निम्नलिखित कार्य कर रही है जैसे –

1. कृषि सहकारी साख समितियों के कृषक तथा अकृषक सदस्यों की कृषि उपज, वनोपज तथा अन्य उपजों के क्रय–विक्रय का कार्य करना।
2. गोदाम के लिए शासन एवं बैंक से ऋण लेकर निर्माण करें ताकि संग्रह करने संबंधी व्यवसाय करने में सुविधा हो,
3. सदस्यों की कृषि उपज तथा वनोपज की प्रक्रिया हेतु स्वयं की मिल तथा मशीन आदि शासकीय आर्थिक सहयोग से रखना जिससे समिति स्वयं सक्षम हो सके।
4. स्वयं के विवेक से उपभोक्ता वस्तुओं का संग्रह कर उसका विक्रय करना।
5. सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत शासन की नीति के अनुसार कार्य करना।

दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियाँ – छिंदवाड़ा जिले के जनजाति बाहुल्य विकासखण्डों में दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियों को गठित किया गया। देश के ग्रामीण अर्थव्यवस्था में पशुपालन और दुग्ध व्यवसाय का महत्व अधिक है, क्योंकि कमजोर वर्गों में बेरोजगारी एवं अल्परोजगार की गंभीर

* शासकीय महाविद्यालय, बिछुआ, जिला – छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

समस्याओं को हल करने की दृष्टि से भी दुग्ध सहकारी समितियाँ कारगर सिद्ध हुई हैं। वर्तमान में कुल 54 दुग्ध समितियाँ लाभ की स्थिति में चल रही हैं।

जनजाति बाहुल्य विकासखण्डों में दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियों से निम्न प्रकार के लाभ प्राप्त किए जा सकते है :-

1. कृषकों को कृषि आय के साथ-साथ अन्य अतिरिक्त आमदनी उपलब्ध हो जाने से उनकी आर्थिक प्रगति में सहायता मिलती है।
2. सहकारिता के आधार पर दुधारू पशु खरीदने के लिए सरलता से ऋण उपलब्ध हो जाता है, जिसे आसान किश्तों में चुकाया जा सकता है।
3. सहकारिता के आधार पर प्रक्रिया इकाई स्थापित कर मक्खन, शुद्ध घी एवं दुग्ध पावडर आदि तैयार कर उचित दाम पर उपलब्ध कराया जा सकता है।
4. सहकारिता के आधार पर पशुओं की चारे तथा स्वास्थ्य आदि की व्यवस्था आसानी से की जा सकती है।
5. उत्पादक एवं उपभोक्ता के बीच सीधा संबंध स्थापित हो जाने से जहाँ उत्पादकों को दूध का उचित मूल्य प्राप्त हैं। वहाँ उपभोक्ता को उचित मूल्य पर शुद्ध दूध उपलब्ध हो जाता है।

मत्स्योद्याग सहकारी समितियाँ – छिंदवाड़ा जिले में 21 सामान्य समितियाँ, जिसमें कुल 1186 सदस्य कार्यरत् हैं। 13 अनुसूचित जनजाति समितियाँ जिनमें कुल 660 सदस्य हैं एवं 2 अनुसूचित जाति समितियाँ जिनमें कुल 105 सदस्य हैं। इस प्रकार जिले में कुल 36 समितियाँ एवं कुल 1951 सदस्य हैं।

जनजाति क्षेत्रों में सहकारिता के माध्यम से मत्स्योद्योग सहकारी समिति कार्य कर रही हैं उससे गरीब तबके के व्यक्ति मछलीपालन का कार्य कर अपने परिवार का भरण-पोषण करती है। समितियों को वर्गवार आबंटित की जानकारी निम्नानुसार है :-

सहकारी उपभोक्ता भण्डार – छिंदवाड़ा जिले में सहकारी उपभोक्ता आंदोलन का प्रारम्भ द्वितीय विश्व युद्ध के समय से हुआ। जबकि सन् 1943 में जनता सहकारी उपभोक्ता भण्डार मर्यादित, सौंसर का गठन हुआ। इसके पश्चात् समय की गति के साथ ही जिले में इस ओर काफी प्रगति हुई और वर्तमान में जिले में कुल 117 प्राथमिक उपभोक्ता सहकारी भण्डारों का स्थापित किया गया।

सहकारी उपभोक्ता भण्डार से लाभ –सहकारी समितियों के माध्यम से जनजाति समाज के कृषकों को शोषण से मुक्ति दिलाना तथा सहकारी उपभोक्ता भण्डार से मिलने वाले लाभ से अवगत करना था।

1. उपभोक्ता सहकारी भण्डार में अपनी हिस्सा पूँजी शामिल कर सहकारी भण्डार स्थापित करके वे स्वयं भण्डार के मालिक होते हैं।
2. बिना मिलावट की अच्छी वस्तुएँ प्राप्त होती हैं।
3. सही माप तौल से चीजें मिलती हैं।
4. सहकारी उपभोक्ता भण्डारों द्वारा घर-घर माल पहुँचाने की व्यवस्था भी की जा सकती है।

निष्कर्ष – जनजातियों की शैक्षिक स्थिति पर दृष्टिपात करने पर ज्ञात होता है कि शासन की शिक्षा व्यवस्था पर इतने प्रयासों के बावजूद भी जनजातियों की शिक्षा के स्तर में सुधार नहीं आया है। अधिकांश जनजाति निरक्षर या केवल साक्षर है। वैश्वीकरण के दौर में शैक्षणिक प्रगति शोषण से मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करेगी। अत: केवल जनजातियों की साक्षरता से संतोष नहीं किया जा सकता। जनजातियों की पारिवारिक संरचना पर दृष्टिपात करने पर ज्ञात होता है कि जनजाति संयुक्त परिवार में जीवन-निर्वाह करते हैं तथा उनके परिवार में एक या दो सदस्य ही कमाने वाले हैं। संयुक्त पारिवारिक जीवन शैली वर्तमान सहकारिता कार्यक्रम स्व-सहायता समूह के लिए उपयोगी उपकरण कहे जा सकते है।

सुझाव – जनजाति किसानों के जीवन-यापन का आधार खेती है और यदि वह खेती से लाभ प्राप्त करने में सफल नहीं रहे तो उन्हें अपने परिवार के भरण-पोषण के लिए आर्थिक संकट खड़ा हो जाता है। अधिक वर्षा, अल्पवर्षा, पाला आदि के कारण अधिकांशत: फसल खराब हो जाती है। यदि इन आपदाओं से बचने के लिए किसानों को अपनी फसल के बीमा करवाना चाहिए लेकिन ऐसे किसानों की संख्या अत्यधिक कम है। किसानों का एक बड़ा भाग अपनी फसल का बीमा नहीं करवाता है। जिससे उसकी फसल की होने वाली क्षति का हर्जाना मिलने में परेशानी होती है क्योंकि अन्य सरकारी लाभ इस संबंध में काफी कम है। अत: पंचायती राज संस्थाओं या सहकारी समितियों के माध्यम से जनजाति किसानों के फसल बीमा की व्यवस्था की जानी चाहिए जिससे उन्हें फसलों की होनी वाली हानि से राहत मिल सके।

ग्राम स्तर पर बनी मत्स्य पालन समिति, दुग्ध पालन समिति को समय-समय पर सहयोग की आवश्यकता होती है लेकिन वह उन्हें नहीं मिल पाती है। अत: शासन को समय-समय पर इनकी समस्याओं को ध्यान में रखते हुए उनके निराकरण हेतु प्रयास करने चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बेढी, रघुवंश देव- सहकारिता के सिद्धान्त, इतिहास एवं व्यवहार, इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ, 1966
2. दत्त, रूद्र एवं के.पी.एम. सुन्दरम-भारतीय अर्थव्यवस्था, एस.चन्द एण्ड कंपनी लि., नई दिल्ली, 2007.
3. त्रिवेदी, आर.एन. एवं डी.पी. शुक्ल-*रिसर्च मैथ्डोलॉजी*, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, 2005.
4. तिवारी, कपिल देव-छिन्दवाड़ा दर्पण, अरूणोदय प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009

मार्गदर्शिका :

1. सहकारिता के 100 वर्ष मध्यप्रदेश राज्य सहकारी संघ भोपाल ,
2. स्वर्णिम सहकारिता मध्यप्रदेश राज्य सहकारी संघ भोपाल ,

पत्रिकाएँ एवं समाचार पत्र:

1. कृषि मंथन
2. जन-सहकार

तालिका 1 : समितियों की वर्गवार जानकारी

क्र.	समिति का वर्ग	समिति सदस्य	सदस्य संख्या	समितियों को पट्टे पर तालाब सिंचाई			
				समिति संख्या	सदस्य	तालाब संख्या	जल स्त्रोत
1.	सामान्य समितियाँ	21	1186	12	842	18	371.813
2.	अनुसूचित-जनजाति समितियाँ	13	660	06	251	08	171.36
3.	अनुसूचित जाति समितियाँ	02	105	-	-	-	-
	योग	36	1951	18	1093	26	542.849

भारतीय जीवन बीमा निगम के विपणन प्रबन्ध में विक्रय नियोजन

डॉ. मनीषा ग्रेवाल *

प्रस्तावना – भारतीय जीवन बीमा निगम की स्थापना भारतीय संसद के विशेष अधिनियम के अंतर्गत 1 सितम्बर 1956 को की गयी थी। इसका प्रधान कार्यालय मुम्बई में स्थित है। जीवन बीमा व्यवसाय करने के लिये पूरे देश में 8 क्षेत्रीय कार्यालय, 113 मण्डल कार्यालय तथा 2048 शाखा कार्यालय स्थापित किए गए है। निगम की 06 विदेशी कार्यालय भी है। निगम ने स्थापना से लेकर वर्तमान तक लगभग 29 करोड़ से अधिक बीमा पॉलिसियाँ निर्गमित की है।

विक्रय नियोजन – जीवन बीमा व्यवसाय के विपणन प्रबंध में विक्रय नियोजन के अंतर्गत जीवन बीमा व्यवसाय के विकास को ध्यान में रखकर उद्देश्यों तथा लक्ष्यों का निर्धारण, विक्रय नीति तथा व्यूह रचना का निर्माण, विक्रय संगठन की स्थापना, विक्रय के लक्ष्यों का निर्धारण विक्रय प्रोत्साहन तथा प्रतियोगिताओं का आयोजन, अभिप्रेरण की कार्यवाही तथा निष्पादन की समीक्षा सम्मिलित है। यह उल्लेखनीय है कि जीवन बीमा व्यवसाय का विक्रय एक ऐसा कठिन कार्य है जिसे विक्रय संगठन में लगे हुए कार्यकर्ता तभी सफलतापूर्वक सम्पादित कर सकते है। जबकि उनके समक्ष व्यवसाय के सुनिश्चित लक्ष्य हो और उन्हें हासिल करने के लिए परिश्रम करने की प्रेरणा बराबर मिलती रहे। सम्भावित ग्राहकों की तलाश से लेकर बीमा पॉलिसी निर्गमित करने की प्रक्रिया तक कार्यकर्ता को अत्यधिक लगन तथा धैर्य से कार्य करना पड़ता है, क्योंकि बीमा कराने वाला व्यक्ति केवल बीमा पॉलिसी की रूप में प्राप्त होने वाले आश्वासन के बदले नियमित रूप से प्रीमियम चुकाने के लिए प्रतिबद्ध बनाया जाता है। इसलिए जीवन बीमा व्यवसाय में वृद्धि तभी संभव है, जबकि बीमा विक्रय करने वाला व्यक्ति निरन्तर सक्रिय रहे। उसे निरन्तर सक्रिय रखने के लिए ऐसी नीति तथा कार्य प्रणाली अपनानी पड़ती है कि वह ओर अधिक कार्य करने के लिए लगातार प्रेरित होत रहे।

विक्रय के लक्ष्यों का निर्धारण – मूलत: राष्ट्रीयकरण के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर मुख्यालय द्वारा विक्रय के लक्ष्य निर्धारित करके क्रियान्वित करने से उसे शीघ्रता, आसानी, गुणवत्ता, मितव्ययिता तथा सुनिश्चितता से सम्पन्न किया जा सकता है। परिणामस्वरूप अवधि विशेष में अधिक कार्य सम्पन्न किया, अन्य व्यवसायो की भांति जीवन बीमा व्यवसाय में ''**लक्ष्य निर्धारण**'' बहुत महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि इसमें भी लागत, तत्परता, उत्पादकता तथा समय आदि का महत्व अत्यधिक है।

यह उल्लेखनीय है कि बीमा का विक्रय एक कठिन कार्य है, जिसे विक्रय संगठन में लगे हुए कार्यकर्ता तभी सफलतापूर्वक सम्पन्न कर सकते है, जबकि उनके समक्ष व्यवसाय के सुनिश्चित लक्ष्य हो। उन्हें हासिल करने के लिए उन्हें लगातार प्रेरणा मिलती रहे। संभावित ग्राहकों की तलाश से लेकर बीमा पॉलिसी के निर्गमन करने की प्रक्रिया तक कार्यकर्ताओं को अत्यधिक लगन तथा धैर्य से कार्य करना पड़ता है, साथ ही चारों कम्पनियों के बीच प्रतिस्पर्धा का सामना भी करना पड़ता है।

प्रधान कार्यालय द्वारा लक्ष्य निर्धारित हो जाने के बाद क्षेत्रीय आधार पर विस्तृत योजनाएँ तैयार की जाती है तथा इन लक्ष्यों की प्राप्ति के प्रयास किए जाते है। क्षेत्रीय कार्यालय द्वारा क्रमश: मण्डल कार्यालय एवं शाखा कार्यालयों के भी विक्रय लक्ष्य निर्धारित कर दिए जाते है। शाखाओं का निष्पादन इन लक्ष्यों की पूर्ति के आधार पर किया जाता है। शाखाएँ अपने विक्रय प्रबंधकों, विकास अधिकारियों और अभिकर्ताओं के माध्यम से योजना बनाकर विक्रय कार्य करने के लिए प्रोत्साहन तथा मार्गदर्शन प्रदान करती है।

सामान्यतया प्रत्येक स्तर पर पिछले वर्ष की गतिविधि को ध्यान में रखते हुए लक्ष्य निर्धारित किए जाते है तथा मासिक, त्रैमासिक एवं वार्षिक आधार पर प्रगति का मूल्यांकन किया जाता है।

लक्ष्यों का निर्धारण होने के बाद इन लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु विक्रय की व्यूह रचना की जाती है।

विक्रय की व्यूह रचना – लक्ष्यों का निर्धारण हो जाने के बाद उनकी पूर्ति हेतु प्रत्येक प्रकार के बाजार के लिए पृथक व्यूह रचना तैयार की जाती है। बीमा के अधिक प्रचार और प्रसार के उद्देश्य से एवं ग्रामीण क्षेत्रों में बीमा का संदेश पहुँचाने के उद्देश्य से छोटी-छोटी राशि की पॉलिसियाँ भी बनायी गयी है, ताकि बीमा को समाज के हर वर्ग तक पहुँचाकर लक्ष्यों की प्राप्ति के साथ-साथ विपणन के सामाजिक उद्देश्य को भी पूरा किया जा सके। इसके लिए विशेषत: भारतीय जीवन बीमा निगम ने न्यू जनरक्षा, बन्दोबस्ती बीमा, जीवन अमृत जैसी पालिसियाँ प्रारंभ की है।

सन् 1981-82 में भारतीय जीवन बीमा निगम के पुनर्गठन योजना का क्रियान्वयन प्रारंभ हुआ। प्रथम चरण में इसे प्रयोग के आधार पर दिल्ली, बैंगलुरू और कुड्डपा मण्डलो में लागू किया गया। अगले वर्ष यह योजना 20 अन्य मण्डल कार्यालयों में लागू कर दी गई। तीसरे चरण में इसे शेष सभी मण्डलों में लागू कर दिया गया। इस पुनगर्ठन की योजना के अंतर्गत निष्पादन बजट तथा नियोजनों की प्रणाली प्रत्येक कार्यालय स्तर पर प्रभावशाली ढंग से लागू की गई। इसे लागू करने के उद्देश्य से विपणन व्यूह रचना पर भी ध्यान दिया गया और बीमा व्यवसाय के बाजार को छ: भागो में विभाजित किया गया –

1. व्यावसायिक तथा प्रबंधकीय समूह।
2. नियमित आय वाला समूह।
3. स्वरोजगार वाला समूह।
4. वेतन बचत योजना वाला समूह।

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) माता जीजा बाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

5. कृषि श्रमिक समूह।
6. समूह एवं अधिवार्षिकी योजना का समूह।

यह स्वीकार किया गया कि, प्रत्येक प्रकार के बाजार समूह के लिए पृथक विपणन व्यूह रचना आवश्यक है और इनके लिए पृथक से सूचनाएँ उपलब्ध होना चाहिए। भारतीय जीवन बीमा निगम के प्रत्येक समूह के लिए अलग से विपणन दृष्टिकोण अपनाने घर पर ध्यान दिया और इस दृष्टि से नवीन बीमा योजनाएँ प्रस्तावित की और विक्रय संगठन का विस्तार किया।

विक्रय नीति – भारतीय जीवन बीमा निगम की विपणन नीति का प्रमुख उद्देश्य ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के विभिन्न व्यवसायों में लगे और विभिन्न स्त्रोतों से आय प्राप्त करने वाले उच्च मध्यम तथा निम्न आय वाले वर्गो के अधिक से अधिक लोगों को जीवन बीमा के माध्यम से समुचित आर्थिक व्यवस्था प्रदान करना है। किन्तु इसके लिए यह आवश्यक है कि, न्यूनतम संभव मूल्य पर सुरक्षा प्रदान करने, ग्राहक के संतुष्ट रखने, बचत को प्रोत्साहित करने, देश के आर्थिक सामाजिक परिवेश में होने वाले परिवर्तनों के अनुकूल तथा संगठन को स्थिर एवं विकासशील बनाए रखने के उद्देश्यों को ध्यान में रखा जाएगा। इस दृष्टि से यह प्रयत्न किया गया कि, संगठन के प्रत्येक स्तर पर विपणन दृष्टि से महत्व दिया जाए तथा आवश्यकता पर आधारित विक्रय और नवीन बीमा समूह की तलाश पर विशेष ध्यान दिया जाए तथा ऐसे नवीन उत्पाद विकसित किए जाए जो विशिष्ट वर्गो की आवश्यकताओं को पूरा करते हो। इसके साथ ही यह भी जरूरी समझा जाए कि, बीमा सेवाओं के प्रभाव निश्चित कर दिए जाए और अभिकर्ताओं तथा कर्मचारियों को उनके लिए प्रतिबद्ध बनाया जाए।

सारांश में भारतीय जीवन बीमा निगम की विक्रय नीति दोनों तत्वों पर विशेष ध्यान देती है–

1. अधिक से अधिक नवीन व्यक्तियों को बीमा व्यवसाय के क्षेत्र में लाना और
2. वर्तमान बीमित व्यक्तियों को बेहतर बीमा सेवाएँ प्रदान करते हुए बीमा संगठन की उपभोक्ता केन्द्रीय विक्रय नीति की छवि बनाना।

विक्रय प्रोत्साहन तथा प्रतियोगिताएँ – विपणन प्रबंध में विक्रय नियोजन के साथ–साथ यह बात भी महत्व रखती है कि, लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहन की क्या विधि अपनायी गई है और अधिकतम लक्ष्य प्राप्त करने वालों के बीच में प्रतियोगिता की परिस्थितियाँ किस प्रकार विकसित की गई है। विक्रय के लक्ष्य निश्चित करना और उन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए व्यूह रचना तथा नीति का निर्माण करना जितना सरल है, उतना ही उन लक्ष्यों को प्राप्त करना कठिन है। लक्ष्यों को हासिल करने के लिए विक्रय कार्य में लगे व्यक्तियों को लगातार विक्रय करने की प्रेरणा मिलती रहनी चाहिए। वास्तव में जीवन बीमा व्यवसाय का विपणन इतना कठिन है कि, उनके बाद कार्यकर्ता हतोत्साहित तथा शिथिल हो सकते है। केन्द्रीय कार्यालय जो लक्ष्य निश्चित करता है, उनकी पूर्ति क्षेत्रीय कार्यालयों, मण्डल कार्यालयों और शाखा कार्यालयों द्वारा किए जाने वाले कार्य पर निर्भर करती है तथा शाखा कार्यालय के कार्य की सफलता विकास अधिकारियों और अभिकर्ताओं के रूप में वास्तविक बीमा योजना क्रय करने वाले व्यक्तियों के साथ बनाए गए संबंधों और सम्पर्को पर निर्भर करती है। बीमा लेने वाले व्यक्ति बीमा पॉलिसी क्रय करने के माध्यम से जहाँ एक ओर अपनी बचत को अन्य निवेश योजनाओं की अपेक्षा जीवन बीमा में निवेश करना स्वीकार करते वहीं दूसरी ओर वे आर्थिक सुरक्षा का महत्व समझकर अपनी आय का विवर्तन भी बचतों के रूप में करते है। इसलिए कभी उनके बीमा लेने की प्रवृत्ति आर्थिक और सामाजिक परिस्थितियों में आने वाले बदलाव से प्रभावित होती है, तो दूसरी ओर पूँजी बाजार के परिवर्तन भी उसे प्रभावित करते है।

वास्तव में नवीन बीमा व्यवसाय के आँकडे यह प्रकट करते है कि, अभिकर्ताओं और विकास अधिकारियों ने विक्रय करने के लिए प्रयत्न किए है और उन्हें प्रयत्न करने के लिए बीमा निगम के शाखा अधिकारियों ने कितना प्रोत्साहन दिया है। किसी एक स्तर पर प्रोत्साहन की कमी अन्ततः अभिकर्ता को शिथिल बना सकती है और बीमा व्यवसाय के विक्रय के लक्ष्य अधूरे रह जाते है। इसलिए यह कहना उचित ही होगा कि जीवन बीमा व्यवसाय में वृद्धि के आंकडे काफी हद तक विक्रय प्रोत्साहन के लिए अपनायी गई सूझबूझ कोशिशों का परिणाम होते है। इसका आशय यह है कि, जीवन बीमा स्वेच्छा से कोई ग्राहक क्रय नही करता और उसके लिए अभिकर्ता या विकास अधिकारी को लगातार प्रयत्न करने पडते है। इन प्रयत्नों में थोड़ी सी कमी रहने पर बीमा व्यवसाय मिलने से रह जाता है। ये प्रयत्न लगातार चलते रहे इसके लिए जो उपाय किए जाते है, उन्हें मुख्यतः दो हिस्सों में विभाजित किया जा सकता है –

1. विक्रय प्रोत्साहन और
2. प्रतियोगिताएँ

विकास अधिकारियों और अभिकर्ताओं को लगातार सक्रिय रखने के उद्देश्य से तथा अधिक से अधिक व्यवसाय प्राप्त करने के लिए प्रेरित करने हेतु ऐसी प्रतियोगिता का भी आयोजन किया जाता है। जिनमें भाग लेने वाले को तथा उत्कृष्ट स्थान प्राप्त करने वाले विजेताओं को पुरस्कृत तथा सम्मानित किया जाता है। केन्द्रीय कार्यालय, क्षेत्रीय कार्यालय, मण्डल कार्यालय तथा शाखा कार्यालय अपने स्तर पर ऐसी प्रतियोगिताओं का आयोजन करते है। ये प्रतियोगिताएँ विशेषकर विकास अधिकारियों और अभिकर्ताओं के लिए होती है। इनके अंतर्गत अभिकर्ताओं को एक निश्चित अवधि में एक निश्चित मात्रा या उससे अधिक बीमा व्यवसाय प्रस्तावित तथा पूर्ण करना होता है। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि, भारतीय जीवन बीमा निगम की पॉलिसियों के विपणन की समुचित व्यवस्था में आज भी कमी परिलक्षित होती है, फिर भी विपणन व्यवस्था में सुधार के लिए निगम लगातार प्रयत्नशील है। पिछले 60 वर्षों में भारतीय जीवन बीमा निगम ने निःसन्देह चहुँमुखी प्रगति की है। अपनी गतिविधियों का बहुआयामी विस्तार किया है। एक बहुउद्देशीय संस्थान बनकर देश की प्रगति एवं राष्ट्र की समृद्धि में भरपूर एवं बहुमूल्य संकल्प को भलीभांति निभाया। शोधकर्ती की राय में विपणन व्यवस्था को सार्थक और प्रभावशील बनाने के लिए नवीन बीमा व्यवसाय के विक्रय की अपेक्षा बीमाधारियों को मार्गदर्शन और सहायता प्रदान करना, विपणन की सफलता का आधार माना जाना चाहिए और विपणन से जुड़े हुए अभिकर्ता, अधिकारियों और कर्मचारियों को बीमाधारी से सतत् सम्पर्क रखने को सर्वोच्च प्राथमिकता देनी चाहिए।

भारतीय जीवन बीमा निगम एक वटवृक्ष है। यह प्रतिवर्ष फलता–फूलता जा रहा है। आगे भी इसके फलने–फूलने की आशा है। इससे देश की सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था को छाया मिलेगी तथा उद्योग–धन्धे रूपी अनेक पेड़–पौधें पनपेंगे। निश्चित रूप से पॉलिसियों के विक्रय की व्यूह रचना, विक्रय नीति, विक्रय प्रोत्साहन तथा प्रतियोगिताएँ आदि विक्रय रणनीतियों के फलस्वरूप निगम ने 29 करोड़ से अधिक बीमा पॉलिसियाँ सम्पूर्ण देश में निर्गमित की है, जो कि निगम के प्रति जनता का अटूट विश्वास, प्रगति एवं समृद्धि का परिचायक है। भारतीय जीवन बीमा निगम ने भारतीयों के हृदय पटल पर एक अमिट स्थान बना रखा है। निगम अपनी विपणन एवं विक्रय नीति के

परिणाम स्वरूप प्रगति के नित नये सौंपान रच रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बालचन्द्र श्रीवास्तव - बीमा के तत्व, साहित्य भवन, आगरा वर्ष 2015
2. डॉ. सद्गुरूचरण श्रीवास्तव - बीमा विधान, पुस्तक महल, नईदिल्ली वर्ष 2014
3. एम.एन. श्रीनिवासन - बीमा के सिद्धांत, रामानुज पब्लिशर्स, बैंगलुरू वर्ष 2015
4. बीमा अभिकर्ता निर्देशिका - भारतीय जीवन बीमा निगम, मुम्बई
5. योगक्षेत्र पत्रिका - भारतीय जीवन बीमा निगम, मुम्बई वर्ष 2015
6. वेबसाइ - www.licindia.com

****

मध्य प्रदेश के बीड़ी उद्योग श्रमिकों की श्रम कल्याण योजनाओं का आर्थिक आलोचनात्मक अध्ययन (इन्दौर जिले के संदर्भ में)

डॉ. विजय ग्रेवाल *

प्रस्तावना – मध्य प्रदेश में बीड़ी उद्योग अत्यंत महत्वपूर्ण उद्योग माना जाता है। भारत में कृषि उद्योग के पश्चात् बीड़ी उद्योग में ही सर्वाधिक जनशक्ति नियोजित है। प्राकृतिक दृष्टि से सम्पन्न मध्य प्रदेश में इस उद्योग के अनुकूल परिस्थितियाँ उपलब्ध है। बीड़ी उद्योग में कच्चे माल के रूप में प्रयुक्त होने वाला तेन्दुपत्ता सर्वाधिक मध्य प्रदेश में ही उत्पन्न होता है। देश के प्राय: प्रत्येक प्रान्त में बीड़ी उद्योग ने अपनी गहरी पैठ जमा ली है। भारत सरकार के श्रम मंत्रालय द्वारा प्रकाशित तथ्यों के अनुसार देश में वर्तमान में बीड़ी श्रमिकों की कुल संख्या 40 लाख से भी अधिक है। मध्य प्रदेश शासन के श्रम विभाग के वार्षिक प्रशासकीय प्रतिवेदन के अनुसार मध्य प्रदेश राज्य में 8,15,820 परिचय पत्र धारक बीड़ी श्रमिक है, जिसमें से इन्दौर जिले में 4,312 परिचय पत्र धारक बीड़ी श्रमिक है। सर्वाधिक 3,06,982 परिचय पत्र धारक बीडी श्रमिक सागर जिले में है।

आज बीड़ी श्रमिक अनेक कठिनाइयों और समस्याओं का सामना कर रहे है। अनेक बीड़ी श्रमिक गरीबी रेखा के नीचे जीवन-यापन कर रहे है। बीड़ी निर्माता एवं सट्टेबाजों द्वारा बीड़ी श्रमिकों का हर तरह से शोषण किया जाता है। श्रम कल्याण सुविधाओं तथा सामाजिक सुरक्षा योजनाओं का लाभ इन्हें अपर्याप्त मिलता है।

शोध के उद्देश्य – इस अध्ययन का उद्देश्य यह जानना है कि श्रम मंत्रालय भारत सरकार द्वारा म.प्र. के बीड़ी श्रमिकों के लिए क्या-क्या किया जा रहा है ? शासन द्वारा बीड़ी श्रमिकों के उत्थान के लिए जो विभिन्न कल्याणकारी योजनाएँ संचालित की जा रही है, उनका लाभ वास्तव में श्रमिकों को मिल रहा है या नही ? विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं का लाभ बीड़ी श्रमिकों को नहीं मिल रहा है, तो उसके कारणों का पता लगाना इस शोध का प्रमुख उद्देश्य है।

बीड़ी श्रमिकों से सम्बन्धित सभी समस्याओं को हर कोण से समझकर समाधान की ठोस दिशा निर्धारित करना भी इस शोध का उद्देश्य है, ताकि शासन द्वारा बीड़ी श्रमिकों के उत्थान एवं उन्नति के लिए जो विभिन्न कल्याणकारी योजनाएँ संचालित की जा रही है, उनका लाभ अधिकतम बीड़ी श्रमिकों को प्राप्त हो सके और यह उद्योग अधिक तीव्र गति से प्रदेश में पनपे, जिससे रोजगार की समस्या के समाधान में भी मदद मिल सके।

श्रम कल्याण का अर्थ – श्रम कल्याण शब्द की व्याख्या अत्यंत व्यापक अर्थो में की जाती है, इसमें वे सब कार्य सम्मिलित किए जाते है, जो श्रमिकों की भलाई के लिए जाते है। जैसे मनोरंजन के लिए खेलकूद अथवा नाटकों का आयोजन, उनके जलपान के लिए केण्टीन की व्यवस्था, सफाई, स्वास्थ्य एवं चिकित्सा संबंधी सुविधाएँ, निवास की सुविधाएँ, यातायात की सुविधाएँ, तथा अन्य सभी कार्य जिनका उद्देश्य श्रमिकों का मानसिक, शारीरिक, नैतिक, आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक उत्थान करना हो।

बीड़ी श्रमिकों की श्रम कल्याण योजनाएँ – कारखाना अधिनियम, 1948 में बीडी श्रमिकों के कल्याण के लिए अनेक व्यापक उपाय व व्यवस्थाएँ की गयी है। इस अधिनियम के अंतर्गत ही श्रमिकों के स्वास्थ्य कल्याण कार्य तथा सामाजिक सुरक्षा की उत्कृष्ट किया गया है, जिसका कि मध्य प्रदेश के बीड़ी उद्योग के संदर्भ में निम्नलिखित शीर्षकों के माध्यम से अध्ययन किया जा सकता है –

1. **कार्यकारी दशाएँ** – स्थान एवं वातावरण का प्रभाव मनुष्य पर पड़ता है, यह सर्वथा सत्य कथन है। यदि स्वस्थ वातावरण में मनुष्य रहे तो वह भी स्वस्थ रहता है। यदि यह दशा विपरीत हो जाए तो इसका असर मानव के स्वास्थ्य पर पड़ेगा। फलस्वरूप वह अनेक व्याधियों का शिकार हो जायेगा। जिससे उसके स्वास्थ्य में कमजोरी आ जाएगी। कार्यशक्ति कम होने से उत्पादन का हिस्सा निम्न हो जाता है। अत: अनिवार्य है कि कार्यकारी दशाएँ उचित हो ताकि श्रमिक स्वस्थ रहें। नियोक्ता को लाभ प्राप्त हो और देश का उत्पादन ऊँचा उठे।

कार्यकारी दशा के विपरित होने का तात्पर्य गंदे वातावरण, सफाई न होना, पीने का गंदा पानी कीचड़ युक्त वातावरण दुर्गन्ध, शौचालय और मूत्रालय की अनुपलब्धता अग्निशामक यंत्र न होना प्रकाश का अभाव आदि है। कल्याणकारी योजनाओं में उपर्युक्त को ध्यान दिया गया है। उपायों के अंतर्गत केन्टीन **विश्रामगृह, अवकाश के दिन, कल्याण अधिकारी, काम की उचित दशाएँ आदि उपाय किए गए है।**

2. **अवकाश और छुट्टियाँ** – मनुष्य और मशीन एक दूसरे से पृथक है, मानव को मशीन नहीं बनाया जा सकता अर्थात् उससे निरंतर कार्य नहीं ले सकते समय-समय पर उसे अवकाश प्राप्त होते रहना चाहिए ताकि उसकी कार्य शक्ति बढ़ सकें। मध्य प्रदेश बीड़ी तथा सिगार कर्मचारी अधिनियम में अवकाश और छुट्टियों के संबंध में यह प्रावधान है कि प्रत्येक केलेन्डर वर्ष में कर्मचारी को 3 राष्ट्रीय और 5 त्यौहारों के अवकाश पूर्ण वेतन के साथ प्रदान किए जाने चाहिए।

मध्य प्रदेश राज्य के बीड़ी उद्योग के कारखानों में जहाँ तक सवैतनिक अवकाश का सवाल है, यह बड़े आश्चर्य की बात है कि इस उद्योग में कहीं भी इसका प्रावधान नहीं है। हाँ, प्रदेश के कुछ बीड़ी कारखानों में इसकी व्यवस्था की गई है। इन कारखानों में प्रतिवर्ष 4 से 6 तक आकस्मिक अवकाशों की व्यवस्था है, परंतु इसे लागू करने में भी अत्यधिक पक्षपात अथवा भेदभाव पाया जाता है। इनका लाभ ऐसे बीड़ी कामगारों व अन्य कर्मचारियों को प्राप्त होता है, जो नियोजकों तथा प्रबंधकों के चापलूस व नजदीक होते है। शेष बीड़ी कामगारों व अन्य कर्मचारियों को इन सुविधाओं का लाभ प्राप्त नहीं हो पाता है। यहाँ तक की कर्मचारियों के लिए आकस्मिक अवकाश एक कल्पना

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य)श्री वैष्णव वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

की विषय-वस्तु है।

3. कार्य के घण्टे - वर्तमान में विश्व के अधिकांश देशों के कारखानो में कार्य के घण्टे प्रमुख समस्या है। भारत में भी यही समस्या दिखती है अधिक देर तक श्रमिक कार्य करने से थक जाता है, इससे उत्पादन क्षमता पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। वर्तमान में इस ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है क्योंकि यह अब तक सामाजिक महत्व का विषय बन गया है। इस संबंध में व्यापक प्रयास किए जा रहे है परंतु कई उद्योगों में अभी तक स्वार्थ प्रेरित पद्धति विद्यमान है **' अधिक काम कराओं अधिक लाभ कमाओ'** देश और समाज के लिए यह अनिवार्य हो गया है कि इस संबंध में मानसिक और शारीरिक प्रयास ईमानदारी से हो श्रम करने का एक प्रमाणिक समय और उत्पादन निर्धारित है, इसकी मात्रा बढ़ने से उत्पादन तो पहले अधिक दिख सकता है परंतु श्रमिकों के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ने के कारण बाद में यह कम हो जाता है। अत: जरूरी है कि काम का समय निश्चित हो तथा इसे उद्योग के आधार पर निर्धारित किया जाना चाहिए।

4. पेयजल - जल ही जीवन है। जल बिना मानव जीवित नही रह सकता है अत: इसकी महत्ता को नकारा नहीं जा सकता है। यदि जल शुद्ध है तो मानव के लिए स्वास्थ्य रक्षक है, दूषित होने पर स्वास्थ्य का भक्षक होता है। इस अध्ययन से स्पष्ट है कि श्रमिकों को जल की भी सुविधा नहीं है जिस घड़े से श्रमिक जल प्राप्त करता है। अत्यंत पुराने है, इन्हें तीन वर्षो से बदला नहीं गया है घड़ो में पानी भरने की पर्याप्त व्यवस्था का भी अभाव है। शोधार्थी ने घड़े के पानी का निरीक्षण किया तो पाया कि जल में कचरा काफी मात्रा में था। अत: स्पष्ट है कि पानी फिल्टर या छाना नहीं जाता। श्रमिकों के द्वारा ऐसा पानी पीने से उनके स्वास्थ्य पर विपरित प्रभाव पड़ रहा है।

5. स्वास्थ्य संबंधी - श्रमिकों को कार्य करने के लिए उपयुक्त स्थान मिलना चाहिए जहाँ गंदगी न हो प्रकाश की उपयुक्त व्यवस्था हो परंतु ऐसा वास्तव में नहीं पाया जाता है, श्रमिक जिस मकान में बैठकर बीड़ी बनाता है उसका अवलोकन करने से निम्न बातें पाई गई अधिकतर श्रमिकों के मकान कच्चे है और नाले गंदगी पूर्ण वातावरण में स्थित है। कच्चे फर्श जो बरसात में कीचड़ का स्वरूप ग्रहण कर लेते है। कीडे मकोड़े, मच्छर, मक्खियाँ वहाँ बहुतायात में पाई जाती है, ऐसे वातावरण में श्रमिक स्वस्थ रहेगा की कल्पना ही हास्यास्पद है। झोपड़े के एक कमरे में अधिकतर सदस्यों का विश्राम एवं शयन स्थल है। कुछ श्रमिकों के यहाँ इतनी दयनीय स्थिति नही है, परंतु उन्हें भी स्वस्थ वातावरण में रहने वाला नहीं माना जा सकता है। प्रकाश की व्यवस्था का अभाव है, ऐसी अवस्था में कार्य करते रहने से श्रमिकों को रोग अधिक हो रहे हे। इनका स्वास्थ्य गिर रहा है तथा नैतिक पतन आदि को प्रोत्साहन मिल रहा है। शौचालय और मूत्रालय की भी कुछ कारखानों को छोड अन्य में व्यवस्था नहीं है। इस प्रकार बीड़ी कामगार व कर्मचारी नाटकीय जीवन जीने के लिए विवश है। फिर भी जीवन व्यतीत कर रहे हे। शोधकर्ता की राय में सक्षम पदाधिकारियों को इस दिशा में कारगर पहल कर बीड़ी कामगारों का जीवन स्तर सुधारना चाहिए। शोधकर्ता ने अध्ययन के दौरान पाया कि इन्दौर जिले के प्रत्येक बीड़ी कारखाना स्थल पर एवं बीड़ी कामगारों व अन्य कार्यकर्ताओं के घरो पर भी कार्य करने की दशाएँ अत्यंत सोचनीय व चिन्तनीय है।

6. सुरक्षा संबंधी सुविधाएँ - सुरक्षा संबंधी उपायों में अधिनियम में विस्तृत वर्णन दिया गया है परंतु ये उन कारखानों के लिए है, जहाँ पर मशीनों का उपयोग होता है बीड़ी उद्योग के अंतर्गत चूँकि समस्त कार्य हाथों से सम्पन्न किए जाते है। इसलिए इससे संबंधित कोई भी प्रावधान अधिनियम में नहीं दिए गए है। शोधकर्ता की राय में भट्टी आदि पर कार्य करने वाले खतरनाक परिस्थितियों में कार्य करते है। अत: उनके सुरक्षा उपाय निश्चित किए जाना चाहिए।

7. आवास संबंधी सुविधाएँ - मध्य प्रदेश के बीड़ी उद्योग में कार्यरत श्रमिकों की आवास संबंधी दशाएँ तो अत्यंत ही सोचनीय है, जिसका एहसास हम बीड़ी श्रमिकों के मकान देखे बिना नहीं कर सकते है। सम्पूर्ण प्रदेश में ऐसे श्रमिकों का प्रतिशत बहुत ही कम है, जिनके मकान ऐसे स्थानों पर स्थित है, जो चारो ओर गंदी नालियों एवं नालो से घिरे हुए है तथा जिनमें कीचड़, कूडा-करकट, पाखाना, सिल्ट आदि बातों का समावेश होता है। इस प्रकार ऐसे स्थानों से निकलना नरक में से निकलना माना जा सकता है। इन श्रमिकों के मकान सड़क से काफी दूर ऐसे टेढ़े-मेढ़े रास्तों पर स्थित होते है, जहाँ आदमी का पहुँचना बहुत मुश्किल होता है। वर्षा ऋतु में तो यहाँ की स्थिति अत्यंत भयावह हो जाती है तथा इनके मकानों के आसपास का क्षेत्र कीचड़ तथा पानी से भरे एक बड़े डबरे के रूप में परिवर्तित हो जाता है तथा उस पानी व कीचड़ को निकलने का कोई रास्ता नहीं रहता है। वहाँ गुजर-बसर करने वाले कामगार भी कुछ भी कर पाने में असमर्थ रहते है।

8. मनोरंजन, विश्रामालय एवं केन्टीन इत्यादि की सुविधाएँ - यह सुविधाएँ बीड़ी श्रमिकों की कार्यक्षमताओं पर अच्छा असर डालती है और उनकी उत्पादकता बढाती है, अध्ययन के दौरान मैंने पाया कि बीड़ी श्रमिकों को यह सुविधाएँ बिल्कुल भी प्राप्त नहीं होती है।

बीड़ी कामगारों के पारिश्रमिक, कामगार कल्याण योजनाओं और सामाजिक सुरक्षा योजनाओं के उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि मध्य प्रदेश राज्य के बीड़ी उद्योग में संलग्न बीड़ी कामगारों व अन्य कार्यकर्ताओं को बीड़ी एवं सिगार (शर्ते एवं नियोजन) अधिनियम 1966, बीड़ी कामगार कल्याण निधि अधिनियम 1976, बोनस भुगतान अधिनियम, 1965, न्यूनतम वेतन अधिनियम 1961, ठेकेदार कामगार नियमन अधिनियम एवं एबोलेशन अधिनियम, 1970 बाल कामगार समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976 आदि के लागू होने के उपरांत काफी राहत मिली है और उनके शोषण पर काफी हद तक अंकुश लगाया गया है। राज्य सरकार एवं केन्द्र सरकार ने बीड़ी कामगारों के हितार्थ अनेक कल्याणकारी कदम उठाये है इन सबका मिलाजुला प्रभाव यह हुआ है कि बीड़ी कामगारों व अन्य बीड़ी कर्मकारों का जीवन-स्तर ऊँचा उठ गया है। शासकीय और गैर-शासकीय स्तर पर बीड़ी कामगारों के पारिश्रमिक, कामगार कल्याण व सामाजिक सुरक्षा संबंधी जो प्रयास किए गए है उन्हें संतोषजनक नहीं माना जा सकता है, क्योंकि इस दिशा में व्यापक स्तर पर प्रयास किए जाने की काफी गुंजाइश है। शोधकर्ता के मत में जब तक अंतिम बीड़ी कामगार को इनका लाभ नहीं मिलता, तब तक इनकी सफलता को संदेह की दृष्टि से ही देखा जाएगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 डॉ. एस.सी. सक्सेना - श्रम समस्याएँ एवं सामाजिक सुरक्षा, पुस्तक महल, आगरा
2. डॉ. आर.एस. कुलश्रेष्ठ - औद्योगिक अर्थशास्त्र यूनिवर्सल पब्लिकेशन, आगरा
3 श्रीवास्तव एवं त्रिपाठी - औद्योगिक सम्बन्ध एवं श्रम कानून साहित्य भवन, आगरा
4 भगोलीवाला - श्रम अर्थशास्त्र एवं औद्योगिक सम्बन्ध साहित्य भवन आगरा।
5 एस. गिरी अप्पा - बीड़ी रोलिंग इन रूरल डेवलपमेंट
6 वार्षिक प्रशासकीय प्रतिवेदन के विभिन्न अंक श्रम विभाग, म.प्र. शासन, इन्दौर

पश्चिम निमाड में म.प्र. शासन द्वारा संचालित स्वरोजगार योजनाएँ

डॉ. एन.एल. गुप्ता * रणजीत सिंह रावत **

प्रस्तावना – हमारे देश में संचालित रोजगार मूलक एवं हितग्राही मूलक योजनाओं के प्रभावों से ग्रमीण क्षेत्र के बेरोजगार परिवारों को रोजगार के अवसर मिले थे। किन्तु रोजगार चाहने वाले सभी परिवारों की आजीविका चलाने की सुनिश्चितता का अभाव सा बना ही रहा। इन अभावों को दूर करने की दृष्टि से कारगर समाधान ढूँढने के लिए विगत वर्षो से शासन द्वारा विचार किया जा रहा था। सरकार को आवश्यकता थी, कि इस संबंध में कानून बनाए जाए एवं उस योजना को पूरे देश में लागू किया जावे। आज का युवा वर्ग देश की बढ़ती हुई बेरोजगारी से पूर्णत: वाकिफ है रोजगार प्राप्ति के लिए प्रतिस्पर्धा बढ़ रही है। छात्र एवं बेरोजगार युवक बढती हुई होड़ से परेशान होने की जरूरत नहीं है चूंकि स्वरोजगार के रूप में भी एक विकल्प उन उत्साही, संघर्षशील व परिश्रमी युवाओं के लिए खुला है जो या तो कम पढे लिख हैं या किसी कारणवश नौकरी नहीं लग पायी है या बेरोजगार है। इस प्रतियोगी युग में अपने लिए बढ़िया सा रोजगार हासिल करने में स्वयं को असमर्थ महसूस करते हैं। इसमें आपको नौकरी के लिए दर दर भटकना भी नहीं पड़ेगा बल्कि आप अपने स्वयं मालिक होगें। समय की मांग है कि आज देश के हर युवा वर्ग को अपने रोजगार प्राप्ति के लिए स्वयं प्रयास करना होगा इसमें न केवल उसका स्वयं का अपितु देश का हित भी जुडा हुआ है। देश में स्वरोजगार का बड़ा महत्व है क्योंकि स्वरोजगार के माध्यम से हम व्यवसाय या व्यापार करके देश की राष्ट्रीय आय का एक हिस्सा बनते हैं क्योंकि भारत की राष्ट्रीय आय में उद्योग एवं व्यापार का बहुत बड़ा योगदान है।

स्वरोजगार के लाभ :

1. आप अपनी पसंद, रूचि, प्रतिभा, क्षमता के अनुसार व्यवसाय का चयन कर सकते हैं, जिसके लिए आपकी शैक्षणिक योग्यता, पेशेवर योग्यता व आपका पारम्पारिक अनुभव उस व्यवसाय को नई ऊँचाईयां दे सकते हैं व उसे उसके सही स्थान पर ले जाकर अधिकतम लाभ प्राप्तकर नये नये लोगों को रोजगार उपलब्ध करा सकते हैं।
2. वर्तमान आर्थिक उदारीकरण ओर भौतिकवादी संस्कृति ने मानव की जीवन शैली को पूर्ण रूप से बदल दिया है, आज के दौर में प्रत्येक व्यक्ति नई नई वस्तुओं की ओर आकर्षित हो रहा है व हर कीमत पर उसे प्राप्त करना चाहता है। आज लोगों का मोह नई नई वस्तुओं के प्रति बढ़ने के कारण स्वरोजगार का क्षेत्र काफी व्यापक हो गया है जिससे स्वरोजगार का भविष्य उज्जवल प्रतीत होता है।
3. स्वरोजगार के माध्यम से हम केवल स्वयं को ही नहीं अपितु अन्य लोगों को रोजगार देकर व उन बेरोजगार लोगों की प्रतिभा व क्षमता का पूर्ण उपयोग करते हैं, जो बेरोजगार होने की स्थिति में अपने आप को दुर्बल व बेरोजगार समझकर तनावग्रस्त रहते हैं व अपना व अपने परिवार का किसी भी प्रकार से सहयोग नही कर पाते हैं जिससे समाज के एक बहुत बड़े वर्ग का जीवन स्तर गिरता चला जाता है। इस प्रकार हम स्वरोजगार के माध्यम से अन्य लोगों को रोजगार प्रदान कर समाज के प्रति अपने दायित्वों का निर्वहन कर सकते हैं।

पश्चिम निमाड का परिचय एवं अनुसूचित जाति एवं जनजाति की स्थिति – ऐसा अनुमान है कि आर्य एवं अनार्य सभ्यताओं की मिश्रित भूमि होने के कारण यह क्षेत्र 'निमार्य' नाम से जाना जाने लगा जो कि कालांतर में अपभ्रंष होकर 'निमार' एवं फिर 'निमाड़' में परिवर्तित हो गया (निमात्रआधा) एक मतानुसार यह नाम नीम के वृक्षों के कारण पड़ा भारत के उत्तर व दक्षिण प्रदेशों को जोडने वाले प्राकृतिक मार्ग पर बसा यह क्षेत्र सदैव ही महत्वपूर्ण रहा है। इतिहास के विभिन्न कालखण्डों में यह क्षेत्र महेश्वर के हैंहय, मालवा के परमार, असीरगढ़ के अहीर, माण्डू के मुस्लिम शासक, मुगल तथा पेशवा व अन्य मराठा सरदारो – होलकर, शिंदे, पवार के साम्राज्य का हिस्सा रहा है। 1 नवम्बर 1956 को मध्यप्रदेश राज्य के गठन के साथ ही यह जिला 'पश्चिम निमाड़ के रूप में अस्तित्व में आ गया था। कालांतर में प्रशासनिक आवश्यकताओं के कारण दिनांक 25 मई 1998 को पश्चिम निमाड को दो जिलों – खरगोन एवं बड़वानी में विभाजित किया गया।

अनुसूचित जाति एंव जनजाति वर्ग अर्थात समाज वैसे तो विश्व के कई देशों में है किन्तु भारत में इस वर्ग की बहुलता है। भारत की जनसंख्या में 20.14 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति एंव तथा 10.43 प्रतिशत अनुसूचित जाति वर्ग निवास करता है मध्यप्रदेश क्षेत्रफल की दृष्टि से देश का दूसरा बडा राज्य है और इसकी कुल आबादी में अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों का अनुपात 12.61 प्रतिशत एंव 16.85 प्रतिशत है। लगभग इसके 23 प्रतिशत क्षेत्रफल वनों से आच्छादित है। दूर एवं दुर्गम स्थानों में अनुसूचित जनजाति एंव जाति निवास करती है, जो आर्थिक दृष्टि से बहुत पिछडे एंव निर्धनता की रेखा से नीचे जीवन यापन कर रहे हैं। मध्यप्रदेश में निमाड़ की पहचान अनुसूचित जनजाति एंव अनुसूचित जाति बहुल और पिछडे क्षेत्र के रूप में की गई है।

पश्चिमी निमाड के खरगोन एंव बडवानी जिले अनुसूचित जनजाति एंव जाति बहुल जिले के रूप में माने जाते हैं। इसलिए केन्द्रीय विकास नीति के अनुरूप इसके विकास के लिए नियोजित ढंग से प्रयास किये गए हैं उन्हीं में से एक प्रयास औद्योगिक विकास केन्द्र जिला उद्योग एवं व्यापार केन्द्र के रूप में किया है।

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

वर्तमान समय में खरगोन एवं बडवानी जिले के अधिकांश युवक ऐसे हैं जो शिक्षित होते हुये भी बेरोजगार है तथा उन्हें रोजगार की नितांत आवश्यकता है ऐसे में म.प्र. शासन द्वारा कई स्वरोजगार योजनाऐं संचालित की जा रही है इन योजनाओं के द्वारा खरगोन एवं बडवानी जिले के अनुसूचित जनजाति एंव अनुसूचित जाति वर्ग के युवाओं को अधिकतम रोजगार प्राप्त हुआ है। जिससे उनकी आर्थिक सामाजिक स्थिति में काफी सुधार हुआ है तथा उनके जीवन स्तर में भी सुधार हुआ है।

अनुसूचित जाति, जनजाति के उत्थान के लिए शासन द्वारा निम्न योजनाओं का क्रियान्वयन किया जा रहा है :

1. **दीनदयाल स्वरोजगार योजना –** इस योजना का शुभारंभ वाणिज्य एंव उद्योग विभाग मध्यप्रदेश सरकार द्वारा किया गया है। इस योजना के तहत राज्य में युवाओं को स्वरोजगार स्थापित करने के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है।

पात्रता :

1. आवेदक म.प्र. राज्य का मूल निवासी हो ।
2. आयु 18 – 40 वर्ष के बीच
3. 10वीं / आई.टी.आई पास हो ।
4. परिवार की आय 1.50 लाख से कम हो
5. रोजगार कार्यालय में पंजीकृत हो।

2. **मुख्यमंत्री युवा स्वरोजगार योजना –** हमारे देश की अंधिकाश आबादी बेरोजगार है जिनमें शिक्षित एवं अशिक्षित बेरोजगारी सम्मिलित है। बढती आबादी के कारण बेरोजगारी भी बढ रही है। सरकार इस समस्या से निजात पाने के लिये तरह तरह की योजनाएं चला रही है। ऐसा ही एक कदम मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री ने उठाया है। मुख्यमंत्री युवा स्वरोजगार योजना उन युवाओं को एक बेहतरीन अवसर देती है जो कि अपना व्यवसाय चलाना चाहते हैं इस योजना के तहत सरकार ऐसे लोगों को आर्थिक सहायता प्रदान करती हैं

पात्रता :

1. आवेदक म.प्र. का मूल निवासी है।
2. आवेदक ने कम से कम पांचवी पास की हो।
3. आवेदक की आयु 18–45 वर्ष होनी चाहिए
4. वह किसी भी बैंक में डिफाल्टर नहीं होना चाहिए।
5. आवेदक पहले से इस तरह की योजना का लाभ ना उठा रहा हो।

3. **रानी दुर्गावती स्वरोजगार योजना –** जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र द्वारा रानी दुर्गावती स्वरोजगार योजना के अंतर्गत अनुसूचित जाति एवं जनजाति वर्ग के शिक्षित बेरोजगार युवाओं को स्वंय का रोजगार लगाने के लिए विभिन्न बैंकों के माध्यम से ऋण उपलब्ध कराया जाता है।

पात्रता :

1. वार्षिक आय 3 लाख से अधिक न हो।
2. आयु 18–50 वर्ष के बीच हो।
3. आवेदक अनु. जाति/ जनजाति का हो।
4. कम से कम 5वीं पास हो ।
5. आवेदक म.प्र. का मूल निवासी है।

म.प्र. राज्य सहकारी अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम मर्यादित द्वारा संचालित योजनाऐं :–

1. **मुख्यमंत्री कौशल विकास योजना –** अनुसूचित जाति वर्ग के शिक्षित बेरोजगार युवकों को विशेष गुणवत्ता युक्त प्रशिक्षण कार्यक्रमों/ विशेष कौशल उन्नयन के माध्यम से स्वरोजगार स्थापित करने एवं शासकीय व निजी उपक्रमों में रोजगार के अवसरों की उपलब्धता सुनिश्चित करने हेतु वर्ष 2012–13 से मुख्यमंत्री कौशल विकास योजना संचालित की जा रही है।

2. **अन्त्योदय रोजगार योजना –** मध्यपदेश राज्य व्यवसायी विकास निगम द्वारा 1976 में यह कार्यक्रम प्रारंभ किया गया । योजना का उद्देश्य गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले अनुसूचित जाति वर्ग के व्यक्तियों को स्वरोजगार स्थापित करने हेतु इकाई लागत अनुसार बैंक ऋण तथा निगम द्वारा प्रदत्त अनुदान की सहायता से सम्पत्ति अर्जित करने में समर्थ करना है।

3. **समृद्धि योजना –** अनुसूचित जाति वर्ग की महिलाओं की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए महिला समृद्धि योजना अक्टूबर 2003 से प्रारंभ की गई है।

4. **निशक्तजनों (विकलांगों) के लिए संचालित स्वरोजगार योजनाऐं –** अनुसूचित जाति के शारीरिक मानसिक विकलांग लोगों के लिए जिला अत्यावंसायी सहकारी विकास समिति अथवा जिला उद्योग केन्द्र में स्वरोजगार योजनाऍ संचालित की जा रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. स्वर्ण जयंती शहरी रोजगार योजना मार्गदर्शिका वर्ष 2009 नगरीय कल्याण संचालनालय मध्यप्रदेश भोपाल।
2. आदिम जाति, अनुसूचित जाति एवं पिछड़ा वर्ग कल्याण विभाग की योजनाओं का संक्षिप्त परिचय वर्ष 2008 मध्यप्रदेश शासन आदिम जाति अनुसूचित जाति एंव पिछड़ा वर्ग सांख्यिकीय विभाग।
3. म.प्र. का आर्थिक सर्वेक्षण वर्ष 2010–11 आर्थिक एवं सांख्यिकीय संचालनालय, मध्यप्रदेश।
4. म.प्र. में आदिवासी विकास के पॉच दशक अक्टूबर 2008 म.प्र. शासन आदिम जाति एवं अनुसूचित जाति कल्याण विभाग।
5. मार्गदर्शिका – आर्थिक विकास योजनाऍ – म.प्र. राज्य अनुसूचित जाति वित एवं विकास निगम मर्यादित भोपाल।
6. स्वयं का रोजगार – शासन की रोजगारोन्मुखी योजनाऍ जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र इंदौर ।

****

शहरों के आर्थिक विकास में स्थानीय कार्यपालिका नगर निगम की भूमिका का अध्ययन (इन्दौर शहर के विशेष संदर्भ में)

वैभव शर्मा *

प्रस्तावना - शोध कार्य का परिचय एवं उद्देश्य -किसी भी राष्ट्र के विकास का आधार सुदृढ़ एवं नियोजित अधोसंरचना है। राष्ट्रीय आय में औद्योगिक एवं व्यवसायिक इकाईयों के योगदान के फलस्वरूप शहरों की महत्ता भी बढ़ रही है। विकास की होड़ व सर्वश्रेष्ठता का चरम प्राप्त करने के लिये शहर भी संसाधनों व अधोसंरचना की अपर्याप्तता को दूर करने का भरसक प्रयास कर रहे हैं।ऐसे शहरों में सुनियोजित विकास एवं दूरदृष्टि का होना अति आवश्यक है। इस हेतु निर्दिष्ट नियंत्रणकारी संस्थाएँ ही महती भूमिका का निर्वहन कर सकती है।

इन्दौर शहर के विकास में इस भूमिका का बखूबी निर्वहन कर रही है - इन्दौर नगर निगम। इन्दौर नगर निगम प्रत्यक्ष रूप से स्थानीय निवासियों के जीवन की मुख्य धारा को प्रभावित करती है तथा मानव को अपनी उच्चतम सेवाएँ प्रदान कर रही है। समय-समय पर विभिन्न योजनाओं द्वारा चहुँमुखी विकास का प्रयास किया जा रहा है। विकास कार्यों को देखते हुए एक प्रश्न स्वाभाविक रूप से उपस्थित होता है कि इन्दौर नगर निगम द्वारा किए जा रहे कार्यों का शहरी विकास में क्या योगदान है ? क्या जनसंख्या के एवं औद्योगिक-व्यावसायिक विकास के अनुरूप विकास के प्रयास पर्याप्त है ? इन्हीं प्रश्नों पर आधारित शोध का मुख्य उद्देश्य है -**इन्दौर शहर के विकास में स्थानीय कार्यपालिका नगर निगम की भूमिका का अध्ययन करना।**

परिकल्पना - स्थानीय कार्यपालिका इन्दौर नगर निगम, म.प्र. की औद्योगिक राजधानी इन्दौर शहर के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर रही है।

इन्दौर की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि - मालवांचल में बसा इन्दौर, बेहतर जलवायु, उद्यमशीलता और नियोजित विकास के लिये जाना जाता है। शहर की उत्पत्ति का कोई प्रामाणिक इतिहास उपलब्ध नहीं है फिर भी आमतौर पर माना जाता है कि होलकर शासक मल्हार राव होलकर ने अठारहवीं शताब्दी के मध्यकाल में इसे बसाया था। सन् 1741 में इन्द्रेश्वर मंदिर की स्थापना हुई। उसी आधार पर इसका नाम इन्द्रपुर फिर इंदूर और फिर इन्दौर हुआ। इन्दौर को सारी दुनिया में खास पहचान दी होलकर शासक देवी अहिल्याबाई ने। उनके शासनकाल सन् 1767 से लेकर सन् 1795 के दौरान ही इसे समृद्ध शहर का दर्जा मिला। आजादी के बाद इन्दौर की विकास यात्रा में सबसे बड़ा योगदान दिया नर्मदा जल परियोजना ने।

इन्दौर नगर निगम की स्थापना, परिचय एवं इतिहास - इन्दौर नगर में नगर पालिका निगम की स्थापना मूलत: 1868 में तत्कालीन होलकर वंश के शासकों ने की थी, इसका कार्य सन् 1909 में म्युनिसिपल एक्ट प्रभावशील होने तक इन्दौर डिस्ट्रक्ट म्युनिसिपल्टीज एक्ट के अंतर्गत संपादित होता रहा है एवं सन् 1909 में म्युनिसिपल एक्ट प्रभावशील होने के पश्चात् इस एक्ट के अंतर्गत समय-समय पर हुए संशोधनों सहित उक्त नगर पालिका का कार्य दिनांक 25 जनवरी 1954 तक संचालित होता रहा, तत्पश्चात् दिनांक 26.01.1955 में मध्यभारत नगर पालिका विधान 1954 प्रभावशील होने पर उक्त दिनांक से इस विधान के अंतर्गत नगर पालिका अपना कार्य संचालित करती रही और अंतत: अक्टूबर 1956 में मध्यभारत नगर पालिका निगम में परिवर्तित हुई है। स्वायत्त शासन क्षेत्र में तो उल्लेखनीय है कि नव-निर्मित मध्यप्रदेश के प्रथम नगर इन्दौर ने नगर निगम का रूप धारण कर प्रवेश किया।

विकास के संबंध में इन्दौर नगर निगम द्वारा किए जा रहे कार्य - सार्वजनिक सड़कों पर प्रकाश व्यवस्था, सार्वजनिक निर्माण कार्य, मल और कूड़ा-करकट का निवारण, अग्निशमन सेवा, बीमारियों से रोकथाम, जल आपूर्ति, नगरीय उद्यान, सभागृह, स्टेडियम, पुस्तकालय, सराय का निर्माण, शैक्षणिक संस्थाओं का विकास एवं अनुदान, हानि पहुँचाने वाले जानवरों को रोकना एवं नष्ट करना, वाणिज्यिक उपक्रम एवं सार्वजनिक उपयोगिता, रासायनिक या जैविक प्रयोगशाला, तरण पुष्कर, स्नानगृह और कपड़े धोने की जगहों का निर्माण।

विकास के संबंध में नगर निगम की प्रमुख योजनाओं का संक्षिप्त विवरण :

1. शहरी जलप्रदाय एवं पर्यावरण सुधार परियोजना के अंतर्गत संपूर्ण शहर में जलप्रदाय करने का लक्ष्य।
2. इन्दौर सीवरेज योजना के तहत संपूर्ण शहर में मल व्यवस्था के सुचारू व्यवस्थीकरण लक्ष्य। प्रथम चरण पूर्ण होकर द्वितीय चरण शुरू।
3. शहरी मिशन योजना के अंतर्गत गरीबों की आवास योजना।
4. यातायात में निरन्तर वृद्धि से उत्पन्न समस्या के समाधान हेतु मल्टीलेवल पार्किंग परियोजना।
5. जवाहरलाल नेहरू शहरी नवीनीकरण मिशन के तहत यशवंत सागर जलग्रहण क्षमता वृद्धि।
6. पर्यावरण सुधार एवं पूर्वजों की याद में लगाए जाने वाले वृक्षों के लिए पितृ-पर्वत योजना एवं वृक्ष मित्र योजना।
7. शहरी मिशन योजना के अंतर्गत हॉकर्स झोन निर्माण व गरीब क्षेत्रों में अधोसंरचना विकास योजना।
8. निगम के करों/शुल्कों को अग्रिम जमा किए जाने वाले नागरिकों को पुरस्कार व छूट का लाभ। कर अपवंचन करदाताओं पर कठोर कार्यवाही।
9. मुख्यमंत्री अधोसंरचना विकास कार्य के तहत सड़क, पुल-पुलिया एवं अन्य विकास कार्यों की योजना।
10. रिवर साइड कॉरिडोर योजना।

* सहायक प्राध्यापक, आई.पी.एस. एकेडमी ,इन्दौर (म.प्र.) भारत

योजनाओं का प्रभाव – इन्दौर मध्य भारत की फ्यूचर सिटी है, जिसमें नगर निगम अपने प्रयासों व योजनाओं से रंग भर रहा है। यह निगम के ही प्रयासों का प्रतिफल है कि वहाँ काफी बड़ी तादाद में हर साल युवा वर्ग इस शहर में आकर बस रहा है। शहरी अधोसंरचना पहले से बेहतर हुई है। पेयजल, सड़क, सीवरेज, ठोस अपशिष्ट प्रबंधन आदि समस्याएँ मौजूद है किन्तु इनकी भयावहता निश्चित ही कम हुई है। शहर एजूकेशन हब बनता जा रहा है। स्वास्थ्य के क्षेत्र में सारी सुविधाएँ यहाँ जुटाई जा चुकी है। शहर में बड़ी-बड़ी इमारतों व मॉल्स की कतारें लग गयी है। शहर का रिटेल व्यवसाय बढ़ता ही जा रहा है। करीब 20,000 व्यापारियों व 60,000 कर्मचारियों को यह क्षेत्र रोजगार मुहैया करवा रहा है। देशभर के ख्यातिमान बिल्डर्स और डेवलेपर की निगाहें इन्दौर पर है। टीसीएस और इन्फोसिस जैसी बड़ी कंपनियों को इन्दौर की ओर आकर्षित करने में शहर की तमाम खूबियों के साथ ही नियोजित विकास महत्वपूर्ण कारण साबित हुआ है।

कभी छोटे से शहर की पहचान रखने वाला इन्दौर अब तेजी से विकास कर रहा है। सड़कों के फैलाव के साथ हर कोने में आधारभूत सुविधाएँ जुटाई जा रही है जिसमें नगर निगम सुनियोजित विकास के लिए भरपूर प्रयास कर रही है।

सारणी – 1 : इन्दौर नगर निगम की कुल व्यय में से विकास हेतु किये गये व्ययों का विवरण

(राशि लाखों में)

वर्ष	कुल व्यय (आगम एवं पूँजीगत)	विकास कार्य हेतु किये व्यय(आगम एवं पूँजीगत)	विकास व्ययों का कुल व्यय में हिस्सा (%)
2006-07	33221.08	23960.02	72.12%
2007-08	46800.70	40320.39	86.15%
2008-09	56829.73	50119.29	88.19%
2009-10	64711.27	55861.21	86.32%
2010-11	62672.75	50966.81	81.32%

स्त्रोत:- नगर निगम बजट 2006-07 से 2010-11

उपरोक्त तालिका इन्दौर नगर निगम के कुल व्ययों में से विकास कार्यों पर किये गये व्ययों का ब्यौरा देती है। वर्ष 2006-07 में विकास व्ययों का कुल व्यय में 72.12 हिस्सा था जो बढ़ते हुए 2010-11 में 81.32 हो गया। व्ययों में होती उत्तरोत्तर वृद्धि इस बात की ओर संकेत देती है कि निगम ने अपने अधिकांश व्यय विकास एवं अधोसंरचना निर्माण पर ही किए हैं।

उपसंहार – इन्दौर शहर के आर्थिक विकास में नगर निगम की भूमिका के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि गतवर्षो में नगर निगम ने शहरी विकास के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। किसी भी शहर को विकास के पथ पर तभी आगे बढ़ाया जा सकता है, जब वहाँ सुदृढ़ अधोसंरचना की उपस्थिति हो। शहरी अधोसंरचना का विकास करने का नगर निगम ने पूर्ण प्रयास किया है। सड़के, फ्लायओवर, पुल, जलप्रदाय आदि कार्यो के साथ शिक्षा, प्रशासन एवं स्वास्थ्य सुविधाओं के विकास में भी योगदान दिया है। इन्दौर नगर निगम भारत के प्रमुख महानगर निगमों में अपना प्रमुख स्थान बना पाए एवं स्वच्छ व सुन्दर शहर की कल्पना साकार हो, इसके लिए जनता जनार्दन एवं शासन दोनों का तन-मन-धन से सहयोग एवं सहभागिता अनिवार्य है।

परिकल्पना की पुष्टि – स्थानीय कार्यपालिका इन्दौर नगर निगम म.प्र. की औद्योगिक राजधानी इन्दौर शहर के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर रही है।

नगर निगम के क्रियाकलापों, आय-व्यय एवं विकास कार्यों के माध्यम से यह परिकल्पना संतुष्ट होती है।

निष्कर्ष एवं औचित्य – प्रस्तुत शोध कार्य इन्दौर शहर के आर्थिक विकास में नगर निगम की भूमिका का अध्ययन करने के उद्देश्य से प्रारंभ किया गया था। नगर निगम की विभिन्न नीतियों एवं कार्यों का अध्ययन करने के उपरांत यह बात तो स्पष्ट होती है कि शहर के आर्थिक विकास में निगम ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है और निभाता आ रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मिश्रा एवं पुरी – भारतीय अर्थव्यवस्था,हिमालया पब्लिशिंग हाउस, मुम्बई
2. आर. के. लेखी एवं – विकास का अर्थशास्त्र
   एस. एल. अग्रवाल,कल्याणी पब्लिशर्ज, नई दिल्ली
3. पी. सी. जैन – म.प्र. नगर पालिक अधिनियम
4. www.imcindore.org
6. www.indorecity.net/history.html
7. इन्दौर नगर निगम वार्षिक बजट प्रतिवेदन

****

किसान क्रेडिट कार्ड योजना का मूल्यांकन (देवास जिले के संदर्भ में)

निलेश कुमार टेलर * डॉ. राकेश महाजन **

प्रस्तावना – भारत में कृषि का राष्ट्रीय आय में सबसे अधिक योगदान रहता है। सरकारी आँकडों के अनुसार 2003-04 में देश की राष्ट्रीय आय में कृषि एवं उससे सम्बन्धित क्षेत्र का हिस्सा 27 प्रतिशत था। अधिकांश महत्वपूर्ण भारतीय उद्योग जैसे सूती वस्त्र, चीनी, चाय, कॉफी, रबड़, वनस्पति घी, तेल, चावल, आटा, दालें सभी के लिए कच्चा माल कृषि से ही प्राप्त होता है। भारत के कुल निर्यात का लगभग 35 प्रतिशत भाग कृषि कार्य से संबंधित होता है। देश के लगभग 37 करोड़ पशुओं का चारा भी कृषि से ही प्राप्त होता है, परन्तु फिर भी भारत का कृषक आजादी और हरित क्रान्ति के बाद भी गरीबी के महासमुद्र में डूबा है और साहूकारो, बैंकों के ऋण के सहारे यह कभी इस समुद्र से नही निकल पाया है। कृषकों की निर्धनता, पैतृक, ऋण, भूमि पर जनसंख्या के भार में वृद्धि, प्राकृतिक आपदाएँ, सामाजिक एवं धार्मिक रीति-रिवाजों के फलस्वरूप होने वाले अनुत्पादक व्यय, साहूकारो की कुरीतियाँ, कृषकों की मुकग्रेबाजी की प्रवृत्ति, खेती का पिछड़ापन, वैकल्पिक अथवा पूरक आय-साधनों का अभाव, कृषि उत्पादन हेतु कृषि उत्पादों, कृषि उपकरणों का मूल्य स्तर का बढना, पशुओं की मृत्यु दोषपूर्ण विपणन प्रणाली के कारण कृषकों पर लगातार ऋण की राशि बढ़ रही है। इसके कारण वह सदैव गरीबी में ही जीवन जीने को मजबूर रहा है। दूसरी तरफ इन समस्याओं सें उभरने के लिए वह साहूकारो और बैंको सें ऋण लेता है और फिर ऋणग्रस्तता के चक्रव्यूह में घिर जाता है।

ग्रामीण (कृषक) ऋणग्रस्तता की वर्तमान स्थिति – भारतीय न्यादर्श सर्वेक्षण संगठन नें 59वें दौर के सर्वेक्षण (जनवरी-दिसम्बर 2003) में कृषकों की ऋणग्रस्तता का अनुमान लगाया है। सर्वेक्षण के अनुसार 48.6 प्रतिशत कृषक परिवार ऋणग्रस्त थे। ऋणग्रस्त कृषकों की कुल संख्या में से 61 प्रतिशत के पास एक हैक्टेअर से कम जोत थी। कुछ बकाया राषि में से 41.6 प्रतिशत कृषि सें भिन्न कार्यो के लिये लिया गया। कुल कृषि का 30.6 प्रतिशत भाग पूँजी व्यय के लिए था तथा 27.8 प्रतिशत भाग कृषि संबंधी कार्यो में चालू व्यय के लिए था। बकाया राशि का 57.7 प्रतिशत संस्थागत अभिकरणों द्वारा प्रदान किया गया तथा बाकी 42.3 प्रतिशत साहूकारो, व्यापारियों, रिश्तेदारो और मित्रों द्वारा प्रदान किया गया। वर्ष 2003 में गैर-संस्थागत चैनलो ने कृषकों को 48,000 करोड़ रूपए के ऋण प्रदान किए और उसमें सें 18,000 करोड़ रूपए पर 30 प्रतिशत प्रतिवर्ष या इससे अधिक की ब्याज दर लगाई गयी।

इन समस्याओं को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार और भारतीय रिजर्व बैंक ने कई महत्वपूर्ण योजनाएँ लागू की जिससे कृषकों को सुविधा हो, वर्तमान समय में देश के कुल कृषि ऋण वितरण में सहकारी साख संस्थाओं का हिस्सा 17.21 प्रतिशत, वाणिज्यिक बैंको का हिस्सा 72 प्रतिशत एवं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का हिस्सा 10.6 प्रतिशत है। इसके पश्चात भी कृषक ऋणग्रस्तता के कारण सदैव आर्थिक रूप सें परेशान रहा है। कृषकों की इन समस्याओं को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार नें दिसम्बर 1997 में श्री आर.वी.गुप्ता. को प्रमुख बनाकर एक समिति का गठन किया। इस समिति नें अपनी रिपोर्ट 1998 में भारत सरकार को सौंपी जिसमें किसान क्रेडिट कार्ड योजना हेतु सिफारिश की गई थी। इसके पश्चात भारतीय रिजर्व बैंक एवं नाबार्ड (नेशनल बैंक ऑफ एग्रीकल्चर एण्ड रूलर डेव्हलपमेंट) नें सयुंक्त रूप सें अगस्त 1998 में किसान क्रेडिट कार्ड योजना प्रारम्भ की।

किसान क्रेडिट कार्ड योजना – किसान क्रेडिट कार्ड योजना एक ऐसी योजना है, जिसमें कृषकों को उनकी भूमि के अनुपात में अधिकतम 3 लाख रूपयें अल्पकालीन अवधि (6माह) हेतु कृषि कार्य के लिए ऋण के रूप में प्रदान किए जाते है जिससे कृषक अपनी अल्पकालीन वित की आवश्यकता की पूर्ति कर सके। कृषक ऋण की राषि रासायनिक खाद, बीज फसलो के उत्पादन की बढ़ोतरी, रखरखाव, कृषि यंत्र आदि पर खर्च कर सकता है। सामान्यत: ऋण की ब्याज दर 11 प्रतिशत वार्षिक है जो कि परिवर्तशील है। किसान क्रेडिट कार्ड योजना में ऋण प्राप्त करने वाले कृषक को एक पास बुक प्रदान की जाती है जिसमें कृषक के संबंध में एवं ऋण राशि के संबंध में पूर्ण जानकारी होती है इसे प्रत्येक 3 वर्ष में नवीनीकरण करवाना पड़ता है। 1 अप्रैल 2009 सें इस योजना में किसान क्रेडिट कार्ड धारक कृषक का 2रू.67 पैसे में 50,000रू. का दुर्घटना एवं मुत्युबीमा भी प्रारम्भ हो चुका है। मार्च 2011 तक देश में 10169 लाख किसान क्रेडिट कार्ड वितरित किए जा चुके थे। जबकि मध्यप्रदेश में 627 लाख एवं देवास जिले में 7.50 लाख किसान क्रेडिट कार्ड वितरित किए जा चुके थे।

पात्रता – सभी कृषक जो उत्पादन की पात्रता रखते है एवं वह भूमिधारी हो, इस योजना के अंतर्गत ऋण प्राप्त कर सकते है।

किसान क्रेडिट कार्ड जारी करने के उद्देश्य – किसान क्रेडिट कार्य योजना का उद्देश्य बैकिंग व्यवस्था सें कृषको को समूचित और यथा समय सरल एवं आसान तरीके से आर्थिक सहायता दिलाना है ताकि कृषि एवं उससे संबंधित आवश्यक उपकरणों की खरीद के लिए उनके वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति हो सकें। किसान क्रेडिट कार्ड कृषको को उनकी कृषि संबंधी आवश्यकताओं को बैंकिंग प्रणाली द्वारा पुरा करवाता है तथा उन्हें समय पर एवं आवश्यकतानुसार जरूरतों को पूरा करने में मदद करता है। किसान क्रेडिट कार्ड का मुख्य उद्देश्य कृषकों को साहूकारो के चंगुल सें मुक्ति दिलाना भी है। इसी तरह बैंक भी चाहता है कि उसके द्वारा दिया गया

* शोधार्थी (वाणिज्य) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** विभागाध्यक्ष (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ, जिला देवास (म.प्र.) भारत

ऋण उसे समय पर वसूल हो जाए, यह योजना इस कार्य को करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है क्योंकि किसान क्रेडिट कार्ड के द्वारा दिए गए ऋण की समयावधि 6 माह होती है और कृषक को 6 माह सें पिछले ऋण का भुगतान करने पर ही अगले ऋण प्राप्त होता है, जो कि बैंक के लिए भी एक सुविधाजनक कार्य है। कृषकों को सुविधा प्रदान करना, आवश्यकता एवं प्राकृतिक आपदाओं के समय कृषकों को मदद करना, नाम मात्र की ब्याज दर पर ऋण प्रदान करना इस योजना का मुख्य उद्देश्य है।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध हेतु शोधार्थी ने देवास जिले की 6 तहसीलो से जनसंख्या दूरी, क्षेत्र के आधार पर 10–10 कृषकों जो कि किसान क्रेडिट कार्ड धारक है अर्थात 60 कृषकों, का चयन किया, इसके अतिरिक्त जिला सहकारी बैंक देवास, जिला क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक (नर्मदा झाबुआ बैंक) एवं जिला वाणिज्यिक बैंक (स्टेट बैंक ऑफ इंडिया एवं बैंक ऑफ इंडिया) से जानकारी एकत्र की गई।

किसान क्रेडिट कार्ड योजना का मूल्यांकन – देवास जिले में जिला सहकारी बैंक द्वार वर्ष 2010–11 तक 74087 जिला क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक द्वारा 84329, जिला वाणिज्यिक बैंक द्वारा 92375 किसान क्रेडिट कार्ड वितरित किए जा चुके थे। सभी बैंको में वर्ष 2005–06 से वर्ष 2010–11 तक प्रति किसान क्रेडिट कार्ड पर औसत रूप सें जिला सहकारी बैंक द्वारा 37000रू. जिला क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक द्वारा 41000रू एवं जिला वाणिज्यिक बैंक द्वारा 48000रू. राषि वितरित की गई। बैंको की ऋण वसूली की स्थिति देखे तो वर्ष 2005–06 सें वर्ष 2010–11 तक किसान
क्रेडिट कार्ड ऋण राशि में से 61 प्रतिशत राषि जिला सहकारी बैंक द्वारा 53 प्रतिशत राशि जिला क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक द्वारा 55 प्रतिशत जिला वाणिज्यिक बैंक द्वारा वसूली की गई। 53 प्रतिशत कृषक जिला सहकारी बैंक सें 28 प्रतिशत कृषक जिला क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक सें एवं 19 प्रतिशत कृषक जिला वाणिज्यिक बैंक सें जुडना पंसद करते है। 88 प्रतिशत कृषकों का मानना है कि किसान क्रेडिट कार्ड योजना सें जुडने के पश्चात उन्हें लाभ हुआ है। 77 प्रतिशत कृषक ऋण समय पर पुनर्भुगतान करते है। किसान क्रेडिट कार्ड धारक होने के पश्चात 70 प्रतिशत कृषक साहूकारो के चंगुल सें मुक्त हुए है। 75 प्रतिशत कृषक ऋण राषि का उपयोग कृषि कार्य पर ही करते है। 88 प्रतिशत कृषकों का जीवन स्तर बेहतर हुआ, 90 प्रतिशत कृषकों का आर्थिक विकास एवं सामाजिक इस योजना के कारण ही हुआ है।

निष्कर्ष – किसान क्रेडिट कार्ड योजना जिन उद्देश्यों को लेकर प्रारम्भ की गई थी उसका देवास जिले में प्रभाव स्पष्ट रूप सें देखा जा सकता है। कृषकों को साहूकारो के चंगुल सें मुक्ति मिलना, कृषकों का सामाजिक एवं आर्थिक विकास होगा। इस बात का स्पष्ट संकेत देते है कि यह योजना सफलता की ओर अग्रसर हो रही है एवं अपने उद्देश्यों को प्राप्त कर रही है। अंत में कहा जा सकता है कि किसान क्रेडिट कार्ड योजना देवास जिले के कृषकों का आर्थिक एवं सामाजिक विकास करने में अहम भूमिका निभा रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. मिश्र जयप्रकाश 'कृषि अर्थव्यवस्था'
2. मुख्य कार्यालय जिला सहकारी बैंक देवास
3. मुख्य कार्यालय जिला क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक देवास
4. मुख्य कार्यालय जिला वाणिज्यिक बैंक देवास
5. नाबार्ड के वार्षिक प्रतिवेदन वर्ष 2011

****

जवाहरलाल नेहरू के आर्थिक चिन्तन के विविध आयाम

डॉ. प्रवीण ओझा *

प्रस्तावना – पण्डित जवाहरलाल नेहरू भारत ही नहीं वरन विश्वस्तर के नेता थे। वे सच्चे अर्थो में जननायक एवं लोकनायक थे। 30 जनवरी 1948 में महात्मा गाँधी की मृत्यु के पश्चात वे भारत के सर्वोच्च नेता हो गए थे। स्वतंत्रता उपरान्त भारत में तीन राजनेताओं का विशिष्ट प्रभाव तत्कालीन राजनीति में दृष्टिगोचर होता है, जिसमें महात्मा गाँधी ने भारत को स्वतंत्रता दिलवाने में विशेष भूमिका का निर्वाह किया। पण्डित नेहरू ने भारत की अर्थव्यवस्था एवं विदेश नीति को संवारा तथा सरदार पटेल ने देश का प्रशासकीय एवं राष्ट्रीय एकीकरण का कठिन कार्य पूर्ण किया। पण्डित नेहरू भारत के प्रथम प्रधानमंत्री थे। नव स्वतंत्र भारत की जीर्ण-शीर्ण अर्थव्यवस्था को विकास के सूत्र में पिरोने का कार्य उस समय अत्यंत जटिल था। एक देशोपयोगी आर्थिक नीति का संचयन एवं पल्लवन उन्हीं का प्रयास था, जो एक आर्थिक दृष्टि से मजबूत राष्ट्र की आधारशिला तैयार करने में सफल रहा। उनकी आर्थिक नीति एवं आर्थिक विचारों का एक-एक बिन्दु राष्ट्रीय आवश्यकताओं के आधार पर चयनित था। उनकी आर्थिक नीति गाँधी जी के आर्थिक कल्याण की भावना एवं समाजवादी विचारधारा पर आधारित थी। वे भारत में समाजवादी समाज को स्थापित करने हेतु प्रयत्नशील रहे जिससे सभी को आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त हो। स्वतंत्र भारत में उनकी आर्थिक नीतियाँ इसी तथ्य को प्रकाशित करती है। उनके बारे में गाँधी जी ने कहा था कि ''उनके हाथों में राष्ट्र सुरक्षित है। मेरी मृत्यु के बाद वे मेरी भाषा बोलेंगे।' उन्होंने आर्थिक दृष्टिकोण से सुदृढ़ भारत के निर्माण हेतु व्यापक दृष्टिकोण अपनाया।

पण्डित जवाहरलाल नेहरू की आर्थिक नीतियों पर सन् 1920 में भारतीय निर्धनता को देखकर हुई अुनमति का अत्यधिक प्रभाव पड़ा। उन्हीं के शब्दों में – ''वो पुरूष एवं स्त्रियाँ चिथड़े लपेटे हुए थे, किन्तु उनके चेहरे उत्तेजना से भरे हुए थे, उनकी आँखे चमक रही थीं और वे ऐसी अद्भुत घटनाओं के घटित होने की आशा रखते हुए मालूम हो रहे थे मानो कोई चमत्कार हो, जो उनकी लम्बे समय की दुर्दशा को दूर कर दे। उनके हमारे प्रति विश्वास को देखकर मै बेचैन हो उठा और मेरे अन्दर एक नया उत्तरदायित्व भर उठा।''[1] यही उत्तरदायित्व का भाव उन्हें समाजवादी विचारधारा के निकट ले जाता है। उनके आर्थिक विचारों पर कार्ल मार्क्स एवं गाँधी जी के विचारों का गहरा प्रभाव पड़ा।[2] उन्होने मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाया। इसी कारण उनके प्रधान मंत्रित्व काल में सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र दोनों को अपनाया। वे नियोजित अर्थव्यवस्था एवं भारी उद्योगों के माध्यम से देश का आर्थिक विकास करने के पक्षधर थे। सन् 1948 में उनके नेतृत्व में भारत सरकार ने प्रथम औद्योगिक नीति की घोषणा की जिसमें पूंजीवाद एवं समाजवाद का सुन्दर समन्वय किया गया। इसमें उन्होंने राष्ट्रीयकरण की नीति को भी स्पष्ट किया। जिसके अनुसार समस्त उद्योगों का राष्ट्रीयकरण नहीं करना था वरन् मात्र आधारभूत उद्योगों के ही राष्ट्रीयकरण की योजना थी। नवीनतम आयामों से युक्त उनकी आर्थिक नीति के विशिष्ट तथ्यों पर प्रकाश डालना समीचीन होगा। वे साहसिक और खोज की मनोवृत्ति लेकर इंग्लैण्ड पढ़ने गये थे लेकिन वे स्वदेश भारत की खोज के लिए लौटे।[3] इसी कारण उनकी आर्थिक नीति में भारतीय एवं विदेशी प्रभावों की झलक दिखाई देती हैं।

1. **समाजवादी अर्थव्यवस्था –** वे भारत में बिना हिंसक क्रान्ति के समाजवादी अर्थव्यवस्था का विकास करने के पक्षधर थे। उनके अनुसार ''जब मैं समाजवाद शब्द का प्रयोग करता हूँ, तो केवल मानवीय आधार पर नहीं अपितु वैज्ञानिक, आर्थिक अर्थ में करता हूँ। मेरी दृष्टि में निर्धनता, चारों ओर फैली बेरोजगारी, भारतीय जनता का अंध:पतन तथा दासता को समाप्त करने का मार्ग समाजवाद के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार संभव नहीं है।' उनका प्रयास था कि सब लोग योग्यता और क्षमता में समान नहीं हो सकते लेकिन सारी बात का तत्व यह है कि लोगों को अवसर की समानता प्राप्त होनी चाहिए।[4] उनका अन्तिम उद्देश्य धनी एवं निर्धन व्यक्तियों तथा अवसर सम्पन्न लोगों और कम या बिल्कुल ही नहीं अवसर पाने वाले लोगों के बीच के अन्तर को समाप्त करना था।[5] वे जानते थे कि धीरे-धीरे ही यह कार्य हो सकता है। उनके अनुसार हमें यह महसूस करना चाहिए कि भारत में जिस विधि से हम समाजवाद लाने का प्रयत्न कर रहे हैं, उसमें समय लगना स्वाभाविक है।

2. **नियोजित अर्थव्यवस्था –** देश के तीव्र आर्थिक विकास हेतु उन्होंने नियोजित अर्थव्यवस्था को आधार बनाया। इसी उद्देश्य से 1950 में योजना आयोग स्थापित किया गया, जिसने भारत के आर्थिक विकास के लिए नेहरू के जीवन काल में तीन पंचवर्षीय योजनाएँ बनायी और आज 12वी पंचवर्षीय योजना भारत में संचालित है। यह आयोग देश के संसाधनों का अनुमान लगाकर तथा आवश्यकताओं को सामने रखकर विभिन्न योजनाएँ बनाकर आर्थिक विकास के महती दायित्व की पूर्ति कर रहा है। इससे गरीबी निवारण, जीवन स्तर में वृद्धि, आर्थिक न्याय, न्यूनतम मजदूरी के साथ आर्थिक विकास के लक्ष्य को पूर्ण किया गया। विभिन्न अर्थविदों ने भारत के तीव्र आर्थिक विकास का मूल नियोजन को ही माना है जो पण्डित नेहरू की बड़ी देन रही है।

3. **औद्योगिकीकरण –** नव स्वतंत्र भारत के तीव्रगति के आर्थिक विकास की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए पण्डित नेहरू ने औद्योगिकरण पर बल दिया। उन्होंने बड़े एवं भारी उद्योगों का समर्थन वैज्ञानिक प्रगति एवं उन्नति के परिप्रेक्ष्य में किया एवं इन्हें देश के आर्थिक विकास हेतु अनिवार्य

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (वाणिज्य) डॉ. भगवत सहाय शासकीय महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

बताया। स्वयं उनके ही शब्दों में –''बड़े कारखानों के बिना भारत में यौगिक स्तर पर वास्तविक कल्याण अथवा प्रगति नहीं हो सकती है। मैं तो यह भी कहूँगा कि बड़े कारखानों तथा इसके परिणामों के बिना हम एक राष्ट्र के रूप में अपनी स्वतंत्रता को बनाए नहीं रख सकते।' इसके लिए भारी इन्जीनियरिंग, भारी मशीन उद्योग, पर्याप्त विद्युत शक्ति तथा वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थाओं के विकास में उन्होंने महत्वपूर्ण सहयोग किया। यद्यपि पण्डित नेहरू, महात्मा गाँधी की भाँति लघु एवं कुटीर उद्योगों के उग्र समर्थक नहीं थे, फिर भी उनका विचार था कि ग्रामीण भारत के विकास हेतु एवं रोजगार के अवसरों के विस्तार हेतु इनकी स्थापना एवं विकास आवश्यक है। उन्हीं की प्रेरणा से 1948 में कुटीर उद्योग बोर्ड स्थापित किया गया। बाद में लघु उद्योग निगम एवं शिल्पकारी बोर्ड भी स्थापित किए गए। उन्होंने सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था में छोटे उद्योगों के समन्वय पर भी बल दिया।

4. उद्योगों का राष्ट्रीयकरण – पण्डित नेहरू का मत था कि जो उद्योग राष्ट्रीय विकास हेतु आवश्यक है, उन पर राष्ट्र का नियन्त्रण होना चाहिये। उन्होंने राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था राष्ट्र का नियन्त्रण बनाने हेतु भारी उद्योगों को राजकीय स्वामित्व में तथा छोटे व मध्यम उद्योगों को व्यक्तिगत हाथों में छोड़ना उचित माना। इससे धन कुछ व्यक्तियों के हाथों में केन्द्रित होने से रूक जाएगा। शोषण अपेक्षाकृत कम होगा। यही सोचकर उन्होंने पंचवर्षीय योजनाओं में सार्वजनिक क्षेत्र या पब्लिक सेक्टर को अधिक महत्व दिया।

5. कृषि विकास पर बल – औद्योगिक क्षेत्र का विकास तभी संभव था जबकि भारत कृषि क्षेत्र में आत्मनिर्भर बन सके। यही कारण है कि कृषि क्षेत्र में भी सुधार एवं विकास के हिमायती थे। इसके लिए उन्होंने ग्रामीण विकास पर बल दिया। उनका विचार था कि इस देश के विकास का अर्थ ग्रामों का विकास दे क्योंकि भारत का भाग्य ग्रामों के साथ जुड़ा हुआ है।[7] ग्रामीण भारत पिछड़ा व निर्धन अशिक्षित एवं रूढ़िग्रस्त है। इसे कृषि के पुराने तरीकों से मुक्त कर वैज्ञानिक कृषि का वातावरण निर्मित करना समय की प्रमुख आवश्यकता है। उन्होंने जमींदारी प्रथा का उन्मूलन किया तथा कृषि के सहकारी स्वरूप पर भी बहुत जोर दिया क्योंकि उनका विश्वास था कि धीरे–धीरे यह कदम समाजवाद की ओर ले जाने वाला है। कृषि क्षेत्र में अत्याधुनिक तकनीक के प्रयोग के उत्कृष्ट आकांक्षी थे।

6. सहकारिता का विकास – जिस समय भारत को स्वतंत्रता प्राप्त हुई उस समय भारत की अर्थव्यवस्था अत्यंत कमजोर थी। सीमित साधनों द्वारा त्वरित विकास हेतु पण्डित नेहरू ने सामुदायिकता को आधार बनाया। देशवासियों को यह समझाने का प्रयत्न किया गया कि सरकारी अनुदानों एवं ऋणों द्वारा कुछ सहायता अवश्य कर सकती है किन्तु मुख्य प्रयास स्वयं जनता का ही होना चाहिए। वे कृषि क्षेत्र में जो सहकारिता प्रणाली या को–ऑपरेटिव सिस्टम को अनिवार्य मानते थे। खेतिहर मजदूरों एवं कृषकों की दयनीय दशा का प्रमुख कारण कृषि भूमि का छोटे–छोटे टुकड़ों में बट जाना है, जिससे स्वाभाविक है कि कृषि उत्पादन घटता है। उन्होंने कृषकों की दशा के उत्थान हेतु ट्रेक्टर, नलकूपो, उन्नत बीजों, रासायनिक खाद के प्रयोग पर बल देकर कृषि का आधुनिकीकरण करने का लक्ष्य रखा। इसके साथ ही सहकारिता के आधार पर खेती का विचार उनका बुनियादी विचार बना रहा। सन् 1958 में उन्होंने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नागपुर अधिवेशन में सहकारी कृषि का प्रस्ताव पास करवाया था। सामाजिक न्याय प्रदान करने वाले मौलिक अधिकारों की व्यवस्था के वे पक्षधर थे।[8] सहकारिता का समर्थन भी इसी भावना का विकास था।

8. निर्धनता एवं मुनाफाखोरी के अन्त पर बल – भारतीय अर्थव्यवस्था की समृद्धि आम भारतीय की समृद्धि पर आधारित थी, जबकि भारतीय जनमानस निर्धनता के अभिशाप से ग्रस्त था। पण्डित नेहरू देश में व्याप्त आर्थिक असमानता से भी बहुत चिन्हित थे। भारत की राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक समस्याओं के प्रति नेहरू का दृष्टिकोण वैज्ञानिक था।[9] उन्होनें निर्धनता निवारण हेतु ठोस प्रयासों पर बल दिया। कल–कारखानों में कार्य करने वाले श्रमिकों के लिए अच्छी दशाओं की सुविधाओं के कानून बनाये, श्रमिकों को उचित मजदूरी मिल सके, ऐसे प्रबन्धन भी किए उनके काम के घण्टे निर्धारित किए। वे देश में बढ़ती हुई मुनाफाखोरी की प्रवृत्ति के भी विरोधी थे। वे इस समस्या का निवारण अति शीघ्रताशीघ्र करना चाहते थे। उन्होंने व्यापारियों को कड़ी चेतावनी दी कि उन्हें अपनी वस्तुओं पर सीमित मुनाफा लेना चाहिए। यह कदम भी निर्धनता निवारण की दशा में परोक्ष प्रयास था। उनकी इस नीति का प्रभाव उनकी पुत्री तथा भारत की प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी पर बहुत अधिक पड़ा तथा उनका तो नारा ही था 'गरीबी हटाओ। पण्डित नेहरू सच्चे अर्थो में लोकनायक थे क्योंकि आमजन की समस्याओं के प्रति उनकी चिन्ता एवं उसके निवारणार्थ गंभीर प्रयत्न उन्हें सच्चे जननायक बनाते हैं।

पण्डित नेहरू आधुनिक भारत के संस्थापक थे। उनका आर्थिक चिन्तन ही स्वतंत्रत भारत की प्रारंभिक आर्थिक नीतियों का आधार बना। उनकी बड़े उद्योगों को बढ़ावा देने की नीति ने भारत को सशक्त आर्थिक पृष्ठभूमि प्रदान की। कृषि संबंधी विचारों ने कृषि के आधुनिकीकरण की नींव रखी। आर्थिक नियोजन एवं पंचवर्षीय योजनाओं ने कृषि क्षेत्र एवं उद्योग क्षेत्र की प्राथमिकताऐं तय कर दोनों को पुष्ट बनाया। उनके आर्थिक विचार, आर्थिक नीतियाँ आज भी उतनी ही प्रासंगिक है। ये सभी बिन्दु आज की अर्थव्यवस्था का मुख्य हिस्सा बने होना ही उनके विचारों की जीन्तता को प्रकट करता है। डॉ. राधाकृष्णन ने उनकी मृत्यु के बाद उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करते हुये कहा था – नेहरू की मृत्यु से देश में एक युग समाप्त हो गया है।[10] एक उत्साह, नवचेतना, नवप्रयोग, आधुनिकता एवं परम्परा के सामंजस्य का युग उनकी देन रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. नेहरू, जवाहरलाल – एन ऑटोबायोग्राफी, पृष्ठ 52
2. नेहरू, जवाहरलाल – मेरी कहानी, पृष्ठ 240
3. मोरिस, फ्रैंक – जवाहरलाल नेहरू जीवनी, पृष्ठ 40
4. नेहरू, जवाहरलाल – स्पीचेज– संसद में भाषण 1962
5. सिंह, लक्ष्मण – आधुनिक भारतीय सामाजिक व राजनीतिक विचार, पृष्ठ 619
6. नेहरू, जी.एल. – प्लानिंग एण्ड डबलपमेंट
7. क्राइट, जे.एस. – सलेकरेड रीडिग ऑफ जवाहरलाल, पृष्ठ 60
8. भांमरी , सी.पी. – नेहरू एण्ड इण्डियन पॉलिटिकल सिस्टम, आर्टिकल इन द इण्डियन जरनल ऑफ पॉलिटिकल साइन्स, वोल्यूम XXVII। –अप्रैल – जून 1977, पृष्ठ 158
9. वर्मा, वी.पी. –मॉडर्न इंडियन पॉलिटिकल थॉट, पृष्ठ 422
10. नेहरू, जवाहरलाल – श्रद्धांजलि, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, पृष्ठ 09

****

भविष्य में विकास का पर्याय - अक्षय ऊर्जा

डॉ. खुमेशसिंह ठाकुर*

शोध सारांश – मानव सभ्यता ऊर्जा के स्त्रोतों पर बढ़ते नियंत्रण का ही इतिहास रहा है। औद्योगिक क्रांति और सूचना प्रौद्योगिकी (आई.टी.) क्रांति आधुनिकतम समय की दो महत्वपूर्ण घटनाएं है। दोनों के मूल में ऊर्जा की महत्वपूर्ण भूमिका है। अर्थव्यवस्था की समूची इमारत ऊर्जा के बृहद् उत्पादन और उपभोग पर टिकी हुई है। निश्चय ही ऊर्जा तथा समाज के संबंधों के विभिन्न आयामों का ज्ञान ही मानव मात्र के भविष्य को समझने की हमारी कुंजी है। ऊर्जा विज्ञान के शब्दों में कार्य करने की वह क्षमता है, जो भौतिक और आर्थिक विकास को सुनिश्चित करती है। ऊर्जा क्षेत्र भारतीय अर्थव्यवस्था के प्रमुख संचालकों में से एक है। देश में विद्युत और ऊर्जा की इस व्यपाक अपूर्ण मांग को पूरा करने एवं संपोषणीय विकास के लिये नवीकरणीय ऊर्जा एक महत्वपूर्ण साधन है।

प्रस्तावना – मानव सभ्यता ऊर्जा के स्रोतों पर मनुष्य के बढ़ते नियंत्रण का ही इतिहास रहा है। प्रमिथियस ने ईश्वर से आग की चोरी की या बच्चे ने चकमक पत्थरों के साथ खेलते हुए आग की खोज की या फिर जंगल में लगने वाली आग ने ही मानव को आग का भेद खोला, तभी से मानव सभ्यता एक नये चरण में प्रवेश करती है। **औद्योगिक क्रांति और सूचना प्रौद्योगिकी (आई.टी.) क्रांति आधुनिक समय की दो महत्वपूर्ण घटनाएं है। दोनों का उद्‌गम ऊर्जा पर नियंत्रण और उसके उपयोग की क्षमता से शुरू होता है। वाष्प इंजन, औद्योगिक क्रांति का उत्प्रेरक और अग्रदूत था, जबकि सूचना के मूल में सेमी कंडक्टर (ट्रांजिस्टर) की खोज है। दोनों के मूल में ऊर्जा की महत्वपूर्ण भूमिका है।** अर्थव्यवस्था की समूची इमारत ऊर्जा के बृहद् उत्पादन और उपभोग पर टिकी हुई है। **निश्चय ही ऊर्जा तथा समाज के संबंधों के विभिन्न आयामों का ज्ञान ही मानव मात्र के भविष्य को समझने की हमारी कुंजी है।** ऊर्जा सुरक्षा के विषय को नीति-निर्माताओं, पर्यावरणीय सरोकारों और रणनीतिक यथार्थताओं के साथ जोड़ना होगा तभी हम अपने राष्ट्रीय उद्देश्यों को प्राप्त कर सकेंगे। आजकल **'ऊर्जा संक्रमण'** के बारे में विश्व भर में मंथन हो रहा है। **ऊर्जा संक्रमण का तात्पर्य अक्षय ऊर्जा स्रोतों को मुख्य साधन के तौर पर उपयोग के लिए नीतिगत समायोजन बाजार को अपनी परिस्थितियों के अनुकूल बनाने और प्रौद्योगिकी के उपयोग से है।**

अक्षय ऊर्जा एक उभरता हुआ ऐसा क्षेत्र है जिसमें हम सदाबहार (नवीकरणीय) ऊर्जा स्रोतों जैसे- **सौर, पवन, जल, बायोमास** आदि से अपनी ऊर्जा आवश्यकताओं की पूर्ति के मुद्दे पर विचार करते है। सार्वभौम पहुँच की दृष्टि से अक्षय ऊर्जा में क्षमता अत्यंत व्यापक है। भारत में वाणिज्यिक विद्युत करीब 40 करोड़ लोगों की पहुंच से बाहर है। विद्युत की कमी वाले गांवों और बस्तियों में विकेन्द्रीकृत या पृथक पद्धति के रूप में अक्षय ऊर्जा एक समुचित, सशक्त और व्यवहारिक समाधान है। गुणवत्ता, कार्यान्वयन की गति और लागत के संदर्भ में विकेन्द्रीकृत अक्षय ऊर्जा हमारे ग्रामीण विद्युतीकरण कार्यक्रम का सर्वाधिक कारगर और लोकतांत्रिक घटक बन सकता है। अलग-थलग और सबसे उपेक्षित पड़े समुदायों की पहुँच ऊर्जा तक कायम करने में अक्षय ऊर्जा विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में **समावेशी विकास का सबसे बड़ा संचालक बन सकती है।**

ऊर्जा सुरक्षा – ऊर्जा सुरक्षा का आधार सिर्फ ऊर्जा आपूर्ति सुनिश्चित कर लेने के मुकाबले कहीं ज्यादा व्यापक है। भारत सरकार ने जिस ऊर्जा सुरक्षा की परिभाषा को अपनाया वह है **'हम तब ऊर्जा सुरक्षित महसूस करते है जब हम पाते है कि हमारे सभी नागरिकों के लिए ऊर्जा जीवन रेखा उनकी सभी मांग पूरी करने में सक्षम है और सुगमता से प्रतियोगी मूल्य पर इसकी पूर्ति हर समय पूरे विश्वास के साथ बाधाओं की परवाह किए बिना की जा सकती है।** इस परिभाषा में **'अपने सभी नागरिकों 'ऊर्जा जीवन रेखा' 'प्रभावी मांग और सुगमता से प्रतियोगी मूल्य पर'** जैसे शब्द ध्यान देने लायक है। ये सभी ऊर्जा सुरक्षा के विभिन्न पक्षों से जुड़े हुए है। ऊर्जा सुरक्षा के महत्वपूर्ण कारकों को निम्नलिखित भागों में बांटा जा सकता है। ये वर्ग है **उपलब्धता, विश्वासनीयता, किफायत और निरंतरता।**[1] ऊर्जा व्यवस्था सिर्फ ऊर्जा को परिवर्तित करने वाली तकनीक ही नहीं अपितु सभी के लिए उचित मात्रा में हर तरह की सही ऊर्जा जरूरत के वक्त उपलब्ध कराने एवं अर्थव्यवस्था की भावी जरूरतों का अनुमान लगाकर उसकी पूर्ति करने में सक्षम होना चाहिए।[2]

ऊर्जा संकट – किसी भी देश में आर्थिक व सामाजिक विकास के लिए ऊर्जा आधारभूत आवश्यकता है। भारतीय अर्थव्यवस्था के प्रत्येक क्षेत्र जैसे **कृषि, उद्योग, परिवहन, घरेलू व रक्षा** के विकास के लिए भी ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है। **ऊर्जा आर्थिक विकास के साथ-साथ मानव विकास के लिए भी महत्वपूर्ण है। ऊर्जा नीति के भी विविध लक्ष्य है, आर्थिक दक्षता, सभी को किफायती मूल्य पर स्वच्छ ऊर्जा सुलभ कराना, पर्यावरणीय संपोषणीयता और ऊर्जा सुरक्षा।** जहां तक **जीवाष्म ईंधनों** का प्रश्न है, ईंधन के दोहन से प्राकृतिक संसाधन का क्षरण हो सकता है, साथ ही ईंधन के ऊर्जा के रूप में उपयोग से पर्यावरण भी प्रदूषित होता है। **जल विद्युत** के मामले में वनभूमि का उपयोग किए जाने की स्थिति में स्थानीय लोगों के विस्थापन की समस्या आती है। परिस्थितिकीय

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) सुभद्रा शर्मा शासकीय कन्या महाविद्यालय, गंज बासौदा (म.प्र.) भारत

असंतुलन का भी सामना करना पड़ता है। जहां तक **परमाणु ऊर्जा** का प्रश्न है, उसमें सुरक्षा एक बड़ा मुद्दा बन गया है।[3] इसके अलावा **खनिज तेलों व कोयला** से प्राप्त होने वाली ऊर्जा से स्थानीय व वैश्विक पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। पर्यावरण विशेषज्ञ इनसे होने वाले प्रदूषण को वैश्विक ऊष्मन का कारण भी मानते है। जलवायु परिवर्तन होने से प्राकृतिक आपदाओं की न केवल आवृत्ति बढ़ रही है। बल्कि इनकी तीव्रता से काफी जानमाल का भी नुकसान हो रहा है। सौभाग्य से देश में गैर पारंपरिक ऊर्जा स्रोत मुख्य रूप से **सूर्य, पवन, जल, विद्युत एवं जैव पदार्थ** की प्राकृतिक उपलब्धता काफी अच्छी है। शहरी कचरे एवं उद्योगों से निकलने वाले अपशिष्ट भी ऊर्जा के अच्छे स्रोत हो सकते है।

अक्षय ऊर्जा की आवश्यकता – पी.प्यूटनम ने अपनी पुस्तक 'एनर्जी द फ्यूचर' में पड़ताल की है कि औद्योगीकरण के बाद सम्पूर्ण विश्व की ऊर्जा आवश्यकता 20 गुना बढ़ गई है। विश्व बैंक भारत के विकास में ऊर्जा उपलब्धता को प्रमुख बाधा बता चुका है। **अक्षय ऊर्जा स्रोतों के बढ़ते उपयोग, विकास में उसकी अपरिहार्य भूमिका, विकास को पर्यावरण संरक्षण के साथ संभव करने की सामर्थ्य तथा गांवों में इसकी बढ़ती लोकप्रियता इत्यादि कारणों से जीवाश्म ईंधन (कोयला और लिग्माइट, तेल और प्राकृतिक गैस) इत्यादि के इस्तेमाल से होने वाले प्रदूषण और पर्यावरण संकट ने वैज्ञानिकों को ऊर्जा के नवीन स्रोत विकसित करने एवं अनजान स्रोत ढूंढने के लिए बाध्य किया है।** यदि मानव जाति को अपना भविष्य सुरक्षित रखना है, तो खनिज ऊर्जा संसाधनों के दोहन को शनै: शनै: समाप्त करना होगा। इसके स्थान पर ऊर्जा के अखंड या अक्षय स्रोतों का प्रयोग करना होगा, क्योंकि ये व्यय होने के पश्चात भी स्वयं को पुनरोत्पादित कर लेते है। कुल मिलाकर हमें सतत विकास हेतु उन्हीं पाँच तत्वों की शरण में जाना होगा जिनकी पूजा हम आदिकाल से करते आए है, यानि की **सूरज, धरती, अग्नि, जल और वायु।** इन सभी बातों का सार यही है कि अक्षय ऊर्जा ही भारत के सतत विकास का मार्ग प्रशस्त करेगी।[4]

भारत की दीर्घकालिक ऊर्जा भविष्य में अक्षय ऊर्जा की महत्वपूर्ण भूमिका देखी जा रही है। अक्षय ऊर्जा से न केवल ऊर्जा सुरक्षा बढ़ाई जा सकती है। बल्कि यह **जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से निपटने, रोजगार सृजन, औद्योगिक विकास और ऊर्जा तक लोगों का पहुंच बनाने में भी मदद कर सकती है।** इसके लिए ऊर्जा उत्पादन का विकेन्द्रीकरण करना होगा। भारत में अक्षय ऊर्जा के स्रोतों के रूप में सौर ऊर्जा और इसकी भंडारण सुविधा, तटीय पवन ऊर्जा, तीसरी पीढ़ी का जैव ईंधन और कोल बेड मेथेन प्रमुख है।[5]

भारत में अक्षय ऊर्जा का विकास एवं संभावनाएं – देश के सभी प्रतिष्ठानों में अक्षय ऊर्जा प्रौद्योगिकियों के इस्तेमाल की संभावनाएं है। ये प्रौद्योगिकियां सभी के लिए, विशेष रूप से कठिन एवं दुर्गम क्षेत्रों में कार्य करने वालों के लिए व्यवहार्य एवं लागत की दृष्टि से किफायती संसाधन उपलब्ध कराती है। इन प्रौद्योगिकियों के इस्तेमाल से बिजली, डीजल एवं कुछ हद तक रसोई गैस के इस्तेमाल में भी कमी आती है। अक्षय ऊर्जा आज वैकल्पिक है लेकिन भविष्य में यह हमारी अनिवार्य आवश्यकता बन जाएगी। आज हम इन प्रौद्योगिकियों में जो निवेश कर रहे है, उससे भविष्य में ऊर्जा की आवश्यकता स्थाई रूप से पूरी करने में मदद मिलेगी। भारत में अक्षय ऊर्जा की कुल अनुमानित क्षमता करीब 2,48,650 मेगावाट की है। भारत में अक्षय ऊर्जा परिदृश्य में व्यापक परिवर्तन हुए है, जिसे तालिका क्र. 1 में देखा जा सकता है–

तालिका क्र. 1 (देखे आगे पृष्ठ पर)

नवीकरणीय ऊर्जा के संदर्भ में भारत का स्थान विश्व के पाँच प्रमुख देशों में आता है। हमारा संस्थापित आधार 30179 मेगावाट विद्युत का है। विद्युत उत्पादन की दृष्टि से हमारी नवीकरणीय ऊर्जा की संस्थापित क्षमता करीब 65 अरब यूनिट प्रतिवर्ष है, जो कुल विद्युत उत्पादन का 6.5 प्रतिशत है। भारत ने नवीकरणीय ऊर्जा के ऑफ–ग्रिड अनुप्रयोगों में भी उल्लेखनीय प्रगति की है। हमारा विकेन्द्रीकृत ऑफ–ग्रिड अनुप्रयोगों में भी उल्लेखनीय प्रगति की है। हमारा विकेन्द्रीकृत ऑफ–ग्रिड नवीकरणीय ऊर्जा कार्यक्रम दुनिया के ऐसे सबसे बड़े कार्यक्रमों में से एक है। भारत में 20 लाख से अधिक विकेन्द्रीकृत सौर ऊर्जा अनुप्रयोग, 47.4 लाख बायोगैस प्लांट और 81 लाख वर्गमीटर से अधिक सौर ताप अनुप्रयोग है। जो देश के सुदूरतम और दूर–दराज के क्षेत्रों में संस्थापित किए गए है। हमारे सौर अनुप्रयोग 174 मेगावाट के समकक्ष बिजली का उत्पादन करते है। ऊर्जा उत्पादन के सभी क्षेत्र महत्वपूर्ण बने रहेगे, लेकिन अक्षय ऊर्जा स्रोतों की हिस्सेदारी स्थाई विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। अक्षय ऊर्जा को आने वाले वर्षो में **ऊर्जा सुरक्षा और ऊर्जा सुलभता** का लक्ष्य हासिल करने में बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करनी है।[6]

संयुक्त राष्ट्र संपोषणीय विकास सम्मेलन 2012 में सामाजिक, पर्यावरणीय और आर्थिक कारकों के पहुंच के मूल्यांकन और जहाँ राष्ट्रीय परिस्थितियाँ और हालात अनुमति देते है वहां निर्णय प्रक्रिया में उनकी एकीकरण को प्रोत्साहन देने के महत्व को स्वीकार किया गया है। भारत ने निश्चित रूप से अक्षय ऊर्जा के विकास के लिए एक महत्वाकांक्षी लक्ष्य निर्धारित किया है। इसमें अन्तर्निहित लक्ष्य घरेलू ऊर्जा सुरक्षा हासिल करने का है। जबकि क्षेत्रीय विकास, रोजगार के अवसर पैदा करने, घरेलू उद्योगों को वैश्विक दृष्टि से प्रतिस्पर्धात्मक बनाने ऊर्जा तक परिष्कृत पहुंच कायम करने और पर्यावरण एवं जलवायु को स्वच्छ बनाने जैसे पश्चर्वती लाभ भी हासिल होंगे।[7]

तालिका क्र.–2 (देखे आगे पृष्ठ पर)

केन्द्रीय नवीन एवं नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय नवीकरणीय ऊर्जा को बढ़ावा देने के लिए अनेक वित्तीय एवं गैर–वित्तीय प्रोत्साहन प्रदान करता है। इसमें उत्पाद एवं सीमा शुल्कों में रियायत, उत्पादन आधारित प्रोत्साहन, व्यवहार्यता अंतर वित्त पोषण, नवीकरणीय विद्युत की खरीद के लिए बेहतर टैरिफ, नवीकरणीय क्रय समझौतों का प्रावधान, नवीकरणीय क्रय समझौतों को लागू करना, नवीकरणीय ऊर्जा प्रमाण पत्रों का प्रचालन करना और इसी तरह के अन्य उपाय शामिल है।[8]

विकास का रथ जिन पहियों पर आगे बढ़ता है, ऊर्जा उनमें से एक है। इसलिए जैसे–जैसे विकास कार्यो की प्रगति होती जाती है, ऊर्जा की जरूरत और खपत उसी गति से बढ़ती जाती है। ब्रिटिश वैज्ञानिक **'माइकल फैराडे'** द्वारा आज से लगभग तीन शताब्दियों पूर्व बिजली के अविष्कार के बाद से सभ्यता के भौतिक विकास ने दिन दूनी रात चौगुनी प्रगति की है। आज कई मामलों में बिजली के बिना जीवन की कल्पना भी कठिन है। भारत में बिजली तैयार करने की कुल स्थापित क्षमता 31 मार्च 2013 को लगभग 58.3 प्रतिशत कोयला आधारित थी जबकि 9 प्रतिशत बिजली गैस वाले ताप बिजली घरों में तैयार की जाती है। पन–बिजली, नवीकरणीय स्रोतों और परमाणु बिजली घरों द्वारा तैयार की जाने वाली बिजली की स्थापित क्षमता

क्रमश: 17.7 प्रतिशत, 12.3 प्रतिशत और 2.1 प्रतिशत है।[9] भारत का कोयला भंडार अभी 286 बिलियन टन है और लिग्नाइट भंडार 41 विलियन टन का है। यह संसाधन मुख्य रूप से देश के पूर्वी और दक्षिणी भागों तक सीमित है। कच्चे तेल और प्राकृतिक गैस का भंडार क्रमश: 757 बिलियन टन है और 1241 क्यूबिक मीटर है।[10] ऊर्जा क्षेत्र का जो सबसे बड़ा संकट है वह यह है कि ऊर्जा के पारम्परिक स्रोत सीमित है। अनवरत दोहन से उनका एक न एक दिन खत्म होना तय है। ऐसे में ऊर्जा का सृजन गैर-पारम्परिक स्रोतों से होना अभिष्ट होगा।[11]

निष्कर्ष- ऊर्जा विज्ञान के शब्दों में कार्य करने की वह क्षमता है, जो भौतिक और आर्थिक विकास को सुनिश्चित करती है। ऊर्जा किसी भी देश के लिए विकास रूपी गाड़ी का इंजन होती है, जिसके सहारे विकास प्रक्रिया आगे बढ़ती है। समाज के हर क्षेत्र मसलन उद्योग, व्यापार, कृषि, परिवहन, आवास आदि सबके लिए ऊर्जा नितांत आवश्यक है। ऊर्जा क्षेत्र भारतीय अर्थव्यवस्था के प्रमुख संचालकों में से एक है। 12वीं पंचवर्षीय योजना में निर्धारित आर्थिक वृद्धि की उच्च दरों को देखते हुए, अर्थव्यवस्था की बढ़ती ऊर्जा जरूरते एक प्रमुख मुद्दा बना हुआ है। **देश में विद्युत और ऊर्जा की इस व्यापक अपूर्ण मांग को पूरा करने के लिए नवीकरणीय ऊर्जा एक महत्वपूर्ण साधन है।** विकास की चुनौतियों के बीच सबसे बड़ा संकट पर्यावरण का है। इसके लिए हमें पर्यावरण हितैषी नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों पर न सिर्फ विचार करना होगा, बल्कि ऊर्जा उत्पादन में उनकी भागीदारी बढ़ानी होगी। आसन्न गंभीर संकट से निपटने के दो प्रभावशाली उपाय हो सकते है। **पहला ऊर्जा का सफलतापूर्वक संरक्षण हो और दूसरा ऊर्जा उत्पादन के ऐसे विकल्पों पर विचार हो जिसके स्रोत गैर-परम्पारिक अर्थात अक्षय हो।** आर्थिक विकास और औद्योगीकरण की होड़ के बीच पूरे विश्व के साथ भारत के लिए भी आवश्यक है कि ऊर्जा के पर्यावरण हितैषी स्रोतों को वरीयता के आधार पर बढ़ावा दिया जाए। यद्यपि अभी जीवाष्म ईंधन सर्वाधिक महत्वपूर्ण है परन्तु भविष्य में इनको नवीकरणीय स्रोतों द्वारा चरणबद्ध ढंग से कम करना होगा अन्यथा विकास का पहिया प्रदूषण के गड्ढे में फंस जाएगा एवं भावी भविष्य अंधकारमय होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. समन्वित ऊर्जा नीति-विशेषज्ञ समिति रिपोर्ट-योजना आयोग, भारत सरकार 2006
2. एनर्जी वेक्टर्स के युग में ऊर्जा व्यवस्थाएं, परिभाषित, विश्लेषित और डिजाइन करने के सत्र/फाबियों ओरचिनी और ब्रिसेनजो नासो, स्प्रीगर बरलैग लंदन लिमिटेड 2012
3. शंकर यू. - ऊर्जा, पर्यावरण एवं संपोषणीय विकास, योजना, वर्ष : 58, अंक : 5, मई 2014, पृ.क्र. 11
4. माथुर रितु - भारतीय ऊर्जा सुरक्षा चुनौतियां एवं संभावनाएं, योजना, वर्ष : 58, मई 2014, पृ.क्र. 32
5. गुप्ता राजीव - अक्षय ऊर्जा : भारत का भविष्य, योजना, वर्ष : 58, अंक : 5, मई 2014, पृ.क्र. 35
6. सक्सेना पी - भारत में अक्षय ऊर्जा, रोजगार समाचार, खण्ड : 39, अंक : 18, नई दिल्ली, पृ.क्र. 1,56
7. स्वैन ए.के. और चार्नोज ओ. (2012) 'इंडियाज क्लीन एनर्जी पैराडॉक्स' बिजनेस स्टेंडर्ड 7 दिसम्बर, नई दिल्ली
8. श्रीवास्तव सौम्या - नवीकरणीय ऊर्जा का उपयोग भारत का अनुभव, रोजगार समाचार, खण्ड : 39, अंक : 36, नई दिल्ली, पृ.क्र. 1, 64
9. विद्युत क्षेत्र का सीओ-2 बेस लाइन डाटाबेस, केन्द्रीय प्राधिकरण, विद्युत मंत्रालय, भारत सरकार, जनवरी 2014
10. ऊर्जा सांख्यिकी 2013, केन्द्रीय सांख्यिकी कार्यालय, सांख्यिकी तथा कार्यक्रम क्रियान्वयन मंत्रालय, भारत सरकार
11. कृष्णकांत - आर्थिक विकास के बीच ऊर्जा उपलब्धता के प्रश्न, योजना, वर्ष : 58, अंक : 5, मई 2014, पृ.क्र. 25

तालिका क्र. 1

भारत में अक्षय ऊर्जा की अनुमानित क्षमता और विकास (मेगावाट में)

स्त्रोत	अनुमानित क्षमता	9वीं योजना (संचयी उपलब्धि)	10वीं योजना (2002-2007) संवर्धन	11वीं योजन (2007-2012) संवर्धन	12वीं योजना (2012-2017) संवर्धन	जनवरी 2014 संचयी उपब्धि	13वीं योजना प्रत्याशित उपलब्धि
पवन ऊर्जा	1,02,500	1,628	5,464	10,260	1,965	20,298.83	40,000
सौर ऊर्जा	1,00,000 (30 से 50 मेगावाट वर्ग किमी)	2	1	938	828	2,208.36	20,000
लघु जल विद्युत (25 मेगावाट तक)	19,750	1,434	542	1,419	276	3774.15	6,500
बायोमास अर्थात जैव विद्युत	23,700	389	795	2021	467	3798.48	7,500
कचरे से ऊर्जा	2,700	-	15	74	7	99.08	-
कुल	2,48,650	3,453	6,817	14,712	3,543	30,178.90	74,000

स्त्रोत - 1. ए.के. त्रिपाठी (2013) - 'थ्री डीकेट्स ऑफ रिन्युएबल्स इन इंडिया : अक्षय ऊर्जा, 6 (5 और 6) - 10-17 2. www.mnre.gov.in

तालिका क्र.–2

अक्षय ऊर्जा के प्रोत्साहन के लिए भारत की महत्वपूर्ण नियामय नीतियां

नीतियां	अधिनियम का वर्ष	महत्वपूर्ण विशेषताएं/लक्ष्य
विद्युत अधिनियम	2003	राज्य विद्युत नियामक आयोगों (एसईआरसीज) द्वारा नवीरणीय ऊर्जा को प्रोत्साहन देना
राष्ट्रीय विद्युत नीति	12 फरवरी 2005	निजी क्षेत्र की भागीदारी को बढ़ावा देना। प्रतिस्पर्धा बोली प्रक्रिया के जरिए नवीकरणीय ऊर्जा की खरीद पर बल देना। अपरम्परागत प्रौद्योगिकियों को बढ़ावा देने के लिए शुल्कों में रियायत देना।
राष्ट्रीय टैरिफ नीति	6 जनवरी 2006	एसईआरसीज को निर्देश देना कि वे अपने क्षेत्र में नवीकरणीय ऊर्जा संसाधनों की उपलब्धता का हिसाब रखे और प्रत्येक स्रोत की खरीद के लिए न्यूनतम प्रतिशत तय करते समय खुदरा शुल्कों पर उसके प्रभाव का अध्ययन करें।
राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन कार्य योजना (एनएपीसीसी)	30 जून 2008	कुल ग्रिड खरीद पर पांच प्रतिशत नवीकरणीय ऊर्जा खरीद के लिए निर्धारित करना जो अगले दस वर्ष तक हर वर्ष एक प्रतिशत बढ़ाया जाना चाहिए।
अक्षय ऊर्जा के बारे में नीतिया : नियामकों के मंच और सीईआरसी की एक रिपोर्ट	नवम्बर 2008	ऊर्जा के उत्पादन में स्वच्छता के लिए नियामक दृष्टिकोण में समानता। ऊर्जा के नवीनीकरण स्रोतों से विद्युत उत्पादन और सह उत्पादन को प्रोत्साहन।
नवीकरणीय ऊर्जा शुल्क के बारे में सीआईआरसी विनियम	3 दिसम्बर 2009	विद्युत खरीद शुल्क तय करने में लागत जमा दृष्टिकोण अपनाना। उत्पादन आधारित प्रोत्साहन। स्वच्छता विकास शुल्क में हिस्सेदारी।सीडीएम से शतप्रतिशत प्राप्तियां विकासक द्वारा रखी जाएगी।
नवीकरणीय ऊर्जा प्रमाण पत्रों के बारे में सीईआरसी विनियमन	जनवरी 2010	आरईसी की शुरूआत एक व्यापार योग्य वस्तु के रूप में की गई थी और अक्षय उर्जा स्रोत की कमी वाले राज्य अपनी आपीओ अपेक्षाएं पूरी करने के लिए नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत खरीद सकते है।उत्पादन में कमी लाने के लिए प्रतिस्पर्धा को बढ़ाना देना।

****

भारत में आर्थिक उदारीकरण के पश्चात राष्ट्रीयकृत बैंको द्वारा प्रदत्त वैकल्पिक सुविधाओं के प्रभाव का अध्ययन

अनिता उपाध्याय *

प्रस्तावना – किसी भी देश की अर्थव्यवस्था में बैंकों की अहम भूमिका रहती है। देश में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात निजी बैंकों का वर्चस्व था निजी बैंक बड़े उद्योगपतियों को ही ऋण सुविधा ज्यादा देते थे, देश का निम्न वर्ग बैंकिंग सुविधाओं से अनभिज्ञ था। निजी बैंकों का प्रमुख उद्देश्य लाभार्जन था इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए सभी बैंक निजी व्यावसायिक बैंक के रूप में कार्य करते थे परिणामत: देश का प्राथमिक क्षेत्र बैंकों की सुविधाओं से वंचित रहा। एक जुलाई 1955 को देश में उपलब्ध निजी क्षेत्र के प्रमुख बैंक इंपीरियल बैंक का राष्ट्रीयकरण कर इस बैंक का नाम भारतीय स्टेट बैंक किया गया। भारतीय स्टेट बैंक देश की वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति अपने उद्देश्य के अनुरूप नहीं कर रहा था। परिणामत: 19 जुलाई 1969 को 14 बैंकों का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया। अत: बैंकों के राष्ट्रीयकरण के साथ ही वैधानिक उत्तरदायित्व भी तय किया गया। 1991 की उदारीकरण की नीति से पूर्व तक बैंको का व्यापार अफसरशाही की कठोर प्रशासनिक प्रणाली तथा वित्त मंत्रालय के कठोर नियंत्रण में कार्य कर रहा था। राष्ट्रीयकृत बैंक सरकारी नियंत्रण में होने के कारण स्वत: कोई निर्णय नहीं लेते थे, बल्कि सरकार द्वारा जारी दिशा निर्देश का पालन करते हुए बैंकिंग क्रियाओं का संचालन करते थे। इन बैंकों के मध्य किसी प्रकार की प्रतिस्पर्धा नही थी क्योकि इनका संरक्षण भारत सरकार द्वारा किया जाता था। अत: 1991 की आर्थिक नीति में उदारीकरण के पश्चात् निजी बैंको के आने से प्रतिस्पर्धा बढ़ गई। जिसके कारण राष्ट्रीयकृत बैंकों की कार्यप्रणाली में अत्यधिक परिवर्तन हुए। उदारीकरण के कारण स्वतंत्रता प्राप्त हुई। आधुनिक समय में राष्ट्रीयकृत बैंक अर्थव्यवस्था के केन्द्र बिंदु, संचालक एवं नियन्त्रक के रूप में कार्य कर रहे है। इनके माध्यम से समस्त साख व्यवस्था संगठित होती है। बैंकों द्वारा ही औद्योगिक समाज में पूँजी निर्माण के साथ – साथ व्यापार का विस्तार भी किया जा रहा है तथा आर्थिक विकास के कारण बैंको की उपयोगिता भी बढ़ती जा रही है। राष्ट्रीयकृत बैंक समाज की बचतों को एकत्रित करने के लिए अनेक योजनाएँ चला रहे है। व्यापार एवं औद्योगिक कार्यो के लिए वित्त उपलब्ध करा रहे है, पिछड़े क्षेत्रों के विकास के नए अवसर उपलब्ध करा रहे हैं जिसके कारण पूरा बैंकिंग क्षेत्र में ही नए उत्पाद एवं नई सेवाएँ ग्राहकों की मॉग के अनुसार उत्पाद एवं सेवाएँ दे रहे जो लाभप्रद एवं सुविधाजनक दोनों है। आज ग्राहकों को दी जाने वाली सुविधाएँ सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से किसी चमत्कार से कम नहीं है सूचना, तकनीक से जुड़ी सेवाएँ, एटीएम इलेक्ट्रानिक फंड ट्रांसफर, डेबिट कार्ड, एटीएम कार्ड, स्मार्ट कार्ड सुविधा, इलेक्ट्रानिक कैश, मोबाइल बैंकिंग, इन्टरनेट बैंकिग इत्यादि द्वारा सुविधाएँ ग्राहक को दी जा रही है। राष्ट्रीयकृत बैंकों ने ऋण क्षेत्र का भी विस्तार किया है, जिसमें विभिन्न वर्ग समुदाय के लिए अनेक प्रकार के ऋण बैंकों द्वारा दिए जा रहे हैं सूचना तकनीक के कारण आज ग्राहक को उसके कार्यस्थल या घर पर ही व्यक्तिगत रूप से टेली बैंकिंग या नेट बैंकिंग के माध्यम से विभिन्न सूचनाएँ प्राप्त हो जाती है तेजी से तकनीकी प्रगति एवं बदलावों के इस युग में बैंकिंग क्षेत्र में अपनी अग्रणी स्थिति बनाए रखने हेतु राष्ट्रीयकृत बैंकों ने मैकेन्जी एण्ड कम्पनी एवं केपीबीपीआर (बिजनेस प्रोसेस री–इंजीनियरिंग अर्थात् व्यवसाय प्रक्रिया पुनर्विन्यास) लागू करने का निश्चय किया। बीपीआर को लागू करने हेतु सीबीएस (कोर बैंकिंग सॉन्यूशन) प्रणाली लागू की गई। इससे बैंक में नवीन बदलावों के साथ एक नए तकनीकी युग का सूत्रपात हुआ। राष्ट्रीयकृत बैंक ने कम्प्यूटर एवं सूचना प्रौद्योगिकी का व्यापक प्रयोग निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति हेतु किया है–

- बैंक का बाजार अंश बढ़ाना।
- विदेशी एवं निजी क्षेत्र के नवस्थापित बैंकों से मिली चुनौती एवं प्रतिस्पर्धा का सामना करना।
- बैंक का ग्राहक आधार बढ़ाना ।
- बैंक के वर्तमान और संभावित ग्राहको की अपेक्षाओं को पूरा करना।
- नई युवा पीढ़ी के अधिकाधिक ग्राहकों को आकर्षित करना।
- परिचालन चालन लागत में कमी लाना।
- ग्राहकों को नए उत्पादों का शीघ्र एवं प्रभावी विपणन।
- ग्राहकों को हिन्दी भाषा से सूचना देना।

शोध के उद्देश्य –

1. आर्थिक उदारीकरण से राष्ट्रीयकृत बैकों के ग्राहकों को उपलब्ध सेवाओं में गुणात्मक सुधार का अध्ययन करना।
2. भारत में आर्थिक उदारीकरण के पश्चात राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा प्रदत्त वैकल्पिक सुविधाओं के प्रभाव का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि – शोध प्रविधि शब्द का आशय शोध के संबंध में अपनाई जाने वाली विभिन्न विधियों के तार्किक व औचित्यपूर्ण प्रयोग से है प्रस्तुत शोध प्रबंध में विवरणात्मक एंव विश्लेषणात्मक प्रविधि का प्रयोग किया गया है

वैकल्पिक डिलीवरी चैनलों के माध्यम से बैंकिंग सेवाएँ :– विगत दो दशक के दौरान बैंको का एक नया ही रूप सामने आया है। अपने पारंपारिक पारिभाषिक दायित्व से परे इसका दायरा व्यापक होता जा रहा है। सामाजिक बैंकिंग, ग्रामीण अर्थव्यवस्था में बढ़ती भागीदारी से लेकर संरचनात्मक योजनाओं तक देश को अर्थव्यवस्था का कोई पहलू बैंकिंग पहुँच से अछूता नहीं रह पाया है। आधुनिक बैंकिंग में सूचना प्रौद्योगिकी केंद्रीयकृत नेटबैंकिंग का समावेशन है, प्रत्येक वर्ष बैंक का आई.टी. पक्ष कही अधिक महत्वपूर्ण और विस्तृत होता जा रहा है जो निम्न है –

1. **प्लास्टिक मुद्रा का चलन –** सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से ग्राहकों को दी जाने वाली सुविधाओं में प्लास्टिक मुद्रा का चलन सबसे ज्यादा बढ़ा है जैसे एटीएम, क्रेडिट कार्ड, डेबिट कार्ड स्मार्ट कार्ड की सुविधा के

* शोधार्थी, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

कारण ग्राहक कही भी कभी भी और किसी भी रूप में बैंकिंग की सुविधाएँ ग्राहको को दी जा रही है।

2. **फोन बैंकिंग –** कोर बैंकिंग में जहॉ एक जगह पर डाटा का सुचयन कर दिया जाता है और ग्राहक फोन पर ही अपने खातों की जानकारी ले सकते है, कहीं भी फोन के जरिए बैंकिंग कारोबार कर सकते है
3. **खुदरा बैंकिंग –** आधुनिक बैंकिंग में खुदरा बैंकिंग का विशेष महत्व है। बैंकों की लाभप्रदता बढ़ाने, ग्राहकों को विभिन्न प्रकार की बेहतर सेवाएँ प्रदान करने तथा अर्नजक आस्तियों को कम करने में खुदरा बैंकिंग एक क्रांतिकारी परिवर्तन है। खुदरा बैंकिंग में ऋण उत्पादों के साथ जमा उत्पादों पर भी विशेष ध्यान दिया जाता है। जो विभिन्न प्रकार के ग्राहक वर्ग को ध्यान में रखकर बनाये जाते है। खुदरा बैकिंग के अन्तर्गत ग्राहकों को बचत एंव चालू खातों को मूल्य वर्धित सेवाओं के साथ जोड़ा जाता है बैंक कई जमा योजनाओं को पेंशन व बीमा के लाभ से भी जोड़ रहे है उपभोक्तावाद के इस दौर में ग्राहक अपनी जमा पूँजी पर अच्छा प्रतिफल तथा तरलता चाहता है। इस आधार पर बैंक सावधि जमा खातों को ओवर ड्राफ्ट सुविधा तथा वार्षिक आय योजना के साथ भी जोड़ रहे है। खुदरा बैंकिंग के अन्तर्गत बैंक विभिन्न प्रकार के ग्राहक वर्ग को शून्य खातें भी खोलने की सुविधा दे रहा है जिससे वित्तीय समावेशन बढ़ता है साथ ही ग्राहक आधार बड़ रहा है। खुदरा बैंकिंग को बैंक अपनें अन्य उत्पादों की क्रॉस सेलिंग के अवसर भी प्रदान करती है। जिससे बैंकों की उत्पादकता तथा लाभप्रदता में गुणात्मक वृद्धि होती है।
4. **इन्टरनेट बैंकिंग –** बैंक द्वारा प्रदत्त सुविधाओं में से इन्टरनेट बैंकिंग का महत्व बहुत अधिक बढ़ गया है। क्योंकि इंटरनेट के द्वारा निधियों को एक खाते से दूसरे खाते में अंतरण करने, विभिन्न प्रकार के भुगतान के अलावा बैंकिंग के निपटान और भुगतान प्रणाली में भी काफी सीमा तक प्रयोग होता है।
5. **इलेक्ट्रानिक समाशोधन सेवा –** ईसीएस के माध्यम से टेलीफोन, बिजली के बिलों के अलावा बड़ी बड़ी कंपनियों का लाभांश, पेंशन, कमीशन, धन वापसी आदेश का भी कार्य किया जाता है। ईएफटी के माध्यम से लिखित चेक के बिना भी धनराशि एक खाते से दूसरे खाते में जमा या नामें करने की सुविधा ग्राहक को होती है।
6. **आरटीजीएस –** आरटीजीएस बैंक द्वारा प्रदत्त एक ऐसी सुविधा है, जिसमें बैंक अपने खाते से दूसरे बैंक के खाते में निधि अंतरण वरने के लिए इलेक्ट्रॉनिक रूप से अनुदेश देते है।
7. **चेक ट्रंाजेक्शन –** चेक ट्रॉजेक्शन समायोधन एक ऐसी प्रणाली है, जिसके अंतर्गत तीव्रतर भुगतान एंव निपटान के उद्देश्य से बैंक व समाशोधन गृहों के मध्य चेकों के भौतिक आवागमन के बजाय उनकी इलेक्ट्रानिक छवि संचरित की जाती है।
8. **इमेज आधारित प्रोसेसिंग –** यहॉ सुविधा में चेकों का निपटान अधिकतम दो दिन या कम समय में हो जाता है। इस सुविधा में प्रोसेसिंग तेजी से होती है। प्रोसेसिंग लागत कम होती है पेपर इस्तेमाल नही होता है। ग्राहक के खातें में रकम सीधे जमा हो जाती है।
9. **एप सुविधा –** इस सुविधा के माध्यम से ग्राहक बिना नगद भुगतान किये अपने खातें से लेन देन कर सकता है।

निष्कर्ष – भारत में आर्थिक उदारीकरण के पश्चात वैकल्पिक डिलीवरी चैनलों के माध्यम से बैंकिंग सेवाएँ प्रदान करना ग्राहक संतुष्टि का एकमात्र स्त्रोत है। अत: आदर्श एंव उत्तम ग्राहक सेवा की किसी भी स्तर पर उपेक्षा नहीं की जा सकती। आज वैश्वीकरण के कारण क्रांतिकारी सूचना प्रौद्योगिकी ने सारे विश्व को एक जगह लाकर खड़ा कर दिया है। किसमें बैंकिंग कार्यप्रणाली में व्यापक परिवर्तन के कारण बैंकिंग क्षेत्र में नए नए आयाम खुल रहे है। ग्राहकों की अपेक्षाओं को पूरा करने में प्रतिस्पर्धी भी बढ़ी है। ग्राहकों के प्रति बैंकिंग दृष्टिकोण बदला है। सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से आदर्श बैंकिंग सेवाओं के द्वारा ग्राहकों की संतुष्टि को बनाए रखना अति आवश्यक है। आदर्श बैंकिंग सेवाएँ ही आदर्श ग्राहक सेवा है जो व्यवसाय विकास का मुल आधार है, अत: बैंक के सामने अनेक चुनौतियॉ होती हैं। इन सभी चुनौतियों का सामना करतें हुए बैंक को प्रयास करना चाहिए कि पंरपरागत एंव आधुनिकता में समांजस्य स्थापित करते हुए ऐसा वातावरण बनाने का प्रयास करना चाहिए कि पुराने ग्राहक सेवाओं एंव उत्पादों का प्रयोग करते हुए साथ ही नए नए ग्राहक उनसे जुड़ते जाए । किसी भी कारोबार केन्द्र बिन्दु ही ग्राहक होते है। अत: बैंक द्वारा प्रदत्त सुविधाओं का प्रयोग शहरी क्षेत्र ग्राहक ज्यादा कर रहे है। ग्रामीण वर्ग आज भी इन सुविधाओं से अनभिज्ञ है। बैंक को ग्रामीण वर्ग को भी इन सभी सुविधाओं से परिचित कराने का प्रयास करना चाहिए।

सुझाव – राष्ट्रीयकृत बैंक गांवों में एटीएम , टेलीबैंकिंग, इंटरनेट बैंकिंग, मोबाइल बैंकिंग एवं ई.एफ.टी आदि सुविधाएँ अपने ग्राहकों तक पहुॅचाकर उन्हें आधुनिक बैंकिंग से जोड़ना चाहिए ताकि ग्रामीण उपभोक्ताओं को गांव में ही शहर की सुविधाओं के अवसर प्राप्त हो सके।

बैंक की कार्यप्रणाली पूर्णत: पारदर्शी होना चाहिए। किसी भी उपभोक्ता के साथ कोई भेदभाव नहीं होना चाहिए। सभी के साथ एक सा व्यवहार होना चाहिए ताकि निम्न आय वर्ग, अशिक्षित वर्ग, छोटे उद्योगपति तथा छोटे कृषक भी बैंक के साथ वित्तीय लेन-देन करने में ना हिचकें।

बैंक को अपने उत्पादों तथा सेवाओं के विषय में ग्राहक को समुचित एवं सही जानकारी उपलब्ध करायी जानी चाहिए। ये जानकारी हिन्दी/अंग्रेजी के साथ-साथ स्थानीय भाषा में भी जरूर उपलब्ध करायी जानी चाहिए। विज्ञापन स्पष्ट होने चाहिए ताकि ग्राहक को किसी प्रकार का भ्रम न हो। उत्पादों तथा सेवाओं पर लागू शर्तों, ब्याज दरों सेवा प्रभारों के संबंध में स्पष्ट सूचना तथा लाभ हानि के विषय में भी पूरी जानकारी ग्राहक को दी जानी चाहिए।

आधुनिक बैकिंग का प्रयोग करने पर ग्राहक को धोखाधड़ी से रोकने के लिए सही निर्देश देना चाहिए ये निर्देश बैंक को बैनर, विज्ञापन के माध्यम से समझाना चाहिए।

आधुनिक बैंकिंग में होने वाली धोखाधड़ी को रोकने के लिए सख्त कानून प्रावधान बनाया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Roy, D.Ghosh, managing People in Branch Banking B.D.P. Publishers, Calcutta, 1999
2. Everlatest in Baning, State Bank of India, officers Assoication, Diwakar Printers, Bhopal, 2006
3. Roy Abhik, the Eveolution of the State Bank of India, Volume-IV, Penguin Group, New Delhi, 2009
4. Book of Instruction, Volume-I state Bank of India, Corporate Center, Mumbai, 2003
5. Prasad L.N. Priniciples & Practice of Management sultan Chand & Sons, New Delhi, 1995

पंचायती राज व्यवस्था के संदर्भ में गांधी जी का विचार दर्शन

डॉ. रूपा मिश्रा *

प्रस्तावना – भारत गांवों का देश है और अति प्राचीन है। आदिकाल से समाज हित में यहाँ भांति-भांति के प्रयोग होते रहे हैं। अन्ततः पंचायत व्यवस्था को सर्वोत्तम पाया गया। ग्रामीण क्षेत्र में प्रशासन की इकाई के रूप भारतीय प्रजातंत्र का यह प्राचीन और प्रयोग सिद्ध प्रबंध सर्व स्वीकृत रहा है। महात्मा गांधी का मानना था कि भारत में कई फेरबदल और क्रांतियां आई। इन सबके बीच भारतीय जनता को बचा ले जाने का सबसे अधिक श्रेय इन्हीं संस्थाओं को जाता है। इन्होंने लोगों को सुखी रखा और एक हद तक उनकी आजादी की रक्षा भी की है, इसलिए मैं चाहता हूँ कि ग्रामीण संस्थाओं को नहीं छोड़ा जावे। मैं उन तमाम चीजों से डरता हूँ, जो इनका नाश करना चाहती हैं। गांधी जी को ग्राम पंचायतों से इतना लगाव था कि वे उन्हें ग्राम उद्धारक संघ कहते थे। प्राचीन भारतीय संस्कृति में स्थित गांव अर्थ तथा प्रशासन और व्यवस्था के क्षेत्र में पूर्ण स्वावलंबी थे। इनके पतन ने ग्राम में दलबंदी और लड़ाई-झगड़े, ईर्ष्या-द्वेष निरक्षरता, शरारत फूट , लापरवाही आदि दुष्प्रवृत्तियों को विकसित किया।

गांधी का कहना था कि ग्रामीण पंचायतों को प्रभावशाली तथा प्राचीन गौरव के अनुकूल होने में कुछ समय अवश्य लगेगा। यदि प्रारंभ में ही अपने विवादों का निपटारा किया करते थे। उनके निर्णय सर्वसामान्य और सर्वग्राहा हुआ करते थे।

गांधी का कहना था कि ग्रामीण पंचायतों को प्रभावशाली तथा प्राचीन गौरव के अनुकूल होने में कुछ समय अवश्य लगेगा। यदि प्रारंभ में ही उनके हाथों में दण्डकारी शक्ति सौंप दी गई तो उसका अनुकूल प्रभाव पड़ेगा इसलिए ग्राम पंचायतों को प्रारंभ में ही ऐसे अधिकार देने में सतर्कता आवश्यक है, जिनके कारण वह बदनाम न हो जावें।

शुरू-शुरू में यह जरूरी है कि पंचायत को जुर्माना करने या किसी का सामाजिक बहिष्कार करने वालों को सत्ता न दी जावे। गांवों में सामाजिक बहिष्कार अज्ञान या अविवेकीय लोगों के हाथ में एक खतरनाक हथियार सिद्ध हुआ है।

जुर्माना करने का अधिकार भी हानिकारक साबित हो सकता है और अपने उद्देश्य को नष्ट कर सकता है। उनके इस विचार का तात्पर्य पंचायत को अधिकार विहीन बनाना नहीं बल्कि अधिकारों का दण्ड देने के रूप में संयमित प्रयोग किए जाने से था।

गांधी जी कहते थे कि पंचायत कार्यों में शिक्षा के साथ ग्रामोपयोगी उद्योग को भी जोड़ा जावे। पंचायत को अधिकार भोगने वाली संस्था न बनाकर सद्भाव जागृत करने वाली रचनात्मक संस्था के रूप में विकसित किया जावे। यह संस्था गांव में सुधार का वातावरण पैदा कर सकती है। नशीली वस्तुओं का सेवन करने वाले व्यक्ति पंचायत के सद्भावपूर्ण वातावरण के कारण अपनी इन दुष्प्रवृत्तियों को छोड़ सकते हैं।

महात्मा गांधी का मानना था कि विकेन्द्रीयकरण सर्वोत्तम शीघ्रगामी तथा एक देश को सतह से निर्मित करने के लिए उपयुक्त साधन है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु उन्होंने प्रत्येक शिक्षित भारतीय को वापस गांव जाने का सुझाव दिया था। जिससे कि वह समृद्ध भारत के निर्माण में योगदान दे सकें। गांधी जी ने आर्थिक क्षेत्र में विकेन्द्रीकरण को सुख-शांति समृद्धि समानता और स्वतंत्रता सभी के लिए आवश्यक माना है। ग्रामोद्योग के विकास की योजना में उनका यही दृष्टिकोण था। उनका कहना था ग्रामोद्योग की योजना के पीछे मेरी कल्पना तो यह है कि हमें अपनी रोजमर्रा की आवश्यकताएं गांवों की बनी चीजों से ही पूरी करनी चाहिए। विकेन्द्रीयकरण की आधारशिला सादा जीवन उच्च विचार और शरीर श्रम की पवित्रता का आदर्श सन्निहित हो और वे कहते थे मेरी कल्पना भी ग्राम व्यवस्था में शोषण हो ही नहीं और शोषण हो तो हिंसा की जड़ है। बापू बताते हैं कि स्वतंत्रता का अर्थ विदेशी शासकों का चला जाना भर नहीं है। स्वतंत्रता तब तक अपूर्ण रहेगी जब तक वह देश के प्रत्येक नागरिक के हाथ में सत्ता सूत्र को न सौंप दे और राज्य अपने पास कम से कम शक्ति धारण करें। वे कहते थे राज्य तो वह सबसे अच्छा है, जहाँ शासन कम से कम होता है। सच्चे गणतंत्र की स्थापना के इच्छुक लोगों को अपने हृदय में इस सत्य को धारण कर लेना चाहिए कि सच्चा लोक राज्य केन्द्र में बैठे हुए बीस आदमियों से नहीं चल सकता। उसे हर गांव के लोगों को नीचे से चलाना होगा।

ग्राम स्वराज की पुनर्स्थापना आलस्य की विदाप पर हो सकेगी। इस कारण वे शरीर श्रय की प्रधानता को आवश्यक मानते थे। वे कहते थे हमारे देश से अगर आलस्य विदा न हुआ तो कितनी ही सुविधाए क्यों न मिले लोग भूखे ही मरेंगे। जो अन्न के दो दाने खाता है, उसे चार दाने उपजाने का धर्म स्वीकार करना ही चाहिए। बापू अपने को ग्रामवासी ही मानते थे। गांव की जरूरतें पूरी करने के लिए उन्होंने अनेक संस्थाए स्थापित की थी और ग्रामवासियों को शारीरिक, आर्थिक, सामाजिक और नैतिक स्थिति सुधारने का भरसक प्रयत्न किया था। उनका दृढ़ विश्वास था कि गांवों की स्थिति में सुधार करके ही देश को सभी दृष्टि से अपराजेय बनाया जा सकता है। ब्रिटिश सरकार द्वारा गांवों को पराश्रित बनाने का जो षड़यंत्र किया गया इसे वे समझकर ही ग्रामोत्थान को सब रोगों की एक दवा मानते थे।

महात्मा जी ग्राम पंचायत को अधिकार के अहंकार से अलग उत्तरदायित्व समझने वाली संस्था के रूप में चाहते थे। शिक्षा, सफाई, दवाखाना, कुएं, तालाब और धर्मस्थलों जैसे सार्वजनिक स्थानों की रक्षा करना उनका स्वाभाविक कर्तव्य होना चाहिए यह मानते थे। अनियमित और नियम विरूद्ध काम करने वाली पंचायत अपने ही बोझ से दबकर खत्म

* अर्थशास्त्र, पाली प्रोजेक्ट बिरसिंहपुर पॉली, जिला उमरिया (म.प्र.) भारत

हो जावेगी। गांधी जी कहते थे। जो पंचायत गांव वालों की सद्भावना खो दे उसे तोड़ दिया जावे और उसके स्थान पर दूसरी पंचायत चुन ली जावे। पंचायतीराज व्यवस्था यूं तो प्राचीन है और वह सर्वाधिक विश्वसनीय, व्यवहारिक त्वरित न्याय दिलाने वाली रही है। पंच के मुंख से परमेश्वर बोलता है। यह भरोसा हमारे धर्मपरायण पूर्वजों के अपने आचरण से मिलता रहा है। गांधी जी ने इसके मर्म को समझा और अपने कर्म से कामयाब करके विश्वास को नया धरातल दिया। आइये इस पुनीत अवसर पर हम बापू के कल्पना के पंचायत प्रबंध को आचरण से अंजाम दे। इस समय चारों ओर भौतिकता का झंझावत चल रहा है। पश्चिमी हवा भारतीयता के स्वच्छ वातावरण को प्रदूषित करने में लगी है। असमंजस्य की स्थिति है।

इसके बावजूद हम कामयाब हो सकते हैं। सेवा की सद्भावना से प्रेम–व्यवहार से दुख–सुख में सहभागी होकर परिश्रम के पसीने से दुर्दशा को दूर कर सकते हैं और पंचायतीराज व्यवस्था को गांधी जी की भावना के अनुरूप परिवार, पड़ोस, गांव, समाज और देश को उन्नत बना सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. गांधी दर्शन एवं पंचायती राज व्यवस्था – श्याम नारायण चतुर्वेदी, समय समाचार पत्र शहडोल 2 अक्टूबर 2012
2. भारत में पंचायती राज व्यवस्था – जोषी, डॉ. आर.पी. मंगलानी, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी 2003
3. भारत में पंचायती राज व्यवस्था – अरूण श्रीवास्तव, रावत पब्लिषर्स जयपुर 1994

****

जनमानस का संकल्प – जल संरक्षण

डॉ. वसुधा अग्रवाल *

प्रस्तावना – हिन्दू संस्कृति में हम विश्वास करते हैं कि हमारा पूरा जीवन जन्म से मृत्यु तक जल पर आधारित है। हम सभी उत्सवों और धार्मिक क्रियाकलापों में जल का उपयोग करते हैं। जल हमारी जीवन रेखा है। और हमारे अस्तित्व का मुख्य आधार है। विश्व की लगभग सभी सभ्यताऐं, नदियों के किनारे विकसित और पल्लवित हुई हैं। ऋग्वेद में नदी सूक्त का वर्णन है। संत महात्माओं ने नदियों को जीवनदायिनी, जीवन पोषिणी और जीवन को संरक्षित करने वाली देवी माँ का दर्जा दिया है। जल का संदेश है कि पानी कैसे हमारे व्यापार, उद्योग, रोजगार और जीवनशैली को प्रभावित करता है। कभी हमें चेतावनी देता है कि सावधान – आज जल है, तो ही हमारा कल है। जल समस्याओं का प्रकृति अनुकूल समाधान होगा। इसी तरह जल प्रकृति का नि:शुल्क उपहार अवश्य है लेकिन हमें बहुत ही सूझबूझ और पानी की कटौत्री को ध्यान में रखकर पानी को व्यय करना होगा।

गर्मी में पानी की आवश्यकता बहुत बढ़ जाती है। वर्ष 2016 में गर्मी 11 राज्यों में पानी की ट्रेन लेकर आई थी। इस वर्ष यह गर्मी ग्वालियर जिले में मार्च माह में ही आ गई है। हमारे नगरों की जलापूर्ति में कटौती अभी शुरू हो गई है। राजस्थान में पानी को लेकर अभी से आंदोलन शुरू हो गऐ हैं। इस कारण उद्योग एवं कृषकों की चिंता बढ़ गई है।

हमने देखा है कि विश्व में कुल प्रयोग किए जाने वाले जल की तुलना में 04 प्रतिशत जल ही देश में उपयोग किया जाता है। जबकि विश्व की कुल जनसंख्या का 17 प्रतिशत भारत में है, जल की प्रतिव्यक्ति उपलब्धता में भी हम 132वें स्थान पर हैं। जनगणना के हिसाब से हर व्यक्ति को मिलने वाला औसत पानी 1545 क्यूबिक मीटर है। हम भारत में प्रति व्यक्ति पानी की खपत को हर बीस वर्ष में दोगुनी करते जा रहे हैं।

जनगणना अनुसार प्रति व्यक्ति औसत जल

(क्यूबिक मीटर में)

वर्ष	जल की मात्रा (क्यूबिक मीटर में)
2001	1816
2011	1545
2025	1401
2050	1191

अनुमान के मुताबिक 2025 में प्रतिव्यक्ति मिलने वाली जल की औसत मात्रा घटकर 1401 क्यूबिक मीटर तथा 2050 में और अधिक घटकर 1191 क्यूबिक मीटर हो जाएगी। जो कि पूर्व के वर्षों की तुलना में बहुत ही कम है। सबसे पहले हमें इस धारणा को तोड़ना होगा कि हमें हमारी जरूरत का कुल पानी समुद्र, ग्लेशियर, नदी, झील अथवा हवा व मिट्टी में मौजूद नमी से हासिल हो सकता है। सच यह है कि पृथ्वी में मौजूद कुल पानी में सीधे इनसे प्राप्त मीठे पानी की हिस्सेदारी मात्र 0.325 प्रतिशत है। आज भी पीने योग्य पानी सबसे ज्यादा 1.68 प्रतिशत धरती के नीचे भूजल के रूप में मौजूद है। हमारी धरती के भूजल की सतह इतनी बड़ी है। इसमें 213 अरब लीटर पानी समा जाऐ। जबकि हमारी जरूरत केवल 160 अरब घन लीटर ही है। इस आधार पर पीने योग्य भी अभी हमारे पास अधिक है। किन्तु इसका प्रयोग हमको बहुत सम्हालकर करना होगा। तभी हमारा जल संरक्षित हो पाएगा। और आने वाली पीढ़ियों को पीने योग्य जल मिल पाएगा।

मानसून के दौरान 36 अरब घन लीटर जल जो कि बहकर चला जाता है इसे हम भूजल बैंक बनाकर उनमें सुरक्षित रख सकते हैं। बहुत ही आश्चर्यजनक बात है कि हमारे देश में 1 मीटर प्रति वर्ष की दर से भू जल स्तर गिर रहा है देश के कुछ भागों में वर्षा का जल संचय करने से 160 अरब घन मीटर (बी.सी.एस.) अतिरिक्त जल उपयोग के लिए उपलब्ध होगा। यदि देश का प्रत्येक व्यक्ति 100 वर्ग मीटर आकार के छत पर 65 हजार लीटर वर्षा का जल प्राप्त कर उसका पुनसंर्रक्षण कर सकते हैं, तो इससे चार सदस्यों वाले एक परिवार की पेयजल एवं घरेलू जल की आवश्यकता 160 दिनों तक पूरी की जा सकती है। भारत में पिछले पचास वर्षों में सिंचाई कुओं एवं बोरवेल/ट्यूबवेल की संख्या में पांच गुना वृद्धि हो गयी है। इसकी संख्या 195 लाख तक पहुंच गई है।

आज हमारे लिए चिंता का विषय है कि बढ़ती हुई जनसंख्या के अलावा लोगों द्वारा पानी का बड़ी मात्रा में दुरूपयोग इसका मुख्य कारण है। हम जानते हैं कि आने वाले वर्षों में जल की मांग और बढ़ेगी इसकी बढ़ती मांग का सामना करने के लिये हमे हमारे जल संसाधनों का किफायती दर से उपयोग करना सीखना होगा। इस परिस्थिति में जल संरक्षण की उपयोगिता और बढ़ जाती है। भावी पीढ़ियों के लिए हमारी नदियों को संरक्षित रखने की महत्ता को समझते हुए ही हमें यह कदम उठाना होगा।

जल संरक्षण एक आंदोलन बनता जा रहा है। हमें पारिस्थितिकीय तंत्र को संरक्षित और संवर्धित करने का संकल्प लेना होगा। जल संरक्षण के इस अभियान में जाति, रंग, वर्ण के भेदभाव के बिना समाज के सभी क्षेत्रों के लोग मनोयोग से शामिल हो रहे हैं। जल संरक्षण हेतु यह भी आवश्यक है कि हम नदियों के जल को भी प्रदूषण से मुक्त रखें। जल प्रदूषण का मुख्य कारण सीवेज है तथा साथ ही पूजन सामग्री, शव विसर्जन, औद्योगिक गंदगी एवं कूड़ा कचरा आदि नदियों में प्रमुख रूप से देखा जा सकता है।

गंगा जल प्रदूषण का कारण घरेलू सीवेज 11 अरब 68 करोड़ लीटर गंगा में मिलता है। 50 लीटर करोड़ उद्योगों से निकलने वाला दूषित पानी और कचरा भी सीधा गंगा में जाकर मिलता है। 62 प्रतिशत घरेलू सीवेज का निदान भी नहीं होता है। देश में 161.948 मिलियन लीटर घरेलू सीवेज

* विभागाध्यक्ष एवं प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) डॉ. भगवत सहाय शासकीय महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

प्रतिदिन शहरी क्षेत्रों से निकलता है। इसमें से 23277 मिलियन लीटर का ही ट्रीटमेंट हो पाता है, बाकी 38671 लीटर प्रतिदिन जल स्त्रोतों में सीधा मिल जाता है। यदि हमें नदियों को प्रदूषण मुक्त करना है, तो नदियों के तटों पर पौधारोपण कर उनका संरक्षण करें, तटों को अतिक्रमण से मुक्त रखें, नदी किनारों पर कुंडों को बनाया जाए जिससे उनमें पूजा की सामग्री को विसर्जित किया जा सके।

जल प्रदूषण की रोकथाम के लिए शव दाह हेतु नदियों के किनारों के आसपास मुक्तिधाम भी बनाये जा सकते हैं। जिससे नदियों का जल प्रदूषण से बच जाएगा और पीने योग्य पानी की समस्या का हल भी हो सकेगा। नदियों के प्रदूषण का एक बहुत बड़ा कारण यह भी है कि आस पास के खुले क्षेत्र में शौच करने वालों को भी यह संकल्प लेना होगा कि हम केवल शौच के लिए शौचालयों का ही उपयोग करेंगे। इस प्रकार नदियों के जल को हम संरक्षित कर प्रदूषण से मुक्त कर सकेंगे। औद्योगिक अपशिष्ट जल को भी कम करके उसे स्वच्छ बनाने हेतु ट्रीटमेंट प्लांट लगाए जाने चाहिए जिससे उसे दोबारा उपयोग में लाया जा सके।

जल उपभोग में बचत के नुस्खे अभी अपनाने होंगे जैसे - ब्रश करते समय नल को खुला रखना, बर्तन धोते समय, गाड़ी धोते समय नल खुला रखना, पानी के नल बहते रहना, खेतों में मेड़ों का न होना आदि कई ऐसे कारण है, जिनके कारण पानी की बर्बादी होती है। पेय पानी को इस प्रकार खर्च कर हम पानी की बर्बादी को रोक सकते हैं निम्न तालिका से स्पष्ट है -

घरेलू पानी के उपभोग का 135 लीटर प्रतिदिन होने वाला व्यय
(प्रतिदिन प्रति व्यक्ति)

पानी का उपभोग	लीटर
भोजन पकाने के लिए	05
नहाने के लिए	55
कपड़े धोने के लिए	20
पीने के लिए पानी	05
बर्तन धोने के लिए	10
टॉयलेट आदि के लिए	30
घर साफ करने के लिए	10

नोट :- आँकड़े सेंट्रल पब्लिक हेल्थ एंड एनवायरमेन्ट ऑर्गेनाइजेशन से लिए गए हैं।

पानी की बर्बादी को दूर करने के लिए मग बाल्टी, सिंचाई के लिए मजबूत मेंड, फब्बारों व बूंद-बूंद सिंचाई पद्धति का उयोग कर जल की बचत की जा सकती है। सरकार को भी इस ओर ध्यान देना चाहिए कि जल संग्रह के पारंपरिक तरीकों को काम में लाना चाहिये। पानी के मूल्य को समझकर अपने स्तर पर हर पानी की बूंद को संरक्षित करने का संकल्प लिया जाना चाहिए।

जल बचत के लिए नदी जोड़ो अभियान में तेजी लाकर जल प्रबंधन किया जा सकता है। इसके लिए केन्द्र और राज्यों के बीच न केवल जल प्रबंधन मसले पर बल्कि सूखे और बाढ़ से लोगों के समक्ष आयी आपदा से निपटने के लिए उचित समन्वय की आवश्यकता है। जल प्रबंधन की बात करते समय यह आवश्यक है कि उसमें सर्वप्रथम हमें जल बचत और जल संरक्षण पर जोर देना होगा। देशभर की नदियों को 30 स्थानों पर जोड़कर राष्ट्रीय ग्रिड बनाने की योजना प्रस्तावित है उस पर शीघ्र अमल हो और 2002 में सबके लिए जल के लक्ष्य को प्राप्त करने का संकल्प लेकर राष्ट्रीय जल नीति पारित की गयी थी उसकी उपलब्धियों तथा प्राप्त अनुभव को ध्यान में रखकर आगे बढ़ा जा सके।

सन् 2050 में आँकी गई जल की संभावति खपत

क्र	क्षेत्र	सतही जल	खपत भूजल	कुल
1	कृषि	463	344	807
2	घरेलू	65	46	111
3	उद्योग	57	24	81
4	ऊर्जा	56	14	70
5	अन्य	91	-	91
6	**कुल**	**732**	**428**	**1160**

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर यह माना जाता है कि पानी ऊर्जा है और ऊर्जा ही पानी है। सच यह है कि पानी के बिना न बिजली बन सकती है न ईंधन, नहीं दूसरे उत्पाद वाले ज्यादातर उद्योग चल सकते हैं। बाजार में उपलब्ध एक लीटर पानी के उत्पादन में तीन लीटर पानी खर्च होता है और 1 लीटर की पैक बोतल के निर्माण में 3.4 मेगा जूल ऊर्जा खर्च होती है। हमें भी अपना नजरिया ज्यादा व्यापक करना होगा। यदि पानी बचाना है, तो ऊर्जा बचाओ, उपभोग घटाओ। यदि ऊर्जा बचानी है तो पानी की बचत करना सीखो।

हमें प्रामाणिक तौर पर यह जांचना होगा कि पानी बरसता कम है अथवा हम बर्बाद ज्यादा करते हैं। हम सब सुखद भविष्य के लिए अपने आसपास के जल स्त्रोतों के संरक्षण में आप सभी अभूतपूर्व सहयोग दें। हमें 21वीं सदी के गहराते पानी के संकट के लिए सदैव यह ध्यान रखना होगा कि यदि जल बचेगा तभी मानव सभ्यता भी बचेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

नाबार्ड बैंक द्वारा बैंकों को कृषि वित्त वितरण एक मूल्यांकन

वन्दना सोनी *

शोध सारांश – देश में कृषि एवं ग्रामीण विकास कार्यो की वित्त व्यवस्था करने के लिए 12 जुलाई 1982 को एक शीर्षस्थ बैंक के रूप में राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक नाबार्ड की स्थापना एक उल्लेखनीय ऐतिहासिक घटना है। नाबार्ड का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्र में कृषि, लघु एवं कुटीर उद्योग दस्तकारी एवं ग्रामीण कला के विकास हेतु वित्तीय सुविधा प्रदान करना है।

नाबार्ड ने ग्रामीण साख के क्षेत्र में 6 वर्ष की कम अवधि में ही एक प्रशंसनीय कार्य किया है। इसने न केवल कृषि, बल्कि कृषि से सम्बन्धित सहायक क्रियाओं के लिए भी पुनर्वित्त सुविधाएँ उपलब्ध कराई है। 20 सूत्रीय कार्यक्रम के क्रियान्वयन में भी इसने सक्रिय सहयोग दिया है। भविष्य में ग्रामीण साख की पूर्ति पर्याप्त रूप से हो एवं विभिन्न संस्थाएँ विशेष रूप से सहकारी एवं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक आदि लक्ष्यों के अनुरूप कार्य कर सके। इस सम्बन्ध में दिशा निर्देश देना नाबार्ड का उत्तरदायित्व रहेगा एवं इन संस्थाओं की सफलता के आधार पर ही नाबार्ड की सफलता का निर्णय किया जायेगा।

प्रस्तावना – रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया द्वारा बी. शिवरामन की अध्यक्षता में गठित 'कृषि एवं ग्रामीण विकास के लिए संस्थागत साख व्यवस्था पुनरीक्षण समिति' की सिफारिश पर 12 जुलाई 1982 को कृषि एवं ग्रामीण विकास के लिये राष्ट्रीय बैंक (नाबार्ड) की स्थापना की गयी। इसका मुख्य कार्यालय मुम्बई में और इसके 16 क्षेत्रीय कार्यालय देश के विभिन्न भागों में फैले हुए है। इसमें कृषि पुनर्वित्त एवं विकास निगम तथा ऋण से जुड़े रिजर्व बैंक के दो अंगों (कृषि–ऋण विभाग और ग्राम आयोजन एवं ऋण विभाग) को मिला लिया गया है। इस प्रकार यह सारे देश के लिए स्वतंत्र शिखर पुनर्वित एजेन्सी है। इसका मुख्य उद्देश्य सहकारी समितियों, वाणिज्य बैंकों तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को मजबूत बनाना एवं ठीक दिशा में तेजी से विकास करने के लिए प्रोत्साहन देना है। इसके लिए यह पुनर्वित्त की सुविधा प्रदान करने के साथ–साथ खेती और ग्राम विकास के लिए वित्त–प्रवाहों के निर्देशन और उन पर निगरानी रखने का कार्य करता है। अपने कार्य–संचालन के लिए यह विभिन्न स्त्रोतों से वित्तीय संसाधन जुटाता है–अल्पकालिक पूंजी रिजर्व बैंक से ओर दीर्घकालिक रिजर्व बैंक के अलावा, विश्व बैंक, मुद्रा–बाजार और दूसरे देशों से द्विपक्षीय समझौतों के सहारे है।

इस बैंक का कार्य क्षेत्र बहुत व्यापक है। साख–संस्थाओं को वित्तीय सुविधा देने के अतिरिक्त यह ग्रामीण क्षेत्र में आर्थिक कार्यकलापों के सम्बन्ध में सुधार लाने के उद्देश्य से नए–नए प्रयासों की व्यवस्था करता है। किसान क्रेडिट कार्ड स्कीम इसका एक उदाहरण है, जिसकी शुरूआत 1998–99 में की गई। इसके अन्तर्गत किसानों की अल्पकालिक ऋण उपलब्ध कराने का प्रबन्ध किया जाता है। देश में कोई 27 वाणिज्य बैंक, 378 केन्द्रीय सहकारी बैंक और 196 क्षेत्रीय बैंक इस स्कीम को चला रहे है। यह स्कीम काफी–लोकप्रिय सिद्ध हो रही है। 2001–02 में जारी किए गए क्रेडिट कार्डो की संख्या लगभग 93 लाख थी और स्वीकृत ऋण की मात्रा 25,858 करोड़ रूपये थी।

स्थापना से लेकर 2002 तक कोई 275 लाख क्रेडिट कार्ड जारी किए गए और कुल ऋण की मात्रा 64 हजार करोड़ रूपये के लगभग बैठती है। 30 सितम्बर 2004 तक जारी किए गए कुल क्रेडिट कार्डो की संख्या 435 लाख थी और कुल स्वीकृत राशि 1,11,459 करोड़ रूपये थी।

इस संस्था द्वारा स्थापना काल से लेकर 2013–14 तक लगभग 31720 करोड़ रूपए से अधिक विभिन्न ऋण के रूप में प्रदान किए गए।

अपनी जिम्मेदारियों को निभाने के लिए इसे ऋण–व्यवस्था की अनेक समस्याओं और कमियों को दूर करने के लिए प्रयास करने होगें। एक तो इसे ऐसा प्रबन्ध करना होगा ताकि विभिन्न प्रकार की ऋण की जरूरतें एक ही स्थान से पूरी हो सकें। दूसरे, ऋण की वापसी के लिए समुचित प्रबन्ध किया जाना आवश्यक है, जिससे कि बकाया की समस्या का समाधान हो सके। अन्य बातों के अतिरिक्त, इसके लिए अनुकूल वातावरण तैयार करने की आवश्यकता है।

अध्ययन के उद्देश्य–

1. नाबार्ड बैंक द्वारा बैंकों को प्राप्त वित्तीय सहायता का आकलन करना।

शोध प्रविधि – अध्ययन के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए प्रस्तुत शोध पत्र में द्वितीयक संमकों को एकत्रित किया गया है। साथ ही संकलित समंकों का विश्लेषण कर निष्कर्ष निकाले गए है।

विश्लेषण – नाबार्ड ने कृषि के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। इसने राज्य सहकारी बैंकों को फसल उगाने, उनके विपणन उर्वरकों के क्रय व वितरण तथा सहकारी चीनी मिलों की कार्यशील पूँजी की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अल्पकालीन साख (18माह तक की) उपलब्ध करायी। इसी प्रकार नाबार्ड ने पुनर्वित्त योजना के द्वारा राज्य सहकारी बैंकों तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के माध्यम से मध्यकालीन साख (18 से 7 वर्ष की अवधि तक) भी उपलब्ध करायी है। इसके अतिरिक्त नाबार्ड ने राज्य सहकारी बैंकों, भूमि विकास बैंकों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों तथा व्यापारिक बैंकों के माध्यम से छोटे तथा सीमान्त किसानों को दीर्घकालीन साख (25 वर्ष की अवधि तक) उपलब्ध कराने में भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। भारतीय अर्थव्यवस्था में प्राचीन और आधुनिक लक्षण दोनों व्याप्त है। आज भी 68 प्रतिशत आबादी गाँवों में निवास करती है, जिनका प्रमुख व्यवसाय कृषि है, हालॉकि राष्ट्रीय आय में कृषि का योगदान 52 प्रतिशत से घटकर 13.9 प्रतिशत हो गया है। बहुलता में गरीबी एक लक्षण है। प्रदेश की 74 प्रतिशत जनसंख्या कृषि व कृषि आधारित उद्यमों में लगी ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। मध्यप्रदेश का मुख्य व्यवसाय कृषि है।

* शोधार्थी (अर्थशास्त्र) शासकीय सरोजिनी नायडू कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

कृषि क्षेत्र में रोजगार –

तालिका क्र–1 : कृषि संबंधित क्षेत्र में ग्रामीण जनसंख्या की अर्थव्यवस्था

क्षेत्र	वर्ष 2004–05			वर्ष 2009–10		
	पुरूष	महिला	व्यक्ति	पुरूष	महिला	व्यक्ति
मध्यप्रदेश	79.0	87.6	82.5	64.7	78.7	68.8
भारत	66.5	83.3	72.7	47.1	68.7	53.2

स्त्रोत–मध्यप्रदेश कृषि आर्थिक सर्वेक्षण रिपोर्ट 2013

उपरोक्त तालिका म.प्र. के ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कृषि क्षेत्र के महत्व को दर्शाती है। कि वर्ष 2004–05 में 82.5 प्रतिशत लोग कृषि संबंधित क्षेत्र में कार्य कर रहे है जो कि भारत के कुल औसत से अधिक है। साथ ही तालिका क्र.–1 से स्पष्ट होता है कि म.प्र. में एवं राष्ट्रीय स्तर पर कृषि पर ग्रामीण लोगों की निर्भरता में पिछले पांच वर्षो में गिरावट आई है। हालांकि गिरावट की दर म.प्र. में राष्ट्र की तुलना में कम है। इसका मतलब यह है कि अब भी दो तिहाई ग्रामीण जनसंख्या कृषि क्षेत्र पर निर्भर है।

तालिका 2 के अवलोकन एवं विश्लेषण से ज्ञात होता है कि वर्ष 2006–07 से वर्ष 2008–09 में वाणिज्यिक बैंकों की हिस्सेदारी में वृद्धि हुई है। लेकिन वर्ष 2009–10 में वाणिज्यिक बैंकों की हिस्सेदारी 48.19% से घटकर वर्ष 2010–11 में 45.66% रही। जबकि सहकारी बैंकों की वर्ष 2006–07 से वर्ष 2007–08 में वृद्धि हुई। किन्तु वर्ष 2008–09 में हिस्सेदारी कम हो कर 26.16% ही रही। जबकि वर्ष 2009–10 से वर्ष 2010–11 में हिस्सेदारी में वृद्धि हुई है।

वर्ष 2006–07 से वर्ष 2008–09 तक आर आर बी का हिस्से में कमी आई है लेकिन वर्ष 2009–10 से वर्ष 2010–11 में वृद्धि हुई है।

निष्कर्ष – कृषि वित्त के क्षेत्र में कृषि और ग्रामीण विकास का राष्ट्रीय बैंक शीर्ष बैंक है। इसलिए वह किसानों व अन्य ग्रामीण जनता को सीधे सहायता प्रदान नहीं करता अपितु सहकारी संस्थाओं, व्यापारिक बैंकों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों इत्यादि के माध्यम से सहायता प्रदान करता है।

कृषि और ग्रामीण विकास बैंक दो प्रकार की पुनर्वित सहायता प्रदान करता है। एक सहायता तो वह है, जो क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों तथा शीर्ष संस्थाओं (राज्य सहकारी बैंकों एवं राज्य सरकारों) को प्रदान की जाती है। दूसरी सहायता वह है, जो ग्रामीण संस्थागत ऋण व्यवस्था की सबसे नीचे वाली कड़ियों को (यथा ग्रामीण कृषि साख समितियों को) प्रदान की जाती है ताकि उनकी ऋण देने की क्षमता बढ़ाई जा सके।

प्रस्तुत शोध पत्र में तालिका क्र–1 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि मध्यप्रदेश का मुख्य व्यवसाय कृषि है एवं वर्ष 2004–05 में 82.5 प्रतिशत लोग कृषि संबंधित क्षेत्र में कार्य कर रहे है, जो कि भारत के कुल औसत से अधिक है। म.प्र. में एवं राष्ट्रीय स्तर पर कृषि पर ग्रामीण लोगों की निर्भरता में पिछले पॉच वर्षो में गिरावट आई है। हांलाकि गिरावट की दर म.प्र. में राष्ट्र की तुलना में कम है।

तालिका क्र–2 के अवलोकन एवं विश्लेषण से ज्ञात होता है कि वर्ष 2006–07 से वर्ष 2008–09 में वाणिज्यिक बैंकों, सहकारी बैंको, आरआरबी बैंकों के हिस्सेदारी में उतार चढ़ाव विद्यमान रहा है।

वर्ष 2009–10 में वाणिज्यिक बैंकों की हिस्सेदारी 48.19% से घटकर 2010–11 में 45.66% हो गई, जबकि सहकारी बैंकों की इसी अवधि के दौरान 34.49% से बढ़ी है। आर आर बी का हिस्सा 17.32% से बढ़कर 18.97% हो गया है। वित्त क्षेत्र में योगदान में संस्थागत अंश के बढ़ने से कृषि वित्त अधिक व्यवस्थित हुआ। किसान के क्रेडिट कार्ड सिस्टम की व्यवहारिकता ने कृषि वित्त प्रणाली को वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान किया। वर्ष 2011 तक 78 करोड़ क्रेडिट कार्ड इष्यू हुए। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि अब कृषि में वित्त का अभाव नहीं रहा, लेकिन पुनर्वसूली समस्या फसलों के यदा–कदा बिगड़ जाने के कारण बनी रहती है।

अत: निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि बैंकों द्वारा कृषि साख की मात्रा में तो वृद्धि हुई है परंतु इसमें वितरण की दृष्टि से अभी बहुत सुधार की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सिन्हा डॉ. वी.सी. एवं सिन्हा डॉ. पुष्पा ''भारतीय आर्थिक समस्याऍ एवं नीतियॉ'' लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, सन् 1989, पेज नं. 70, 72
2. अग्रवाल ए. एन ''भारतीय अर्थव्यवस्था विकास एवं आयोजन'' विश्व प्रकाशन नई दिल्ली, सन्–2005, पेज नं. 394
3. मिश्र एस. के एवं पुरी वी.के ''भारतीय अर्थव्यवस्था'' हिमालया पब्लिशिंग हाउस मुम्बई, सन् 2008, पेज नं. 397
4. स्टेट फोकस पेपर 2012–13 मध्यप्रदेश, पेज नं. 56
5. मध्यप्रदेश कृषि आर्थिक सर्वेक्षण रिपोर्ट 2013, पेज नं. 21
6. नागर डॉ. विष्णुदत्त एवं मेहता डॉ. वल्लभदास ''भारतीय अर्थव्यवस्था'' मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल सन् 2016 पेज नं. 207, 215
7. गोयल अनुपम 'यूनीफाइड अर्थशास्त्र' शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी पेज नं. 129

तालिका क्र.–2 : नाबार्ड द्वारा भू–स्तरीय ऋण की समीक्षा और पुनर्वित्तपिछले पॉच वर्षो के दौरान किसानों को मौसमी कृषि के लिये बैंकों द्वारा दिए गए ऋण का ब्योरा इस प्रकार है (रूपये लाख में)

वर्ष	CBs	CCBs	RRBs	कुल	वृद्धि दर
2006–07	316998.00 (46.67)	251879.00 (37.08)	110366 (16.25)	79243.00 (100)	43.83
2007–08	354655.23 (44.17)	312505.00 (38.92)	135732.75 (16.91)	802893.00 (100)	18.20
2008–09	560079.00 (58.36)	251053.00 (26.16)	148644.45 (15.48)	959776.45 (100)	19.53
2009–10	540702.00 (48.19)	387062.00 (34.49)	194367.00 (17.32)	1122131.00 (100)	16.92
2010–11	650533.00 (45.66)	503786.00 (35.36)	270269.00 (18.97)	1424588.00 (100)	26.95

स्त्रोत – स्टेट फोकस पेपर 2012–13 मध्यप्रदेश

अनुसूचित जनजातियों का शैक्षिक आंकलन (धार जिले के संदर्भ में)

डॉ. मीनाक्षी पँवार *

प्रस्तावना – शिक्षा का चरम लक्ष्य मानव जाति और समाज का हर प्रकार से विवेक सम्मत राह पर चलना ही हुआ करता है। व्यक्ति के स्तर पर शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति के व्यक्तित्व का हर प्रकार से सम्पूर्ण विकास करना ही है। यदि शिक्षा व्यक्ति एवं समाज के विकास में इनके आचरण व्यवहार एवं जीवन मूल्यों में सन्तुलन करने का सार्थक प्रयास नहीं कर पाती, तो उसे उचित एवं सार्थक शिक्षा नहीं कही जा सकती।

शिक्षा किसी भी देश के विकास की धुरी होती है। इस धुरी के मजबूत न होने पर देश के विकास का चक्र कमजोर पड़ जाता है। वस्तुत: जिस तरह हम समाज बनाना चाहते है अथवा देश में जिस तरह के नागरिक होने की आवश्यकता हम महसूस करते है, उसका आधार हमारी शिक्षा ही है। इसी संदर्भ में मध्यप्रदेश के धार जिले के अनुसूचित जाति के शैक्षिक विकास के आंकलन की बात करेंगे।

शोषण, गरीबी और पिछड़ेपन का सबसे बड़ा कारण बतलाना आसान नहीं है, जो अशिक्षित है, वे उन्नति के विभिन्न अवसरों का लाभ भी नहीं उठा पाते। यह स्थिति अनुसूचित जनजातियों के संदर्भ में विशेष रूप से देखी जा सकती है। वे पिछड़े, शोषित और गरीब इसी कारण है कि उन तक शिक्षा की रोशनी नहीं पहुंच पाई है। इसका परिणाम यह हुआ कि स्वतन्त्रता के पश्चात् विकास के जो अवसर समाज को मिले उनका पूरा लाभ अनुसूचित जनजातियों के लोग नहीं उठा पाए। अब शासन का विशेष ध्यान अनुसूचित जनजाति में शिक्षा के प्रसार और शिक्षा के गुणात्मक सुधार पर केन्द्रित हो रहा है। शिक्षा विभाग ने ऐसी समुचित व्यवस्थाएँ की है, जिससे कि वे कोई भी आदिवासी बालक-बालिका गरीबी के कारण शिक्षा प्राप्त करने से वंचित न रहे।

अध्ययन क्षेत्र – अनुसूचित जनजातियों के विकास में शैक्षणिक स्थिति का प्रभाव विषयान्तर्गत लेखिका ने अपने अध्ययन में पष्चिमी मध्यप्रदेश के जिला धार को अध्ययन का केन्द्र बिन्दु बनाया है। क्षेत्र विशेष के विकास की विस्तृत और सूक्ष्मतम अवधारण के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि अध्ययन क्षेत्र न केवल व्यापक हो वरन् वहा उस समुदाय के सदस्यों का बाहुल्य भी हो।

2011 की जनसंख्या के संदर्भ में धार जिले की कुल जनसंख्या में अनुसूचित जनजाति का 55.09 प्रतिशत है। वस्तुत: अध्ययन की विश्वसनीयता और निश्चित परिणामों की प्राप्ति तथा लक्ष्य के रेखांकन के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि विषय के अनुरूप अध्ययन क्षेत्र की सीमाएँ निश्चित हो। विषय विश्लेषण में इस बात की पुष्टि भी निश्चित होना चाहिए कि उस क्षेत्र की आधारभूत विशेषताएँ क्या है, क्योंकि किसी क्षेत्र विशेष की नगण्य विशेषताओं की वजह से अध्ययन की गरिमा शिखर तक नहीं पहुंचती। शैक्षणिक विकास के विषय में प्रवेश करने के लिए यह जानकारी भी आवश्यक है कि वहां विकासखण्डीय संख्यात्मक स्थिति क्या हैं?

तलिका क्र. 1 : धार जिले की विकासखण्ड स्तरीय अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्यात्मक स्थिति

क्र.	विकासखण्ड	अनुसूचित जनजाति जनसंख्या
1	बदनावर	78929
2	बाग	101368
3	डही	94176
4	धार	15557
5	धरमपुरी	73508
6	गंधवानी	129215
7	कुक्षी	67693
8	मनावर	82839
9	नालछा	68946
10	निसरपुर	44421
11	सरदारपुर	146507
12	तिरला	60901
13	उमरबन	99507

Internet : Report Printed on 10-06-2016

धार जिले में कुल 13 विकासखण्ड है। जिनमें 12 विकासखण्ड आदिवासी बाहुल्य है। इस दृष्टि से धार जिला आदिवासी क्षेत्रान्तर्गत आता है।

अध्ययन का उद्देश्य – समाज विज्ञान के अन्तर्निहित मानव शास्त्र मानव कल्याण की ओर अपनी अवधारणा को स्पष्ट करता है। मानव शास्त्र में ऐसे मनुष्य की कल्पना की जाती है, जो न केवल दीन-हीन का वरन् सदियों से उपेक्षित और प्रताड़ित भी हो। वस्तुत: इसीलिए मानवशास्त्रीय अवधारणा में अनुसूचित जनजातियों की शैक्षणिक स्थिति पर प्रकाश डाला जाना उचित प्रतीत हुआ। धार जिले में अनुसूचित जनजातियों का बाहुल्य और उनकी अभावग्रस्त सामाजिक व्यवस्था यह अपेक्षा करती है कि शिक्षा क्षेत्र में उन कल्याणकारी नीतियों-रीतियों केा यहां निवेशित किया जाए तो इस समाज के लिए वरदान सिद्ध हो।

शोध प्रविधि – समाज विज्ञान की एक शाखा के रूप में राजनीति विज्ञान का अध्ययन और अधिक महत्वपूर्ण होता जा रहा है, वह इसलिए की वर्तमान का विकासवादी ढ़ांचा सम्पूर्ण रूप से राजनीति पर ही अवलम्बित है। किसी भी विज्ञान की गंभीरता, तथ्यात्मक, सूक्ष्मता तब तक पूर्णता पर नहीं पहुंचती जब तक कि उसे विधिपूर्वक सम्पन्न न किया जाए। किसी भी विषय के अध्ययन को वैज्ञानिक बनाने के लिए शोधार्थी को उस पद्धति से गुजरना

* प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शहीद भीमानायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

होता है जो वैज्ञानिक है, क्योंकि वैज्ञानिक पद्धति ही शोधक या अध्येता को अपने को निजी मूल्यों से दूर करने की सलाह देती है। वैज्ञानिक अध्ययन की अन्तर्वस्तु में प्रत्येक शोधक को गहन शोध के उस द्धार से गुजरना पड़ता है। जिसमें निदर्शन, अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रक्षेपी प्रविधियाँ, व्यक्तिवृत्त अध्ययन, पेनल, अनुमापन, संकेतन एवं सारणीयन, विश्लेषण, व्याख्या एवं संदर्भ, सांख्यिकीय आदि भांति प्रकार की इकाईयां संलग्न होती है।

संख्यिकीय प्रयोग – सामाजिक अनुसंधान में सांख्यिकीय तथ्यों का महत्वपूर्ण स्थान है। राष्ट्रीय स्तर से प्रादेशिक स्तर और जिला स्तर पर आंकड़ों की कई श्रेणियाँ अलग-अलग प्रभागों में अलग-अलग स्तर पर सामाजिक विज्ञान के अध्ययन को गति प्रदान करने के लिए सहयोगी सिद्ध हुई है।

ऐसा यहा जाता है कि सांख्यिकीय दर्शन अध्ययन की सारगर्भित का वह पृष्ठ है, जिसे प्रस्तुत कर शोधार्थी अपने अध्ययन को और अधिक सारर्भित और महत्वपूर्ण बना लेता है। इस अध्ययन में सांख्यिकी विधि को सामान्य सांख्यिकी विधि के रूप में बतौर अध्ययन व्यावहारिक रूप से उपयोग किया है।

तथ्य विश्लेषण – धार जिले के आदिवासी क्षेत्रों में आदिम जाति कल्याण विभाग द्धारा शिक्षा के प्रसार के लिए प्राथमिक विद्यालय से लेकर उच्चतर माध्यमिक विद्यालय तक का संचालन किया जाता हैं। म.प्र. सरकार द्धारा जिले में प्राथमिक एवं माध्यमिक शालाओं में छात्र संख्या के मान से शिक्षकों की व्यवस्था करने के कदम उठाये गये है तथा हायर सेकेण्डरी स्कूल में विषयवार शिक्षकों की व्यवस्था की गई है। एक शिक्षकयी शालाओं में एक अतिरिक्त शिक्षक देने की दिशा में आदिम जाति कल्याण विभाग को उल्लेखनीय सफलता मिली है।

अनुसूचित जनजातियों के शैक्षणिक विकास में प्राथमिक शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। महात्मा गांधी ने अपने एक अभिभाषण में कहा था। संपूर्ण व्यक्ति के निर्माण में प्राथमिक शिक्षा वह सीढ़ी है, जहां विकास का स्वप्न बुना जा सकता है। राजनीतिक समीकरण और प्रशासनिक सोच के द्धारा शिक्षा का जो लोकव्यापीकरण स्पप्न रचा गया है, वह निरर्थक नहीं हैं।

जिले में अनूसूचित जनजाति की जनसंख्या का कुल जनसंख्या से 55.09 प्रतिशत है। आदिवासी प्रतिशत के समंकीय विवरण के सम्बन्ध में यह स्पष्ट है कि आदिवासियों की संख्या के अनुपात में ग्रामीण जनसंख्या जहां आदिवासियों का प्रतिशत सर्वाधिक है, में शैक्षणिक स्थिति को देखते हुए आदिवासी छात्र-छात्राओं की स्थिति संख्यात्मक रूप में अनुमान में लाई जा सकती है। धार जिले के शैक्षणिक स्तर को स्पष्ट करने के लिए शैक्षणिक संस्थाओं में विद्यार्थियों की संख्या तालिका क्र. 2 से स्पष्ट है।

तालिका क्र. 2 (देखिए अंतिम पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट है कि प्राथमकि विद्यालय में कुल छात्र-छात्राओं की संख्या क्रमश: 159385 एवं 146938 है। माध्यमिक विद्यालय में पढ़ने वाले छात्र-छात्राओं की संख्या क्रमश: 66710 एवं 52157 है। हाईस्कूल में कुल छात्र-छात्राओं की संख्या क्रमश: 23904 एवं 16026 है। आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि अध्ययनरत् विद्यार्थियों की संख्या गिरते हुए क्रम में आंकी गई है। जबकि हायर सेकण्डरी में छात्र-छात्राओं की पर्याप्त संख्या है। वहीं महाविद्यालय स्तर पर अध्ययनरत् विद्यार्थियों की संख्या में भारी गिरावट आयी है।

तालिका क्र. 3 (देखिए अंतिम पृष्ठ पर)

तालिका 3 के संदर्भ में धार जिले की समंकीत स्थिति दर्शाई गई है। यहां पर प्राथमिक शालाएं 3759 है, माध्यमिक स्तर की 760 शालाएँ छात्र-छात्राओं के लिए है। हाईस्कूल तक की 166 शालाएँ बालक बालिकाओं के लिए है। धार जिले में हायर सेकेण्डरी (10+2) छात्र छात्राओं के लिए 103 है। पर सु:खद और महत्वपूर्ण पहलू यह है कि यहां पर कुल 8 महाविद्यालय है। यह आदिवासी उपयोजना क्षेत्रान्तर्गत हैं। महाविद्यालयीन स्तर की संस्थाओं को छोड़कर 85 प्रतिशत शैक्षणिक संस्थाएँ ग्रामीण अंचलों में है। इस आदिवासी बहुल जिले में ग्रामीण जनसंख्या के साथ जिन आदिवासी बालक-बालिकाओं की संख्या का अध्ययन के समय आंकलन किया गया है, इससे स्पष्ट है कि म.प्र. शासन ने अनुसूचित जनजातियों के शैक्षणिक उत्थान के लिए जो प्रयास किए है, निश्चित ही सराहनीय है।

तालिका क्र. 4 (देखिए अंतिम पृष्ठ पर)

तालिका 4 का विश्लेषण करने से स्पष्ट है कि अनुसूचित जनजाति की सर्वाधिक संख्या गंधवानी तहसील में है, जो कुल जनसंख्या का 90.40 प्रतिशत है तथा धार जिले में औसत साक्षरता 52.45 प्रतिशत है।

निष्कर्ष :

1. म.प्र. शासन ने अनुसूचित जनजातियों के शैक्षणिक उत्थान के लिए न केवल कस्बाई एवं शहरी क्षेत्रों में ही शिक्षा को बहुआयामी दृष्टि प्रदान की है वरन् दुरस्थ ग्रामीण क्षेत्रों में जहां अनुसूचित जनजाति फल्याओं में निवास करते है, में भी शालेय शिक्षा की व्यवस्था की है।
2. अनुसूचित जनजातियों के बारे में कहा जाता है कि वे शिक्षा के प्रति सजग नहीं है, यह कथन कुछ अर्थो में सही हो सकता है, किन्तु पूरे वर्ग के साथ इस तरह की टिप्पणी न ही तर्क संगत है और न ही न्याय जनक। जनजातीय वर्ग को दो भागों में विभक्त किया है - भील और भिलाला। भील से भीलाला वर्ग शिक्षा के प्रति न केवल सजग है, वरन् चौकन्ना भी है।
3. अनुसूचित जनजातियों में भील समुदाय के शैक्षिक विकास को लेकर म.प्र. सरकार आज भी चिंतित है। चिंतावाजिब है क्योंकि आजादी के बड़े अन्तराल के बाद भी हम उन्हें संविधान द्धारा प्रदत्त सुविधाओं की सुखद परिणति में नहीं ढाल पाए हैं।
4. पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से विकास की सर्वाधिक इकाईयाँ क्रियाशील रही। अपनी-अपनी जमीन से जुड़े राजनीतिज्ञों ने अपने क्षेत्रों में विकास के लिए और विशेषकर अनुसूचित जनजातियों के शैक्षिक विकास के लिए विशेष प्रयास किये हैं।
5. सर्वेक्षण के समय ग्राम में एक शिक्षित सरपंच ने कहा कि अधिकांश निर्धन भील परिवार में व्यक्ति अपने बच्चों को पढ़ने के लिए मात्र इसलिए भेजते है कि उनके बच्चों को छात्रवृत्ति के रूप में कुछ रूपया मिलेगा। उसने यह भी कहा कि भिलाला समुदाय के पालक अपने बच्चों को नियमित रूप से पढ़ने के लिए विद्यालय भेजते है तथा शासन की योजनाओं का पूरा-पूरा लाभ उठाते हैं।
6. सर्वेक्षण से यह भी निष्कर्ष निकला है कि प्राथमिक, माध्यमिक, हायर सेकण्डरी में अध्यापन करवा रहे शिक्षकों की संख्या जनसंख्या के अनुपात में बहुत कम देखी गई है।
7. सर्वेक्षण से यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि शासकीय सुविधाएँ, आरक्षण व्यवस्था, प्रशिक्षण व्यवस्था और अन्य प्रकार की शैक्षणिक सुविधाओं का लाभ लेकर अनुसूचित जनजातियों के विद्यार्थियों में उत्साहजनक स्थिति देखी गई है।

मध्यप्रदेश शासन ने अनुसूचित जनजातियों की शिक्षा के लिए जो

कदम उठाए है और जो सुविधाएँ मुहैया की है। वह निश्चित ही प्रजातांत्रिक वातावरण में मानवीय पहलू का एक प्रशंसनीय कदम हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. मीनाक्षी पँवार - जनजातियों के विकास में राजनीतिक परिस्थितियों का प्रभाव, राधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली, 2014
2. डॉ. ब्रजकिशोर प्रसाद सिंह-श्रेष्ठ हिन्दी निबन्ध, नमन प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009
3. आदिवासी विकास कारगर पहल, शैक्षणिक उन्नति, आदिम जाति कल्याण विभाग संचालनालय, म.प्र. भोपाल।
4. इन्टरनेट से प्राप्त।
5. महात्मा गांधी - हरिजन।
6. व्यक्तिगत सर्वेक्षण के आधार पर।

तालिका क्र. 3 : धार जिले की तहसीलवार शैक्षणिक संस्थाओं का विवरण

क्र.	तहसील	प्राथ. विद्या.	मध्य. विद्या.	हाई स्कूल	हायर सेकण्डरी	महाविद्यालय	व्याव. संस्थाएँ	अन्य
1.	धार	735	213	40	27	02	07	06
2.	बदनावर	346	126	13	15	01	00	00
3.	कुक्षी	804	104	26	15	01	01	00
4.	डही	277	41	09	04	00	00	00
5.	मनावर	534	55	15	96	01	01	00
6.	सरदारपुर	388	104	17	12	01	00	01
7.	गंधवानी	366	44	09	04	00	00	00
8.	धरमपुरी	309	73	13	12	02	01	00
	योग -	**3759**	**760**	**166**	**103**	**08**	**10**	**07**

स्त्रोत :- इन्टरनेट द्वारा।

तालिका क्र. 4 : धार जिले की तहसीलवार अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या/ कुल जनसंख्या से प्रतिशत, साक्षरता तथा साक्षरता प्रतिशत

क्र.	तहसील	अनुसूचित जनजाति जनसंख्या	कुल जनसंख्या से प्रतिशत	कुल साक्षर	प्रतिशत
1	धार	149197	34.57%	213627	61.08%
2	बदनावर	69324	35.79%	89892	56.91%
3	कुक्षी	263145	73.87%	114891	40.30%
4	मनावर	159337	62.50%	108270	52.37%
5	सरदारपुर	128947	56.00%	92210	50.12%
6	गंधवानी	110438	90.40%	40470	42.87%
7	धरमपुरी	68046	44.93%	75964	61.38%
	कुल योग -	**948583**	**54.50%**	**735324**	**52.45%**

तालिका क्र. 02

धार जिले की तहसीलवार शैक्षणिक संस्थाओं में विद्यार्थियों की शैक्षणिक स्थिति का विवरण

क्र.	तहसील	प्राथमिक विद्यालय			माध्यमिक विद्यालय			हाईस्कूल			हायर सेकेण्डरी			महाविद्यालय		
		छात्र	छात्राएँ	योग	छात्र	छात्राएँ	योग	छात्र	छात्राएँ	योग	छात्र	छात्राएँ	योग	छात्र	छात्राएँ	योग
1	धार	31606	30734	623340	19596	13338	32934	7535	5399	12934	13349	8332	21681	2456	1690	4146
2	बदनावर	18735	16491	35226	917	4622	5539	2163	1068	3231	1556	1361	2917	204	183	987
3	कुक्षी	25013	23871	48884	9395	6951	16346	3239	2104	5343	6492	5825	12317	402	453	855
4	डही	8898	8903	17801	3967	2672	6639	920	656	1576	1201	1076	2277	0	0	0
5	मनावर	27211	22016	49227	8509	6216	14725	3350	1674	5024	5652	4639	10291	453	372	825
6	सरदारपुर	19675	18494	38169	13993	9867	23860	2349	2266	4615	6537	3681	10118	234	211	445
7	गंधवानी	14066	13590	27656	3318	2670	5988	1036	410	1446	2449	2076	4525	0	0	0
8	धरमपुरी	14181	12839	27020	7015	5821	12836	3312	2449	5761	1881	1761	3642	420	550	970
	योग –	**159385**	**146938**	**306323**	**66710**	**52157**	**118867**	**23904**	**16026**	**31630**	**39117**	**28651**	**67768**	**4169**	**3459**	**8228**

स्त्रोत :– इन्टरनेट।

म.प्र. के धार जिले में अनुसूचित जनजाति वर्ग का भौगोलिक एवं सांस्कृतिक स्वरूप का अध्ययन

दीवानसिंह बारिया *

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश के पश्चिम में स्थित धार जिला अनुसूचित जनजाति या आदिवासी बाहुल्य जिला है। मध्यप्रदेश के आदिवासी एवं पिछड़े जिलों में धार अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है। मालवा के ऐतिहासिक नगरों में से एक धार जिला प्राचीन भारतीय संस्कृति से पूर्ण होकर कई विशेषताओं के कारण अपनी पृथक पहचान के लिए प्रसिद्ध है। धार नाम की व्युत्पत्ति धरा नगरी' या तलवार की धार' के नगर के रूप में हुई है। शक्ति के द्धारा या तलवार के बल पर इसे अधिगृहित किया गया होगा, जो बाद में धार के रूप में परिवर्तित हो गया। धार जिले का इतिहास गौरवपूर्ण एवं अत्यन्त प्राचीन है। जिसकी वर्तमान में बहुसंख्यक जनसंख्या अनुसूचित जनजातियों की है। धार को 18 मई, 1948 से जिले का स्तर प्रदान किया गया जो आज भी अक्षुण्ण है, जिसका सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक महत्व आज भी विद्यमान है।

धार जिले में अनुसूचित जनजाति – जनजातीय जनसंख्या प्रदेश के सभी जिलों में समान रूप से फैली हुई नहीं है। जनजातीय जनसंख्या की दृष्टि से धार जिला दूसरे नम्बर पर आता हैं जिले में वर्ष 2011 की जनगणना में यहाँ की जनसंख्या बढ़कर 2184672 हो गई है। धार जिले की प्रमुख जनजाति भील है, जो कि तीन उपजातियों (भील, भीलाला तथा पटेलिया) में बँटी हुई है।

तालिका क्रमांक –1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक – 2 : धार की ग्रामीण अनुसूचित जनजातीय जनसंख्या वर्ष – 2011

S.	CD Block	Scheduled Tribes Population		
		Person	Male	Female
1	Badnawar	205523	103953	101570
	Rural	205523	103953	101570
	Urben			
2	Sardarpur	268552	136504	132048
	Rural	268552	136504	132048
	Urben			
3	Dhar	113927	58464	55463
	Rural	105321	53880	51441
	Urben	8606	4584	4022
4	Gandhwani	156046	77672	78374
	Rural	156046	77672	78374
	Urben			
5	Kukshi	82449	41454	40995
	Rural	82449	41454	40995
	Urben			
6	Dahi	105733	53261	52472
	Rural	105733	53261	52472
	Urben			
7	Manawar	142252	71752	70500
	Rural	142252	71752	70500
	Urben			
8	Dharampuri	135203	68344	66859
	Rural	135203	68344	66859
	Urben			

Source - www.censusindia.gov.in 2011

तालिका क्रमांक –3 : धार की नगरीय अनुसूचित जनजातीय जनसंख्या वर्ष – 2011

S.	Aria Urban	Scheduled Tribes Population		
		Person	Male	Female
1	Badnawar	20917	10872	10045
2	Rajgarh	20668	10403	10265
3	Sardarpur	7293	3773	3520
4	Dhar	93917	48413	45504
5	Pithampur	126200	70250	55950
6	Mandav	10657	5373	5284
7	Dehrisaray	8606	4584	4022
8	Kukshi	28331	14490	13841
9	Bagh	9274	4669	4605
10	Dahi	8509	4271	4238
11	Manawar	30393	15486	14907
12	Dhamnod	32093	16723	15370
13	Dharampuri	16363	8305	8058

Source - www.censusindia.gov.in

इस जिले में 8 तहसीलें – बदनावर, सरदारपुर, कुक्षी, इही, मनावर, गंधवानी, धार तथा धरमपुरी है। यहाँ पर 13 विकासखण्ड है। जिले में कुल 1535 ग्राम है जिसमें आबाद ग्रामों की संख्या 1477 है। यह जिला राज्य में जनसंख्या की दृष्टि से सातवें क्षेत्रफल की दृष्टि से नौवें स्थान पर आता है।

उद्देश्य :

1. धार जिले में अनुसूचित जनजाति वर्ग की भौगोलिक, सामाजिक, आर्थिक,एवं सांस्कृतिक स्थिति का अध्ययन करना।
2. अनुसूचित जनजाति वर्ग में शिक्षा के प्रति जागरूकता का अध्ययन करना।
3. अनुसूचित जनजाति में कमजोर वर्ग को अपने अधिकारो के प्रति जागरूकता का अध्ययन करना।

भौगोलिक स्थिति – मध्यप्रदेश के धार जिले का भौगोलिक क्षेत्रफल लगभग 8153 वर्ग कि.मी. है। मध्यप्रदेश के दक्षिण–पश्चिम भाग में धार समुद्र तल से औसत 588 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। धार जिले के उत्तर में रतलाम और उज्जैन जिला है, पूर्व में इन्दौर तथा पश्चिम में झाबुआ और

* शोधार्थी (राजनीतिशास्त्र) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

अलीराजपुर जिला है, दक्षिण में पुण्य सलिमा माँ नर्मदा तथा बड़वानी और खरगौन जिले धार की सीमा को निर्धारित करते है। धार मध्यप्रदेश की औद्योगिक राजधानी इन्दौर से लगभग 55 कि.मी. की दूरी पर स्थित है। विंध्याचल पर्वतमाला के भाग में मध्यप्रदेश के दक्षिण पश्चिम में स्थित धार मालवा के पठार के दक्षिण तथा निमाड़ के मध्य में स्थित है।

धार जिला 2201' से 2309' उत्तरी अक्षांश तथा 74028' से 75042' पूर्वी देशान्तर के मध्य फैला है। यहाँ का अधिकतम तापमान 45 डिग्री सेंटीग्रेट तक तथा न्यूनतम 11 डिग्री सेंटीग्रेट तक रहता है। वार्षिक वर्षा अधिकतम 546 मि.मी. एवं नयूनतम 117.4 मि.मी तक होती है।

प्राकृतिक संसाधन – धार जिला प्राकृतिक सम्पदा से भरपुर जिला है। खनिज पदार्थो के प्रचुर भण्डार यहाँ पाए जाते है। पहाड़ी या विंध्यश्रेणी के वनों में साल, सागौन, महुआ, धावड़ा एवं तेंदू के वृक्ष पाए जाते है तो पठारी क्षेत्र कृषि की दृष्टि से महत्वपूर्ण है, पठारी मैदानी एवं नर्मदा घाटी में पाए जाते है।

धार का खनिज सम्पदा की उपलब्धता की दृष्टि से धार का स्थान महत्वपूर्ण नहीं है फिर भी यहाँ पाए जाने वाले खनिजों में इमारती पत्थर, चुने का पत्थर, स्लेट का पत्थर, चुने बालूरेती के अतिरिक्त कहीं-कहीं मैग्नीज भी पाया जाता है। खनिज सम्पदा धार जिले के जीराबाद, खलघाट, धरमपुरी, चिराखान, सरदारपुर, अमझेरा बाग में पाई जाती है। वर्तमान में हिन्दुस्तान का डेट्राइट पीथमपुर के द्वारा धार जिला हिन्दुस्तान के औद्योगिक क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान रखते है, जो निरन्तर विकसित हो रहा है।

धार जिले में प्रवाहित होने वाली नदियों में नर्मदा, चम्बल, हथनी, माही, चामला, मान बाधनी, कारम उरी, बाघेरी प्रमुख है। धार जिले की नदियों ने विन्ध्यश्रेणी से निकलकर उपजाऊ मिट्टी के मैदानों के निर्माण में प्रमुख योगदान दिया है। प्रमुख फसलों में कपास, ज्वार, तिल्ली, मक्का, सोयाबीन, गेहू, चना एवं मिर्च है।

मानचित्र क्रमांक – 1 : धार जिले की नदियाँ एवं राष्ट्रीय राजमार्ग

www.dhar.nic.in

पर्यटन स्थल – अनेक संस्कृतियों की संगमस्थली धार पर्यटन की दृष्टि से काफी समृद्धशाली है। धार जिले में यत्र-तत्र बिखरे मंदिरों, स्मारकों और दुर्गो के ध्वंसावशेषों पर परमारकालीन, इस्लामिक एवं मराठा शैली की कहानियाँ अंकित है। धार स्थित भोजशाला, मस्जिद, काल भैरव का प्राचीन स्थल, कालिका मंदिर, धार किला, होशंगशाह का मकबरा, कमाल मौला की मजार है, नर्मदा की सहायक बहारी नदी के किनारे प्रसिद्ध बाग की गुफाएँ मानव निर्मित आश्चर्य का प्रकटीकरण है। सुरी का स्थान एवं भोपावर मंदिर प्रमुख है। धार जिले को विशिष्टता प्रदान करने में माण्डव का पर्यटन की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान हैं, 200 फीट की उँचाई पर स्थित तीन और से खाईयों से घिरा मखमली हरी पहाड़ियों माण्डु की सम्पत्ति है। यहाँ रानी रूपमती का महल दर्शनीय स्थल है, जहाँ से रानी रूपमती प्रतिदिन पवित्र नर्मदा नदी के दर्शन करती थी।

अनुसूचित जनजाति की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का संक्षिप्त विवेचन – धार जिले में अनुसूचित जनजाति की बहुलता है। जनजातियाँ, आदिमजाति या आदिवासी ट्राइब्स' का हिन्दी रूपान्तरण है। अनुसूचित जनजाति भारतीय संदर्भ में एक विशिष्ट स्थिति को स्पष्ट करने वाला शब्द है। भारतीय समाज में एतिहासिक काल से लेकर आज तक वनवासी आदिम समूहों का उल्लेख मिलता है। जनजातियाँ भारतीय सभ्यता संस्कृति और समाज के वे अंग है जो विकास की प्रक्रिया में पिछड़ गए है तथा हमारी विकास प्रक्रिया में भी अपने विचारों तथा जीवन पद्धति को छुपाए हुए है, आधुनिक सभ्यता से पिछड़े इस वर्ग की अपनी अनेक समस्याएँ है। अनुसूचित जनजातियों को आदिम जाति, आदिवासी, गिरिजन, पिछड़े हिन्दू या अनुसूचित नामों से जाना जाता है। विश्व की सर्वाधिक जनजातियाँ भारत में निवास करती है। वर्तमान में भारत में लगभग 550 अनुसूचित जनजातियाँ है।

अनुसूचित जनजातियों की अपनी परम्पराएँ एवं मान्यताएँ होती है। प्रकृतिपुत्र की अवधारणा से युक्त सुदुर वनाच्छादित पर्वतीय क्षेत्र में अपनी पारस्परिक जीवनशैली के विख्यात जनजातियों को स्वतंत्रता के पश्चात् आरक्षण प्रदान करने के उद्देश्य से सूचीबद्ध किया गया है।

धार जिला मध्यप्रदेश के अनुसूचित जनजाति बहुल जिलों में विशिष्ट स्थान रखता है। जिले में अनुसूचित जनजाति के अन्तर्गत भील, भीलाला, बारेला, एवं पटेलिया जनजातियाँ रहती है। बारेला एवं पटेलिया की तुलना में यहाँ विशेषकर भिलाला एवं भील बहुसंख्यक है। इनकी परम्पराओं तथा संस्कृति में मालवी तथा निमाड़ी संस्कृति का समावेश है। भील और भिलाला जनजाति प्राचीन समय से ही इस जिले में निवासरत है। अनुसूचित जनजाति वर्ग की सभी उपजातियों में भीलाले सबसे अधिक उन्नत है। आर्थिक, शैक्षणिक एवं सामाजिक क्षेत्र से लगाकर प्रशासकीय आदि सेवी वर्ग में भी सर्वाधिक अनुसूचित जनजाति वर्ग का प्रतिनिधित्व इसी उपजाति के द्वारा किया जा रहा है।

सांस्कृतिक स्वरूप – धार जिले में भील/भीलाला समुदाय पितृ प्रधान है। फलियों का मुखिया वंशानुगत होता है। जिसके निर्णय सभी को मान्य होते है। हिन्दुओं की तरह इनमें भी संस्कार प्रथाएँ पाई जाती हैं जन्म संस्कार, मुण्डन, विवाह, पुनर्विवाह, विधवा विवाह, विवाह विच्छेद, अन्त्येष्ठि संस्कार, धर्म एवं अंधविश्वास, जादू-टोने, शगून-अपशगून के साथ-साथ गोद प्रथा, दागने की प्रथा, घूंघट प्रथा आदि प्रथाएँ इनकी सामाजिक संरचना के प्रमुख अंगों में सम्मिलित है। पारिवारिक संरचना में पितृ सत्तात्मक परिवार की प्रथा है। शराब एवं वैवाहिक स्वतंत्रता इनकी प्रमुख विशेषता है।

भील एवं भीलालों की सांस्कृतिक गतिविधियों में इन्होंनें सामाजिक, भौगोलिक, आर्थिक व्यवस्थानुरूप अपनी संस्कृति का विकास किया है। सामाजिक परम्पराओं, रूढ़ियों, प्रथाओं, रीति-रिवाजों से आज भी अनुसूचित जनजाति का परम्परागत समाज संचालित होता है। देशकाल परिस्थितियों के अनुरूप इनकी संस्कृति में भी परिवर्तन परिलक्षित होता है। अनुसूचित जनजाति वर्ग की संस्कृति की झलक इनके द्वारा मनाए जा रहे त्यौहारों में प्रकट होती है। त्यौंहार मानव सभ्यता के सोपान होते है, भगोरिया, महुल्या, होली मवेशी मेला, दशहरा, दिवाली आदि सम्पन्न किए जाते है। मेलें, तमाशें, हाट-बाजार, नृत्य, गीत-संगीत, अनुसूचित जनजातियों के लिए आज भी

आकर्षण के प्रमुख क्षेत्र है।

धार्मिक जीवन – अनुसूचित जनजाति के लोग धर्म के सम्बन्ध में दोहरी-तिहरी जिंदगी को एक साथ जीते है। एक और सदियों के सम्पर्क के कारण इन पर हिन्दू धर्म का यथेष्ठ प्रभाव है, तो दूसरी और ये अपने मान्य जातीय, ग्राम एवं कूल देवताओं को भी मानते पूजते है, तीसरी और कुल ईसाई धर्म प्रचारकों के कारण ईसाई धर्म का प्रभाव भी इन पर पड़ा है, जो जनजाति के लोग ईसाई धर्मान्तरित हो चुके है वे गिरजाघर जाते है। इसके साथ ही वे अपनी जातीय परम्परा को भी सम्पादित करने में पीछे नहीं रहते। एक तरफ से संस्कारों का द्वंद है। एक और पुरातन संस्कारों की जड़ता इन्हें घेरे रहती है तो दूसरी ओर आधुनिक प्रभावों की। आजकल तो कतिपय जनजाति परिवार नामकरण एवं विवाहों में हिन्दू रीतियों को भी सम्पन्न करने लगे है। वे हर बात में पंडितों से मुहूर्त पूँछते है किन्तु इन सबमें प्रभुता तो इनके पारम्परिक धर्म की ही है, जिनमें जादू-टोना, तंत्र-मंत्र आदि की बहुतायत है।

सामाजिक व्यवस्था – भीलों की समाज व्यवस्था की अदभूत विशेषता है। विभिन्न काम करने वाले लोगों के आंतरिक सम्बन्ध एवं इनमें अनुलंघनीय आत्मनिर्भरता होती है। इस व्यवस्था में तमाम लोगों की दायित्वपूर्ण एवं सम्मानजनक स्थिति होती है। इनकी सामाजिक संरचना में पारस्परिक सहयोग, सौहाद्र एवं साहूकार की भी अहम भूमिका होती है। विपन्नता एवं अभाव की स्थिति में यदि कोई आदिवासी अपनी गृहस्थी का कोई कृत्य, खेत-खलिहान की गुड़ाई, खेड़ाई और उत्सव आयोजनों में असमर्थ रहता है, तो गांव के समस्त लोग मिलकर उसे सम्पन्न करते है। यह प्रथा हलमा' कहलाती है।

अनुसूचित जनजाति में विवाह सामानयत: युवक-युवती के वयस्क होने पर ही किया जाता है। इनमें विवाह की उम्र महत्वपूर्ण नहीं होती बल्कि शारीरिक क्षमता महत्वपूर्ण होती है। इनमें जीवन साथी चुनने की पूर्ण स्वतंत्रता है, परन्तु वधू मूल्य देना आवश्यक है एवं इसके अभाव में विवाह नहीं होता है। वधू मूल्य जो कि पहले बहुत कम था आज बढ़कर यह 30 से 40 हजार रूपए तक हो गया है। इसके अतिरिक्त झाबुआ जिले में भीलों में जीवन साथी के चुनाव का एक और अनोखा माध्यम भगोरिया है। होली के एक सप्ताह पूर्व से लेकर होली तक जहाँ जो भी साप्ताहिक हाट होता है वह भगोरिया कहलाता है।

आर्थिक जीवन – भारत में जनजातियों में विभिन्न आर्थिक स्थितियाँ पायी जाती है। इनमें आज भी पृथक्करण देखने को मिलता है। इनकी स्थिति एक स्थान से दूसरे स्थान पर भिन्न होती है एवं इनमें काफी असमानता होती है। यह असमानता आर्थिक साधनों एवं आवागमन की सुविधाओं के अभाव को इंगित करती है। कुल मिलाकर देश में जनजातियों की आर्थिक स्थिति काफी गंभीर एवं दयनीय है। सामान्यतया इनकी जीविका का साधन वन है किन्तु वन क्षेत्र में लगातार तेजी से आई कमी एवं शासन द्वारा वनों पर कठोर नियंत्रण के कारण ये अपने परम्परागत साधनों से भी वंचित हो गए एवं इनकी आर्थिक स्थिति बदतर होती चली गई।

आदिम समय से ही अनुसूचित जनजाति की अर्थव्यवस्था पूर्णत: वनों पर निर्भर थी। वह अपनी आजीविका के लिए पूर्णत: वनों पर आश्रित थे एवं उन्हें किसी भी बाह्य वस्तु की आवश्यकता नहीं थी। यह स्थिति आज से 7-8 दशक पूर्व तक थी। 7-8 दशक तक धार जिला भी घने वनों से आच्छादित था तथा यहाँ रहने वाले भीलों द्वारा इन वनों का प्रबन्ध अच्छी तरह से किया जा रहा था। जिसकी वजह से दोनों वन तथा आदिवासी एक-दूसरे से लाभान्वित होते थे किन्तु जनसंख्या में तेजी से हुई वृद्धि शहरी सम्पर्क एवं खाद्यान्न की बढ़ती मांग के चलते आदिवासी कृषि कार्य की ओर आकृष्ट होने लगे। जिले में सिंचाई के साधनों का भी पूर्णत: अभाव है। एवं कृषि कार्य पूर्णत: वर्षा पर निर्भर है। इस कारण से जिले में कृषि कार्य भी आर्थिक रूप से लाभकारी नहीं है, साथ ही अज्ञानता एवं निरक्षरता के कारण कृषि की नई तकनीकों तथा उन्नत बीजों का प्रयोग नहीं करने के कारण वह कृषि के क्षेत्र में भी पिछड़ गया।

निष्कर्ष– निष्कर्ष के आधार पर कह सकते हैं कि अनुसूचित जनजाति वर्ग के लोगों की आजीविका के साधनों की कमी, प्राकृतिक संसाधनों का विनाश, मजदूरी के दौरान शहरों में भौतिक एवं शारीरिक शोषण तथा क्षेत्र में महाजनों एवं साहूकारों द्वारा आर्थिक शोषण के चलते इनके जीवन के निरन्तर अस्थिरता बनी हुई हैं जिस कारण इनके विकास के प्रयास भी पूरी तरह सफल नहीं हो पा रहे हैं। लेकिन आज भी इनमें टोटम जैसी व्यवस्था जीवित हैं। जादू-टोने-टोटकों में अनुसूचित जनजाति वर्ग के लोग आज भी विश्वास करते हैं।

सुझाव:

1. अनुसूचित जनजातियों की आर्थिक, सामाजिक, तथा शैक्षणिक स्थिति को उसके उठाने के प्रयास किए जाना चाहिए।
2. अनुसूचित जनजाति बहुल क्षेत्रो में शिक्षा व्यवस्था पर शासन को विशेष ध्यान देना चाहिए।
3. अनुसूचित जनजाति तथा अन्य निर्धन व्यक्तियो को भूमि सम्बन्धी नीतियो में परिवर्तन कर कृषि हेतु भूमि उपलब्ध कराई जानी चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वाकणकर, अनन्तवामन, धारा नगरी की स्थिति, वीणा, नवम्बर, 1941, पृ.क्र.-47
2. जिला गजेटियर, जिला धार, मध्यप्रदेश, पृ.क्र.-11
3. शर्मा, आनन्द कुमार, आलेख भारतीय संविधान से जनजातियों को प्रदत्त संवैधानिक संरक्षण, विधायनी वर्ष अंक+04, मध्यप्रदेश विधानसभा सचिवालय की शोध पत्रिका, अक्टूबर, 2008, पृ.क्र.-47
4. मेहता, प्रकाशचन्द्र, भारत के आदिवासी, शिवा पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, उदयपुर, 1993, पृ.क्र.-56
5. तिवारी, शिवकुमार, मध्यप्रदेश के आदिवासी, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, 1984,
6. hhttp://www.censusindia.gov.in, 2011, Pdf file

तालिका क्रमांक -1 : धार की अनुसूचित जनजातीय जनसंख्या वर्ष - 2011

क्र	विवरण	कुल अजजा जनसंख्या	पुरूष वर्ग	महिला वर्ग
1		1222814 (55.94)	614619 (55.24)	608195 (56.68)
2	ग्रामीण	1142263 (93.41)	573746 (93.34)	568517 (93.47)
3	शहरी	80551 (6.58)	40873 (6.65)	39678 (6.52)

Source - www.censusindia.gov.in 2011

सूचना के अधिकार अधिनियम 2005 की जनजातीय क्षेत्र में उपयोगिता का अध्ययन (धार जिले के विशेष सन्दर्भ में)

बल्लुसिंह मुवेल * डॉ. अनिल कुमार जैन **

प्रस्तावना – सूचना प्राप्त करना हमारा संवैधानिक अधिकार है[1], किन्तु संविधान के निर्माण के पश्चात् से विभिन्न कार्यालयों में नौकरशाहों का इतना वर्चस्व स्थापित हो चुका था कि सूचनाओं को प्राप्त करना अत्यन्त कठिन कार्य होता था। नौकरशाह किसी भी सूचना, तथ्य या जानकारी को आम आदमी को आसानी से उपलब्ध नहीं कराते थे तथा भ्रष्टाचार भी अपनी चरम अवस्था में पहुँच चुका था। इन समस्याओं से निपटने के लिए एक ऐसे अधिनियम की आवश्यकता महसूस हुई जो इन समस्याओं से राहत प्रदान कर सके और इसी तारतम्य में सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 अस्तित्व में आया।[2]

सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 लागू होने के पश्चात् आम जनता शासन में अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर रही है। शासकीय कार्यों में पारदर्शिता, खुलापन एवं जवाबदेही में पूर्व की अपेक्षा अधिक वृद्धि हुई है। किन्तु जनजातीय क्षेत्रों में सुचना के अधिकार का कितना उपयोग हो रहा है तथा जनता के सूचना प्राप्त करने के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन किया गया है।[3]

शोध के उददेश्य –

- अनुसूचित जनजातीय क्षेत्रों में सूचना का अधिकार के क्रियान्वयन का अध्ययन करना।
- सूचना का अधिकार के प्रति जनजातीय लोगों में जागरूकता का अध्ययन करना।

परिकल्पना –

$H0_1$ – अनुसूचित जनजातियों में सूचना के अधिकार के प्रति पूर्ण रूप से जागरूकता उत्पन्न नहीं हुई है।

$H0_2$ – शिक्षा के अभाव के कारण अनुसूचित जनजातीय लोग सूचना के अधिकार का उपयोग नहीं कर पाते है।

शोध प्रविधि – प्राथमिक समंकों के संकलन के लिए धार जिले की 8 तहसिलों बदनावर, धार, सरदारपुर, कुक्षी, गंधवानी, मनावर, धरमपुरी एवं इही में प्रत्येक से 50–50 उत्तरदाताओं का चयन किया जाएगा। धार जिले की समस्त 8 तहसिलों से कुल 400 उत्तरदाताओं को निदर्श के रूप में सम्मिलित किया गया है। उपरोक्त कार्यों को संपादित करने के लिए साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया गया है।

प्रतिचयन का आकार = चयनित तहसिलों की संख्या X उत्तरदाताओं की संख्या **8 X 50 = 400**

इस प्रकार प्रतिचयन का आकार **400** होगा।

अनुसूचित जनजातीय परिचय – जनजातीय समुदाय के लोगों को देशज अथवा किसी देश, राज्य या क्षेत्र के 'मूल निवासी' के रूप में जाना जाता है, तथापि 'जनजाति' शब्द में संतोषजनक परिभाषा का अभाव है।[4] भारतीय संविधान में 'जनजाति' शब्द को कहीं पर भी परिभाषित नहीं किया गया है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 342 के अनुसार अनुसूचित जनजातियाँ वे जनजातियाँ अथवा जनजातीय समुदाय है, जिन्हें भारत के राष्ट्रपति द्वारा अधिसूचित किया जाए।[5]

धार जिले में वर्ष 2011 की जनगणना में अनुसूचित जनजाति की संख्या 1,222,814 है, जो कुल जनसंख्या का 55.94 प्रतिशत है। जिसमें 1,142,263 ग्रामीण तथा 80,551 शहरी क्षेत्र में निवासीत है। जनजातीय साक्षरता प्रतिशत 42.74 है, जिसमें पुरूष 43.05 प्रतिशत तथा महिला 42.30 प्रतिशत साक्षर है।[6]

सूचना के अधिकार अधिनियम 2005 की उपयोगिता प्राथमिक समंकों के आधार पर – अध्ययन में सम्मिलित उत्तरदताओं की व्यक्तिगत जानकारी के अन्तर्गत आयु, शैक्षणिक स्तर तथा रोजगार के प्रकार का वर्णन तालिका क्रमांक 1 में किया गया है –

तालिका क्रमांक – 1

अनुसूचित जनजातीय उत्तरदाताओं की व्यक्तिगत जानकारी

क्र.	विवरण		आवृत्ति	प्रतिशत
1	आयु	21 से 35 वर्ष	267	66.75
		36 वर्ष से अधिक	133	33.25
2	शिक्षा	अशिक्षित	15	3.75
		प्राथमिक	57	14.25
		माध्यमिक से अधिक	328	82
3	पारिवारिक व्यवसाय	कृषि	143	35.75
		कृषि एवं मजदूरी	43	10.75
		नौकरी व अन्य	214	53.5

स्रोत – सर्वेक्षण से प्राप्त समंकों का विश्लेषण वर्ष 2016

उपरोक्त तालिका क्रमांक 1 से स्पष्ट है कि अध्ययन में चयनित महिला सरपंचों में 66.75 प्रतिशत 21 से 35 वर्ष आयु वर्ग तथा 33.25 प्रतिशत 36 वर्ष से अधिक आयु वर्ग के अन्तर्गत है। शिक्षा अधिकारों के प्रति जाग्रत करने, बौद्धिक तथा तार्कीक शक्ति के विकास के लिए महत्वपूर्ण है। अध्ययन में चानित उत्तरदाताओं में 3.75 प्रतिशत पूर्ण रूप से अशिक्षित हैं, 14.25 प्रतिशत प्राथमिक स्तर तक शिक्षित हैं। जबकि 82 प्रतिशत माध्यमिक स्तर

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान एवं लोक प्रशासन) व्यवहारिकवादी अनुसंधान केन्द्र विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
* प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

से अधिक शिक्षित है। उत्तरदाताओं की पारिवारिक आय का मुख्य स्रोत 35.75 प्रतिशत कृषि, 10.75 प्रतिशत कृषि एवं मजदूरी तथा 53.5 प्रतिशत नौकरी अथवा व्यवसाय पर निर्भर है।

सूचना के अधिकार अधिनियम 2005 की जानकारी होने की स्थिति–

अध्ययन में सम्मिलित हुए धार जिले के जनजातीय उत्तरदाताओं से सूचना के अधिकार अधिनियम, 2005 के बारे में जानकारी निम्न तालिका क्रमांक 3.2 से स्पष्ट है –

तालिका क्रमांक – 2

उत्तरदाताओं को सूचना के अधिकार अधिनियम, 2005 की जानकारी होने की स्थिति

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	89	22.25
2	नहीं	78	19.5
3	थोड़ा–बहुत	233	58.25
	योग	**400**	**100**

स्रोत – सर्वेक्षण से प्राप्त समंकों का विश्लेषण वर्ष 2016

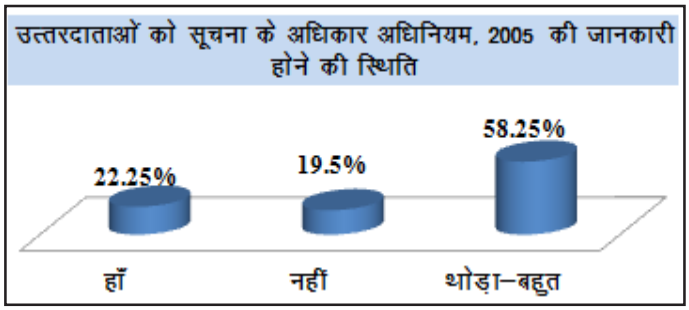

उपरोक्त तालिका 2 से स्पष्ट है कि अध्ययन में सम्मिलित 22.25 प्रतिशत उत्तरदाताओं को सूचना के अधिकार अधिनियम, 2005 की जानकारी है।19.5 प्रतिशत को सूचना का अधिनियम के बारे में कोई जानकारी नहीं है। जबकि सर्वाधिक 58.25 प्रतिशत उत्तरदाताओं को सूचना के अधिकार अधिनियम के बारे में थोड़ी–बहुत जानकारी है। धार जिले के जनजातीय लोगों में सूचना के अधिकार अधिनियम 2005 के प्रति जागरूकता पूर्ण रूप से नहीं आ पाई है।

उत्तरदाताओं को सूचना का अधिकार अधिनियम की जानकारी प्राप्त होने के माध्यम की जानकारी तालिका क्रमांक 3.1 से स्पष्ट है –

तालिका क्रमांक – 3.1

उत्तरदाताओं को सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 की जानकारी प्राप्त होने का माध्यम

क्र.	माध्यम	आवृत्ति	प्रतिशत
1	समाचार पत्र	41	10.25
2	टेलीवीजन	53	13.25
3	वकीलों के माध्यम से	11	2.75
4	मित्रों के माध्यम से	131	32.75
5	समाजजनों से	78	19.5
6	अन्य	8	2
	योग	**322**	**80.5**

स्रोत – सर्वेक्षण से प्राप्त समंकों का विश्लेषण वर्ष 2016

(ग्राफ देखे आगे पृष्ठ पर)

उपरोक्त तालिका 3.1 से स्पष्ट है कि अध्ययन में सम्मिलित 10.25 प्रतिशत समाचार पत्र, 13.25 प्रतिशत टेलीवीजन, 2.75 प्रतिशत वकीलों के माध्यम से, सर्वाधिक 32.75 प्रतिशत को मित्रों के माध्यम से, 19.5 प्रतिशत समाजजनों के माध्यम से, 2 प्रतिशत अन्य माध्यम से सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 की जानकारी अन्य माध्यमों से प्राप्त हुई थी। प्रचार माध्यमों से अधिनियम की जानकारी प्राप्त हुई है। जिनमें प्रिंट मीडिया और इलेक्ट्रानिक मीडिया का महत्वपूर्ण स्थान है।

स्पष्ट है कि सूचना के अधिकार अधिनियम, 2005 की जानकारी कम होने का कारण उत्तरदाताओं का कम शिक्षित होना है। शिक्षा के अभाव के कारण ये इस अधिनियम के बारे में पूर्ण जानकारी नहीं रख पाए है।

अध्ययन में सम्मिलित उत्तरदाताओं से सूचना के अधिकार अधिनियम, 2005 के अन्तर्गत सूचना प्राप्त प्राप्त करने जानकारी तालिका 3.2 से स्पष्ट है –

तालिका क्रमांक – 3.2

उत्तरदाताओं द्वारा सुचना के अधिकार अधिनियम, 2005 के अन्तर्गत किसी प्रकार की जानकारी प्राप्त किए जाने की स्थिति दर्शाने वाली तालिका

क्र.	माध्यम	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	78	24.22
2	नहीं	244	75.78
	योग	**322**	**100**

स्रोत – सर्वेक्षण से प्राप्त समंकों का विश्लेषण वर्ष 2016

(ग्राफ देखे आगे पृष्ठ पर)

उपरोक्त तालिका 3.2 से स्पष्ट है कि शोध अध्ययन में सम्मिलित 24.22 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने सूचना के अधिकार अधिनियम, 2005 के अन्तर्गत जानकारी प्राप्त की है, जबकि सर्वाधिक 75.78 प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा सूचना के अधिकार अधिनियम, 2005 के अन्तर्गत किसी भी प्रकार की जानकारी प्राप्त नहीं की गई है।

अध्ययन में सम्मिलित उत्तरदाताओं में से मात्र 78 उत्तरदाताओं ही सूचना के अधिकार अधिनियम, 2005 का उपयोग कर किसी विभाग से जानकारी प्राप्त की है। सूचना के अधिकार अधिनियम, 2005 के अन्तर्गत सूचना का कारण तालिका क्रमांक 3.3 से स्पष्ट है –

तालिका क्रमांक – 3.3

सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 के अन्तर्गत जानकारी प्राप्त किए जाने का कारण

क्र.	माध्यम	आवृत्ति	प्रतिशत
1	आर्थिक कारण	19	24.36
2	राजनीतिक कारण	7	8.97
3	जमीन–जायदाद सम्बन्धी	17	21.79
4	स्वास्थ्य सम्बन्धी	5	6.41
5	शिक्षा सम्बन्धी	19	24.36
6	अन्य कारण	11	14.10
	योग	**78**	**100**

स्रोत – सर्वेक्षण से प्राप्त समंकों का विश्लेषण वर्ष 2016

(ग्राफ देखे आगे पृष्ठ पर)

उपरोक्त तालिका 3.3 से स्पष्ट है कि अध्ययन में सम्मिलित उत्तरदाताओं द्वारा सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 के अन्तर्गत किसी विभाग से सूचना प्राप्त करने वाले 78 उत्तरदाताओं में से 24.36

प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा आर्थिक कारणों से सूचनाओं को प्राप्त किया गया। 8.97 प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा राजनीतिक कारण से, 21.79 प्रतिशत जमीन-जायदाद सम्बन्धी सूचना को प्राप्त किया गया है। 6.41 प्रतिशत स्वास्थ्य सम्बन्धी सुचनाओं को प्राप्त किया है। 24.36 प्रतिशत उत्तरदाताओं में शिक्षा सम्बन्धी सुचना तथा 14.10 प्रतिशत अन्य कारणों से सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 के अन्तर्गत सूचनाओं को प्राप्त किया है।

स्पष्ट है कि सूचना का अधिकार अधिनियम का उपयोग करने वाले 78 उत्तरदाताओं में सर्वाधिक उत्तरदाताओं द्वारा राजनीतिक कारणों एवं शिक्षा सम्बन्धि कारणों से इस अधिकार का उपयोग किया गया था।

परिकल्पना परीक्षण –

परिकल्पना – 1

H01 – अनुसूचित जनजातीय लोगों में सूचना के अधिकार के प्रति पूर्ण रूप से जागरूकता उत्पन्न नहीं हुई है।

Ha1 – अनुसूचित जनजातीय लोगों में सूचना के अधिकार के प्रति पूर्ण रूप से जागरूकता उत्पन्न हुई है।

उक्त शून्य परिकल्पना का परीक्षण χ^2 (काई-वर्ग) के माध्यम से किया गया गया है-

तालिका क्रमांक –3.4

Chi-Squarea	df	Asymp. Sig.
112.205	2	.000

χ^2 तालिका से स्पष्ट है कि 5 प्रतिशत सार्थकत्ता स्तर (2 Degree of Freedom) पर χ^2 का तालिका मूल्य (5.991) है जबकि χ^2 का आंकलित मूल्य (112.205) है। सारणी मूल्य एवं आंकलित मूल्य की तुलना के आधार पर कहा जा सकता है कि दोनों गुण आपस में स्वतंत्र न होकर आपस में घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित है अर्थात् दोनों में सार्थक ढंग से सम्बन्ध है। विश्लेषण में $\chi_c^2 = 112.205$ तथा $\chi_t^2 = 5.991$ है, आंकलित तथा सारणी मूल्यों से स्पष्ट है कि $\chi_t^2 > \chi_t^2$ अत: हमारी शून्य परिकल्पना अस्वीकृत होती है तथा वैकल्पिक ' **Ha1: अनुसूचित जनजातीय लोगों में सूचना के अधिकार के प्रति पूर्ण रूप से जागरूकता उत्पन्न हुई है।'** स्वीकृत होती है।

परिकल्पना – 2

H01 - शिक्षा के अभाव के कारण अनुसूचित जनजातीय लोग सूचना के अधिकार का उपयोग नहीं कर पाते हैं।

Ha1 - शिक्षा वृद्धि के परिणामस्वरूप अनुसूचित जनजातीय लोग सूचना के अधिकार का उपयोग कर रहे हैं।

तालिका क्रमांक – 3.5

	Chi-Squarea	df	Asymp. Sig.
Pearson **Chi-Square**	327.195a	5	.000
N of Valid Cases	400		

χ^2 (काई-वर्ग) तालिका से स्पष्ट है कि 5 प्रतिशत सार्थकत्ता स्तर (5 Degree of Freedom) पर χ^2 (काई-वर्ग) का तालिका मूल्य (11.000) है जबकि χ^2 (काई-वर्ग) का आंकलित मूल्य (327.195) है। सारणी मूल्य एवं आंकलित मूल्य की तुलना के आधार पर कहा जा सकता है कि दोनों गुण आपस में स्वतंत्र न होकर आपस में घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित है अर्थात् दानों में सार्थक ढंग से सम्बन्ध है। विश्लेषण में $\chi_c^2 = 327.197$ तथा $\chi_t^2 = 11.000$ है, आंकलित तथा सारणी मूल्यों से स्पष्ट है कि $\chi_c^2 > \chi_t^2$ अत: हमारी शून्य परिकल्पना अस्वीकृत होती है तथा वैकल्पिक **'Ha1: शिक्षा वृद्धि के परिणामस्वरूप अनुसूचित जनजातीय लोग सूचना के अधिकार का उपयोग कर रहे हैं।'** स्वीकृत होती है।

निष्कर्ष – अनुसूचित जनजातियों में सूचना के अधिकार अधिनियम 2005 के प्रति जागरूकता उत्पन्न हुई है। वर्तमान में अनुसूचित जनजातीय लोगों में शिक्षा की स्थिति में परिवर्तन के कारण सूचना के अधिकार अधिनियम के प्रति जागरूकता के परिणामस्वरूप महत्वपूर्ण रूप से प्रयोग किया जा रहा हैं। सूचना का अधिकार के अन्तर्गत सूचना प्रदान करने में शासकीय अधिकारियों एवं कर्मचारियों द्वारा पूर्ण रूप से सहयोग नहीं किया जाता है तथा सूचना से आम लोगों को वंचित रखने का प्रयास किया जाता है। सूचना का अधिकार लागू होने के पश्चात् भ्रष्टाचार में कमी आई है। सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 के लागु होने के बाद अधिकारियों तथा कर्मचारियों की कार्यप्रणाली में सुधार हुआ है तथा आम लोगों को सरकारी योजनाओं का लाभ कम समय में प्राप्त हुई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सिंह जेपी, समाजशास्त्र अवधारणा एवं सिद्धान्त, पीएचआई लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड, 2013।
2. आबिद रिजवी 'सूचना का अधिकार' तुलसी साहित्य पब्लिकेशन, मेरठ।
3. डॉ. राधेश्याम द्विवेदी (2009) 'सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005' सुविधा लॉ हाउस ।
4. गुप्ता, मंजू **'जनजातियों का सामाजिक आर्थिक उत्थान'** अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली (2003)।
5. रंजन, आलोक **'अनुसूचित जनजातीय स्वास्थ्य पत्रिका'** क्षेत्रीय जनजाति आयुर्विज्ञान अनुसंधान केन्द्र (भारतीय आयुर्विज्ञान) अनुसंधान परिषद जबलपुर। खण्ड 12 (1 एवं 2) जनवरी एवं जुलाई (2006)।
6. जिला सांख्यिकी पुस्तिका 2011, जिला धार।

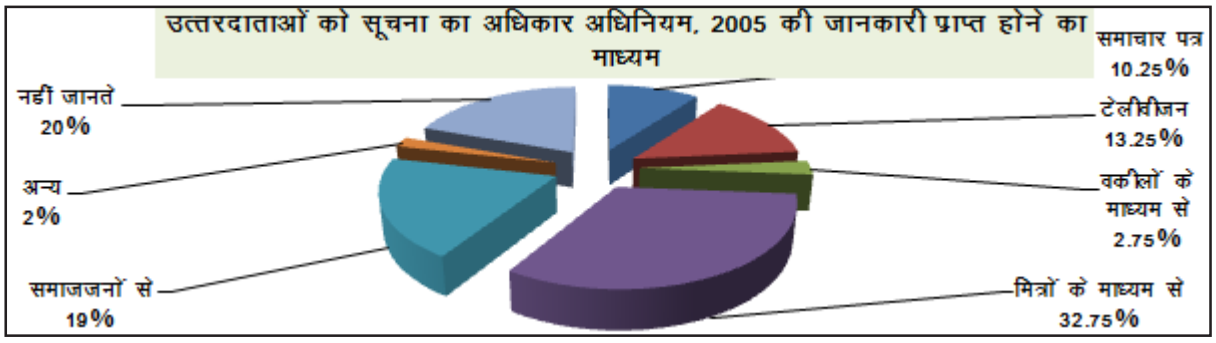
उत्तरदाताओं को सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 की जानकारी प्राप्त होने का माध्यम
समाचार पत्र 10.25%
टेलीविजन 13.25%
वकीलों के माध्यम से 2.75%
मित्रों के माध्यम से 32.75%
समाजजनों से 19%
अन्य 2%
नहीं जानते 20%

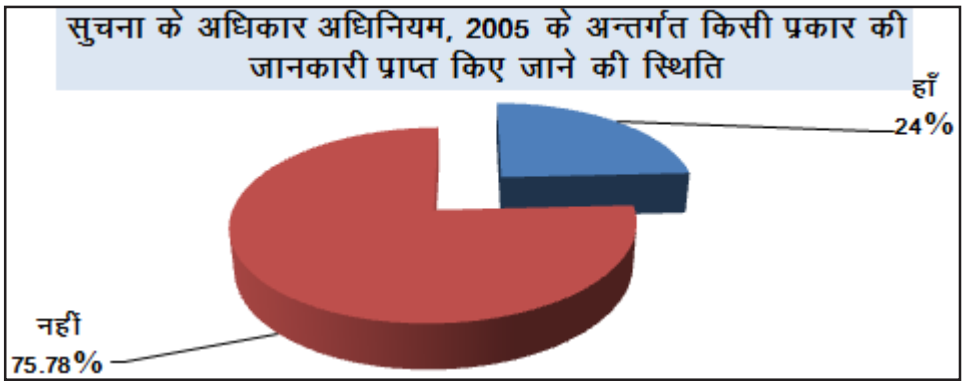
सुचना के अधिकार अधिनियम, 2005 के अन्तर्गत किसी प्रकार की जानकारी प्राप्त किए जाने की स्थिति
हाँ 24%
नहीं 75.78%

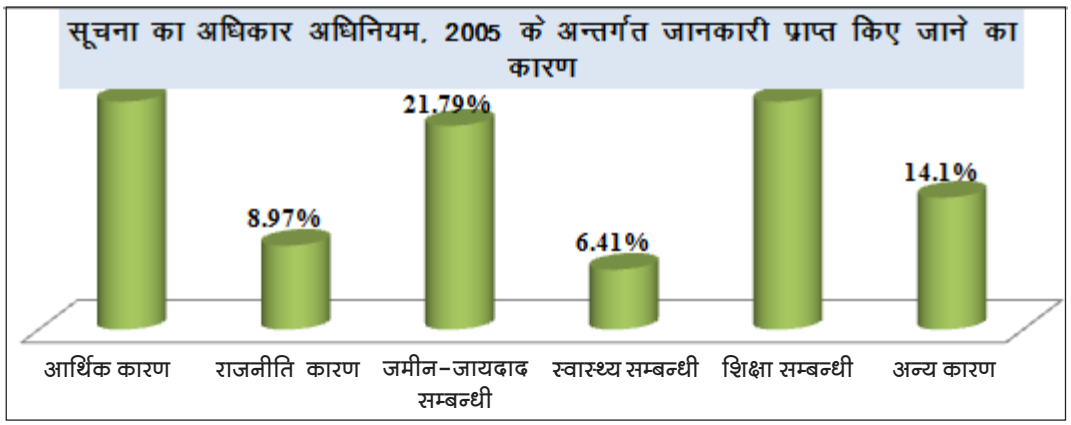
सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 के अन्तर्गत जानकारी प्राप्त किए जाने का कारण
8.97%
21.79%
6.41%
14.1%
आर्थिक कारण
राजनीति कारण
जमीन-जायदाद सम्बन्धी
स्वास्थ्य सम्बन्धी
शिक्षा सम्बन्धी
अन्य कारण

****

पंचायतों में अनुसूचित जनजातीय महिला नेतृत्व एवं ग्रामीण विकास में भूमिका का अध्ययन (धार जिले के विशेष सन्दर्भ में)

सीमा सस्त्या *

प्रस्तावना – किसी भी देश की उन्नति और समृद्धि का आधार उस देश की महिलाएँ हैं। 'वुमन इन माडर्न इण्डिया' में मीरा देसाई लिखती हैं कि 'किसी देश की महिलाओं की स्थिति ही उस देश की सभ्यता, संस्कृति और समृद्धि की द्योतक है।'[1] भारत का अतीत विश्व के सभी देशों और समाजों की तुलना में उच्चतम है। विश्व का कोई भी प्राचीन देश, सभ्यता, संस्कृति और श्रेष्ठता के समकक्ष नहीं रहा है।[2]

भारत में पिछले सैकड़ों वर्षो से महिलाओं की स्थिति कानूनी, सामाजिक, सार्वजनिक जीवन में किसी दृष्टिकोण से अच्छी नहीं रही है।[3] भारत में महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्थिति को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है – पहली स्वतन्त्रता के पूर्व एवं दूसरी स्वतन्त्रता के बाद। स्वतन्त्रता के पश्चात महिलाओं की स्थिति में बहुत परिवर्तन हुआ है। महिला सशक्तिकरण के रूप में महिलाऐं घर की चार दिवारी से निकलकर राष्ट्र के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।[4] विभिन्न सामाजिक समूहों के अनुसार महिलाओं की तुलना में अनुसूचित जनजातीय महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक तथा राजनीतिक स्थिति अन्य वर्गो की तुलना में अत्यन्त पिछड़ी है। महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी को सुनिश्चित करने के लिए संविधान के 74वें संशोधन में महिलाओं के लिए एक तिहाई पदों पर आरक्षण का प्रावधान किया गया।[5] महिला आरक्षण तथा राजनीतिक पदों पर चुने जाने के पश्चात् महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक स्थिति में परिवर्तन के अध्ययन निम्न उद्देश्यों पर आधारित है–

1. अनुसूचित जनजाति वर्ग के महिला सरपंचों की सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि का अध्ययन करना।
2. राजनीतिक पदों पर चयन के पश्चात् प्राप्त शक्तियों के उपयोग में आने वाली कठिनाईयों का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि – महिलाओं के राजनीतिक अधिकारों के प्रयोग एवं सामाजिक आर्थिक में परिवर्तन का अध्ययन करने के लिए प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों का प्रयोग किया गया है। द्वितीयक समंकों का संकलन विभिन्न शोध पत्र–पत्रिका, शासकीय रिपोर्ट, जनगणना के आंकड़े, अध्यादेश अधिनियम, इन्टरनेट आदि से प्राप्त जानकारी का उपयोग किया गया है।

प्राथमिक समंको के संकलन धार जिले को समग्र मानते हुए जिले की विभिन्न ग्राम पंचायतों में महिला सरपंचों, उपसरपंच तथा महिला प्रतिनिधियों का अध्ययन कुल 220 महिलाओं का सर्वेक्षण साक्षात्कार अनुसूचि के आधार पर किया है।

महिला सरपंचों की व्यक्तिगत जानकारी – महिला सरपंचों की व्यक्तिगत जानकारी के अन्तर्गत आयु, शिक्षा तथा पारिवारिवारिक व्यवसाय का वर्णन किया गया है। उक्त वर्णन महिलाओं की मानसिक एवं आर्थिक परिपक्वता को समझने में सहायक है –

तालिका क्रमांक – 1

महिला सरपंचों की व्यक्तिगत जानकारी

क्र.	विवरण		आवृत्ति	प्रतिशत
1	आयु	30 से 45 वर्ष	165	75
		45 वर्ष से अधिक	55	25
2	शिक्षा	अशिक्षित	85	38.65
		प्राथमिक	79	35.90
		माध्यमिक से अधिक	56	25.45
3	पारिवारिक	व्यवसाय कृषि	188	85.45
		कृषि एवं मजदूरी	22	10
		व्यवसाय व अन्य	10	5.55

स्रोत – प्राथमिक सर्वेक्षण से प्राप्त समंकों के विश्लेषण के आधार पर। वर्ष 2015

उपरोक्त तालिका क्रमांक 1 से स्पष्ट है कि अध्ययन में चयनित महिला सरपंचों में 75 प्रतिशत 30 से 45 वर्ष आयु वर्ग तथा 25 प्रतिशत 45 वर्ष से अधिक आयु वर्ग के अन्तर्गत है। शिक्षा अधिकारों के प्रति जाग्रत करने तथा बौद्धिक तथा तार्किक शक्ति के विकास के लिए महत्वपूर्ण है। विशेष तौर पर महिला शिक्षा का मुद्दा महत्वपूर्ण है। अध्ययन में चयनित महिलाओं में 38.65 प्रतिशत पूर्ण रूप से अशिक्षित हैं, 35.90 प्रतिशत प्राथमिक स्तर तक शिक्षित हैं जबकि 25.45 प्रतिशत माध्यमिक अथवा माध्यमिक से अधिक शिक्षित है। महिला सरपंचों की पारिवारिक आय का मुख्य स्रोत 85.45 प्रतिशत कृषि, 10 प्रतिशत कृषि एवं कृषि मजदूरी तथा 5.55 प्रतिशत व्यवसाय पर निर्भर है।

महिला सरपंचों द्वारा ग्रामीण विकास हेतु प्रयास – ग्रामीण क्षेत्रों की प्रमुख समस्याओं में पेयजल, सड़क, स्वास्थ्य सुविधा, शिक्षा व्यवस्था, आवश्यक भवनों का निर्माण, अधोसंरचनात्मक विकास की समस्याऐं के समाधान का वादा चुनावी पद को जितने के लिए प्रमुख प्रलोभन होता है। अध्ययन में चयनित महिला सरपंचों द्वारा उक्त कार्यो को पूर्ण करने एवं ग्रामीण विकास में भूमिका वर्णन तालिका क्रमांक में किया गया है –

तालिका क्रमांक – 2 **(देखे आगे पृष्ठ पर)**

तालिका से स्पष्ट है कि चयनित महिला सरपंचों की ग्राम पंचायत में विभिन्न सुविधाओं की उपलब्धता पेयजल की उपलब्धता 76.82 प्रतिशत, सड़क 85.45 प्रतिशत, विघुतीकरण/स्ट्रीट लाईट 74.55 प्रतिशत, स्कूल भवन 91.36 प्रतिशत, शौचालय 86.36 प्रतिशत, स्वास्थ्य सुविधा 81.82

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) अध्ययनशाला विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

प्रतिशत, सार्वजनिक वितरण 82.27 प्रतिशत, शासकीय भवनों की अच्छी स्थिति 90 प्रतिशत, बारीश का पानी रोकने हेतु नदी-नालों पर स्टॉप डेम का निर्माण 89.55 प्रतिशत महिला सरपंचों द्वारा करवाया गया है।

ग्राम पंचायतों के अन्तर्गत विभिन्न समस्याओं के समाधान में आने वाली प्रमुख समस्याओं का वर्णन तालिका क्रमांक 3 में किया गया है -

तालिका क्रमांक - 3 (देखे आगे पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक 3 से स्पष्ट है कि ग्राम पंचायतों के अन्तर्गत महिला सरपंचों को अपने कर्तव्यों को निर्वहन करने में कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। इनमें प्रमुख रूप से सामाजिक कुरितियों के कारण जातपात तथा छुआछुत की समस्या के कारण जनजातिय महिलाओं से भेदभाव किया जाता है।

वित्त की कमी सबसे प्रमुख समस्या है। पंचायतों को स्वशासित इकाई के रूप में विकसित करने, वित्तीय दृष्टि से सक्षम एवं आत्मनिर्भर बनाने के लिए राज्य शासन ने वित्त आयोग का गठन कर स्थानीय स्तर पर विभिन्न तरह के करों को लगाने एवं खर्च करने के अधिकार हस्तांतरित किए हैं। स्थानिय स्तर पर विभिन्न प्रकार के करों को वसुलने में समस्या का सामना करना पड़ता है।

विभिन्न दलों के समर्थीत प्रतिनिधि/सदस्य विकास कार्यो के निर्वहन में कठिनाईयाँ उत्पन्न करते हैं।

स्थानीय समुदायों की अशिक्षा के कारण विभिन्न विकास कार्यों को समझ नहीं पाते हैं। लोगों के अशिक्षित होने का गलत लाभ विभिन्न दलों/गुटों के लोग उठाते हैं।

राजनीतिक हस्तक्षेप विकास कार्यो को प्रभावीत करते हैं। विभिन्न स्तरों पर सत्ता में यदि मुख्य पार्टी के लोग काबिज होने पर विकास कार्यो हेतु वित्त पूर्ती एवं कार्य में सहायता मिलती है किन्तु विपरित स्थिति में विकास कार्यो पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता हैं।

अन्य समस्याऐं ग्राम स्तर पर होने वाले विकास कार्यों को प्रभावीत करते हैं। महिला सरपंचों की शिक्षा की कमी के कारण अधिकारियों एवं कर्मचारियों के मध्य समन्वय स्थापित नहीं हो पाता है, परिणामस्वरूप गांवों के कामों में समस्याऐं उत्पन्न होती है।

निष्कर्ष - महिला सशक्तिकरण व अनुसूचित जनजाति महिलाओं की भूमिका महिला आरक्षण व व्यक्तिगत प्रयासों से समूचे देश की पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी का स्तर निरन्तर बढ़ रहा है। पंचायती राज व्यवस्था में जनजातीय महिलाओं के नेतृत्व की भागीदारी हेतु प्रेरणा प्रदान की है। पंचायतें लोकतंत्र की आधारभुत संस्थाएं है, जिन्हें हम लोकतंत्र का आधार स्तंभ है। नेत्रत्व का विकास गांव से ही प्रारम्भ होता है जिसमें महिलाओं की भागीदारी निश्चित रूप से महिलाओं का सही नेतृत्व विकसित होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. देसाई, मीरा, (1957) - वोरा एण्ड कम्पनी पब्लिशर्स, मुम्बई, पृ. 57
2. वर्मा, अंजू (2011) - 'जनसंख्या, विकास तथा मानव अधिकार' योजना, जुलाई 2011। पृ. 39
3. मेहरोत्रा, दिप्ती (2001) - 'भारतीय महिला आन्दोलन', सम्पूर्णा ट्रस्ट, नई दिल्ली, पृ. क्र. 17
4. भदौरिया, कविता, (2011) - 'अल्पसाख एवं महिला सशक्तिकरण रिसर्च जर्नल, प्रकाशन रिसर्च पब्लिकेशन्स नई दिल्ली 110002 ISSN-2231-2951.
5. वाडिले, एल. एच., (2012) - 'जनजातीय महिला पंचायत प्रतिनिधि और महिला मतदाताओं की ग्रामीण विकास में भूमिका' मध्यप्रदेश सामाजिक शोध समग्र रिसर्च जर्नल ISSN-2231-2951.

तालिका क्रमांक - 2

महिला संरपंचों द्वारा ग्राम पंचायत में निर्मित सुविधाओं का वर्णन

क्र.	पंचायत की प्रमुख समस्या समाधान	निर्माण	प्रतिशत	शेष	प्रतिशत	कुल	प्रतिशत
1	पेयजल	169	76.82	51	23.18	220	100
2	सड़क	188	85.45	32	14.55	220	100
3	विद्युतीकरण /स्ट्रीट लाईट	164	74.55	56	25.45	220	100
4	स्कूल भवन	201	91.36	19	8.636	220	100
5	स्वच्छता एवं शौचालय	190	86.36	30	13.64	220	100
6	स्वास्थ्य सुविधा	180	81.82	40	18.18	220	100
7	सार्वजनिक वितरण प्रणाली	181	82.27	39	17.73	220	100
8	शासकीय भवनों की अच्छी स्थिति	198	90	22	10	220	100
9	स्टॉपडेम का निर्माण	197	89.55	23	10.45	220	100

स्रोत - प्राथमिक सर्वेक्षण से प्राप्त समंकों के विश्लेषण के आधार पर। वर्ष 2015

तालिका क्रमांक – 3

पंचायतों के अन्तर्गत ग्रामीण समस्याओं को हल करने में आने वाली प्रमुख समस्या

क्र.	ग्राम पंचायत की प्रमुख समस्याऐं	हाँ	प्रतिशत	नहीं	प्रतिशत	कुल	प्रतिशत
1	जातपात/छुआछुत की समस्या	126	57.27	94	42.73	220	100
2	वित्तीय समस्या	188	85.45	32	14.55	220	100
3	कर वसुलने की कठिनाई	176	80	44	20	220	100
4	प्रतिनिधियों का असहयोग	112	50.90	108	49.09	220	100
5	अशिक्षा का प्रभाव	105	47.72	115	52.27	220	100
6	अधिकारियों/कर्मचारियों का असहयोग	117	53.18	103	46.82	220	100
7	स्थानीय गुटबाजी	118	53.64	102	46.36	220	100
8	राजनीतिक समस्या	177	80.45	43	19.55	220	100
9	विभिन्न समितियों में समन्वय में कमी	167	75.91	53	24.09	220	100
10	जनभागीदारी की कमी	189	85.90	31	14.09	220	100
11	पारिवारिक सहयोग की कमी	135	61.36	85	38.64	220	100
12	अन्य	107	48.63	113	51.36	220	100

स्रोत – प्राथमिक सर्वेक्षण से प्राप्त समंकों के विश्लेषण के आधार पर। वर्ष 2015

****

भारत-चीन संबंध एवं गहराता सामरिक संकट

डॉ. संजय कुमार यादव *

प्रस्तावना – भारत की विदेश नीति में चीन का महत्वपूर्ण स्थान है। भारत-चीन संबंधों का इतिहास भारतीय नेताओं की आदर्शवादिता, स्वप्नदर्शिता, अदूरदर्शिता व चीनी विश्वासघात का इतिहास रहा है। प्रसिद्ध विद्वान पामर व पर्किन्सन ने ठीक ही कहा है। कि-''भारत-चीन संबंध चीनी दुराग्रह व नग्न साम्राज्यवादी नीति व भारतीय नेतृत्व की तुष्टीकरण नीति के प्रतीक रहे है''।

अक्टूबर, 1949 को साम्यवादी चीन की स्थापना के बाद 30 सितम्बर 1949 को उसे मान्यता प्रदान करने वाला, बर्मा के बाद भारत दूसरा गैर-साम्यवादी देश था। अमेरीका की नाराजगी की कीमत पर भी भारत ने कोरियाई युद्ध में चीन का समर्थन किया। इस समय दोनों के मधुर संबंध बने तथा मित्रता की पराकाष्ठा स्वरूप 'हिन्दी-चीनी' भाई-भाई का स्वर्णिम युग भी आया। लेकिन शीघ्र ही दोनों के मध्य युद्ध की विभिषिका भी प्रज्वलित हुई तथा दोनों देश एक लम्बे अन्तराल तक 'संबंध-रहित' स्थिति में रहे। उसके बाद संबंधों में सुधार हुआ तथा प्रक्रिया आज भी जारी है। अत: दोनों देशों के संबंध सहयोग-संघर्ष के दौर से गुजरे है। भविष्य में इनकी स्थिति क्या होगी। यह दोनों देशों द्वारा एक-दूसरे के प्रति अपनाए गए विभिन्न आन्तरिक व बाह्य तत्वों के दृष्टिकोण पर निर्भर करेगी।[1]

विभिन्न मतभेदों के बावजूद भारत-चीन के बीच आधिकारिक स्तर पर वर्ष 1978 में व्यापार को फिर से आरम्भ किया। वर्ष 1984 में दोनों देशों ने सर्वाधिक तरजीह राष्ट्र समझौते पर हस्ताक्षर किए। वर्ष 2008 में भारत का चीन के साथ व्यापार 51.8 अरब डॉलर का था और उसी वर्ष उसने यूएसए को पीछे छोड़ते हुए भारत का सबसे बडा व्यापार साझीदार बना। वर्ष 2014-15 में द्विपक्षीय व्यापार 72.34 अरब डॉलर था। चीन भारत का सबसे बड़ा व्यापारिक साझीदार देश है पर व्यापार घाटा 2014-15 में 48.43 अरब डालर हो गया। अर्थात निर्यात कम व आयात ज्यादा रहा है।[2]

सितम्बर 2014में चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग ने 3 दिवसीय भारत यात्रा की यह यात्रा भारत-चीन संबंधों में दोनों देशों के लिए एक नया अध्याय जोड़ने के प्रयास पर समझ रही। जिसमें रेलवे के क्षेत्र में, कैलाश मानसरोवर मांग को लेकर तथा अगले 5 वर्षों में चीन भारत में 20 अरब डालर का निवेश करेगा। इसी क्रम को आगे बढ़ाते हुए प्रधानमंत्री मोदी 14-16 मई 2015 को चीन की यात्रा की इस यात्रा में दोनों देशों ने 10 अरब डालर के 24 समझौते किए तथा चीनी नागरिकों को ई-वीजा देने की घोषणा की इसके साथ ही कैलाश मानसरोवर जाने वाले यात्रियों के लिए नाथूला दर्रा वाला मार्ग जून 2015 से खोल दिया है। चीन ने भारत में हाई-स्पीड ट्रेनों के विकास में सहयोग को बढ़ाने पर सहमति दी है। चीन ने इस बात का आश्वासन दिया है कि वह भारत के 'मेक इन इण्डिया अभियान को सफल बनाने के लिए चीनी कम्पनियों को भारत में निवेश बढ़ाने के लिए प्रोत्साहित करेगा।

- इसके साथ ही सीमा पर सहयोग का विस्तार करने पर सहमति बनी भारत व चीन के बीच 4056 किमी लम्बी सीमा रेखा है। जो बांग्लादेश के बाद भारत की दूसरी सबसे बड़ी सीमा है।
- चीन ने स्पष्ट रूप से सुरक्षा परिषद में भारत की स्थाई सदस्यता का समर्थन नहीं किया। फिर भी चीन ने संघाई सहयोग संगठन तथा एशिया पैसेफिक आर्थिक सहयोग, दोनों में भारत की सदस्यता का समर्थन किया है। दोनों ने ही संघाई स्थित एशियन इन्फ्रास्ट्रक्चर इन्वेस्टमेंट बैंक में सहयोग करने की सहमति व्यक्त की है।
- इन सामरिक तनावों के बीच बढ़ता सहयोग है। भारत-चीन के संबंधों का यह है कि यद्यपि दोनों देशों के बीच गत दो दशकों में आर्थिक व कतिपय अन्य क्षेत्रों में संबंधों का तेजी से विस्तार किया है लेकिन सामरिक मामलों में अविश्वास व तनाव का माहौल कम नहीं हुआ है। जटिल सीमा विवाद के बीच सीमा पर चीनी सैनिकों के घुसपेठ की घटनाएं कम नहीं हुई है। भारत के विरोध के बावजूद चीन अरूणाचल प्रदेश के नागरिकों को अब भी नत्थी वीजा ही जारी कर रहा है। चीन अरूणाचल में भारत के पीएम के जाने का विरोध करता रहा है। अत: भारत-चीन संबंधों में निम्न विवाद आज भी मोजूद है :-

1. सीमा विवाद
2. अरूणाचल प्रदेश विवाद
3. त्वांग पर विवाद
4. पाकिस्तान-चीन सामरिक गठजोड़
5. तिब्बत की समस्या।
6. दलाई लामा विवाद
7. पाकिस्तान-चीन आर्थिक गलियारा।
8. ब्रह्मपुत्र नदी विवाद
9. भारत-अमेरिका घनिष्ठता
10. व्यापारीक प्रतिस्पर्धा।
11. दक्षिणी चीन सागर।

भारत-चीन के प्रारम्भिक सम्बन्ध दोस्ताना व सहयोग पूर्ण थे। जो पंचशील समझौता द्वारा चरमोत्कर्ष पर पहुँचे। परन्तु 1962 के युद्ध में इनमें कडवाहट तथा शुन्यता आ गई। फिर सम्बन्ध सुधार हेतु 1988 में राजीव गांधी की चीन यात्रा महत्वपूर्ण सिद्ध हुई। इस दौरान दोनों देशों ने क्षेत्रिय अखण्डता व सम्प्रभुता सम्मान, व्यापार (जो वर्तमान में 72 अरब अमेरिकी डॉलर है) व सीमा विवाद के, शान्तिपूर्ण हल पर सहमती बनी। परन्तु वर्तमान

* शोधार्थी, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

में चीन ने मोतियों की माला नीति के माध्यम से भारत को घेरने की नीति अपनाई है इसमें श्रीलंका, बांग्लादेश पाक आदि में प्रत्यक्ष परोक्ष सहयोग देकर भारत पर दबाव बना रहा है, जैसा पाक में ग्वादर बंदरगाह, पाक-चीन आर्थिक कोरिडोर, अजहर मसूद को यू.एन.ओ द्वारा आतंकवादी घोषित करने में अड़चन डालना तथा एन.एस.जी व यू.एन.ओ. में भारत की स्थायी सदस्यता में सहयोग न करना।[3]

भारत ने चीन को बेलेंस करने हेतु अमेरिका सहित द. चीन सागरीय देशों वियतनाम आदि से सामरिक, व्यापारिक व आर्थिक सम्बन्ध बनाना तथा ताइवान के संसदीय डेलीगेशन (प्रतिनिधिमण्डल) का स्वागत करना आदि प्रयास किए है। (चीन मिडिल किंगडम थ्योरी के तहत बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था के साथ एशिया को एक ध्रुवीय बनाना चाहता है वह एशिया प्रशान्त क्षेत्र में उभरती भारतीय महाशक्ति से असहज महसूस करता है।

चीन भारत के हिस्से वाले कश्मीर को तो विवादास्पद मानता ही है, वही पाकिस्तान के कब्जे वाले हिस्से को भी पाकिस्तान का हिस्सा मानता है। इसका प्रमाण यह है कि अप्रैल 2015 में चीन के राष्ट्रपति की पाकिस्तान यात्रा के दौरान दोनों देशों में 48 बिलियन चीनी निवेश की मदद से चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारे (सिल्क रूट) की स्थापना का समझौता किया गया है। इस गलियारे में सडकों, रेल लाईनों के साथ-साथ अन्य सुविधाओं का विकास किया जाएगा। यह गलियारा पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर होते हुए चीन के पूर्वी झिंगझियांग प्रान्त के शहर का कासबर्ग को पाकिस्तान के ग्वादर बंदरगाह को जोड़ेगा। कानूनी दृष्टि से चीन पाक, अधिकृत कश्मीर के विवादस्पद क्षेत्र पर इस गलियारे का निर्माण नहीं कर सकता, लेकिन चीन ने भारत के विरोध की परवाह न करते हुए समझौता किया है।
चीन-पाक सामरिक गठजोड़ भारत के लिए चिंता का विषय है।4 पाकिस्तान का परमाणु हथियार तथा मिसाईल कार्यक्रम चीन की सहायता से ही चल रहा है तथा दोनों देश एक-दूसरे को हर मौसम का दोस्त मानते है।

इतना ही नहीं चीन की 21वीं शताब्दी मैरीटाइम शिल्क रूट रूप परियोजना भी चीन द्वारा भारत को घेरने की पूर्व नीति का ही संशोधित संस्करण है। 2014 में घोषित इस परियोजना में चीन द्वारा हिन्द महासागर स्थित भारत के पडोसी देशों में बन्दरगाह तथा अन्य ढांचागत सुविधाओं का विकास किया जाएगा, देखने में यह परियोजना एक व्यापारिक योजना लगती है, लेकिन इससे दक्षिण एशिया में चीन के सामरिक प्रभाव में वृद्धि होगी, 1990 के दशक में भी चीन ने अपनी मोतियों की माला नीति के अन्तर्गत भारत के पडोसी देशों में बन्दरगाह सुविधाओं को प्राप्त कर भारत को घेरने का प्रयास किया था। सम्भवत: इसलिए भारत इस समय शिल्क रूट परियोजना में शामिल नहीं हो रहा है। दूसरी तरफ भारत चीन के सामरिक प्रभाव को संतुलित करने के लिए यूएसए के साथ सामरिक समझ का विकास कर रहा है।[5] जनवरी 2015 में यूएसए के राष्ट्रपति ओबामा की भारत यात्रा के दौरान दोनों देशों ने हिन्द महासागर तथा प्रशांत क्षेत्र में सामरिक सहयोग के एक दस्तावेज पर हस्ताक्षर किए थे। जिसका चीन ने विरोध किया था। वास्तव में यूएसए का ध्यान दक्षिण एशिया की तुलना में प्रशांत क्षेत्र में भारत के सहयोग से चीन की सामरिक शक्ति को संतुलित करना है। इस पृष्ठभूमि में भारत व चीन के बीच सामरिक विश्वास पैदा करना एक कठिन कार्य है, अत: भारत व चीन के संबंध निकट भविष्य में तनाव व सहयोग के बीच झूलते रहने की संभावना है।

भारत चीन संबंधों के संदर्भ में चीन-भारत दोनों ही एक-दूसरें के प्रति संशक्ति है और यह आशंका बहुत पहले से चली आ रही है। दोनों देशों की वैश्विक अर्थव्यवस्था एवं राजनीति में बढ़ती भूमिका एवं महत्वाकांक्षा के कारण आपसी रिश्ते कड़वे दिखाई देते रहते है। एक तरफ व्यापारिक तथा आर्थिक संबंध दिनों दिन बढते चले जा रहे है तो दूसरी तरफ सीमा संबंधी विवाद भी नए स्वरूप में उत्पन्न हो रहे है। भारत चीन के राजनीतिक संबंधों की पुनर्स्थापना अगस्त 1976 में की थी।[6] जिसके परिणामस्वरूप विदेश मंत्री अटल बिहारी वाजपेयी फरवरी 1979 में चीन की यात्रा की।

लखवी मामला में चीन की हकीकत :- पीएम मोदी की एक माह की यात्रा के बाद ही चीन ने जून 2015 में संयुक्त राष्ट्र संघ में लखवी को रिहा किये जाने के पाकिस्तानी कदम की आलोचना के लिए प्रस्ताव लाया गया था। जिसे चीन ने वीटो कर दिया था। भारत की शिकायत थी की 26/11 के मुम्बई हमले के मुख्य अभियुक्त को रिहा कर पाक ने यूएनओ सुरक्षा परिषद के संकल्प प्रस्ताव 1267 का उल्लंघन किया है। जबकि चार देशों ने भारत का समर्थन किया। लखवी मामले में चीन के वीटो को भारत ने दगाबाजी या गैर दोस्ताना हरकत के रूप में देखा जाएगा। लेकिन ऐसा पहली बार नहीं हुआ है कि चीन ने चरमपंथ के मुद्दे पर पाकिस्तान को बचाया हो। मुम्बई हमले के ठीक बाद जब सुरक्षा परिषद लरकर-ए-तोयबा/जमात-उद-दावा पर प्रतिबंध की घोषणा करने जा रहा है या तब चीन ने इसे दो बार रोका।[7]

जश-ए-मोहम्मद के सरगना एवं पठान कोट आतंकी हमले के मुख्य आरोपी के खिलाफ जब भारत ने 2 अप्रैल 2016 को यूएनओ में उस पर प्रतिबंध लगाने व आतंकी संगठन घोषित करने के प्रस्ताव पर चीन ने रोक लगा दी है। यह रोक दूसरी बार है। इससे चीन की विश्वासघात की नीति का पता चलता है।[8]

उपर्युक्त आधार पर कहा जा सकता है कि भारत-चीन सम्बन्धों में उतार-चढ़ाव होने के बावजूद भी सीमा-विवाद सहित सभी मुद्दों पर प्रत्यक्ष टकराव से बचकर आर्थिक संबंधों को मजबूती प्रदान करने की नीति अपना रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय विदेश नीति : नये दिशा संकेत 1980 - डॉ. वेद प्रताप वैदिक
2. वार्षिक रिपोर्ट - 2014-15 भारत सरकार, विदेश मंत्रालय
3. India and the cold war - K.P.S. MENON
4. China in world politics – Harish Kapur, Chin
5. Indians Foreign plicy – V.P.Dutt
6. Contermporary chinese politics - James C.F. wang
7. Indian Expreass June - 2016
8. Hindustan Times – April 2016

****

लोकतंत्र में जनप्रतिनिधियों की राजनीतिक संस्कृतियों का अध्ययन

डॉ. जितेन्द्र पाटीदार *

लोकतंत्र की अवधारणा – लोकतंत्रीय व्यवस्था विश्व की सभी प्रचलित शासन व्यवस्थाओं में सर्वाधिक लोकप्रिय सफल रही है। राजतंत्र, कुलीनतंत्र, और तानाशाही व्यवस्था के बाद लोकतंत्र एक ऐसी शासन व्यवस्था है जिसका कोई विकल्प नहीं है। इसी कारण विश्व के अधिकांश देशो में आज लोकतंत्रात्मक शाासन व्यवस्था अपनाई गई है। यह एक ऐसी व्यवस्था है, जिसमें अंतिम शक्ति जनता के हाथों में रहती है तथा जनता इसी शक्ति के माध्यम से शासन का संचालन करती है और भी स्पष्ट शब्दों में कहें तो लोकतंत्र शासन का वह रूप है, जिसमें सत्ता समुदाय के सदस्यों में निहित होती है । लोकतंत्र एक शासन व्यवस्था तो है ही साथ ही साथ इसमें राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और नैतिक पहलू भी सम्मिलित है ।

सामान्यत: लोकतंत्र दो प्रकार के होते हैं, पहला प्रत्यक्ष लोकतंत्र जिसमें जनता स्वयं प्रत्यक्ष रूप से शासन का संचालन करती है और दूसरा अप्रत्यक्ष या प्रतिनिधियात्मक लोकतंत्र है, जो कि संसार के अधिकांश देशों में प्रचलित है। इसमें शासन का संचालन जनता द्वारा चुने हुए प्रतिनिधियों के हाथों में होता है। अप्रत्यक्ष लोकतंत्र में भी दो प्रकार होते हैं– पहला अध्यक्षात्मक और दूसरा संसदात्मक ।

संसदात्मक शासन में संसद में बहुतमत दल का नेता कार्यपालिका का मुख्य अधिपति होता है और वही व्यक्ति प्रधानमंत्री कहलाता है । प्रधानमंत्री अपने मंत्रीमंडल के अन्य सदस्यों का चयन करता है । इसमें मंत्रीपरिषद संसद के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी होता है। मंत्रीमंडल के सदस्य संसद के सदस्य होते हैं और वे अपने पद पर तब तक बने रहते हैं, जब तक उन्हें संसद में बहुमत प्राप्त होता है । भारत में केंद्र और राज्य में संसदात्मक शासन है साथ ही संपूर्ण देश में सत्ता का विकेंद्रीकरण करके बुनियादी स्तर पर पंचायत राज की स्थापना और जनता के हाथ में सीधे अधिकार देने की शुरूआत संविधान के 73 वे संविधान अधिनियम के माध्यम से संभव हुई है । 73 वें संशोधन ने भारत में पंचायत राजव्यवस्था को संवैधानिक दर्जा प्रदान किया और पूरे देश में मध्यप्रदेश पहला राज्य है। जहां 73 वें संविधान संशोधन के अनुरूप त्रिस्तरीय पंचायती राज प्रणाली स्थापित की गई है। मध्यप्रदेश में सत्ता के विकेंद्रीकरण से ग्रामीण जनता की हिस्सेदारी व जनकल्याणकारी योजना में क्रियान्वयन के **उद्देश्य** से शुरू की गई पंचायती राज व्यवस्था ने ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक बदलाव की प्रक्रिया को प्रारंभ कर दिया है । वर्तमान नवीन पंचायती राज व्यवस्था में प्रावधान किया गया है कि समस्त जनकल्याणकारी योजनाओं के क्रियान्वयन , नियंत्रण एवं निरीक्षण का दायित्व पंचायतों का होगा। पंचायतों के निर्वाचित प्रतिनिधि अपने गांव के वास्तविक गरीबों को ईमानदारी से सारी योजनाओं का लाभ पहुंचायेंगे। जैसे– वर्तमान में रोजगार गारंटी योजना चल रही है , जनता को पंचायत के सरपंच, मंत्री व जनप्रतिनिधियों के अधीन आने वाली योजना का लाभ मिलना चाहिए ताकि बेरोजगार व भूखमरी से बच सकें और जनप्रतिनिधियों की इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण हिस्सेदारी हो जाने के पश्चात् यह अपेक्षा की जाती है कि समाज के अंतिम व्यक्ति तक ऐसी योजनाओं का लाभ पहुँचाया जाए ताकि जनता को रोजगार प्राप्त हो तथा उस समाज के प्रति सहानुभूति व जनकल्याणकारी योजनाओं के अच्छे परिणाम प्राप्त किए जा सके हैं । जनप्रतिनिधि, हितग्राहियों एवं शासकीय अधिकारियों के मध्य ऐसी योजना जुडी है, जिसमें वहां प्रक्रियाओं को सरलीकृत रूप में प्रस्तुत कर सकें, वहीं बिचोलियों की भूमिका नगण्य हुई ।

मध्यप्रदेश शासन ने समुदाय और व्यक्ति को अधिकार संपन्न बनाने की दिशा में जो प्रयास किए उनके नतीजों ने यह साबित किया है कि– लोग समस्या नहीं बल्कि वे समस्याओं के हल हैं।

जनप्रतिनिधियों का अध्ययन एवं राजनीतिक संस्कृति से संबंध – जनप्रतिनिधियों को सहयोग के संदर्भ में अधिकांश अधिकारियों का कहना है कि हमारी और से पूर्णत: सहयोग की कोशिश की जाती है। उनका यह भी कहना है कि जनप्रतिनिधियों में प्रशिक्षण एवं जागरूकता की भी कमी है एवं राजनीतिक संस्कृति के संबंध में बँधकर कार्य करने की जनप्रतिनिधियों को आदत नहीं होती है, इसलिए कई बार विभिन्न मुद्दों पर आवश्यक दबाव होता है। साथ ही अधिकारी वर्ग भी यह स्वीकार करते हैं कि एक साथ इतने अधिक अधिकार बिना किसी प्रशिक्षण एवं अशिक्षा के रहते प्रतिनिधियों के साथ देने में कठिनाईयॉ तो उत्पन्न होगी एवं अधिकांशत: का यह मत था कि इन अधिकारों को धीरे धीरे स्थानीय निकायों को हस्तांतरित किया जाना चाहिए। साथ ही इस संस्थाओं के दोनों स्तर पर कार्य करने की क्षमता का अभाव है। इनकी तुलना में प्रशासनिक अधिकारियों एवं कर्मिकों की संख्या अत्यंत कम हैं जिस वजह से हर स्तर पर पूर्णत: सहयोग प्रदान करना भी संभव नहीं होता है ।

यद्यपि उच्च स्तर के पंचायत प्रतिनिधियों तथा जिला पंचायत स्तर के एवं पंचायत में पदस्थ कर्मचारियों में संबंध सामान्य एवं सहयोगपूर्ण ही रहे हैं किंतु जनपद स्तर पर पंचायत के प्रतिनिधियों एवं अधिकारियों के संबंधों पर प्रकाश डाला जाये तो यह स्पष्ट है कि संबंध सहज नहीं है। विशेष रूप से आरक्षित वर्ग के प्रतिनिधियों के संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि जानकारी के अभाव एवं स्वतंत्र कार्य निर्वहन की दक्षता के न होने से अधिकारियों द्वारा अपेक्षित नहीं मिल पाता है । ऐसे में यह आवश्यक हो जाता है कि पंचायत प्रतिनिधियों के सघन प्रशिक्षण प्रदान कर आवश्यक जानकारियाँ दी जाए एवं कार्य करने हेतु आवश्यक नेतृत्व क्षमता एवं मनोबल के संबंध में प्रशिक्षित किया जाए। इसी के साथ यह भी बहुत महत्वपूर्ण है कि संबंधित अधिकारी

* अतिथि विद्वान (राजनीति विज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,रामपुरा, जिला–नीमच (म.प्र.) भारत

भी अभिविन्यास एवं पुनश्चर्या कार्यक्रम आयोजित किए जाए तथा इसके माध्यम से उनको नई भूमिका के संबंध में प्रशिक्षित किया जावे।

जनप्रतिनिधियों में उत्तरदायित्व की भावना और उनमें जन विश्वास– यह एक भावनात्मक स्थिति है। कोई जनप्रतिनिधि इसे सहज स्वीकार नहीं करता कि उसमें उत्तरदायित्व की भावना कम है। सदस्य भले ही सभा में कम जाए और कम सक्रियता दर्शित करें। किंतु वह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सक्रिय अवश्य रहता है। विधान मंडल के विभिन्न निकायों में उसकी भागीदारी उत्तरदायित्व का प्रतीक है।

व्यवस्थापिका सभा के द्वारा जनता और सरकार के मध्य संचार का कार्य होता है। सभा से कार्यपालिका बनती है। और वह ही इस पर सतत् निरीक्षण और नियंत्रण करती है। सभा की कार्यकुशलता उसके सदस्यों के आचरण, उनके अनुशासन कार्यपद्धति कार्य कौशल, सजगता पर निर्भर है। संसदीय संस्कृति की स्थापना जनप्रतिनिधियों की क्षमता तथा जनता में उनके प्रति विश्वास का वातावरण किस सीमा पर निर्भर है। जनता की इच्छाएं लगातार बढ़ रही है और सभा की कार्यवाहियों से जनता संतुष्ट नहीं है। लोकप्रिय राजनीति के चलते सदस्य लगातार बढ़ रहे है और सभा की कार्यवाहियों से जनता संतुष्ट नहीं हैं। लोकप्रिय राजनीति के चलते सदस्य कार्यपालिका को निर्देशित और नियंत्रित करने के स्थान पर प्रशासनिक कार्यों के कारण सदस्य निजी आधारों पर मंत्रियों से अपने समन्वय के अधिक इच्छुक रहते हैं। सभा में सदस्यों की भागीदारी किस प्रकार की है और सामूहिक रूप से सदस्य किस प्रकार शासन और उसके निर्णयों को प्रभावित करते हैं वह संसदीय संस्कृति का भाग है। सभा का मूल कार्य विधि निर्माण और उसके निर्णयों को प्रभावित करते हैं। सभा इस मूल कार्य को किस सीमा तक कर रही है की जांच संसदीय संस्कृति का भाग है। सदन कार्यप्रणाली में हिंसा, प्रतिशोध, दबाव और अन्य अतार्किक दृश्य प्रणाली की कठिनाईयाँ हैं। संसदीय संस्कृति का भाग नहीं है। प्रश्न यह है कि क्या भारत में संसदीय संस्थाओं के हास का व्यापक घटनाक्रम है, क्या इसका कारण सामाजिक गतिशीलता का उच्च स्तरीय संवेग हैं? क्या इसका कारण राजनीतिक गतिशीलता है ? अथवा इसका कारण राजनीतिक दलों की गतिशीलता है? क्या इसका कारण सदस्यों के निजी आचार- विचार है? क्या इसके कारण समकालीन राजनीतिक परिस्थितियाँ हैं? एक जनतांत्रिक सरकार में स्थायित्व के लिए प्रभावी राजनीतिक संस्थाओं की आवश्यकता होती है क्यों देश में संस्थागत विकास की स्थितियाँ?

जनप्रतिनिधियों द्वारा अपने प्रतिनिधि जीवन को एक लाभकारी व्यवसाय के रूप में देखने की प्रवृत्ति बढ रही है।

निर्वाचन संबंधी दृष्टिकोण– निर्वाचन जनतंत्र की आत्मा है तथा संसदीय शासन (प्रजातंत्र के) प्राण है। अपने देश में संसदीय शासन व्यवस्था की स्थापना यद्यपि भारतीय संविधान के किसी अनुच्छेद विशेष में तो नहीं की गई है फिर भी इस व्यवस्था की स्थापना संविधान की प्रस्तावना से प्रेरित है। यद्यपि निर्वाचन आयोग को स्वतंत्र व निष्पक्ष बनाने का पूरा प्रयत्न किया गया है परंतु फिर भी उसकी कार्यप्रणाली को देखते हुए यह निर्धारित किया जा सकता है कि मुख्य निर्वाचन आयुक्त के कार्यकाल और उसकी योग्यताओं के संबंध में संविधान शांत है इसका अर्थ यह है कि इन प्रावधानों को राष्ट्रपति पर छोड दिया गया है कि इस तरह मंत्रिमंडल निर्वाचन आयुक्त की नियुक्ति के समय राजनीतिक विचारधारा से प्रभावित हो सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. भारत में संसदीय लोकतंत्र की परंपरा- डॉ. सुनील कुमार तिवारी
2. नगरीय निकाय के निर्वाचित जनप्रतिनिधि – ऑल इण्डिया इंस्टीट्यूट ऑफ लोकल गवर्नमेंट, ग्वालियर
3. लोकसभा अध्यक्ष के गौरवशाली पद का महत्व- भारतीय संसदीय शासन प्रणाली के संदर्भ में (डॉ. सीताराम गोले)
4. संघवी जी. सी- न्यू पैटर्न ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन , इंडियन जर्नल ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन भोपाल, पृ. 209
5. डॉ. निकुंज जैन- पंचायती राज व्यवस्था एक दृष्टिकोण, निकुंज प्रकाशन, जबलपुर मध्यप्रदेश, पृ. 09

****

आदिवासी विकास की चुनौतियाँ एवं संभावनाएं

राकेश पटेल *

शोध सारांश – अभी तक के आदिवासी विकास के प्रयास का विश्लेषण किया जाये तो यह प्रयास बहुत कारगर साबित नहीं हुए हैं। इसके लिए अधिकांश अध्ययन विकास के प्रयास में आदिवासीयों की असहभागिता तथा उदासीनता को उत्तरदायी मानते हैं। अत: विकास योजनाओं को आदिवासी सांस्कृति के अनुकूल बनाने की आवश्यकता हैं।

प्रस्तावना – वन क्षेत्रों में निवासरत् अनेक मानव समुदाय मानव सभ्यता के विकास क्रम में विभिन्न कारणोंवश पृथक रह गए, फलत: विकास का प्रकाश वहाँ नहीं पहुंच पाया। इन दुर्गम और पृथक क्षेत्रों में निवास करने वाले मानव समुदाय विकास की दृष्टि से अभी तक प्रारंभिक सोपानों पर थे, इन्हीं समुदायों के लोगों को विकसीत लोगों ने, आदिवासी, जनजाति, वन्यजाति, वनवासी, इत्यादि नामों से सम्बोधित किया। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् आदिवासी विकास हेतु प्रयास प्रारंभ हुए। वर्तमान में आदिवासी विकास के पर्याप्त प्रयास किए जा रहे हैं। साथ ही आदिवासिओं के विकास में अनेक चुनौतियों का सामना करना पड रहा हैं। अत: यह अध्ययन महत्वपूर्ण हो जाता है कि आदिवासी विकास में क्या क्या चुनौतियाँ हैं और इनसे निपटने के लिय क्या सम्भावनाएं हो सकती हैं।**साहित्य की समीक्षा –** उपाध्याय एवं शर्मा (1993) ने अपने अध्ययन में जनजातीय विकास का ऐतिहासिक एवं सैद्धांतिक पक्ष को स्पष्ट किया है। जनजातीय वर्ग की अर्थव्यवस्था, धर्म एवं सामाजिक संगठन का विस्तृत वर्णन किया है। शर्मा (1999) ने अध्ययन में पाया कि देश के विभिन्न आदिवासी क्षेत्रों में और एक ही क्षेत्र के विभिन्न आदिवासी समुदायों में भी सामाजिक–आर्थिक स्थिति अत्यन्त असमान है।

उपाध्याय एवं पाण्डेय (2002) ने अपने अध्ययन में पाया कि जनजातीय विकास की अवधारणा के पीछे जनजातीय प्रशासन, जनजातीय समस्याएँ तथा जनजातीय आंदोलन का इतिहास छिपा हुआ है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जनजातीय अतीत को ध्यान में रखते हुए जनजातीय विकास का प्रयास किया गया है।

श्रीवास्तव (2007) ने जनजातीय वर्ग के विभिन्न क्षेत्रों का वर्णन करते हुए जनजातीय विकास के लिए राष्ट्रीय नीति, पंचवर्षीय योजना एवं उपयोग के प्रयासों का सुक्ष्म विश्लेषण किया है। अटल एवं सिसोदिया (2011) ने अपने अध्ययन आदिवासी भारत में भारत की प्रमुख जनजातियों का सूक्ष्म विश्लेषण करते हुए, इनके रीति–रिवाज का विस्तृत अध्ययन किया है, साथ ही शासन द्वारा जनजातियों के विकास हेतु किये गये सरकारी प्रयासों का वर्णन किया है।

शोध पत्र का उद्देश्य एवं शोध प्रविधि:–

उद्देश्य

1. जनजातीय वर्ग के विकास में आने वाली चुनौतियों का अध्ययन करना।
2. जनजातीय वर्ग के सामने उपस्थित चुनौतियों को समाप्त करने की सम्भावनाओं का पता लगाना।

शोध प्रविधि – अध्ययन का समग्र मध्यप्रदेश का छिंदवाड़ा जिला है। छिन्दवाड़ा जिले के दो विकासखण्ड तामिया एवं जून्नारदेव को अध्ययन में सम्मिलित किया गया है। प्रत्येक चयनित विकासखंड से 5–5 ग्राम पंचायतों का स्तरीय यादृच्छिक प्रतिनिधित्व निदर्शन प्रणाली के आधार पर चयन किया गया है। ग्राम पंचायत की ग्राम सभा के जनजातीय वर्ग के सदस्य अध्ययन की इकाई है। प्रत्येक ग्राम पंचायत से 10–10 उत्तरदाताओं को अध्ययन में सम्मिलित किया गया है। इस प्रकार निदर्शन का आकार 10 ग्राम पंचायत से 100 उत्तरदाता है। तथ्यों के संकलन हेतु प्राथमिक एंव द्वितीय स्त्रोतों का प्रयोग किया गया है। प्राथमिक तथ्यों के संग्रहण हेतु साक्षात्कार अनुसूचियों का प्रयोग किया गया है। इस हेतु अवलोकन पद्धति का भी प्रयोग किया गया है।

आदिवासी विकास में आर्थिक चुनौतियाँ – जनजाति वर्ग आर्थिक रूप से पिछड़े हुए है। इसका प्रमुख कारण परम्परागत व्यवसाय से जुड़ा रहना है। इनके परम्परागत व्यवसाय में समय के साथ आधुनिकता का अभाव दृष्टिगोचर हो रहा है। जिसमें कृषि प्रमुख है, आदिवासी वर्ग कृषि लागत की पूर्ति के लिये कृषि ऋणों पर निर्भर हैं। आधुनिक बीज, दवा, उर्वरक आदि का कम ज्ञान होने से कृषि उत्पादन में कमी रहती है। यदि यह वर्ग बाजार से कृषि बीज, दवा एवं उर्वरक खरीदते भी है, तो यह देखा गया है कि दुकानदार उन्हें अप्रमाणित या निम्न स्तर की सामग्री का विक्रय कर देते हैं। जिससे की दुकानदारों को तो लाभ होता है किन्तु आदिवासी कृषक ठगा जाता है।

कृषि उत्पाद विक्रय में भी इस वर्ग को अनेक समस्या आ रही है। कृषि मण्डी इनके निवास क्षेत्र से दूर है। कृषि मंडी में इन लोगों के साथ धोखाधड़ी जैसी घटनाएं सामने आती है। अपने सीमित ज्ञान के कारण जनजाति वर्ग नये व्यवसाय को अपनाने में असमर्थ है।

जनजातीय वर्ग को हस्तशिल्प की अनेक सामग्री बनाने में महारत हासिल है, जो कि एक अच्छा व्यवसाय सिद्ध हो सकता है। किन्तु हस्तशिल्प की कच्ची सामग्री वन से प्राप्त होती है। वन उत्पाद पर वन विभाग ने हस्तक्षेप कर दिया है। जिससे यह वर्ग इस कला को व्यवसाय का रूप नही दे पाए है। अगली समस्या हस्तशिल्प के उत्पाद को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के उत्पादों से

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.) भारत

मुकाबला करना पड़ता है। उदारीकरण एवं वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप पूरा बाजार खुला हुआ है। अन्तर्राष्ट्रीय उत्पादों से मुकाबला करने की हिम्मत, तकनीक और कुशलता इस वर्ग में दृष्टिगत नहीं होती है।

सामाजिक जीवन की चुनौतियाँ – जनजातीय वर्ग में सामाजिक गतिशीलता कम होती है। इसका कारण समाज में प्रचलित रीति–रिवाज व विवाह सम्बन्ध है। पारिवारिक लगाव के कारण घर से दूर नहीं जाना चाहते है। विवाह पद्धति भी ऐसी प्रचलित है, जो कि अपने करीबी सम्बन्धियों से ही विवाह सम्पन्न हो जाता है। इस कारण नये–नये लोगों से सामाजिक सम्बन्ध स्थापना का मार्ग अवरूद्ध हो जाता हैं। अत: यह व्यापक क्षेत्र तक सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करने में पीछे रह गए है। समाज में प्रचलित कुरीतियाँ भी इनके मार्ग में बाधक है। जिसमें नशा की आदत, बालविवाह आदि प्रमुख है।

नशा की आदत, अव्यवस्थित जीवन शैली एवं बाल विवाह के परिणामस्वरूप अनेक बीमारियों का खतरा रहता है। समय से पहले बुढ़ापा, कमजोरी आदि लक्षण देखे जा सकते है।

इनकी विवाह पद्धति में भी परिवर्तन हो रहा है। पहले विवाह बहुत कम खर्चे में सम्पन्न हुआ करता था परन्तु आधुनिकता के प्रभाव में आने के कारण विवाह पर खर्चे में भारी वृद्धि हुई है। जिसका सीधा प्रभाव इनकी अर्थव्यवस्था पर पड़ रहा है। मुख्यमंत्री कन्यादान योजना आने से कुछ लोगों को इससे फायदा हुआ है।

राजनीतिक जीवन की चुनौतियाँ – ऐसा नहीं है कि आदिवासी समूह राजनीतिक जीवन से अनभिज्ञ है। इस वर्ग में लम्बे समय तक अलग–अलग स्थानों पर अपना शासन संचालित किया है। परन्तु वर्तमान राजनीतिक परिस्थिति अलग है। इनका राजनीतिक जीवन निम्न स्तर पर है। पंचायत आदि में आरक्षण के कारण चुनाव में भाग लेकर चयनित तो हो जाते है किन्तु आज भी सामान्य सीट से चुनाव में उम्मीदवारी करता हुआ यह वर्ग नहीं दिखता है। आदिवासी वर्ग को दो भागों में बाँटा जा सकता है – एक अमीर जनजाति वर्ग जो अपना विकास कर लिया है। दूसरी तरफ एक गरीब जनजाति वर्ग ऐसा भी है, जो अत्यन्त पिछड़ा जीवनयापन करने पर मजबूर है। इन दोनों वर्गों के बीच में एक खाई है, जो बढ़ती नजर आ रही है। अमीर जनजातीय वर्ग सभी महत्वपूर्ण योजनाओं का पूरा–पूरा लाभ उठा रहा है, जबकि गरीब जनजाति वर्ग इससे अनभिज्ञ है।

शासकीय सेवाओं में नियुक्ति के लिए होने वाली प्रतियोगिता परीक्षाओं में आरक्षण होने पर भी गरीब जनजाति वर्ग इस अमीर जनजाति वर्ग से प्रतियोगिता करने में असक्षम है। अमीर जनजाति वर्ग ही आरक्षण का पूरा लाभ ले रहा है। जनजाति वर्ग में शिक्षा का स्तर बढ़ने के साथ राजनीतिक चेतना में वृद्धि हो रही है। परन्तु आज भी अनुसूचित क्षेत्रों में जनजाति वर्ग का शिक्षा स्तर निम्न सोपान पर है। अत: शिक्षा में वृद्धि करना महती आवश्यक है क्योंकि शिक्षा की विकास ही कुंजी है।

सांस्कृतिक जीवन की चुनौतियाँ – आधुनिक सभ्यता ने आदिवासी के सांस्कृतिक जीवन को प्रभावित किया है। इनकी सभ्यता संक्रमण काल में है जिससे इनकी भाषा, रीति–रिवाज, वेशभूषा आदि संक्रमित हो गये है। अब वे अपनी भाषा से दूर होते जा रहे है। युवा वर्ग तो उनकी मूलभाषा को भूल भी चुके है। वेशभूषा का पाश्चात्यकरण हो गया है। युवा वर्ग जो रोजगार एवं जीविका उपार्जन के लिए शहर जाते है। वापस घर लौटते समय आधुनिक वेशभूषा अपने साथ ले आते है। इस प्रकार बड़े बुजुर्ग व्यक्ति ही अपनी परम्परागत वेशभूषा में दृष्टिगोचर होते है।

गुदना परम्परा के कारण युवा वर्ग को सेना की भर्तियों से बहार कर दिया जाता है। बाल विवाह के कारण शासकीय सेवा में प्रवेश की समस्या आ रही है, क्योंकि शासन द्वारा विवाह के समय आयु एवं बच्चों की संख्या तय कर दी गई है। इस कारण ये शासकीय सेवा से अपात्र हो जाते हैं।

जनजातीय वर्ष के परम्परागत वाद्ययंत्र एवं दूसरी सामग्री की पूर्ति के लिए नये–नये वन अधिनियम समस्या बन गए है। क्योंकि इन वाद्य यंत्रों के लिए कुछ विशेष वन्य जीव के चमड़े की आवश्यकता होती है जो कि शिकार के बिना संभव नहीं है।

अपनी विशेष वेशभूषा तैयार करने के लिये जनजातीय वर्ग को विशेष त्योहारों पर मोरपंख एवं प्राकृतिक सामग्री की आवश्यकता होती है। किन्तु वन विभाग के नये नियमों ने इन्हें वन्य उत्पाद से पूरा वंचित तो नहीं किया पर अंकुश अवश्य लगा दिए हैं। इससे इनकी वैभवशाली परम्परा को नुकसान हो रहा है।

निष्कर्ष – जनजातीय वर्ग का मुख्य व्यवसाय कृषि है। वर्तमान में कृषि में आधारभूत अन्तर आया है। जनजातीय वर्ग को आधुनिक कृषि करने में आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है क्योंकि कृषि लागत में बढ़ोत्तरी हुई है। जनजातीय वर्ग के लिये हस्तकरघा उद्योग एक अच्छा विकल्प हो सकता है किन्तु कच्चे सामग्री की कमी और अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों से प्रतिस्पर्धा प्रमुख समस्या है।

जनजातीय वर्ग की सामाजिक व्यवस्था के परिणामस्वरूप इनकी सामाजिक गतिशीलता कम है। नशा एवं अव्यवस्थित जीवनशैली का दुष्प्रभाव इनके स्वास्थ्य पर पड़ रहा है। जनजातीय वर्ग के सांस्कृतिक जीवन पर आधुनिक संस्कृति का विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। आधुनिकता के प्रभाव से इनकी भाषा, रीति–रिवाज एवं वेशभूषा प्रभावित होते जा रहे है। विवाह पद्धति में परिवर्तन के साथ विवाह पर होने वाले व्यय में भी भारी वृद्धि दृष्टिगोचर हो रही है।

राजनीतिक क्षेत्र में यह वर्ग सामान्य वर्ग से प्रतिस्पर्धा करने में असमर्थ है। साथ ही गरीब जनजातीय वर्ग के लोगों को अमीर जनजातीय वर्ग के लोगों से प्रतिस्पर्धा करनी पड़ रही है।

सुझाव – जनजातीय वर्ग के विकास के लिए यह आवश्यक है कि आरक्षण का लाभ केवल गरीब जनजातीय वर्ग के लोगों को मिले अर्थात् जनजातीय वर्ग में क्रीमी लेयर का प्रावधान किया जाना चाहिए। इस वर्ग को उन्नत कृषि एवं हस्तकरघा का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए, नशा मुक्ति अभियान को ओर अधिक कारगर तरीका से लागू किया जाना चाहिए। सामाजिक कुरीतियों के प्रति जागरूकता फैलाने की महती आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. उपाध्याय, विजय शंकर (1993): 'भारत की जनजातीय संस्कृति', मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल
2. शर्मा, ब्रह्मदेव (1999): 'आदिवासी विकास एक सैध्दान्तिक विवेचन', मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल
3. उपाध्याय, विजय शंकर एवं गया पाण्डेय (2002): 'जनजातीय विकास', मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल
4. श्रीवास्तव, ए. आर. एन. (2002): 'जनजातीय भारत', मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल
5. अटल, योगेश एवं यतीन्द्रसिंह सिसोदिया (2011): 'आदिवासी भारत' रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर

भारत-रूस बदलते संबंध

डॉ. संजय कुमार यादव *

प्रस्तावना – भारत और रूस के बीच हर साल शिखर सम्मेलन होता है, क्योंकि दोनों ही एक-दूसरे के रणनीतिक साझीदार हैं। पहले माना जा रहा था कि सोवियत संघ के विघटन के बाद शीत युद्ध की समाप्ति हो गई है लेकिन पिछले कुछ वर्षो के दौरान रूस और अमरीका के नेतृत्व वाले पश्चिमी देशों के खेमे के बीच एक नए शीत युद्ध की शुरूआत हो चुकी है, हालांकि भारत इस दौरान अमरीका के काफी नजदीक आया है, लेकिन भू-राजनीतिक दृष्टि से आज भी उसे रूस की मदद की जरूरत पड़ सकती है। क्योंकि अमरीका का पाकिस्तान और उसके द्वारा प्रायोजित भारत विरोधी आतंकवाद के प्रति कोई स्पष्ट नजरिया विकसित नहीं हो पाया, इस दृष्टि से प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की रूस यात्रा का महत्व और भी बढ़ जाता है।[1] भारतीय मीडिया में रूस के साथ सैन्य तकनीकी सहयोग और रूसी अस्त्रों के खिलाफ चलाए जा रहे अभियान के बावजूद गत दिसम्बर में रूसी राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन के साथ नई दिल्ली में शिखर वार्ता में नरेन्द्र मोदी ने दो टूक कहा था कि रूस भारत का प्रमुख सैन्य जोडीदार बना रहेगा और दोनों देशों के बीच विशिष्ट सामरिक साझेदारी का और आगे विकास किया जाएगा। अब 16वें भारत-रूस शिखर सम्मेलन के लिए भारतीय प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की मॉस्को यात्रा से तीन चीजें सामने आई है। पहला, आर्थिक साझेदारी पर जोर देते हुए द्विपक्षीय सम्बन्धों को और रणनीतिक गठजोड़ में बदलाव करके विक्रेता-खरीददार के बजाय रिश्तों को साझेदारी के स्तर पर ले जाना तीसरा यह कि विदेश नीति में बदलावों के बावजूद भारत-रूस सम्बन्धों को और दृढ़ करना।

नाभिकीय रिएक्टर, सौर ऊर्जा संयंत्र, रेलवे और हेलिकॉप्टर निर्माण जैसे 16 समझौते दिखाते है कि मोदी ने इन बातों पर गौर किया है, पर हैरानी की बात यह है कि भारत-रूस के बीच आर्थिक क्षेत्र में परस्पर निर्भरता की व्यापक गुंजाइश के बावजूद दोनों के बीच व्यापार महज 10 अरब डॉलर का है, रूस आज बेहद दिलचस्प आर्थिक मोड़ पर खड़ा है पश्चिमी देशों के प्रतिबंधों का यह दूसरा साल है, तुर्की उसका बेहद अहम् व्यापारिक साझेदार है, लेकिन उसके साथ उसका व्यापार अब तक के सबसे निचले स्तर पर चला गया है। भारत और रूस अगले 10 साल में अपना व्यापार 30 अरब डॉलर के दायरे तक पहुँचाना चाहते है, मोदी ने द्विपक्षीय प्रेस वक्तव्य में यह बात कही भी है कि 'मैं भारत के आर्थिक बदलाव में रूस को एक प्रमुख साझेदार की तरह देखता हूँ' इसके लिए भारत को सबसे पहले देखना होगा की रूस में ऐसी कितनी संभावनाएं है जिन पर पश्चिमी देशों और तुर्की की नजर नहीं है।[2] भारत के लिए रूस मध्य एशिया का मार्ग अहम है इसी को लेकर प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने भारत यूरेशियन आर्थिक संघ (ईईयू) और मुक्त व्यापार समझौता (एफटीए) की तरफ बढ़ने पर जोर दिया। ईईयू के अन्तर्गत रूस, बेलारूस, आर्मीनिया, किर्गिस्तान और कजाकिस्तान आते है। ऐसे में भारत और ईईयू के बीच मुक्त व्यापार समझौते से भारत को 10.80 करोड़ की आबादी वाले बाजार में अपनी पहुँच बनाने का मौका मिलता है जिनकी संयुक्त जीडीपी अनुमानत: 2.7 खरब डॉलर है। रूस आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए एशिया का रूख कर रहा है। ऐसे में जी-20 अर्थव्यवस्थाओं में तेजी से उभरता भारत उसके लिए बड़ा मददगार साबित हो सकता है।[3]

प्रधानमंत्री मोदी के साथ एक साझा बयान में पुतिन ने कहा, 'भारत और रूस के बीच सहयोग के लिए तकनीक, नए प्रयोग, ऊर्जा, विमान निर्माण, फार्मा और हीरे जैसे क्षेत्रों में गुंजाइश है।' सम्मेलन में रणनीतिक सहयोग अहम मुद्दा था पर इस बार स्थानीय विनिर्माण पर भी काफी जोर था। मोदी की 'मेक इन इंडिया' परियोजना को इस सम्मेलन में तब बड़ा बल मिला जब कामोव 226 हेलिकॉप्टरों को भारत में बनाने के लिए दोनों पक्षों के बीच सहमति बनी इसके तहत रूस 60 तैयार हैलीकॉप्टर भारत को देगा और 140 हेलिकॉप्टरों का निर्माण भारत में होगा। मेक इन इंडिया के तहत रक्षा के क्षेत्र में यह पहली परियोजना है। इसके अलावा भारतीय परमाणु ऊर्जा विभाग और रूस राज्य परमाणु ऊर्जा निगम मिलकर भारत में 12 परमाणु रिएक्टर बनाएंगे। इस बार द्विपक्षीय शिखर सम्मेलनों की सामान्य रूपरेखा से अलग हटते हुए प्रधानमंत्री मोदी ने जान बूझकर अपनी रणनीतिक साझेदारी में निजी क्षेत्र को शामिल किया है। दरअसल इसके जरीए यह तय करना था कि भारत और रूस के बीच करार में 'मेक इन इंडिया' अहम हिस्सा है। रक्षा क्षेत्र की कई कम्पनियों के सीईओ जिनमें रिलायंस और टाटा भी है।

प्रधानमंत्री के साथ द्विपक्षीय शिखर सम्मेलन में मौजूद थे, मोदी पुतिन के बीच एक बार अहम समझौता हुआ रिलायंस डिफेंस और वायुरक्षा प्रणाली बनाने वाली रूसी कम्पनी एल्माज आते के बीच छह अरब डॉलर का समझौता हुआ। रूस के उद्योग और व्यापार उपमंत्री आंद्रे बोगिन्स्की ने कहा कि रूसी हेलिकॉप्टर और उसके पुर्जे बनाने वाली कम्पनियां भारत को इससे जुड़े किट्स देने को तैयार हैं, जिससे वहीं उनकी फिटिंग हो सकेगी और इसे स्थानीय तौर पर तैयार किया जा सकेगा। वहीं 2014 में रूसी सैन्य उपकरणों के निर्यात में भारत की हिस्सेदारी 28 प्रतिशत रही जो 4.7 अरब डॉलर थी अभी टाटा समूह और रूसी कम्पनी सुखोई में यह चर्चा चल रही है कि दोनों भारत में लड़ाकू विमान के पूर्जे बना सके।[4]

भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की रूस यात्रा के दौरान दोनों देशों के बीच 16 समझौतों पर हस्ताक्षर हुए :-

- दोनों देशों के नागरिकों और राजनयिक पासपोर्ट रखने वालों की आवाजाही के लिए कुछ श्रेणियों में नियम कायदों को सरल बनाया गया है।

* शोधार्थी, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

- हेलिकॉप्टर इंजीनियरिंग के क्षेत्र में सहयोग बढेग़ा।
- कस्टम मामलों पर सहयोग की योजना पर काम होगा।
- रूसी रिएक्टरों का भारत में निर्माण किए जाने पर सहमति बनी ।
- रेलवे सेक्टर में तकनीकी सहयोग का रास्ता खुला।
- भारत में सौर ऊर्जा प्लांट लगाने और ब्रॉडकास्टिंग के क्षेत्र में सहयोग बढ़ेगा।
- रूस में तेल खनन को लेकर समझौता हुआ।[5]

दिनांक 15-16 अक्टूबर 2016 को गोवा में ब्रिक्स सम्मेलन के दौरान भारत एवं रूस के मध्य तीन प्रमुख रक्षा समझौते सम्पन्न हुए इस समझौते के तहत भारत रूस से पांच एस-400 एंटी मिसाइल डिफेंस सिस्टम खरीदेगा तथा 200 कामोव के-226 हेलिकॉप्टर बनाने के लिए संयुक्त उपक्रम की स्थापना के साथ साथ चार एडमिरल ग्रिगोरोविच श्रेधी (प्रोजेक्ट 11356)के निर्देशित मिसाइल यस्टील्थ फिग्रेट' के निर्माण के लिए सहयोग करेंगें।[6]

एस-400 वायु रक्षा प्रणाली : लंबी दूरी की रक्षा मिसाइल प्रणाली एस-400 यट्राइअम्फ' की खरीद को लेकर अंतर सरकारी समझौता सामरिक दृष्टि से सबसे अहम फैसला है यह रक्षा प्रणाली करीब 400 कि.मी. के क्षेत्र में शत्रु के विमान मिसाइल और यहां तक की ड्रोन को नष्ट करने में सक्षम है। कामोव के-226 टी हेलिकॉप्टर : रूस से हुए रक्षा समझौते के तहत भारत को कामोव के-226 टी के 200 हेलिकॉप्टर मिलेंगे। इनमें से 60 रूस से आएंगे तथा बाकी भारत में ही संयुक्त रूप से निर्मित किये जायेंगे। कामोव के-226 बहुउद्देश्यीय हेलिकॉप्टर है। एडमिरल ग्रिगोरोविच क्लॉस (प्रोजेक्ट-11356) गाइडेड मिसाइल स्टील्थ फ्रिगेट : एक अन्य अहम समझौता चार एडमिरल गिगोरोविच क्लॉस (प्रोजेक्ट 11356) गाइडेड मिसाइल स्टील्थ फ्रिगेट को लेकर है। इस सौदे के तहत दो युद्धपोत रूस से आएंगे और दो के सहयोग से भारत में निर्मित किए जाएंगे।

राष्ट्रपति पुतिन विश्व की राजनीति में ध्रुव के तारे की तरह चमक रहे है आज भारत के प्रधानमंत्री मोदी की लोकप्रियता विश्व राजनीति को प्रभावित कर रही है, दोनों राजनेता ऊर्जावान और जोशीले है। इनकी आपसी समझदारी भी अच्छी है, दोनों नेताओं का इरादा भी एक दूसरे को बुलंदी के आसमान तक पहुँचाने का है। वे इन सम्बन्धों को फिर एक नई ऊँचाई पर ले जाने का संकल्प रखते है। प्रधानमंत्री मोदी कहते है कि हिन्दुस्तान का बच्चा बच्चा जानता है कि भारत का असली दोस्त रूस है, ऐसे में सबको उम्मीद है कि प्रधानमंत्री मोदी अटल बिहारी वाजपेयी के पद चिन्हों पर चलते हुए दोस्ती, सहयोग और विश्वास की अटल बुनियाद को और ठोस बनाएंगे।

रूस के साथ रिश्तों पर भारत को अभी बहुत कुछ करने की जरूरत है गौर करने वाली बात है कि रूस के सहयोग के बिना एशिया प्रशान्त इलाके में विकास और शांति की धारा नहीं बहेगी। ऐसे में भारत सरकार को रूस के साथ कदम मिलाते हुए आगे बढ़ना चाहिए। प्रधानमंत्री मोदी के रूस दौरे के समय उनके साथ बड़ी भारतीय कम्पनियों के प्रतिनिधियों का भी आगमन हुआ।

भारत और रूस के बीच जारी सहयोग ऊर्जा के क्षेत्र में ओएनजीसी, रूस के साथ दो प्रोजेक्ट चला रहा है, पहला एक्सोन मोबिल की भागीदारी और दूसरा सखालीन-1 प्रोजेक्ट है सन् 2009 में इम्पीरियल एनर्जी परियोजना पर काम शुरू हुआ था। इसके साथ 15 प्रतिशत की भागीदारी सहित वान्कोर नेफ्त प्रोजेक्ट पर काम जारी है, जिसके आरम्भिक दस्तावेज पर मोदी जी के रूस दौरे के समय ही हस्ताक्षर किए गए है ऐसी उम्मीद है कि ऊर्जा क्षेत्र में हमारी भागीदारी और बढ़ेगी। सन् 1960 से रूस भारत के साथ इस क्षेत्र में सहयोग कर रहा है बॉम्बे हाई के विकास में रूस का बड़ा योगदान रहा है। ऐसी आशा है कि आने वाले समय में भारत और रूस की दोस्ती और गहरी होगी।[7]

पिछले एक वर्ष में अमरीका और रूस के संदर्भ में नरेन्द्र मोदी को भारत की विदेश नीति पर ध्यान देना उचित होगा। उसमें शीत युद्ध के बाद से पहली बार नई दिल्ली ने वाशिंगटन और मॉस्को के बीच संतुलन की नीति को त्याग दिया। विशेषकर यूक्रेन के भू-राजनीतिक संकट की पृष्टभूमि में इसका बहुत बड़ा महत्व है रूस के जीवंत हितों को स्वीकार करके नई दिल्ली ने क्रीमिया के विलय पर मॉस्को की कोई आलोचना नहीं की और उसके खिलाफ प्रतिबन्ध लगाने से इनकार कर दिया। भारतीय मीडिया में रूस के साथ सैन्य तकनीकी सहयोग और रूसी अस्त्रों के खिलाफ चलाए जा रहे अभियान के बावजूद गत दिसम्बर में रूसी राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन के साथ नई दिल्ली में शिखर वार्ता में नरेन्द्र मोदी ने दो टूक कहा था कि रूस भारत का प्रमुख सैन्य जोड़ीदार बना रहेगा और दोनों देशों के बीच विशिष्ट सामरिक साझेदारी का और आगे विकास किया जाएगा।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की पहली रूस यात्रा के राजनीतिक, आर्थिक और सामरिक मायने है भारत और रूस के बीच सैन्य रिश्तों की समीक्षा करना जरूरी है दोनों देशों के सैन्य और सामरिक रिश्ते इसलिए काफी अहम हो जाते है क्योंकि भारत की तीनों फौज की इवेंटरी का अधिकतम हिस्सा रूस से मिलता है भारत के पास मौजूद टैंक, लड़ाकू विमान, पनडुब्बियां और आधुनिक जितने भी विध्वंसक हथियार है वे सभी भारत ने रूस से लिए है। रूस के लिए भी भारत अहम हो जाता है क्योंकि भारत बड़ा हथियार आयातक देश है मिग समेत तमाम दुर्घटनाओं में वायुसेना के पायलट अपनी जान गंवा चुके है। भारतीय पक्ष को इस बात से बेहद आश्वस्त होने की आवश्यकता है कि कहीं आउटडेटेड हथियारों को हमारे देश में न रख दिया जाए भारत और रूस के बीच जिन अहम सामरिक समझौतों पर बात हुई उनमें एक फ्रिगेट पर हस्ताक्षर शामिल है एंटी मिसाइल डिफेंस सिस्टम पर भी बात हो गई है। इसके साथ परमाणु पनडुब्बी और ब्रहोस मिसाइल जैसी क्षमताओं के विकास में रूस के साथ भागीदारी की अहम भूमिका होगी। ऐसे मामलों में हमें और भी सजग होने की आवश्यकता है कि कहीं हम ऑउटडेटेड हथियारों की कब्रगाह न बन जाएं।

भारत जैसे-जैसे रूस से दूर होता जा रहा है खासकर रक्षा उपकरणों पर निर्भरता के मामले में मॉस्को नए विकल्प खोज रहा है मॉस्को को यह भी लग रहा है कि 2014 के बाद अफगानिस्तान और मध्य एशिया में स्थिरता कायम करने में पाकिस्तान की भूमिका महत्वपूर्ण होगी। ऐसे बहुत सारे कारण है, जिनकी वजह से रूस पाकिस्तान की तरफ दोस्ती का हाथ बढ़ा रहा है।पुतिन ने ही पाकिस्तान को शंघाई सहयोग संगठन में शामिल करने की पहल की थी उन्होंने ही पाकिस्तान की ऊर्जा समस्या के समाधान में रूसी सहयोग का प्रस्ताव भेजा था। उन्होंने ही कहा था कि रूस, पाकिस्तान, को एक भरोसेमंद और बहुत महत्वपूर्ण सहयोगी मानता है, इसलिए भारत को पुरानी दोस्ती को नए परिप्रेक्ष्य में देखना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Indiyan Foren Policies – B.R.Nanda
2. Dainik Jagran – Sep. 2014
3. Times of India – Sept. 2014
4. Indain Express- Sept. 2014
5. Indai Russiya Masco Ghosna Ptra
6. Brics Confrence Goa meet – Oct. 2016
7. India - Russia Relations – V.D. Chopra

आधुनिक समाज के निर्माता डॉ. भीमराव अम्बेडकर

डॉ. आनंद कुमार भारतीय *

शोध सारांश – डॉ. अम्बेडकर ने आधुनिक भारत के निर्माण में जिस नवीन समाज की परिकल्पना की उसकी तमाम सामग्री पूर्वगामी समकालीन समाजों के प्रचलित मूल्यों और स्थापित सिद्धांतों से प्राप्त की। द्रविड़ और सैंधव सभ्यता के सह अस्तित्ववाद, बौद्धयुगीन वर्ण वर्ग विहीन समाज की पुनर्स्थापना भक्तिकाल के कबीर युग का निर्भर और निर्भय सम्प्रभुतावाद तथा आधुनिक युग का समता और स्वतंत्रतायुक्त बंधुत्ववाद एवं वर्तमान युग का वैज्ञानिक मानवतावाद आदि मूलभूत आधारशिलाओं से भारत का निर्माण किया। आधुनिक भारत में अब यह स्पष्ट है कि समाज में सभी धर्मों के लोगों को धर्मनिरपेक्ष रूप से समान अधिकार प्राप्त है। यह अनिवार्य है कि यदि देश का अस्तित्व बरकरार रखना है, तो सभी को समानता का अधिकार और अवसर देकर साथ लेकर चलना होगा। डॉ. अम्बेडकर ने भारतीय संविधान का ही नहीं, वरन् मजबूत भारतीय समाज का निर्माण किया है।
शब्द कुंजी – दलितोद्धार

प्रस्तावना – बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर ने हिन्दू सनातन धर्म को एक नई दिशा और परिभाषा देते हुए आधुनिक परिवेश में बदलने का भरपूर प्रयास किया। उन्होंने महाड़ जल सत्याग्रह, कालाराम मंदिर प्रवेश गुरू वयुर टेम्पल आदि कई लंबे आंदोलन चलाए। डॉ. अम्बेडकर ने धर्म का पाखंड, कर्मकांड के जाल और जातिगत असमानताओं की संकुचित परिधि में से बाहर निकाल कर मनुष्य पर केंद्रित सामाजिक विचारधारा पर बल दिया। अंबेडकर की विचारधारा ने समकालीन विश्व के कई बुद्धिजीवियों एवं भारत के कई देशभक्तों तथा नेताओं को प्रभावित किया। महात्मा गांधी, डॉ. अम्बेडकर से सहमत नहीं थे किंतु बाद में उन्हें भी अम्बेडकर के विचारो से सहमत होना पड़ा।

डॉ. अम्बेडकर जब भारत की वर्णव्यवस्था और जातिगत गंदे पेशों पर आधारित सामाजिक असामानताओं के विरूद्ध शोषित वर्ग को संगठित कर उनके अधिकारों के लिए आंदोलन चला रहे थे, तब हिन्दू धर्म के प्रवर्तकों और प्रवक्ताओं उनके विरोध में खड़े थे। अम्बेडकर के तर्कसंगत प्रश्नों का हिन्दू समर्थकों के पास कोई न्यायोचित रास्ता नहीं था। वे बाबा साहब को नास्तिक और असंतुष्ट जिज्ञासु घोषित करने की शक्ति में लगे रहते थे। इसका एक सटिक उदाहरण है कि जब भी कभी व्यक्ति कंगाली के दौर से गुजरता है, तो वह सड़ी-गली वस्तुओं का संग्रह संभाल कर रखता है, वैसे ही हिन्दू धर्म और उसके अनुयायी जर्झर और सड़ी-गली सामाजिक व्यवस्थाओं को संभाले हुए बाबा साहब के विरोध में खड़े रहे। यह हिन्दू धर्म की विडम्बनाओं के अतिरिक्त कुछ और नहीं था। [1]

बाबा साहब ने रूढ़िवादी हिन्दू विचारधारा में बदलाव लाने के तमाम उपायों का ईमानदारी से प्रयोग किया। महाराष्ट्र सहित कई प्रांतों में उन्होंने दबे-कुचले वर्गों के हित में सक्रिय आंदोलन चलाए। उनके आंदोलन में छत्रपति शाहूजी महाराज, शियाजी राव गायकवाड़, स्वामी नारायण गुरू, रामास्वामी नायकर, अछूतानंद हरिहर आदि कई विद्धान जुड़ते रहे और बाबा साहब का कारवां बनता गया।

बाबा साहब और महात्मा गांधी दोनों समकालीन थे। गांधी जी प्राथमिकता **स्वराज्य** पहले शेष सुधार की बातें बाद में। डॉ. अम्बेडकर की प्राथमिकता पहले सामाजिक परिवर्तन और उसके बाद में दलितों की राजनीतिक और आर्थिक हिस्सेदारी। दोनों के सोच में अपने-अपने वर्गरहित की चिंताएं थी। दोनों के विचारों में भी मतभेद था। गांधीजी पुरातन वर्णव्यवस्था और जातिवाद के समर्थक थे, तो अम्बेडकर वर्गव्यवस्था और जातियों के प्रखर विरोधी प्रवक्ता थे। गांधीजी ने दलितों को (हिन्दुओं का जड़खरीद गुलाम) हिन्दू मानते हुए उसके लिए पृथक राजनीतिक अस्तित्व का विरोध किया। जबकि अम्बेडकर प्रारंभ से ही हिन्दू धर्म में अस्पृश्यता और दलितों के शोषण का विरोध कर दलितों के विकास के लिए पृथक राजनीतिक अस्तित्व के सहारे सशक्तिकरण चाहते थे। अस्पृश्यता के विरोध में गांधीजी का अभियान डॉ. अम्बेडकर के साथ हुए **पूना पैक्ट** के बाद ही शुरू हुआ था। यह समझौता दोनों के बीच सैकड़ों लोगों की गवाही में 24 सितम्बर 1932 को हुआ और गांधीजी जेल से रिहा हुए। गांधीजी ने 25 सितम्बर 1932 को बंबई में **हरिजन सेवक संघ** के गठन से अछूतोद्धार कार्यक्रम आरंभ किया। देखा जाए तो अम्बेडकर ने गांधीजी से 16 वर्ष पहले दलितों के अधिकारों के लिए 1916 में ही आंदोलन छेड़ दिया था। [2]

बाबा साहब ने 1916 में अपनी शिक्षा समाप्त कर भारत लौटे तो **इंडियन नेशनल कांग्रेस** और **मुस्लिम लीग** के बीच यह समझौता हुआ कि **स्वराज्य** मिलने से पूर्व और पश्चात् हिन्दुओं का 70 प्रतिशत हिस्सा और 30 प्रतिशत मुसलमानों का राजनैतिक सत्ता पर रहेगा। इस समझौते को भारतीय स्वाधीनता आंदोलन में कांग्रेस लीग समझौता कहा जाता है, जो आगे चल कर एक्ट बनने जा रहा था। इसको डॉ. अम्बेडकर की खोजी नजरों ने देख लिया और 1916 से ही डॉ. अम्बेडकर ने भांप लिया था कि स्वराज्य प्राप्ति के बाद दलितों की देश में कोई भी हिस्सेदारी नहीं होगी। दलित केवल गुलाम और सेवक ही बना रहेगा। यहां से ही डॉ. अम्बेडकर का दलितोद्धार कार्यक्रम आरंभ होता है। [3]

उन्होंने ब्रिटिश हुकुमत के सामने ये बुनियादी मुद्दे उठाए-सभा, सम्मेलनों के द्वारा, ज्ञापनों के द्वारा, पत्र-व्यवहारो के जरिये, मांग पत्रों के

* अतिथि विद्वान (राजनीति विज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,अशोक नगर (म.प्र.) भारत

रूप में ब्रिटिश हुकुमत का ध्यान आकर्षित किया। मिन्टो-मार्ले कमीशन आया जातीय जनगणना जे. एच. हटन द्वारा 1921 में हुई। सन् 1930,1931,1932 तीन कान्फ्रेस लंदन हुई और कम्युनल अवार्ड के द्वारा दलितों का हिस्सा तय हुआ तब जाकर गांधी एण्ड कांग्रेस पार्टी को समझ में आया कि इस देश में मूल निवासी दलित भी हिस्सेदार है, तब जाकर गांधी और अंबेडकर के बीच पूना एक्ट हुआ। इससे पूर्व गांधी एंड पार्टी ने कम्युनल अवार्ड को ही खारिज कर दिया था। [4]

बाबा साहब ने 20 जुलाई 1924 में **बहिष्कृत हितकारिणी सभा** की स्थापना कर देश व्यापी दलितोद्धार का संकल्प किया। स्वाधीनता संग्राम में दलितों और शोषितों की उपेक्षा कर गांधी जी कामयाब नहीं हो सकते थे। इसलिए उन्हें हिन्दू समाज से जोड़कर रखने के लिए गांधीजी डॉ. अम्बेडकर की विचारधारा का विरोध कर रहे थें महत्वपूर्ण तथ्य यह था कि डॉ. अम्बेडकर हिन्दू धर्म के उस समय प्रखर विद्रोही नहीं थे, बशर्ते दलितों और पिछड़ों को समानता के अधिकार मिले और जातिगत भेदभाव समाप्त हो। वे हिन्दू बने रहने के लिए स्वतंत्रता और समानता की आधारशिला का भ्रातृत्व बंधुता चाहते थे। अपने जीवन के अनुभवों के आखिरी दिनों में हिन्दू धर्म से मोहभंग होने पर ही उन्होंने बौद्ध धर्म स्वीकार किया। डॉ. अम्बेडकर ने अन्य धर्मों को इसलिए स्वीकार नहीं किया, क्योंकि उनमें भी जातीय संकीर्णता मौजूद थी। उन्होंने धर्मांतरण किया जरूर लेकिन भारतीयता से दूर नहीं हुए। मूल निवासियों के लिए भारतीयता एक ऐसी मानसिक स्थिति है जो धर्म से भी बढ़कर है। [5]

निष्कर्ष - डॉ. अम्बेडकर ने आधुनिक भारत के निर्माण में जिस नवीन समाज की परिकल्पना की उसकी तमाम सामग्री पूर्वगामी समकालीन समाजों के प्रचलित मूल्यों और स्थापित सिद्धांतों से प्राप्त की। द्रविड़ और सैंधव सभ्यता के सह अस्तित्ववाद, बौद्धयुगीन वर्ण वर्ग विहीन समाज की पुनर्स्थापना भक्तिकाल के कबीर युग का निर्भर और निर्भय सम्प्रभुतावाद तथा आधुनिक युग का समता और स्वतंत्रतायुक्त बंधुत्ववाद एवं वर्तमान युग का वैज्ञानिक मानवतावाद आदि मूलभूत आधारशिलाओं से भारत का निर्माण किया। आधुनिक भारत में अब यह स्पष्ट है कि समाज में सभी धर्मों के लोगों को धर्मनिरपेक्ष रूप से समान अधिकार प्राप्त है। यह अनिवार्य है कि यदि देश का अस्तित्व बरकरार रखना है, तो सभी को समानता का अधिकार और अवसर देकर साथ लेकर चलना होगा। डॉ. अम्बेडकर ने भारंतीय संविधान का ही नहीं, वरन् मजबूत भारतीय समाज का निर्माण किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दिनकर, डी.सी. ; डॉ. भीमराव अम्बेडकर स्मृति ग्रंथ, पृ. 57, बोधिसत्व प्रकाशन क्षितवापुर पजावा, लखनऊ 1994
2. शर्मा, डॉ. गोविंद प्रसाद शर्मा ; भारतीय राजनीतिक चिंतन, पृ. 149, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल
3. —पूर्वोक्त—
4. दिनकर, डी.सी. ; डॉ. भीमराव अम्बेडकर स्मृति ग्रंथ, पृ. 84, बोधिसत्व प्रकाशन क्षितवापुर पजावा, लखनऊ 1994
5. ठेंगड़ी, दत्तोपंत ; डॉ. अम्बेडकर और सामाजिक क्रांति की यात्रा, पृ. 120-21, लोकहित प्रकाशन संस्कृति भवन, राजेन्द्र नगर, लखनऊ 2005

****

History And Causes Of Global Recession

Prof. Bhavik Vora * Dr. Asgar Ali Adil **

Abstract - Since World War II there were only four global recessions (in 1961, 1975, 2001 and 2009), all of them only lasting a year. The 2009 global recession, was by far the worst of the four post war recessions, both in terms of countries affected and decline in real world GDP per capita. Global recession not only defined as contraction of GDP of the world but also applies to the events which includes sharp rises in unemployment, disruption of the banking and financial system, steep fall offs in business and consumer spending ,rising bankruptcies. The present paper attempt to analyze the history and root causes of past global recessions.
Key words - recession, depression, inflation, deflation, global downturn.

Introduction - Economy of every country is integrated with economies of other countries. Any disturbance in economy of developed countries has affected economies of developing and underdeveloped nations due to globalization. Last Global recession was started from US and spread over rest of the affected countries. Contraction of US economy shown in late 2007 and full blown in next year 2008.Industrial output fallen in first time last 15 years. The world growth is projected to slow from 5% in 2007 to 3.75% in 2008 and to jump over 2% in 2009.

Definition Of Global Recession - According to IMF: "A Global recession is a decline in annual per-capita real world GDP (purchasing power parity weighted), backed up by a decline or worsening for one or more of the seven other global macroeconomic indicators; Industrial production, trade, capital flows, oil consumption, unemployment rate, per-capita investment, and per-capita consumption."

According to Merry Lynch (Global Investment Bank): "Negative sign in economic development is two or more consecutive quarter of the year is called recession".

In general a global recession is a period of global economic slowdown.

History Of Recession - Economic statistics began to be gathered in the nineteenth century, it was difficult to tell when recessions occurred. In spite of this, it is possible to estimate when economic recessions began because they were typically caused by external actions on the economic system such as wars and variations in the weather.

Table 1 (see in next page)

Wider Implications - Recession will result in decline in demand, production, sales, foreign trade, inflation, GDP, Stock Market, employment. In other words economy of country will find contraction. There is sharp increase in unemployment, poverty and debts.

Possible Suggestions :-

1. To cut interest rates by banks.
2. To give tax reduction by the Government.
3. To optimize human resources at that time.
4. Bailout packages in the form of relief by developed and developing nations.

Conclusion - There are lots of reasons for the occurrence of Recession. Recession found in early time period 1929-39 was shocking for economy. Every economy has seen depression or recession time to time in the form of business cycle. The period of economic recession can caused for birth of unemployment for particular time period. In the present time developed as well as developing countries take major steps for overcoming this recession.

References :-

News Papers & Magazine

1. Dainik bhaskar (27/1/08, 03/01/09)
2. The Economics Times (25/12/08)
3. Economic Survey of India 2007-08
4. Nai Dunia (06/01/2009)
5. The Times of India (03/01/09)

Books

1. Sinha V.C. (2010), Business Environment, Sahitya Bhavan Publication, Agra
2. Singh S.K. (2010), Business Environment, Sahitya Bhavan Publication, Agra

Websites

1. http://en.wikipedia.org/wiki/List of recession in the United States#cite_note-NBER-3
2. www.google.com
3. www.youtube.com

* **Assistant Professor, R.P.L. Maheshwari College, Indore (M.P.) INDIA**
** **Professor, Mata Jijabai Govt. P.G. Girls College, Indore (M.P.) INDIA**

Name	Dates	Duration	Causes and Impact
Panic of 1797	1797–1800	03 yrs	1. The primary cause for the crisis was a land speculation bubble of America which burst in 1796. It disrupted commercial and real estate markets in the U.S. & Caribbean. 2. Bank of England suspended specie payments, thus placing Bank of England under no obligation to convert depositors' banknotes into gold or gold coinage. There was insufficient gold inside the bank vaults to the bearer on demand and the currency was subsequently collapsed. 3. Britain's economy was greatly affected by developing deflationary.
Depression of 1807	1807–1814	07 yrs	1. Thomas Jefferson, president of the United States, led congress to pass Embargo Act 1807 to ban any trade with foreign countries and try to keep the U.S. from getting involved in the wars raging in Europe. 2. It devastated shipping-related industries. The Federalists fought the embargo and allowed smuggling took place in New England
Panic of 1819	1819–1824	05 yrs	1. The first major financial crisis in the United States. 2. It featured widespread foreclosures, bank failures, unemployment, and a slump in agriculture and manufacturing. 3. It also marked the end of the economic expansion that followed the War of 1812
Panic of 1837	1837–1843	06 yrs	1. A sharp downturn in the American economy was caused by speculative lending practices in West, sharp decline in cotton prices, collapsing of land bubbles, bank failures and lack of confidence in the paper currency. 2. Speculation markets were greatly affected when American banks stopped payment in specie (gold and silver coinage). 3. Its impact was bank collapsed, businesses failed, prices declined and thousands of workers lost their jobs.
Panic of 1857	1857–1860	03 yrs	1. Failure of the Ohio Life Insurance and Trust Company burst a European speculative bubble in United States railroads and caused a loss of confidence in American banks. 2. Over 5,000 businesses failed within the first year of the Panic and unemployment was accompanied by protest meetings in urban areas.
Panic of 1873	1873–1879	06 yrs	1. Jay Cooke & company, the largest bank in U.S., financed the construction of the Northern Pacific Railway. The company over-stretched itself by advancing the money for the railroad work and was forced to suspend its operations and was forced into bankruptcy. 2. The Coinage Act of 1873 also contributed byImmediately depressing the price of silver which hurt North American mining interests. 3. There were an alarming number of bank closures, foreclosures, bankruptcies. Thousands of Americans lost their jobs and homes.
Long Depression 1873	1873–1896	23 yrs	1. Depression of the price of silver had greatly contributed in U.S. of economic crises. 2. The collapse of the Vienna Stock Exchange caused a depression that spread throughout the world. 3. The depression was also rooted in 1870 Franco Prussian war that hurt French economy and France was forced to make larger war reparations to Germany.
Panic of 1893	1893–1896	03 yrs	1. Failure of Philadelphia and Reading Railroad in U.S. and withdrawal of European investment led to a stock market and banking collapse. 2. A financial panic in U.K. and a drop in the trade in Europe caused foreign investors to sell their American stocks to obtain American funds backed by gold. People attempted to redeemed silver notes for gold,

			ultimately statutory limits for the minimum amount of gold was reached U.S. notes could no longer be successfully redeemed for gold. As the demand for silver and silver notes fell the price, the value of silver dropped.
Panic of 1907	1907–1908	1 yr	1. The banking industry was unsettled with the emerging successes of trust companies and refused to provide support to the KnickerbockersTrust company bank. The Knickerbockers Trust was unable to save itself from failure and the public started to fear that the banking and trust companies were experiencing liquidity issues and the runs on banks began.
Great depression	1929– 1939	10 yrs	1. Crashing of stock market and collapsing of bank in U.S. affected worldwide. 2. With the crashing of stock market and fear of further economic woes, individuals from all classes stopped purchasing items. This then led to a reduction in the number of items produced and thus a reduction in the workforce.
Recession of 1953	1953–1954	1 yr	1. After a post-Korean War inflationary period, more funds were transferred into national security. 2. The Federal Reserve changed monetary policy to be more restrictive in 1952 due to fear of further inflation.
Recession of 1957	1957–1958	1 yr	1. The U.S. Government tightened monetary policy prior to two years preceding recession to curb inflation but prices continued to rise in the U.S. 2. The sharp worldwide recession and the strong U.S. dollar contributed to foreign trade deficit. Monetary policy was tightened during the two years preceding 1957, followed by an easing of policy at the end of 1957.
Recession of 1960	1960–1961	1 yr	1. Tightening of monetary policy by U.S. Government.
1973 oil crisis	1973–1975	2 yrs	1. Oil prices rose by OPEC and imposed embargo against U.S. 2. High government spending due to the Vietnam War led to stagflation in the United States
Late 2000s recession	2001-2003	2 Yrs.	1. The collapse of the dot-com bubble.2. The September 11th attacks and accounting scandals contributed to a relatively mild contraction in the North American Economy.
2007 recession	2007-2009	2 yrs	1. The collapse of the housing market led to bank collapses in the US and Europe, causing the amount of available credit to be sharply curtailed. According to National Bureau of Economic Research (NBER) US has been in recession since December 2007

****

राष्ट्रीय एकता के वाहक सरदार पटेल

डॉ. शुक्ला ओझा *

प्रस्तावना – किसी भी राष्ट्र की अस्मिता की पहचान वहाँ की राष्ट्रीय एकता होती है। प्रत्येक राष्ट्र के भीतर विविध विभिन्नताऐं उपस्थित होती हैं, इन विविधताओं को एकता के सूत्र में पिरोने की प्रक्रिया ही राष्ट्रीय एकता की स्थापना के रूप में प्रस्तुत होती है। भारत एक विशाल राष्ट्र है, जहाँ प्रत्येक स्तर पर चाहे वह राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, भौगोलिक कोई भी हो, अनेक विविधताऐं व्याप्त हैं। किन्तु आज यह गौरव का विषय है कि भारत के संदर्भ में यह प्रसिद्ध कथन है कि यहाँ विविधता में एकता के दर्शन होते हैं। यह वर्तमान स्थिति है किन्तु यदि बीसवीं शताब्दी के चौथे दशक के भारत की स्थितियों का आंकलन दिया जाए तो जिस समय 15 अगस्त 1947 को भारत स्वतंत्र हुआ उस समय यहाँ 500 से अधिक देशी रियासतें स्थापित थीं। जो देश की राष्ट्रीय एकता के लिए कठिन चुनौती थी। इनमें से कुछ पाकिस्तान में मिलना चाहती थी, तो कुछ स्वतंत्र अस्तित्व की आकांक्षी थी। इन सभी रियासतों का भारतीय संघ में विलीनीकरण करने का महती कार्य करने का श्रेय सरदार बल्लभ भाई पटेल को जाता है। उन्हीं के कठिन परिश्रम , बुद्धि चातुर्य, कुशल रणनीति का परिणाम है कि नव स्वतंत्र भारत में राष्ट्रीय एकता स्थापित हो सकी। स्वतंत्रता संग्राम के अनन्तर भी गांधी जी की अहिंसक रणनीति की व्यवहारिक स्वरूप में परिवर्तित कर जन-जन में राष्ट्रीय एकता की भावना का संचार करने का गौरव भी सरदार पटेल को ही प्राप्त है। सही अर्थो में वे ही भारत में राष्ट्रीय एकता के सच्चे वाहक थे तथा अपने लौहपुरूष के नामांतरण को सार्थक बना रहे थे।

भारत में राष्ट्रीय एकता के वाहक के रूप उनके योगदान को तीन चरणों के आधार पर आसानी से समझा जा सकता है। प्रथम परतंत्र भारत के देशवासियों में राष्ट्रीयता एवं एकता की प्राणवायु का संचार कर उन्हें राष्ट्रीय आन्दोलन से जोड़कर उसे सफल बनाना। द्वितीय -देशी रियासतों का एकीकरण कर राष्ट्रीय एकता स्थापित कर भारत के मानचित्र की अखण्डता को स्थापित करना तथा तृतीय स्वतंत्र भारत को एकीकृत एवं सुदृढ़ प्रशासनिक आधार प्रदान करना। हमारे देश को सुदृढ़ एवं सशक्त स्वरूप प्रदान करने का श्रेय तीन लोकप्रिय जन नेताओं को दिया जाता है। जिनमें से महात्मा गाँधी ने इसकी स्वतंत्रता को संभव बनाया, पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने सशक्त विदेश नीति का वर्णन कर इसे अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में सम्मानपूर्ण स्थान दिलाया तथा सरदार वल्लभ भाई पटेल ने इसे एक राष्ट्रीय इकाई के स्वरूप में परिवर्तित कर दिया।

प्रथम चरण – पटेल के योगदान के प्रथम चरण में उनकी छवि परम दृढ़ नायक, साहसी उपदेशक, गांधी जी के परम विश्वसनीय योद्धा के रूप में प्रस्तुत होती है। वे खेड़ा, सत्याग्रह जो एक कृषक आन्दोलन था, गाँधी जी के सम्पर्क में आए तथा राष्ट्रीय राजनीतिक पटल पर सर्वप्रथम उनकी पहचान स्थापित हुई। एक क्रान्तिकारी संगठनकर्ता के रूप में इस आंदोलन को सफल बनाने में उनका योगदान अभूतपूर्व था, ऐसा स्वयं गाँधीजी का भी मानना था। इसके पश्चात बारदोली सत्याग्रह में उनकी प्रबल इच्छा शक्ति, संकल्प एवं लगन, सफल योजना, कठोर अनुशासन, नि:स्वार्थ आत्मत्याग ने भारतीयों को राष्ट्रीय आधार पर एकीकृत कर स्वतंत्रता आंदोलन से जोड़ा। इसी समय से वे सरदार कहलाए, जो उनकी सफल नेतृत्व शक्ति का परिचायक था। उनकी सशक्त, कठोर एवं अनुशासन प्रिय छवि ने ही उन्हें लौह पुरूष की संज्ञा दिलवाई। गाँधीजी के अहिंसात्मक आन्दोलन की कार्ययोजना को आम भारतीय जन से जोड़कर उसे व्यवहारिक रूप प्रदान करने का जटिल कार्य पटेल द्वारा ही पूर्ण किया गया। उन्होंने गाँधी युग के लगभग सभी आन्दोलनों में सक्रिय भागीदारी की। असहयोग आन्दोलन, स्वदेशी आन्दोलन में वे विशेष रूप से सक्रिय रहे तथा जेल भी गए। सविनय अवज्ञा आंदोलन के अन्तर्गत गाँधीजी की दाण्डी यात्रा में आगे-आगे चलकर जन समर्थन तैयार करने की महती जिम्मेदारी पटेल ने ही निभायी थी। सत्य, अहिंसा, स्वदेशी एवं असहयोग के प्रश्न पर वे गाँधीजी से पूर्ण सहमत थे तथा इन्हीं का प्रचार कर उन्होंने भारतीय को जागृत एवं एकीकृत किया। भारत छोड़ों आन्दोलन में तो उन्होंने अंग्रेजो 'भारत छोड़ो' के नारे के समर्थन के साथ-साथ साम्राज्यवाद का विरोध करते हुए 'एशिया छोड़ो' का भी नारा दिया। सरदार पटेल चार दशक तक अंग्रेजी साम्राज्यवाद के विरूद्ध लड़ते रहे तथा वे समस्त दलों, समूहों और राष्ट्रकर्मियों को एक जुट कर साम्राज्य विरोधी जंग को जीतने में सफल हो सके।

द्वितीय चरण – राष्ट्रीय एकता के वाहक के रूप में सरदार बल्लभ भाई पटेल के प्रयासों का दूसरा चरण स्वतंत्रता के उपरांत देशी रियासतों का विलीनीकरण था। देश विभाजन के पश्चात उन्होंने भारत का गृह विभाग सम्हाला एवं बड़ी ही बुद्धिमता से देशी रियासतों की समस्या को सुलझाया। जब देश स्वतंत्र हुआ तो इन रियासतों को भी स्वतंत्रता प्राप्त हो गई तथा भारत संघ में सम्मिलित होने के स्थान पर इनके शासक स्वतंत्र प्रभुसत्ता का स्वप्न देखने लगे तथा मोहम्मद अली जिन्ना ने जोधपुर, जैसलमेर तथा अन्य सीमावर्ती राज्यों को लुभाने के लिए उन्हें अपनी-अपनी शर्तो पर पाकिस्तान के साथ मिलने का बिना शर्त प्रस्ताव दे रहे थे। सभी देशी रियासतों संबंधी नीतियों के निर्धारण हेतु रियासती विभाग के नाम से नया विभाग गठित किया गया था। सरदार पटेल इसके मंत्री एवं वी.पी. मेनन उनके सचिव नियुक्त किए गए थे। इस विभाग के मंत्री होने के नाते सभी देशी राजाओं की शंकाओं एवं गलतफहमियों के निवारण हेतु उन्होंने एक वक्तव्य जारी किया जो राष्ट्रीय एकता के मार्ग का मील का पत्थर माना जाता है। इस वक्तव्य में उन्होंने कहा कि – इन राज्यों ने सिद्धान्त रूप से प्रतिरक्षा, विदेश संबंध

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (इतिहास) डॉ. भगवत सहाय शासकीय महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

और संचार के मामले में केन्द्रीय सरकार की श्रेष्ठता स्वीकार कर ली थी। राष्ट्र और इन राज्यों के व्यापक हित में हम इन तीन विषयों पर विलय से अधिक कुछ नहीं कहना चाहते हैं। अपनी प्राचीन एवं सामान्य सभ्यता के साथ यह देश हम सबको उत्तराधिकार में मिला है, जिस पर हमें गर्व है। यह महज संयोग है कि हममें से कुछ निवासी हैं, लेकिन सभी इसकी संस्कृति एवं सभ्यता के समान भागीदार हैं। एक ही खून हम सबकी नसों में दौड़ता है। हमें कोई संकीर्ण प्रान्तीय समूहों से अलग नहीं कर सकता और न हमारे बीच अलंघ्य कृत्रिम बाधाएँ खड़ी की जा सकती हैं। हमारे लिए आपस में समझौता करना बिल्कुल शोभा नहीं देता है, वैसा तो विदेशी ताकतों के साथ किया जाता है। हमें भारत माता के सपूतों की तरह मिल-बैठकर एक-दूसरे के अधिकार और सीमाएँ तय करनी चाहिए। इसी भावना के अनुकूल में राज्यों के शासकों एवं उनकी जनता समेत आपको संविधान सभा के परामर्श के लिए आमंत्रित करता हूँ, ताकि संयुक्त प्रयास से निकट मैत्री और सहयोग के वातावरण में अपनी महान मातृभूमि के प्रति समान निष्ठा से प्रेरित होकर हम सबों के समान हित में इन मामलों पर फैसला हो सके। इसका एक-एक शब्द राष्ट्रीय एकता के भाव से अभिसिंचित था।

उन्होंने देशी रियासतों के शासकों एवं प्रजा को आश्वस्त किया न तो कांग्रेस उनके प्रति कोई दुराग्रह रखती है और न ही रियासत विभाग अपनी कोई श्रेष्ठता उन पर आरोपित करना चाहता है। साथ ही उन्होंने एकता के अभाव में देश के भावी नुकसान की ओर भी संकेत किया। उन्होंने कहा - अगर श्रेष्ठता की आवश्यकता होती भी है, तो वह समान सद्भावना के साथ और समान हित में होगी। हम भारत के इतिहास के महत्वपूर्ण चरण में है। साझे प्रयास से हम देश को नयी महानता प्रदान कर सकते हैं। जबकि एकजुटता के अभाव में हमें अप्रत्याशित आपदाओं का सामना करना पडेगा। मुझे आशा है कि भारतीय राज्य पूरी तरह महसूस करेंगे कि अगर हम सामान्य हित में सहयोग और मिलकर कार्य नहीं करेंगे तो अराजकता और अव्यवस्था हम सबों , बड़ों और छोटो पर हावी हो जाएगी और हमारा सर्वनाश हो जाएगा। उन्होंने राजाओं और दीवानों से बैठक की, जिन्ना के विरोध के बाद भी लार्ड माउन्टबेटन का सहयोग प्राप्त किया तथा प्रभावी भाषा में राजाओं से अपील की- जिस तरह आप अपने लोगों से, जिनके कल्याण का उत्तरदायित्व आप पर है, दूर नहीं भाग सकते, उसी तरह आप केन्द्रीय सरकार के प्रति अपने दायित्वों से भी दूर नहीं भाग सकते। इसके बाद राष्ट्रीय एकता की भावना से संचारित होकर एवं गलतफहमियों से मुक्त होकर विभिन्न देशी राजा भारतीय संघ में सम्मिलित होते चले गए तथा हैदराबाद एवं जूनागढ़ शासकों के राष्ट्रविरोधी रूख के कारण पटेल ने उनके प्रति कठोर नीति का वरण कर देशी राज्यों के एकीकरण के महान कार्य को पूर्णता प्रदान की।

तृतीय चरण - राष्ट्रीय एकता के वाहक के रूप में सरदार पटेल के कार्यो का तृतीय चरण नव स्वतंत्र राष्ट्र को प्रशासकीय सुदृढ़ता प्रदान करना था। उनके बारे में लुई फिशर ने लिखा था कि गाँधीजी और जवाहरलाल के व्यक्तित्व में चलने वाली काँग्रेस के बल्लभभाई पटेल राजनीतिक कर्णधार थे। वे कठोर अनुशासन के पक्षपाती थे। भारत के संविधान व संवैधानिक परम्पराओं के निर्माण एवं सुदृढ़ीकरण में उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा। वे संविधान सभा के तीन उपसमितियों के अध्यक्ष थे। इन उपसमितियों में परस्पर विरोधी विचारों में सामंजस्य एवं एकता स्थापित करने में उनकी निर्णायक भूमिका सराहनीय रही। मौलिक अधिकारों की उपसमिति में कुछ सदस्यों की इस मांग पर कि व्यक्तिगत स्वतंत्रता में किसी प्रकार का अवरोध नहीं होना चाहिए के प्रत्युत्तर में उनका मत था कि, कल्पना कीजिए कि अगर प्रेस, लाठी और गोली पर कोई रोक न हो तो क्या होगा ? उन्होंने अधिकारों के साथ कर्तव्यपालन पर भी बल दिया। इसी प्रकार सम्पत्ति पर सरकारी अधिकार का मामला उलझने पर उन्होंने मुआबजे के भुगतान का विकल्प देकर इसे सुलझाया। अल्पसंख्यकों की अलगाववादी मांगों से उत्पन्न प्रच्छन्नता की समस्या के समाधान हेतु उन्होंने इन वर्गो के नेताओं से गहन विमर्श किया। उन्होंने ईसाई सम्प्रदाय के नेता डॉ. एच.सी. मुखर्जी , पारसियों के प्रतिनिधि सर होमी मोदी, एंग्लो इण्डियन नेता श्री फ्रेंक एन्टनी, सिख नेता सरदार बल्देव सिंह एवं उज्जवल सिंह , मुस्लिम नेता बेगम एजाज, डॉ. भीमराव अम्बेडकर के नेतृत्व में हरिजन नेताओं को अपने राष्ट्रीय एकता संबंधी तर्को से सहमत बनाकर प्रथक निर्वाचन की मांग को त्यागने पर राजी कर लिया जो बहुत सराहनीय कार्य था। राष्ट्रपति चुनाव में संसद के साथ-साथ राज्य विधान सभाओं की भागीदारी भी सम्मिलित करने का श्रेय सरदार पटेल को ही दिया जाता है। न्यायपालिका की स्वतंत्रता के भी वे कट्टर समर्थक रहे।

सोमनाथ के मंदिर का जीर्णोद्धार का कार्य भी उनकी राष्ट्रीय निष्ठा का परिचय देता है। संगठित भारत की स्थापना उनका प्रमुख अभीष्ठ था। तत्संबंधी यज्ञ का अन्तिम आहुति भारतीय संघ में हैदराबाद रियासत का संविलियन था। श्री आई.जी. पटेल के शब्दों में - भारत के युगों के इतिहास में, भारत पहली बार एक और एकजुट हुआ और वह भी खून की एक भी बूंद बहाए बगैर। यह सरदार के व्यक्तित्व का ही चमत्कार था। सत्याग्रह के नेता के रूप में उनके जिन गुणों का उद्घाटन एवं प्रस्फुटन हुआ, वे देश के प्रशासन, कानून व्यवस्था के रख-रखाव, देश की स्थिरता सुनिश्चित करने तथा इसे अभेद्य बनाने में व्यापक रूप से विकसित हुए। उन्हें देश एवं दुनिया की प्रशंसा भी मिली। 1947 में नव स्वतंत्र भारत को राष्ट्र के रूप में स्थापित करने में यही उनका महत्वपूर्ण योगदान है, जो उन्हें भारत के राष्ट्रवादी नेताओं की पंक्ति में विशिष्ट स्थान प्रदान करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शर्मा, डॉ. शंकरदयाल - हमारे स्वतंत्रता सेनानी।
2. ब्रेट मैन एण्ड वूमेन ऑफ इण्डिया- पब्लिकेशन डिवीजन, गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया, न्यू देहली।
3. वर्मा, वी.पी. - आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन।
4. पटेल, आई.जी. - सरदार बल्लभ भाई पटेल
5. सिंह, वीरकेश्वर प्रसाद- भारत का संवैधानिक राष्ट्रीय विकास
6. कोहन, हैंस - ए हिस्ट्री ऑफ नेशनलिज्म इन द ईस्ट
7. प्रधान, आर.जी. - इण्डियाज स्ट्रगल फॉर स्वराज
8. सीतारमैया, पट्टाभि - ए हिस्ट्री ऑफ दि इण्डियन नेशनल कांग्रेस

****

जन योद्धा खाज्या नायक का स्वतंत्रता संग्राम में योगदान

डॉ. प्रवीण मालवीया *

प्रस्तावना – भील जनजाति स्वतंत्रता प्रेमी रही है। उनके शौर्य के कारण मराठो ने उन्हें चौकीदारी सौपी और यात्रियों व कांरवा की सुरक्षा के बदले चुंगी वसूल करने का अधिकार भी दिया। 1818 के बाद भील क्षेत्र अंग्रेजों के अधीन हो गया। अंग्रेज अधिकारियों ने विभिन्न भील नायकों (सरदारों) को बुलाकर उनसे समझौता करना चाहा, लेकिन भील नायकों को सरकारी पद, चौकीदारी तथा वजीफा देने की अंग्रेजों नीति विफल रही। खानदेश भील कोर के गठन करने के बाद अंग्रेजो ने भीलों को बरगलाने की तमाम चेष्टाएँ की। उन्हें आपस में लड़ाने की कुटिल नीति अपनाई, किन्तु 1857 तक आते-आते भील अपना व अपनी मातृभूमि का हित समझ चुके थे। उन्होंने पूरे दम-खम के साथ अंग्रेजों से विद्रोह कर दिया, इसी समय के नायक थे – **खाज्या नायक।**

खाज्या नायक सेंधवा घाट के वार्डन गुमान नायक के पुत्र थे। 1833 में गुमान नायक की मृत्यु के बाद खाज्या नायक को सेंधवा घाट का वार्डन बनाया गया। उस इलाके में केप्टन मॉरिस ने विद्रोही भीलों के विरूद्ध जो अभियान छेड़ रखा था। उसमें खाज्या नायक ने काफी सहयोग दिया जिसके उपलक्ष्य में खाज्या नायक को एक सौ रूपये का ईनाम मिला। कुछ समय बाद खाज्या नायक ने अब 200 आदमियों का दल बना लिया। एक हत्या के जुर्म में उसे 1851 में बंदी बना लिया गया और 10 साल की सजा दी गई पर 1856 में उसे छोड़ दिया गया और फिर से सेंधवा घाट के वार्डन की नौकरी पर रख लिया लेकिन स्वाभिमानी खाज्या ज्यादा दिन तक वहाँ नहीं रहा और उसने नौकरी छोड़ दी।

' 1851 में खाज्या ने एक अपराधी को रात में इतना पीटा कि वह मर गया। खाज्या को इस हत्या के लिए 10 साल की सजा सुनाई गई पर जब वह जेल से छूटा तो केप्टन रोज और अन्य अधिकारियों की भारी सिफारिश के बावजूद उसे कोई नौकरी नहीं मिली। मई 1857 में अंग्रेज अधिकारियों को यह लगा कि उत्तर की विद्रोहात्मक घटनाओं का असर भीलों पर भी होगा और वह मूक-दर्शक नहीं रहेंगे तो खाज्या को जून 1857 में घाटी का प्रभारी बना दिया गया किन्तु जब खाज्या नायक, भीमा नायक के सम्पर्क मे आया तो उनका मातृभूमि के प्रति स्वाभिमान जागृत हुआ और फिर एकाएक भीमा और खाज्या के आक्रमण तेज हो गए। ये दोनों भील नायक निमाड़ में भी सक्रिय थे और खानदेश में भी। खाज्या के साथ कई लोग हो गए और होल्कर की जो सेना भंग कर दी गई थी। उसके सिपाही भी उसके साथ हो गए।''[1]

''खाज्या के दल में 800 लोग हो गए जिनमें 150 बंदूकची, 80 मकरानी और अरब भी थे। खानदेश के कलेक्टर ने 7 अक्टूबर, 1857 को कैप्टन बर्च को आदेश दिया की वह खाज्या और उसके सहयोगी नायको से मिले और उन्हें आगाह करे कि खानदेश की सीमा के पास बड़वानी रियासत में ये लोग ज्यादा तादाद में एकत्र न हो।''[2]

खाज्या नायक और उसके साथियों पर राष्ट्रभक्ति का रंग चढ़ चुका था। वे कहाँ अंग्रेजों की सुनने और मानने वाले थे। खाज्या और साथी महादेव नायक, व देवलिया नायक ने अंग्रेज विरूद्ध गतिविधियाँ जारी रखी।

खाज्या के दल ने खानदेश में सिरपुर को लूटा और जामनेर के पास सामान से लदी गाड़ियों को भी लूट लिया और लूट का सारा माल गरीबो में बाँट दिया। अंग्रेजों ने खाज्या के विरूद्ध अभियान चलाया।

''1 जून, 1858 को लेफ्टिनेंट एटकिन्स और लेफ्टिनेंट पौरबिन ने नेवली के दक्षिण-पश्चिम में खाज्या के दल पर हमला बोल दिया, जिसमें खाज्या की पराजय हुई लेकिन वह भाग निकला।''[3]

खाज्या का भीलो पर बहुत प्रभाव था और भीलों को भी खाज्या पर पूरा भरोसा था। सिरपुर से 5 मील दूर तक के सभी भील खाज्या के दल में शामिल हो गए यहाँ तक की महान योद्धा भीमा नायक भी 1858 में खाज्या के दल में शामिल हुआ। 1857 का समर समाप्त होने के बाद भी अंग्रेजों के खिलाफ खाज्या का संघर्ष जारी रहा। 1860 की शुरूआत में जब खाज्या नायक की खोज खबर का सघन अभियान चलाया गया तब वे बड़वानी चले आए और यहाँ भी क्रांति की योजना में जुट गए।

धाबा बावड़ी और अम्बापानी के युद्ध में खाज्या नायक ने सम्पूर्ण साहस व ताकत से अंग्रेजों का मुकाबला किया। जिसमें खाज्या के सभी साथी शहीद हुए या बंदी बना लिये गए। लेकिन खाज्या अंग्रेजों की पकड़ में नही आया। फिरंगियों की तमाम कोशिशों के बावजूद जब खाज्या पकड़ें नहीं जा सके तो अंग्रेज पुलिस अधिकारी ने एक साजिश रची। सादे वेश में रोहिद्दीन नामक एक मकरानी जमादार को खाज्या के पास नौकरी की तलाश में भेजा गया। उसने कुरान की शपथ लेकर वफादारी का वादा किया, किन्तु गद्दारी करके उसने खाज्या की जान ले ली। ''3 अक्टूबर, 1860 ई. को खाज्या नायक स्नान उपरान्त सूर्य की और मुंह करके खडे थे तभी रोहिद्दीन ने पीछे से गोली चला दी और खाज्या की मृत्यु हो गई। गद्दारी के पुरस्कार में रोहिद्दीन को जमादार बना दिया गया।'[4]

भारत की आजादी के पीछे भीलों के बलिदान और रण है।
खुशी इस बात है कि खाज्या उसमें एक किरण है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. महाराष्ट्र स्टेट गजेटियर्स, धुलिया डिस्ट्रिक्ट रिवाइज्ड 1974, पृष्ठ 158।
2. सिमक, खानदेश भील कोर, पृष्ठ 211 एवं 218
3. ''मध्य प्रदेश के रणबांकुरेय', लेखक – डॉ. सुरेश मिश्र एवं भगवान दास श्रीवास्तव, प्रकाशक – स्वराज संस्थान संचालनालय, भोपाल, संस्करण 2007, पृष्ठ-139।
4. वही।

* पीएच.डी.(इतिहास) शासकीय शहीद भीमानायक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

Residential Structure Of Bilaspur City

Dr. Kajal Moitra * Prasanta Paul **

Abstract - The residential clustering of immigrant groups in western cities is one of the most distinctive features of their settlement. But ethnic or racial status is only one social variable by which a population may be subdivided while other, which includes social and economic status, also has a spatial component which may be readily, identified and examined. Therefore it is necessary to view the residential pattern of immigrant groups in the city in the wider perspective of social structure and its relationship to spatial structure. Pahl (1968) believes that the relationship between these two components is such that the spatial structure partly reflects and partly determines the social structure West Indians in Britain are overwhelmingly concentrated in manual and service occupations. Rose (1969) pointed out that any study of the residential distribution of West Indians and their level of segregation from the majority population must take into account more than the mere fact that there are differences in skin pigmentation which lead to widespread feelings of prejudice and of discrimination. It must also take into account the fact that contoured immigrants in Britain shave many problems like poverty and low income which are faced by large members of the British-bom working class.

The residential patterns of minority group have been extensively studied in North American cities, especially in Chicagor where-tIie-early works of art and Burges laid the foundation for much subsequent research in the field of urban ecology. Yet in Britain, the residential patterns of immigrant groups have been relatively neglected despite repeated discussion on the development and implications of concentrations of coloured immigrants on within the conurbations. More over most of the very few studies of residential pattern examine the distribution of coloured immigrants at only one point in time.

Keywords – immigrants, concentration, implication, residential

Introduction - Most of the researches on ethnic groups imply that there is relationship between the observed residential pattern and the relationship of minority and majority community. A study of changing residential patterns of minority groups reveals a clear distinction between populations which remain highly segregated, and those in which there is a progressive residential dispersal and breakdown of the ethnic concentration.

A common feature of the settlement pattern of minority groups is tendency to move towards the periphery of the city. This phenomenon has been common to black people of North American cities as well as to white immigrant groups. This movement may be stimulated by a desire for access to better housing and amenities.

Areal differences has for many years been one of the dominant paradigms of urban social geography following the tradition of regionalization within the discipline as a whole. Urban geographers have sought to regionalize towns and cities in attempts to produce high level generalization about urban form and structure.

The residential areas are the most land consuming of all the study of its location, character and differentiation constitutes one important dimension of social organization. Social organization also contains economic, culture and ethnic work. If a fullest understanding of the complex urban structure is obtained. The internal structure of the city is very complex and varies from city core to periphery. The city neighbor hoods filter considerably in terms of physical appearance, land use pattern population composition and other related characteristics. The residential houses vary according to income, occupation and education.

Residential patterns are the regularities or relationships that characterized the residential sub-system. For example a distinctive pattern clustering of population characteristic can be regarded as a residential pattern. Residential pattern follows the social changes and becomes more predicated on external symbols notably wealth, income, classes become relatively segregated from each other, though within each area which is homogeneous with regard to inhabitants.

Residential pattern explained in terms of social differentiation refer to the differences in characteristic of household in different part of the city. These are determined by family income, size of household, levels of education and social attitudes. This leads to segregation of population

* Associate Professor (Geography) Dr. C. V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA
** M.Phil (Geography) Dr. C. V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA

by various dimensions of social stratification creating certain types of residential patterns. This chapter is basically devoted to the analysis of the existing residential patterns. However, a brief consideration of concept of residential pattern in a cross-cultural context also discussed.

Objective Of The Study :

1. To analyse the residential structure of Bilaspur City
2. To access the quality of house and surrounding environment

Methodology - The data were collected from primary sources. The data from primary sources have been collected to field survey.

Analysis - Apart from the above factors location of industries ownership of land, lease system, availability of transport and above all the law and order situation and functioning of municipality bearing impact on the pattern of dwelling units of a city. Besides the urban flaks are not identical in the requirement and preferences. They also differ in their purpose of building a dwelling unit or units. Pattern of houses also var according to income and size of the family, resources use efficiency, educational qualification aptitude of family members in social status, learning aptitude etc. have contributed tin the setting of a residential locality. In this collection an attempt has been made to analyze existing residential pattern of Bilaspur city.

Type Of House - Housing condition some time reflects the economic status and the living standard of people. And the house structure is an indicator of the economic background of the people who live in it.

Table 1 (see in last page)

Type of house is the reflection of income of the family. Therefore, they are categorized, according to the income. In the surveyed area, 55.55 percent families of poor income category live in Kacha houses, while 33.33 and 11.11 percent families live in semi pacca and pacca houses respectively.

With the increasing rate of income, standard of housing material improve. Among the middle income category, 33.33 percent families live in pucca houses, while it is 50 percent and 16.16 in Semi pacca and Kutcha houses respectively. Among high and very high income categories: 66.67 and 83.83 percent families live in pacca houses. Against it, only 10 percent of families of vey high income categories live in Kacha house. The families who live in semi pacca house of both these categories are 30 percent and 16.66 percent respectively.

Types Of Wall - In the study area 30.7 percent have Kacha wall, whereas 55 percent are pacca and 19.13 percent houses have semipucca walls. In India only 52.2 percent people live in houses with permanent walls and roof.

Table 2 (see in last page)

Among poor and middle income categories 55.5 and 25.6 percent house respectively have Kacha (mud) walls, only 16.67 percent and 16.67 percent house of high and middle income categories respectively, are with Kacha walls. Houses with pacca (brick) wall are 22.22 and 16.16 percent among poor and middle income categories resepectively. While the percentage are 55.5 and 33.3 among high and very high income category separately. Among poor income category 27.77 percent houses and in middle income categories 58.33 percent houses are with semi pacca walls. But the percentage of houses with semi pacca walls is deceasing among high and very high income categories. It is 13.7 and 6.2 percent respectively.

Table 3 (see in last page)

In the study area 60 houses in the found with Kacha walls. It is 97 houses in semi pacca walls.

Type Of Floor - Most of the houses in the study area have cemented floor.

Table 4 (see in last page)

Cemented floor is largely found in the houses of middle income category. It is 41.66 percent whereas in the poor income category, mud and stone are largely accepted. It is separately 33.33 percent and 38.88 percent of the total 70% percent houses of very high income category have marble floor, white it is 33.34 percent among high income category.

Number Of Rooms - Overcrowding is an impact in urban settlements. According to the 'National Building Organization', the accepted standard size of rooms, as persons are as below –

1 room = 2 persons
2 rooms = 3 persons
3 rooms = 5 persons
4 rooms = 7 persons
5 rooms = 10 persons

(A baby under 12 months has not been counter, children between 1 – 10 years are counted as an half unit)

Table 5 (see in last page)

In the surveyed area, 47.33 percent household do not adequate number of rooms in relation to their family size. The over crowding in houses in urban Chhattisgarh is ever worse.

Table 6 (see in last page)

Near 59.9 percent families have adequate number of living rooms. Overcrowding is largely found among poor income category (50.6%) whereas it is 41.66 and 66.66 percent among the middle and high income categories respectively only 02 families of vey high income category are found with overcrowded rooms. Thus, it can be concluded that the percentage of overcrowding rooms are decreasing with the increasing rate of income. Among the families of poor income category, only 33.33 percent families have adequate numbers of room to live, while among very high income category the percentage has risen up to 93.33%.

With respect to overcrowding, it is largely found in ward No. 05 (Bhakt Kanwar Ram Nagar Ward) where 66.67 percent families do not have the adequate number of rooms.

Conclusion - The residential differentiation of the urban population takes place in terms of many attributes and in many ways. A criterion which can be used for differentiating individuals and groups may become the basis for their

physical separation. The prospect of separation may be accomplished through a variety of sanctions, through a voluntary aggregation designed as a defense against unfamiliar ides or customs or as an escape from persecution and discrimination, and through a selection of market force.

This residential differentiation and the resulting segregation of populations serve many purposes. Physical isolation symbolizes social isolation and decreases the changes of undesirable and potentially embarrassing contact. Furthermore, segregation may provide a means of group support in a hostile environment and it may even lead to administrative efficiency. For whatever reason residential differentiation characterizes the pre-industrial and industrial city, both the laissez-faire and planned, both the capitalist and socialist. The physical isolation of differing populations seems and inevitable concomitant of 'urbanism' as a way of life.

The realization of physical separation and socio-economic segregation of population in urbanized area has led many scholars from diverse fields to explore and interpret the patterns and process of intra-urban residential structure.

Social sub-system based on socio-cultural values and norms also determines the residential choice. The kind of home required, the kind of neighbours and kind of residential area desired are all closely related with the social values that a particular segment of population hold. There studies have contributed much to the understanding of residential structure of cities in different parts of the world. In the paragraph an attempt has been made to summaries some important generalization about the residential structure in different parts of the world.

There is no uniformity in dwelling units in urban residential areas of cities. The growth and development of residential areas of a city locality governed by socio-economic, cultural and historical factors like location bazaar (market), pre existing land use, place of worship etc. were the important factors of the pattern of a particular residential area.

References :-

1. Alam, S.M., and Pokshishevsky, V.V. (ed.), 'Urbanization in developing countries', Hyderabad, 1976.
2. Alam, S.M., Hyderabad and Secundrabad: Twin cities. Brush, J.E., 'The morphology of Indian Cities', in Roy Turner (ed.), Bombay, Oxford University press, 1962.
3. Amitabh, K., 'Urban development and urban research in India'. Khamon publisher, New Delhi, 1992.
4. Breese, G., 'Urbanization in newly Developing countries'. New Delhi, 1969. Bose, A. Urbanisation of India: An inventory to source material. Academic book limited, Bombay, 1970.
5. Brush, .I.E., 'The morphology of Indian cities', in Roy Turner, (ed.) Indian urban Future, Bombay, 1962.
6. Campbell, A., Converse, P.E. and Rodgers, W.L., 'The Quality of American life, New York, 1976.
7. Carter, H., The Study of urban Geography, London, 1974.
8. Dalkeys, N.C., Rourke, D.L. Lewis R. and Synder, D., 'Study in the Quality of life', Messachusetts, 1972.
9. Dickinson, R.E., 'The west European City', London, 1951.
10. Dickinson, R.E., 'City Region and Regionalism', London, 1956.

Table 1 : Bilaspur city: Type of House Among Different Income Categories

Income category	No. of sample Households	Kacha		Semi Pacca		Pacca	
		Family	%	Family	%	Family	%
Poor	90	50	55.55%	30	33.33	10	11.11
Middle	120	20	16.16	60	50	40	33.33
High	60	05	8.33	15	25	40	66.67
Very High	30	-	-	05	16.66	25	83.33
	300	75	-	110		115	

Source:- Based on field survey

Table 2 : Bilaspur city: Type of wall Among Different Income Categories

Income category	No. of sample Households	Kacha		Semi Pacca		Pacca	
		Family	%	Family	%	Family	%
Poor	90	50	55.55%	25	27.77	20	22.22
Middle	120	30	25.0	70	58.33	20	16.66
High	60	10	16.67	20	33.34	30	50.0
Very High	30	05	16.67	05	16.67	20	33.33
	300	95	-	120		90	

Source:- House Hold Survey

Table 3 : Bilaspur City : Types of wall among sample wards

Name and Number of sample words	No. of sample Households	Kacha		Semi Pacca		Pacca	
		Family	%	Family	%	Family	%
Vikas Nagar ward (1)	30	08	26.66	12	40	10	33.34
Vishnu Nagar ward (2)	30	07	21	11	36.67	12	40.00
Bhakt Kanwar Ram Nagar ward (3)	30	06	20.00	09	30.00	15	50.00
Gayatri nagar ward (5)	30	04	13.34	06	20.00	20	66.67
Nirala Nagar ward (17)	30	07	23.34	13	43.34	10	33.34
Shivaji Nagar ward (24)	30	09	30.00	08	26.67	13	43.34
Ramdas Nagar ward (33)	30	05	16.67	10	33.34	15	50.0
Shahid Hemu Colony ward (33)	30	06	20.0	10	33.34	14	46.67
Dr. S. P. Mukherjee Nagar ward (42)	30	05	16.67	09	30.0	16	53.34
Shastri Nagar ward (46)	30	03	10.0	09	30.0	18	60.0

Source:- House Hold Survey

Table 4 : Bilaspur city: Material used for floor Among Different Income Categories

Income category	No. of sample Households	Mud		Stone		Cement		Marble	
		Family	%	Family	%	Family	%	Family	%
Poor	90	30	33.33	35	38.88	25	27.77	-	-
Middle	120	20	16.67	35	29.16	50	41.66	15	12.5
High	60	10	16.67	10	16.67	20	33.34	20	33.34
Very High	30	1	3.34	04	13.34	05	16.66	21	70
	300	51	-	84		110		56	

Source:- House Hold Survey

Table 5 : Bilaspur city: No. of Rooms with respect of family members Among Different Income Categories

Income category	No. of sample Households	Overcrowding		Normal	
		Household	%	Household	%
Poor	90	60	66.66	30	33.33
Middle	120	70	58.33	50	41.66
High	60	20	33.33	40	66.66
Very High	30	02	6.66	28	93.33
	300	142	-	198	

Source :- House Hold Survey

Table 6 : No. of Room with respect to family members to surveyed wards

Name and Number of sample words	No. of Households	Overcrowding		Normal	
		Household	%	Household	%
Vikas Nagar ward (1)	30	15	50.0	15	50.0
Vishnu Nagar ward (2)	30	12	40.0	18	60.0
Bhakt Kanwar Ram Nagar ward (3)	30	10	33.34	20	66.67
Gayatri nagar ward (5)	30	20	66.67	10	33.34
Nirala Nagar ward (17)	30	17	56.67	13	43.34
Shivaji Nagar ward (24)	30	14	46.67	16	53.34
Ramdas Nagar ward (33)	30	20	66.67	10	33.34
Shahid Hemu Colony ward (33)	30	09	30.0	11	36.67
Dr. S. P. Mukherjee Nagar ward (42)	30	12	40.0	08	26.67
Shastri Nagar ward (46)	30	08	26.67	12	40.0
	30	14	46.67	16	53.34
	300				

Source : House Hold survey

Economic Features of Bilaspur District

Dr. Kajal Moitra * Nihar Rajan Maity ** Sanjit Kisku ***

Abstract - The definition of Economic Geography itself explain that it searches for the true relationship that exists between man and his environment. It further show explicitly the influence exerted by the Physical environment upon the economic activities of man. The researcher in this field to study is to work with dual aims. In the first place, to give a correct account of the existing economic resource of the region concerned and in the second, to suggest ways and means in which the latter may be utilized for the benefit of mankind.

Though our country is a late comer to the field of industry yet is moving very fast in her industrial growth as economic developments. The stability of the industrial achievements rest upon the successful integration of various regional developments into the economic fabric of India.

Key Words - Physical Environment, Economic Geography.

Introduction - Man has to struggle to provide with basic necessities of life that is, food, clothing and shelter. For this he has to utilize the physical resources present in his environment. Environments charge from place to place, so is the case with physical resources of land, water, forest and minerals. The degree of prosperity of a society depends upon the availability of resources and the extent of their utilization. Material prosperity utilization of resources can assure a comfortable living. While selecting an occupation or a source of livelihood the first consideration is to adopt that pursuit which will yield maximum return with the least effort.

Objective of the study - There are main objects of study which are given below:

1. Study of the physical – Economical Background of the district.
2. Analysis the Economic condition of the district.

Research Methodology - This study is based on primary and secondary data. The primary data is collected through field observation, Questionnaire is and Interview method. Secondary data is collected GOVT. offices and published materials. Many statistical methods has been used for analysis the data.

Analysis - Bilaspur district is named after a fisherwoman called “Bilasa” The City stands on the banks river Arpa. It is famous for its unique characteristics of rice quality and its cultural background. The district play a major role for contribution in rice production and so Chhattisgarh of rice quality, and its cultural Chhattisgarh called as “Dhan ka Katora”

It is situated between north latitude 21^0 47’00 to 23^0 08’00’’ and east longitude 81" 14’00 to 83^0 15’00 It is bounded by loria on the north Anupur and Dhindori district of Madhya Pradesh on the north-west, Mungeli on the west and south west, Baloda Bazar on the south Korba district on the east and Janjgir-Champa on the south-east. The area of the district is about 5818.49 km. The total population of the district is approximately 19,61,922 (as per census 2011). The district consists ot 8 tahsils namely Bilaspur, Pendra, Pendra road (Gourela), Marwahi, Kota, Takhatpur, Bilha and Masturi. There is 7 Blocks and total number of Villages in the district is 899. Bilaspur is the second most important city in the state and the High Court of Chhattisgarh which is the 19th High Court of our Country is situated here Bialspur is also Called as Nyaydhani (legal capital) of Chhattisgarh It is famous for Kanan Pendari zoo Park. Few Tourist plces of the district are Ratanpur, Malhar, Talagram, Khutaghat, Belpan Kabir Chobutara etc.

The district is named after Bilaspur town which is the 3rd largest city in Chhattisgarh state and home to its High Court. The city is approximately 400 years old. The name is derived from Bilasa, the name of a fisher woman. According to a folk lore, Bilasa was a very beautiful young married woman. A king of this area wanted to have her. To avoid her surrender and to save her chastity Bilasa committed suicide by burning herself. Her husband also committed suicide. Bilaspur district was named after Bilasa. The district occupies the north – east portion of the state.

There is much scope for the future development of resources. A balanced surface water development will

* Associate Professor (Geography) Dr. C. V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA
** M.Phil Scholar (Geography) Dr. C. V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA
*** Research Scholar (Geography) Dr. C. V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.) INDIA

obviously necessltate conjuctive use. It is therefore, suggested that proper attention should be given towards the installation of lift irrigation schemes on the rivers and nalas. There is also a great scope for ground water development. The pumping sets and tube-wells may be installed to supplement the canal irrigation in mostly upland areas. Some mineral based industries, Like cement, fertilizer (coal based), more number of thermal power plants. Etc. can setup in the district.

The development of the forest would not only be a conservative measure for other resources but it would also provide employment to a sizable portion of the semi-skilled and un-skilled population and would definitely release the ores sure on agriculture and industries. Improvement of irrigation facilities, more use of chemical fertilizers, high yielding varieties of seed and modern implements can certainly increase the yield of crops even up to two or three times. The district needs early and high yielding variety of paddy seeds, which can he harvested in October if sown in early july, so that some canal water is available to be used for the Rabi crops. Agricultural research and training are also fruitful for the agricultural development .A proper crop rotation system should be encouraged to maintain the soil fertility.

References :-

1. Chhatterjee T. (2011) Integrated Rural Development and micro level planning of Raigarh in C.G. state. Ph.D. thesis Guru Ghasi Das University, Bialspur.
2. Dewangan Dev Ku. (2011) “Potential of cottage Industry in C.g. : A Geographic Analysis (A case study of Bilaspur District)
3. Gupta, and K. Adil (2000):” Significant research and development with references to bio fertilizers in C.G. “Fertilizer Association of India, New Delhi.
4. Gupta s. (1990 GGU) Sarguja Besin: Sansadhan awm Survechan :Bhoo aardhik Vislekhan” Ph.D. Thesis GGU Bialspur
5. Jean D and Sen Amartya (2006): “India : Economic Development and Social opportunity” Ideas. Journal of management Britain.
6. Lal N (2010) Regional Imbalance in agricultural Productivity in Chhattisgarh. A geographical study Ph.D. thesis Guru Ghasi Das University, Bialspur.
7. Malecki J. (2009); “Technology and Economic Development: The Dynamics of local, Regional and National Change” SSRN online Journal.

****

मध्यप्रदेश के उमरिया जिले की अधोसंरचना का भौगोलिक अध्ययन (भौगोलिक स्थिति, कृषि एवं खनिज संसाधन के विशेष संदर्भ में)

डॉ. फरखन्दा नूरीन फिरदौसी *

प्रस्तावना – 6 जुलाई 1998 ई0 को गठित उमरिया जिला मध्यप्रदेश के उत्तर पूर्व की ओर 23.80 उत्तरी अक्षांश से 80.24 पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। उमरिया जिल समुद्र की सतह से 489 मीटर 150 फीट की ऊँचाई पर स्थित है। उमरिया जिले की उत्तर से दक्षिण तक लम्बाई 150 कि0मी0 एवं पूर्व से पश्चिम चौड़ाई 60 कि0मी0 है। जिले में दक्षिण–पूर्वी रेल्वे लाइन उमरिया जिला मुख्यालय एवं चंदिया नौरोजाबाद बिरसिंहपुर पाली नगरीय क्षेत्रों से गुजरती है। उमरिया जिले का अधिकांश भाग पठारी है। जो बघेलखण्ड के पठार के अन्तर्गत आता है। बघेलखण्ड के पठार की ऊँचाई लगभग 350 मीटर है। जिले के मध्य में उमरिया शहर स्थित है। जिले की पूर्वी भाग की अपेक्षा पश्चिमी भाग मैदानी इलाका है।

क्षेत्रफल एवं सीमाएं – उमरिया जिले का कुल क्षेत्रफल 4503 वर्ग कि0मी0 हैं, जो मध्य प्रदेश राज्य के क्षेत्रफल का 1.02 प्रतिशत है। 15 अगस्त 1947 ई0 को भारत की स्वतन्त्रता मिलने के पश्चात् देशी राज्यों के विलय की प्रक्रिया में बुन्देलखण्ड एवं बघेलखण्ड की 36 रियासतों को शामिल कर विन्ध्यप्रदेश राज्य का गठन किया गया था। बाद में 1 नवम्बर 1956 ई0 को महाकौशल मध्यभारत, विन्ध्यप्रदेश, एवं अन्य समीपवर्ती क्षेत्रों को मिलाकर मध्यप्रदेश राज्य की स्थापना की गई थी। उमरिया जिले को पहले तीन तहसीलों बांधवगढ़, मानपुर एवं पाली में विभाजित किया गया था। तथा वर्तमान में चंदियाँ एवं नौरोजाबाद को तहसील का दर्जा मिल जाने से जिले में तहसीलों की संख्या 5 एवं विकासखण्ड 3 (करकेली, मानपुर, एवं पाली) हो गए है। उमरिया जिले की तहसीलों का क्षेत्रफल क्रमश: बाधवगढ़ (करकेली) 1678 वर्ग कि0मी0 पाली 873 वर्ग कि0मी0 एवं मानपुर 1952 वर्ग कि0मी0 हैं। जिले की 3 विकासखण्ड (करकेली, मानपुर, एवं पाली) में से पाली आदिवासी विकासखण्ड है। जिले मे कुल ग्रामों की संख्या 660 हैं। जिससे से 2 वन ग्राम हैं। 589 आबाद राजस्व ग्राम तथा पटवारी हल्कों की संख्या 243 है। उमरिया तथा 3 नगर पंचायत क्रमश: चंदिया, नौरोजाबाद एवं पाली है।

सीमाएं – उमरिया जिले के उत्तर में सतना दक्षिण में डिंडौरी, पूर्व में शहडोल तथा पश्चिम में जबलपुर जिले स्थित है। उमरिया शहर के उत्तर में बडेरी डबरौहा, घंघरी, भंगहा, दक्षिण मे किशनपुर, डकरी, महरोई, किरनलाल, पूर्व में लालपुर, पिपरिया, भगडा लदेरा, अमहा, तथा पश्चिम में विकगटगंज कोइलारी, चंदवार तथा खेखा गांव उमरिया नगर की सीमाए बनाते है। उमरिया की बांधवगढ़ करकेली तहसील में ही उमरिया शहर आबाद है।

उमरिया जिले का क्षेत्रफल विवरण

तालिका 1

(वर्ग कि.मी. में)

जिला/ विकासखण्ड	भौगोलिक क्षेत्रफल	आबाद ग्राम	ग्राम पंचायत	जनपद पंचायत
जिला–उमरिया	4503	589	234	03
मानपुर	1952	211	83	01
करकेली	1678	277	107	01
पाली	873	101	44	01

स्त्रोत– जिला सांख्यिकी पुस्तिका 2010

सारणी से स्पष्ट है कि उमरिया जिले के भौगोलिक क्षेत्रफल के आधार पर सबसे बडी तहसील मानपुर हैं, जिसका क्षेत्रफल 1952 वर्ग कि.मी. है। सबसे छोटी तहसील पाली हैं, जिसका क्षेत्रफल 873 वर्ग कि.मी. है। उपर्युक्त तहसीलों में से करकेली तहसील को सामान्य एवं पाली तहसील को आदिवासी तहसील के अन्तर्गत शामिल किया गया है।

कृषि एवं कृषि उपज – भारत की अर्थव्यवस्था में ग्रामीण क्षेत्र में कृषि का महत्व स्वयं सिद्ध है। भारत जैसे कृषि प्रधान देश में जहाँ 60 प्रतिशत जनसंख्या कृषि एवं कृषिगत पदार्थो से जीवनयापन करती हों, कृषि मानसून का जुँआ हो तथा लगभग 32 प्रतिशत लोग गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन को मजबूर हो ऐसे में देश की अर्थव्यवस्था की रीढ़ कही जाने वाली कृषि का महत्व और भी बढ़ जाता है।

भारत में कृषि न केवल अधिकांश लोगो की आजीविका का साधन हैं, बल्कि यह सामाजिक एवं आर्थिक जीवन का आधार भी है। देश की राष्ट्रीय आय में कृषि एवं कृषिगत पदार्थो का भाग लगभग 20 प्रतिशत है। कृषि द्वारा ही उद्योगों को कच्चे माल की आपूर्ति की जाती है। देश की बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए खाद्यान्न उत्पादन कृषि से ही संभव है। उमरिया जिले के अधिकांश कार्यशील जनसंख्या कृषि पर निर्भर है। जिले में कृषि कार्य हेतु प्राय: दो तरीके/विधियाँ अपनाई जाती है।

1. प्राचीन पद्धति
2. नवीन पद्धति

1. प्राचीन पद्धति – जिले की अधिकांश जनसंख्या की आजीविका का साधन कृषि है। कृषि कार्य हेतु पुरानी पद्धति का उपयोग किया जाता है। इस पद्धति में कृषि कार्य किया जाता है। इस पद्धति में कृषि कार्य बैलों की सहायता से खेतों में हल द्वारा जुताई कार्य किया जाता है। खाद के रूप मे प्राय: गोबर का उपयोग किया जाता है। खाद की पुरानी पद्धति मे श्रम एवं समय दोनों ही अधिक लगते है।

* (भूगोल) वार्ड नं. 15 घरौला मोहल्ला, शहडोल (म.प्र.) भारत

2. नवीन पद्धति – कृषि की नवीन पद्धति के अन्तर्गत कृषि में उन्नत एवं आधुनिक उपकरणों/ मशीनों की सहायता से वैज्ञानिक विधि द्वारा खेती की जाती है। कृषि कार्य में ट्रेक्टर पाँवर ट्रिलर, हाइवेस्टर आदि कृषि यंत्रों का उपयोग किया जाता है। इस पद्धति द्वारा कृषि कार्य करने से समय एवं श्रम दोनों की बचत होती है। उन्नत किस्म के बीज रासायनिक खाद, कीटनाशकों के प्रयोग से कृषि उत्पादन में वृद्धि होती है। जिले में कृषि की नवीन पद्धति द्वारा कृषि कार्य कई किसान करने लगे है। कृषि उत्पादन में वृद्धि हेतु पिछले कुछ वर्षो से सरकार की सक्रियता के द्वारा किसानों को फसल बीमा,किसान क्रेडिट कार्ड, कृषि उत्पादन विधि से संबंधित कई कार्यक्रम कृषि के विकास एवं किसानों के लाभार्थ शुरू किए गये है। इन कार्यक्रमों के अपेक्षित परिणाम भी अब सामने आ रहे है। जिले के किसान वर्तमान समय में नकदी/व्यापारिक फसलों का उत्पादन करने लगे है।

प्रमुख कृषि उपजें – जिले की प्रमुख कृषि उपजों में गेहूँ, धान, चना, अलसी, जौ, मसूर, ज्वार, मक्का, बाजरा, उड़द, तुअर, तिल, राई, सरसों, मूँग, एवं सब्जियाँ है। जिले में सिंचाई की सुविधा वाले क्षेत्रों में गन्ना उगाया जाता है। जिले में कुछ वर्षो से सोयाबीन की खेती भी की जा रही हैं, जिसका उपयोग दाल के रूप में होता है। जिले में बैंक द्वारा विभिन्न योजनाओं के अन्तर्गत किसान को ऋण सुविधाए उपलब्ध कराई जाती है। फलस्वरूप कृषि कार्य में मशीनों यंत्रों का प्रयोग बढ़ा है। इससे कृषि उत्पादन मे वृद्धि हुई है।

तालिका 2 :विकासखण्डवार प्रमुख फसलों के उत्पादन क्षेत्र का विवरण (वर्ष 2012–13 की स्थिति में) (हेक्टेयर में)

क्र.	फसलों का विवरण	मानपुर वि.खं.	करकेली वि.खं.	पाली वि.खं.
1	गेंहूँ	10418	13882	1643
2	धान	19730	19427	6487
3	ज्वार	145	222	139
4	मक्का	3430	4977	1940
5	अन्य अनाज	3980	8668	2883
6	**योग**	**37708**	**47176**	**13092**

स्त्रोत– जिला सांख्यिकी पुस्तिका 2012–13

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि वर्ष 2012–13 तक में कृषि उपजों का क्षेत्रफल सबसे अधिक करकेली विकासखण्ड में 47176 हेक्टेयर है तथा सबसे कम पाली विकासखण्ड में 13092 हेक्टेयर है।

उमरिया जिले में मुख्य अनाजों में गेंहूँ एवं चावल के उत्पादन में विगत वर्षो में कमी आई है। ज्वार एवं मक्का का उत्पादन स्थिर रहा है। जबकि चने का उत्पादन घट रहा है। उमरिया जिले में मुख्य रूप से दो फसलों खरीफ एवं रबी के अनुसार खेती की जाती है। खरीफ मौसम की मुख्य फसलें चावल, बाजरा, ज्वार, तिल एवं मूँगफली है। रबी मौसम की मुख्य फसले गेंहूँ जौ, चना, अलसी, सरसों आदि है। जिले में नकदी एवं व्यापारिक फसलों का अभाव है तथा जोत के घटते आकार के कारण कृषि उत्पादन मे गिरावट देखी जा रही है। जिले में गरीबी, बेरोजगारी एवं खाद्यान्न संकट के समाधान के लिए कृषि का विकास करने की आवश्यकता है। कृषि हेतु नवीन पद्धतियों के साथ ही जिले में जैविकीय एवं औषधीय कृषि को भी बढावा दिए जाने की आवश्यकता है। जिले में कृषि विकास की गति को बढ़ावा देने हेतु संस्थागत एवं तकनीकी उपाय अपनाए जाने चाहिए।

खनिज संसाधन – किसी भी राष्ट्र की औद्योगिक प्रगति में उसके खनिज संसाधनो का महत्वपूर्ण स्थान होता है। औद्योगिक महत्व की दृष्टि से मध्यप्रदेश राज्य में खनिजों का प्रचुर भंडार है। इन खनिजों में प्रमुख रूप से कोयला, बाक्साइट, हीरा, ताँबा मैग्नीज, डोलोमाइट, फायर क्ले, चूने का पत्थर आदि का भंडार है।

उमरिया जिले में पाए जाने वाले मुख्य खनिज कोयला, फायरक्ले तथा बॉक्साइड हैं। उमरिया जिले के कुछ क्षेत्रों में जिप्सम के भंडार भी मिले है। जिले के प्रमुख खनिजों का विवरण निम्नानुसार है।

1. कोयला – कोयला शक्ति का प्रमुख साधन है। कोयले से विद्युत पैदा की जाती है। जिले में सर्वप्रथम तत्कालीन रीवा रियासत के अन्तर्गत महाराजा रीवा एवं विदेशी व्यवसायी शान्वैलेस के संयुक्त प्रयास से कोयले की खुदाई का कार्य प्रारंभ किया गया था । उस समय कोयला रेल्वे एवं फैक्ट्रियों के उर्जा /शक्ति संचालन हेतु निर्यात किया जाता है। उमरिया जिले में सर्वप्रथम सन् 1881 ई0 में कोयले की खदान का शुभारंभ किया गया, तथा कोयले का उत्पादन 1885 ई0 से शुरू हुआ, परन्तु दुर्भाग्यवश स्न् 1968 ई0 में खदान् बंद हो गई । बाद मे सन् 1974 ई0 में कोयले का उत्पादन पुन: शुरू किया गया । उमरिया जिले में वर्तमान मे तीन कोयले की खदान है।

चपहा कालरी , पिपरिया कालरी एवं (बिरसिंहपुर) जोहिला कालरी है। तथा कोरार में एक खुली खदान है। उमरिया जिले में कोयला उद्योग से हजारों लोगों की जीविका प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से चलती है। जिले को सर्वाधिक आय कोयला क्षेत्र से ही प्राप्त होती है। उमरिया जिला कोयला क्षेत्र से ही प्राप्त होती है। उमरिया जिला कोयला प्रधान जिला हैं, जहाँ कोयले का प्रचुर भंडार है तथा कोयले के भंडार का सर्वेक्षण जारी हैं। जिले में जोहिला क्षेत्र में कोयले का सबसे अधिक उत्पादन होता है। उमरिया जिले की कोयला खदानों में मिलने वाला कोयला विटमिनट कोयला द्वितीय श्रेणी का कोयला है। इस किस्म का कोयला जलते समय धुँआ अधिक देता है। भारत मे मुख्य रूप से कोयले की तीन श्रेणियाँ एन्थ्रेसाइट विटमनट, लिग्नाइट पाई जाती है। इनमें से एन्थ्रेसाइट प्रथम श्रेणी का उत्तम कोटि का कोयला होता है। जिले में पाए जाने वाले विटमिनट कोयले मे कार्बन की मात्रा 45–65 प्रतिशत, जल 30 प्रतिशत तथा वाष्प की मात्रा लगभग 40 प्रतिशत तक पाई जाती है। इस किस्म का कोयला गोड़वाना प्रदेश में बहुतायत मिलता है। जिले का कोयला सीमेन्ट एवं चूना फैक्ट्री में कटनी एवं कैमोर भेजा जाता है। जिले में कोयला श्रमिकों के विकास एवं कोयले का उत्पादन बढाने हेतु सरकार निरंतर प्रयत्नशील है। सरकार एवं कालरी प्रबंधन द्वारा कालरी श्रमिकों में चिकित्सा, आवास, ऋण, शिक्षा आदि मूलभूत सुविधायें प्रदान करायी जाती है। सच कहा जाए तो जिले की कोयला खदानें उमरिया जिले के लिए प्राणदायिनी के समान है।

2. फायरक्ले – फायरक्ले एक विशेष प्रकार की मिट्टी होती है, जो अन्य मिट्टियों की अपेक्षा अधिक कठोर होती है। फायरक्ले की विशेषता यह है कि यह अधिक ताप में भी पिघलती अथवा नष्ट नहीं होती है। फायरक्ले का उपयोग तापरोधी ईटें बनाने में होता है जिससे ईट के भट्ठो की दीवारें बनाई जाती है। जिले में फायरक्ले का उत्पादन चंदिया तहसील मे होता है । फायरक्ले से चीनी मिट्टी के बर्तन खिलौने, पाइप आदि बनाये जाते है । चंदियाँ में चीनी मिट्टी के बर्तन तथा ईट बनाने का कारखाना है। फायरक्ले के अतिरिक्त जिले मे व्हाइटक्ले, ताँबे, जिप्सम तथा चुने के पत्थर आदि पाए जाते हैं।

वर्ष 2008–09 में कोयले का का उत्पादन 1732000मी0 टन था

जो कि पूर्व वर्ष 2007-08 में यह 1853883 मी0टन रहा है। जिले में विगत वर्षों की तुलना में फायरक्ले एवं व्हाइटक्ले के उत्पादन में कमी दर्ज की गई है। वर्ष 2006-07 मे फारक्ले एवं व्हाइटक्ले का में कमी दर्ज की गई है। वर्ष 2006-07 मे फायरक्ले एवं व्हाइटक्ले का उत्पादन क्रमश: 11776 मी0टन एवं 2591 मी0 टन था जो कि 2007-08 में घटकर क्रमश: 10890 मि0 टन एवं 2132 मी0 टन हो गया । अत: जिले मे सुनियोजित एवं सुव्यवस्थित तरीके से कोयले के उत्पादन में वृद्धि के साथ-साथ फायरक्ले एवं व्हाइटक्ले के उत्पादन को बढ़ाने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जिला सांख्यिकीय पुस्तिका 2011, 2012-13
2. शहडोल जिले का गजेटियर
3. म.प्र. के भौगोलिक अध्ययन डॉ. प्रमिला कुमार, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी 2000

****

उज्जैन जिले में जनसंख्या वृद्धि का स्थानिक-कालिक विश्लेषण

डॉ. प्रीति परमार *

प्रस्तावना – किसी भी देश के उत्पत्ति के संसाधनों में जनसंख्या का महत्त्व अधिक होता है। प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग और देश की औद्योगिक एवं व्यापारिक उन्नति वहाँ पाई जाने वाली जनसंख्या के वितरण, उसके घनत्व, लोगों के स्वभाव एवं कार्यक्षमता पर निर्भर करती है। इसलिए जनगणना को देश के लिए साधन और साध्य भी माना जाता है। प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य उज्जैन जिले में जनसंख्या वृद्धि के स्वरूप का अध्ययन करना है, साथ ही ऐसे क्षेत्रों को चिह्नित करना है, जहाँ पर जनसंख्या वृद्धि अधिकतम तथा न्यूनतम रही है, जबकि जनसंख्या वृद्धि एवं वितरण को सामाजिक सरंचना, संसाधनों की उपलब्धता, यातायात की सुविधा, मिट्टी की ऊर्वरता, शिक्षा आदि ने प्रभावित किया है।

अध्ययन क्षेत्र – उज्जैन जिला भौतिक दृष्टि से पर्वतीय पठारी और मैदानी क्षेत्र का मिश्रित रूप है। जिला आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त पिछड़ा हुआ है। उज्जैन जिला मुख्यत: कृषि पर आधारित है। उज्जैन जिले की भौगोलिक स्थिति 24043 से 23036', उत्तरी अक्षांश तथा 75000 से 76030' पूर्वी देशांतर के मध्य कर्क रेखा के समीप स्थित है। जिला पूर्व से पश्चिम की ओर लगभग 115 कि.मी. एवं उत्तर से दक्षिण की ओर 80 कि.मी. में फैला हुआ है। समुद्र सतह से इसकी ऊँचाई 527 मीटर है। इसका सम्पूर्ण भौगोलिक क्षेत्रफल 6091 वर्ग कि.मी. है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार उज्जैन जिले की कुल जनसंख्या 1986.864 है। उज्जैन जिला रतलाम, धार, इन्दौर, देवास तथा शाजापुर जिलों के मध्य स्थित होकर सात तहसीलों में विभाजित है, जिसमें बड़नगर, खाचरोद, महिदपुर, घट्टिया, तराना, नागदा तथा उज्जैन तहसीलें हैं।

विधितंत्र एवं आँकड़ों के स्रोत – प्रस्तुत प्रपत्र में उज्जैन जिले के जनसंख्या का विश्लेषण वर्षवार कुल जनसंख्या एवं जनसंख्या वृद्धि के प्रतिशत के आधार पर किया गया है। जनसंख्या के स्थानिक एवं कालिक विश्लेषण हेतु मूलत: द्वितीयक आँकड़ों का प्रयोग किया गया है, जिनके एकत्रीकरण के लिए संभागीय योजना एवं सांख्यिकी कार्यालय से सम्पर्क किया गया है।

जनसंख्या वृद्धि प्रतिरूप –जबकि जनसंख्या के आकार में किसी प्रकार का कोई परिवर्तन बढ़ोतरी या ह्रास होता है, तो उसे सामान्य तौर पर वृद्धि के नाम से अभिहित किया जाता है। जनसंख्या वृद्धि का आंकलन राजनेता, प्रशासक एवं व्यापारी आदि अपने पृथक्-पृथक् दृष्टिकोण से करते हैं, इससे जनसंख्या का आकार ही नहीं, वरन् उसकी संरचना भी प्रभावित होती है। जनसंख्या वृद्धि किसी क्षेत्र के आर्थिक विकास की सूचक, सामाजिक, जागरूकता का प्रतीक, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि की जड़ ऐतिहासिक घटनाओं का द्योतक तथा राजनैतिक विचारधारा की निर्धारक होती है इसीलिए किसी भी क्षेत्र की जनसंख्या वृद्धि को समझना उस क्षेत्र की आंतरिक जनसांख्यिकी संरचना को समझने की कुँजी है।

तालिका क्रमांक – 01

उज्जैन जिला – जनसंख्या वृद्धि (1961-2011)

वर्ष	कुल जनसंख्या	जनसंख्या में परिवर्तन	वृद्धि दर प्रतिशत में
1961	661720	117460	21.58
1971	862516	200798	30.34
1981	117002	254486	29.51
1991	1383086	266084	23.82
2001	1710982	327896	23.70
2011	1986864	275882	16.12

स्रोत – जिला सांख्यिकीय पुस्तिका 1961-2011

जनसंख्या वृद्धि का तात्पर्य जनसंख्या के अन्तर्गत समय विशेष के अंतराल पर जनसंख्या में होने वाले परिवर्तन से है, जो ऋणात्मक एवं धनात्मक दोनों रूपों में परिलक्षित किया जाता है। उज्जैन जिले में जनसंख्या वृद्धि का आंकलन तहसील स्तर पर किया गया है, जिसमें 1961 एवं 2011 की जनगणना से प्राप्त आँकड़ों को आधार माना गया है। जैसा कि तालिका 01 से स्पष्ट है कि 1991-2001 के मध्य उज्जैन जिले की जनसंख्या में सर्वाधिक 30.34 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि सबसे कम वृद्धि 21.58 प्रतिशत 1951-61 के मध्य हुई तथा वर्ष 1981 में 29.51 प्रतिशत की वृद्धि हुई। वर्ष 1991 में 23.82 प्रतिशत वृद्धि हुई। इसके विपरीत वर्ष 2011 में 16.12 प्रतिशत वृद्धि दर रही है जो कि 2001 की वृद्धि दर 23.70 से कम है। अत: 2001 की जनसंख्या में सर्वाधिक वृद्धि रही इस प्रकार स्पष्ट होता है कि उज्जैन जिले की जनसंख्या का इतिहास काफी विविधतापूर्ण है। वर्ष 1961 में 21.85 प्रतिशत वृद्धि थी, जो वर्ष 2011 में 16.12 प्रतिशत हो गई जो कि भारत की 2011 की जनसंख्या 17.7 प्रतिशत के समतुल्य है।

तहसीलवार जनसंख्या वृद्धि – उज्जैन जिले में तहसील स्तर पर जनसंख्या वृद्धि के परिवर्तनशील प्रतिरूप को तालिका क्रमांक 02 में दर्शाया गया है, जिससे स्पष्ट है कि 1961-2011 में किसी भी तहसील में जनसंख्या ह्रास नहीं हुआ है। 1981-1991 के मध्य खाचरोद से नागदा तहसील के अलग होने के कारण खाचरोद तहसील में वर्ष 1991 में ह्रास हुआ।

तालिका क्र. – 02 (देखे आगे पृष्ठ पर)

जिले की जनसंख्या वृद्धि में विभिन्नता देखी गई है। तहसीलों में भी विभिन्नताएँ हैं। तालिका क्रमांक 02 से स्पष्ट होता है कि वर्ष 1961 में खाचरोद तहसील में सर्वाधिक वृद्धि 38.34 प्रतिशत थी एवं सबसे कम बड़नगर

* अतिथि विद्वान् (भूगोल) शासकीय महाविद्यालय, मक्सी, शाजापुर (म.प्र.) भारत

तहसील में 21.16 प्रतिशत उज्जैन में 20.24 प्रतिशत वृद्धि थी। जो वर्ष 2011 में सर्वाधिक वृद्धि उज्जैन तहसील में 19.17 प्रतिशत एवं सबसे कम नागदा तहसील में 10.48 प्रतिशत इसी प्रकार अन्य तहसीलों जैसे तराना में 13.84 प्रतिशत, खाचरोद 14.08 प्रतिशत, महिदपुर में 10.70 प्रतिशत, घट्टिया में 17.11 प्रतिशत एवं बड़नगर में 13.19 प्रतिशत वृद्धि दर रही है।

अत: उज्जैन जिले की जनसंख्या वृद्धि का आर्थिक विकास पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। हमें प्रतिवर्ष अतिरिक्त जनसंख्या के लिए भोजन, वस्त्र, मकान, शिक्षा, चिकित्सा, परिवहन तथा रोजगार की व्यवस्था करना पड़ रही है।

जनसंख्या घनत्व – किसी प्रदेश के क्षेत्रफल तथा उसके जनसंख्या के पारस्परिक अनुपात को जनसंख्या का घनत्व कहते हैं। प्रतिवर्ग किलोमीटर में जनसंख्या का आकार उसका घनत्व बताता है, अर्थात् प्रतिवर्ग किलोमीटर में कितने व्यक्ति निवास करते हैं। अत: जिन देशों की जनसंख्या अधिक व निवास योग्य भूमि कम होती है, वहाँ जनसंख्या का घनत्व अधिक होता है। जहाँ जनसंख्या कम व निवास योग्य भूमि अधिक होती है, वहाँ जनसंख्या का घनत्व भी कम होता है। निवास योग्य भूमि अथवा भूमि का क्षेत्रफल तो स्थिर होता है। अत: जनसंख्या प्रत्यक्ष रूप से घनत्व को प्रभावित करती है। अत: उज्जैन जिले में जनसंख्या का घनत्व विभिन्न स्थानों में भिन्न-भिन्न है। यहाँ की काली मिट्टी की उर्वरता औद्योगिक विकास एवं अनुकूल जलवायु की भिन्नताओं ने जनसंख्या घनत्व की भिन्नता को काफी प्रभावित किया है।

तालिका क्र. – 03 (देखे आगे पृष्ठ पर)

उज्जैन जिले का जनसंख्या घनत्व का वितरण प्रतिरूप – वर्ष 1961 और 2011 की जनसंख्या घनत्व का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। 1961 में कुल जनसंख्या घनत्व 169 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर है। सर्वाधिक जनसंख्या घनत्व उज्जैन तहसील में 178 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर इसके बाद बड़नगर में 85 तराना में 92 तथा खाचरोद तहसील में 99 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर था। वर्ष 2011 में सबसे अधिक जनसंख्या घनत्व उज्जैन तहसील में 859 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर है। अन्य तहसीलों में बड़नगर 219 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर खाचरोद में 254 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर, नागदा 366, महिदपुर 228 तथा तराना में 238 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर हैं एवं घट्टिया में 227 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर है।

वर्ष 2011 में जिले का जनसंख्या घनत्व 326 प्रतिवर्ग किलोमीटर है, जिसमें 1961 की तुलना में 55.73 की वृद्धि हुई है। मध्यप्रदेश का जनसंख्या घनत्व 236 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर है, जो उज्जैन जिले के जनसंख्या घनत्व से कम है। इसमें उज्जैन व नागदा तहसील का जनसंख्या घनत्व सर्वाधिक एवं मध्यम जनसंख्या घनत्व में खाचरोद, तराना, घट्टिया, बड़नगर, महिदपुर का है तथा अध्ययन क्षेत्र में निम्न घनत्व की एक भी तहसील नहीं है। उज्जैन एवं नागदा तहसील पर आर्थिक व भौतिक कारक प्रभावशील हैं, जबकि खाचरोद, तराना, घट्टिया, बड़नगर व महिदपुर का विकास औद्योगिक दृष्टि से नहीं हुआ है। अत: उज्जैन जिले के जनसंख्या घनत्व में निरन्तर वृद्धि हो रही है।

उज्जैन जिले में जनसंख्या घनत्व के क्षेत्रीय वितरण प्रतिरूप का अध्ययन करने के लिए जनसंख्या घनत्व के 1961 और 2011 के आँकड़ों को ध्यान में रखा गया है और इन्हें जनसंख्या घनत्व के आधार पर 2 वर्गों में व्यवस्थित किया गया है-

1. **उच्च घनत्व के क्षेत्र –** जनगणना वर्ष 2011 में उज्जैन एवं नागदा तहसीलों में जनसंख्या घनत्व 859 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर के मध्य है। नागदा का जनसंख्या घनत्व 366 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर है। यह इस बात का सूचक है कि यहाँ जनसंख्या का संकेन्द्रण अधिक है। इन तहसीलों में उच्च नगरीकरण का कारण उज्जैन का प्रशासनिक इकाई के रूप में विकसित होना एवं नागदा औद्योगिक क्षेत्र है। इस कारण इन तहसीलों में जनसंख्या घनत्व अधिक है।
2. **मध्यम घनत्व के क्षेत्र –** जिन तहसीलों का जनसंख्या घनत्व 150-250 के बीच है, वे मध्यम घनत्व की तहसीलें हैं, इसमें खाचरोद, तराना, महिदपुर, बड़नगर एवं घट्टिया हैं।

निष्कर्ष – आज विश्व के समक्ष विशेषकर विकासशील देशों में तीव्र जनसंख्या वृद्धि एक बड़ी चुनौती है। इस सतत् बढ़ती जनसंख्या का समुचित विकास के लिए सरकारी (पंचवर्षीय) योजनाए तथा समय-समय पर राज्य एवं केन्द्र द्वारा इन योजनाओं के अतिरिक्त अन्य योजनाएँ भी लागू की गयी हैं। इस क्षेत्र में इन योजनाओं का प्रभाव पड़ा है। बढ़ती हुई जनसंख्या इस सदी की सबसे बड़ी चुनौती है और यह भोजन, पानी, आवास, उर्ज्जा जैसे संसाधनों की कमी का गंभीर खतरा उत्पन्न कर रही है। हमें इस खतरे से धरती और जीवन को बचाना है। इसलिए जनसंख्या वृद्धि की दर कम करने हेतु ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सुविधाओं के विस्तार एवं ग्रामीण जागरूकता में वृद्धि कर एवं सरकारी योजनाओं दोनों को साथ-साथ लेकर ही एक सीमा तक रोक लगायी जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मिश्रा, 1984
2. मामोरिया एवं सिसौदिया भूगोल साहित्य भवन पब्लिशर्स एण्ड ड्रिस्ट्रीब्यूटर्स प्रा.लि.
3. जनसंख्या भूगोल राजेश सिंह।
4. खन्ना सी.एल. शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी इन्दौर।
5. सिंह जगदीश सिंह काशीनाथ आर्थिक भूगोल के मूल तत्तव दसवाँ संशोधित संस्करण।
6. हीरालाल जनसंख्या भूगोल वसुंधरा प्रकाशन।
7. चाँदना 1986 जनसंख्या भूगोल।
8. पण्डा बी.पी. 'जनसंख्या भूगोल मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
9. जिला सांख्यिकी सार ग्रन्थ 1990
10. भारत का वृहत् भूगोल, डॉ. सुरेशचन्द्र बंसल।

तालिका क्र. – 02

उज्जैन जिला तहसीलवार जनसंख्या वृद्धिदर (1961–2011)

वर्ष	1961		1971		1981		1991		2001		2011	
	जनसंख्या	वृद्धि	जनसंख्या	वृद्धि	जनसंख्या	वृद्धि	जनसंख्या	वृद्धि	जनसंख्या	वृद्धि	जनसंख्या	वृद्धि
बड़नगर	102894	21.16	125449	21.92	153862	22.64	188038	22.21	236640	25.84	269573	13.91
खाचरोद	126438	38.34	169399	33.97	227632	34.37	113113	50.30	141362	24.57	161270	14.08
नागदा	अप्राप्त	अप्राप्त	अप्राप्त	अप्राप्त	अप्राप्त	अप्राप्त	171405	अप्राप्त	215412	25.67	237996	10.48
महिदपुर	88561	20.86	112783	27.35	139846	28.99	172382	23.26	217426	26.13	259299	10.25
तराना	95501	23.28	119337	24.95	149580	25.34	177679	18.78	217229	22.25	247299	13.84
उज्जैन	248326	14.33	335548	35.12	372977	11.15	469641	25.91	564345	20.16	672566	19.17
घट्टिया	अप्राप्त	अप्राप्त	अप्राप्त	अप्राप्त	73105	अप्राप्त	90828	24.24	18568	30.54	138861	17.11
जिले का योग	661720	21.58	862516	30.34	1117002	29.50	1383086	23.82	1710982	23.70	1986864	16.12

स्रोत – जिला सांख्यिकी पुस्तिका 1961–2011

तालिका क्र. – 03

उज्जैन जिला जनसंख्या घनत्व (1961–2011)

क्र.	तहसील	1961			2011		
		क्षेत्रफल	जनसंख्या	घनत्व	क्षेत्रफल	जनसंख्या	घनत्व
1.	बड़नगर	122.50	102894	85	1229.50	269573	219
2.	खाचरोद	12.87	126438	99	636.12	161270	254
3.	नागदा	अप्राप्त	अप्राप्त	अप्राप्त	650.98	237996	366
4.	महिदपुर	1137.30	88561	78	1133.56	259299	228
5.	तराना	1041.10	95501	92	1041.10	247299	238
6.	उज्जैन	1395.15	248326	178	782.60	672566	859
7.	घट्टिया	अप्राप्त	अप्राप्त	अप्राप्त	612.55	138861	227
	जिला योग	6090.05	661720	108.65	12086.41	1986864	164.38

स्रोत – जिला सांख्यिकी सार ग्रन्थ 1990 एवं जिला सांख्यिकीय पुस्तिका (1961–2011)

****

Juvenile Delinquency and Society

Dr. Jyoti Saxena *

Introduction - Children and the assets of society. Who is a child is a subject of law previously the girl of 16 years and boy of 18 years work considered as Juvenile but after the Nirbhaya case of Delhi the amendment has taken place in Juvenile Justice Act 2000 and now the amended law of 2015 Juvenile Justice Act 2015 the age of 18 years has become compulsory for both boys and girls.

Prevention is better them cure this slogan equally applies upon Juveniles. If proper care and protection is granted to the children and they are not allowed to go in the criminal direction than the present generation can be saved.

Most of the children survive on begging, pick pocketing and involved in crime because there is no one to take care of them.

These neglected boys and girls slowly slips towards crime because they do not have a guardian and those who have guardian and all the facilities of life they also join the crime because the peer group of their society invite them to commit crime the society at large is making use of the Juveniles as an instrument because the maximum amount of punishment of any big crime is three years for juvenile hence the juveniles are use as an instrument for committed various crime infect they are hired for committing these crimes for the benefit of the criminals known as white collar criminal if they succeed the purpose is over and if they do not succeed their liability is only up to three years if is such a gainful transaction in which there is a great margin in such transaction and the whole society suffers badly.

The poverty, illiteracy and unemployment and lack of Sanskars are the reasons for above development and a check should be impose upon it. This is the need of the time to stop juvenile delinquency otherwise the seeds of crime will spoil the whole society.

Society consist of men, women, children etc. out of them children are the most tender one which can be influenced in many ways. They are just like plants and a proper care and attention is not paid them the results can be fatal every child has a right to education. So that he may prove himself to be a good citizen. He needs a family to look after so that he may not go astray. Similarly it is the duty of the state that every child may get good education to become a good citizen.

Upto the age of 18 any child can go in either side. He may become a civilized member of the society or he can make himself a delinquent. Right to education has become a fundamental right and it is the duty of the state to provide free and compulsory education up to the age of 14 years and it is also the duty of all the citizens that children up to the age of 14 years should go to the educational centres for education but we find many children who are begging pick pocketing and involved in crime it affects the society in general and when these children become old they adopt the crime as a means of livelihood. Such tendency is to be stopped.

Conclusion -Forever children should not be allowed to be use as a tool for crime children are governed by so many factors they are just like a plant who need care and protection of the guardians the white collar criminals make use of these children for commission of a crime because in the law the maximum punishment is three years for any big crime. They engage these children for commission of a crime and use them for their benefits such practices should be stopped by the state as well as by the society otherwise its consequence would be severe.

References :-

1. Sociology, U.S. Singh, Allahabad Law Agency.
2. Juvenile Delinquency, Shipra Lavania, Rawat Publications, Jaipur and New Delhi.
3. Juvenile Delinquency, Dr. Sheetal Kanwal, Amar Law Publication.
4. Weetane Power & Juvenile Justice, Robert Harris & David Webb, Taristock Publications.

* **Assistant Professor (Sociology) Career College of Law, Bhopal (M.P) INDIA**

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में समाज में महिलाओं की स्थिति

प्रो. मीना जैन * हेमा परमार **

प्रस्तावना – किसी समाज में महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षिक स्थिति उस समाज की वास्तविक स्थिति को प्रतिबिम्बित करती है। सामाजिक व राजनैतिक निर्णय की प्रक्रिया में महिलाओं की सहभागिता समाज में महिलाओं की स्थिति व विकास का संकेतक माना जाता है। क्योंकि महिलाएँ हमारे देश की जनसंख्या का लगभग आधा भाग है और विकास कार्यों में उनकी भागीदारी बहुत महत्वपूर्ण मानी जाती है। कोई भी योजना चाहे वह सामाजिक विकास, आर्थिक विकास के क्षेत्र में हो तभी सफल हो सकती है, जब उन योजनाओं में महिलाएँ सकारात्मक भूमिका अदा करे। समाज में व्याप्त सामाजिक असमानताएँ होने पर भी उनके सामाजिक स्तर में बहुत सुधार हुआ है और आज महिलाएँ उच्च पदों पर आसीन हैं, जीवन के लिए उनका जन्मजात उत्साह और उल्लास कई घरों को प्रकाशित कर रहा है। महिला सशक्तिकरण के संबंध में आफिस ऑफ, द यूनाइटेड नेशंस हाई कमिश्नर फार ह्यूमन राइट्स ने लिखा है कि यह महिला को शक्ति, क्षमता तथा काबिलियत देता है ताकि वे अपने जीवन–स्तर को सुधार कर अपने जीवन की दिशा की स्वयं निर्धारित कर सकें।

महिला सशक्तिकरण का अर्थ – सशक्तिकरण एक बहुआयामी प्रक्रिया है। यह महिला में इतनी जागरूकता लाती है कि वह शक्ति को प्राप्त करें एवं उनमें सामाजिक समस्याओं से निजात पाने की शक्ति हो यदि समाज में नारी भयमुक्त हो अथवा सम्मान खोए बिना अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सके। उसकी इच्छा अनिच्छा का सम्मान किया जाए, उसे अपना अधिकार मिले, राष्ट्र की प्रगति में उसका पर्याप्त योगदान हो तभी महिला सशक्तिकरण प्रासंगिक होगा। सबलता तथा सुयोग्यता ही नारी सशक्तिकरण के महत्वपूर्ण अवयव है। अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस पर यह कहा गया कि यह महसूस करना आवश्यक है कि कानून द्वारा एक हद तक परिवर्तन लाए जा सकते है, उसकी कुछ सीमाएँ है। विधान बनाने से अथवा न्यायालयों के सक्रिय होने से महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन लाने का प्रयास तभी सम्भव होगे जब इनके साथ–साथ सामाजिक ओर आर्थिक ढांचे तथा समाज की संस्कृति में परिवर्तन लाने के आंदोलन चलाये जाए। स्वतंत्रता के पश्चात् महिलाओं की स्थिति मे बदलाव आया है। नारी चेतना का स्वर बदलता दिखाई दे यह है। नारी संघर्ष की नई जमीन तैयार करती हैं, संगठित होती है अत्याचार के विरूद्ध वह आवाज बुलंद करती है व अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए संघर्ष करती है। सम्पूर्ण भारत में महिला सशक्तिकरण का आंदोलन तीव्रता से आगे बढ़ रहा है।

2017 में महिला सशक्तिकरण के 7 दिशामूलक सिद्धांत –

1. महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए उद्यमिता विकास एंव आपूर्ति श्रृंखला एंव विपणन प्रक्रियाओं का क्रियान्वयन करना।
2. महिलाओं के लिए शिक्षा, प्रशिक्षण एवं पेशेवर विकास प्रोन्नयन।
3. समुदाय पहलों एवं सिफारिशों के बीच समता प्रोन्नयन।
4. लिंगमूलक समता प्राप्त करने की दिशा में प्रगति का मापन तथा सार्वजनिकीकरण।
5. लिगंमूलक समता हेतु उच्चतरीय कार्पोरेट नेतृत्व की स्थापना करना।
6. मानवाधिकारों एवं गैर भेदभाव का समादर और समर्थन सहित कार्य में पुरुषों एवं महिलाओं के साथ समान व्यवहार।
7. सभी महिला– पुरुष कार्मिकों के स्वास्थ्य सुरक्षा एवं खुशहाली सुनिश्चित करना।

वर्तमान समय में महिलाओं की स्थिति – भारत में स्वतंत्रता के बाद महिलाओं की स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन हुआ है। भारत में स्वतंत्रता के तुरन्त पश्चात् संविधान और नये समाजिक अधिनियमों के द्वारा जीवन के सभी क्षेत्रों में महिलाओं एवं पुरुषों को समान अधिकार दिए गए, लेकिन पुरुषों का अहवाद आज भी व्यवहारिक रुप में समान अधिकार के पक्ष में नहीं है जिसकी महिलाएँ वास्तव में अधिकारी हैं। अधिकांश महिलाएं स्वयं भी जीविका उपार्जन तथा सम्पत्ति के क्षेत्र में मिलने वाले अधिकारों का उपयोग करने के पक्ष में नहीं है। इसके बाद भी यह सच है कि नगरों में महिलाओं ने सामाजिक और आर्थिक दासता के पुराने बन्धनों को तोड़कर महत्वपूर्ण सफलताएं प्राप्त की है। आज महिलाएं अपनी आर्थिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पूर्णतया पुरुषों पर निर्भर नहीं हैं। शिक्षा की प्रगति तथा बदलती हुई मनोवृत्तियों के प्रभाव से अब सभी क्षेत्रों में कामकाजी महिलाओं की संख्या में तेजी से वृद्धि हो रही है।जिससे महिलाओं की सामाजिक स्थिति में भी सुधार तेजी से हो रहा है।

वर्ष 2017 के नवीन आँकड़ो के अनुसार सशक्त महिलाओं की स्थिति –

1. नौकरियों में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण। स्थानीय निकायों के चुनाव में 50 प्रतिशत आरक्षण।
2. वन स्टाप सेंटर (सखी) – हिंसा से पीड़ित महिलाओं की समस्याओं के समाधान हेतु प्रदेश के 18 जिलों मे सखी का संचालन।
3. मुख्यमंत्री महिला सशक्तिकरण योजना में विपत्तिग्रस्त, पीड़ित, कठिन परिस्थितियों में निवास कर रही महिलाओं व किशोरी बालिकाओं का सामाजिक आर्थिक उन्नयन।
4. शौर्य दल – महिलाओं की युगानुकूल गरिमा के लिए 60 हजार से अधिक दलों का गठन।
5. स्वागत लक्ष्मी योजना में महिलाओं के प्रति सोच व्यवहार में बदलाव

* प्राध्यापक (समाजशास्त्र) मा.ला.च.शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, खण्डवा (म. प्र.) भारत
** शोधार्थी (समाज विज्ञान) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म. प्र.) भारत

लिंगानुपात में सुधार और कन्या भ्रूण हत्या के प्रति जागरुकता के लिए 13 हजार से अधिक बालिकाएँ सम्मानित।

6. लाड़ली लक्ष्मी योजना से सुरक्षित भविष्य । अब तक 24 लाख 50 हजार से ज्यादा बालिकाएँ लाभान्वित।
7. गाँव की बेटी और प्रतिभा किरण योजनाओं में स्कॉलरशिप। 85 प्रतिशत से अधिक अंक लाने वाली छात्राओं को रु 25000 नगद अथवा लेपटाप। स्कूली शिक्षा में किताबें गणवेश प्रदान एंव साइकिल वितरित की जाती है।
8. लालिमा अभियान – किशोरियों एवं सभी महिलाओं विशेषकर गर्भवती और धात्री माताओं के रक्ताल्पतता को दूर करने हेतु मिशन मोड अभियान।
9. महिलाओं के सम्मान की रक्षा के लिए शौचालय निर्माण के माध्यम से खुले में शौच से मुक्ति।
10. ग्रामीण महिला सशक्तिकरण तेजस्विनी कार्यक्रम प्रदेश के 6 जिलों – बालाघाट, मण्डला, पन्ना, टीकमगढ़, छतरपुर एवं डिण्डोरी मे 2 लाख से अधिक महिलाओं को लाभ। कुल 16 हजार से अधिक स्व – साहायता समूहों का गठन।
11. मुख्यमंत्री कन्या विवाह/निकाह योजना– कन्याओं के विवाह मे मदद लगभग 4 लाख विवाह/निकाह समपन्न।
12. लाड़ो अभियान के तहत 5 हजार से अधिक स्थंल पर बाल विवाह रोके गए।

भारतीय समाज में महिला सशक्तिकरण हेतु कानून :

1. हिन्दू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम 1956
2. मातृत्व लाभ अधिनियम 1962
3. भविष्य निधि कानून 1952
4. वैवाहिक अधिकारों का पुन: स्थापन
5. मुस्लिम शरीयत अधिनियम 1937
6. हिन्दू स्त्रियों का सम्पति पर अधिकार अधिनियम 1937
7. वेश्यावृति निवारण अधिनियम 1986
8. समान वेतन अधिनियम 1976
9. अनुच्छेद 21 में महिलाओं का विशेष संरक्षण
10. दहेज निषेध अधिनियम 1961,1985
11. बाल–विवाह निरोधक अधिनियम 1929

महिला नीति – प्रदेश के विकास में महिलाओं की भागीदारी के लिए नई महिला नीति 2008 लागू की गई है। इस नीति का लक्ष्य विकास की मुख्य धारा में महिलाओं की गरिमामय भागीदारी सुनिश्चित करना तथा उन्हें प्रत्येक क्षेत्र में सुरक्षा सशक्तिकरण क्षमताओं का विकास उनसे संबंधित नीतियों विधियों कार्यक्रमों और योजनाओं का परिमूलक क्रियान्वयन कराना है। महिला नीति द्वारा जिन नीतिगत प्रावधानों का क्रियान्वयन कराया जाएगा उनमें महिलाओं के घटते लिंगानुपात को संतुलित कर बालिका भ्रूण हत्या की रोकथाम महिलाओं के प्रति हिंसा, अपराधों पर नियंत्रण शिक्षा, द्वारा सशक्तिकरण गुणात्मक स्वास्थ्य सेवाएं रोजगार एंव आय के अवसरो में बढ़ोतरी किशोरी बालिका के विकास के प्रयास प्रत्येक स्तर पर निर्णय प्रक्रिया व्यवस्था में भागीदारी जेण्डर श्रमिक महिलाओं के हितों का संरक्षण एंव गैर सरकारी सस्थाओं का विकास करना है

भारतीय महिलाओं की वैश्विक रेंकिंग में सुधार – सशक्तिकरण के क्षेत्र में भारत की वैश्विक रैंकिंग में सुधार हुआ हैं। पिछले वर्ष के 114 वें स्थान के मुकाबले इस साल वह 108 वें स्थान पर पहुँच गया है। अत: आर्थिक, सामाजिक, शैक्षिक और स्वास्थ्य क्षेत्र में भी आशातीत प्रदर्शन होता दिखाई दे रहा है। वैसे लिंग भेद खत्म करने यानि महिला –पुरूष गैर बराबरी समाप्त करने के मामले में आइसलैंड पूरी दुनिया में पहले स्थान पर है।

118 वर्ष बाद आर्थिक बराबरी – वर्ल्ड इकोनामिक फोरम की रिपोर्ट के अनुसार दुनिया में स्त्री–पुरूष के बीच आर्थिक गैर बराबरी दूर करने में अभी भी 118 वर्ष ओर लग जायेंगे यानी विकास की मौजूदा रफ्तार कायम रही तो 2133 तक महिला और पुरूष के बीच आर्थिक समानता का लक्ष्य हासिल किया जा सकता हैं।

महिलाओं को राजनीतिक प्रतिनिधित्व देने के लिहाज से भारत का रिकार्ड बेहद शानदार है। इस मामले में देश का पूरी दुनिया में **9 वां** स्थान है। यही कारण है कि पिछले वर्ष के मुकाबले इनकी रेंकिंग में इस साल सुधार देखने को मिला हैं, मोदी सरकार में सुषमा स्वराज, स्मृति ईरानी, मेनका गांधी, नजमा हेपतुल्ला, उमा भारती, हरसिमरत कौर बादल और निर्मला सीतारमण के रूप में महिलाओं की उपस्थिती दर्ज है। इसी प्रकार राजस्थान और पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों की कमान महिला मुख्यमंत्रियो के हाथ है।

महिलाओं का सशक्तिकरण सरकार का मिशन – मुख्यमंत्री श्री शिवराज सिंह चौहान ने कहा है कि महिलाओं का सशक्तिकरण राज्य सरकार का मिशन है। महिला सशक्तिकरण के मामले में म.प्र. को देश का आदर्श राज्य बनाया जाएगा। उन्होंने कहा कि जल्द ही महिलाओं को गैर सरकारी संगठनों से जोड़ा जायेगा व समूहों का सम्मेलन बुलाया जायेगा।

श्री चौहान ने कामकाजी महिलाओं के लिए वसति गृह को महत्वपूर्ण बताते हुए कहा कि आवश्यकता होने पर और भी अर्थिक सुधार हेतु कार्य किए जाएगे एवं महिला पंचायतो में की गई घोषणाओं को जल्द ही पूरा करने का संकल्प किया। स्थानीय निकाय में महिलाओं को 50 प्रतिशत आरक्षण दिया गया था जबकि 56 प्रतिशत पद पर महिलाएँ चुनकर आई और शासन–प्रशासन की बागडोर संम्भाल रही है। अत: जब तक शासन के सूत्र महिलाओं के हाथ में नहीं आएगे तब तक सशक्तिकरण की प्रक्रिया अधूरी रहेगी।

सुझाव :

1. भारत में महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए शक्तिशाली मिशन की आावश्यकता है ।
2. महिलाओं को शिक्षित किया जाए क्योंकि शिक्षा का रास्ता महज साक्षर होने तक न होकर आवश्यक ज्ञान प्राप्ति तक होता है। इस हेतु सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों से महिलाओं को जोड़ा जाए ।
3. महिलाओं के लिए बने कानूनों की जानकारी महिलाएँ ले एवं उन्हें घर, परिवार व समाज में लागू कराने की पहल करे ।
4. गैर सरकारी संगठनों द्वारा समाज में महिलाओं के विकास हेतु नवीन कार्यक्रमों का आयोजन किया जाए।
5. संविधान में दर्शाए गए मौलिक अधिकारों का ईमानदारी से क्रियान्वयन करना होगा तभी सही रूप में महिलाओं का विकास हो सकेगा।
6. महिलाओं एवं लड़कियों को शिक्षित होकर आत्मनिर्भर होने की आवश्यकता हैं। जिससे उनकी सामाजिक एंव आर्थिक स्थिति को सुधारा जा सके ।
7. महिलाओं को अपने अधिकार पर दृढ़ रहना चाहिए और अपने लिए नई भूमिकाएँ स्वीकार करनी चाहिए। उन्हें जीवन की ओर आशावादी दृष्टिकोण अपनाना चाहिए।

निष्कर्ष – निष्कर्ष के रुप में कह सकते है कि महिलाएँ 21 वीं सदी में प्रवेश कर चुकी हैं और प्रत्येक क्षेत्र में सफलतापूर्वक कार्य कर उपलब्धि अर्जित कर पुरुषों के अभेद किलों को भेद रही है। जो निरतंर सदियों से चला आ रहा है। बहुत सारे देश भी राष्ट्र प्रमुख के रुप महिला को में स्वीकार कर चुके हैं। श्रीलंका में श्रीमती भण्डारनायके और चंद्रिका कुमारतुंगा, लाबेरिया की राष्ट्रपति एलनजानजन, सरलीक अफ्रीका देश की राष्ट्रपति चुनी जाने वाली महिला है। भारत की प्रथम महिला राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा पाटिल, प्रथम महिला प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी ने राजनैतिक क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसके अतिरिक्त सोनिया गांधी, ममता बेनर्जी, सुषमा स्वराज, राबड़ी देवी, किरण बेदी, पी. टी. उषा, पर्वतारोही बछेन्द्री पाल, पत्रकार मृणाल सिह,खिलाडी सानिया मिर्जा, समाजसेवी मेघा पाटकर इत्यादि महिलाओं ने देश का गौरव बढ़ाया है। ये महिलाऐं विज्ञान, समाज सुधार, उद्योग, खेल, व्यवसाय, साहित्य, लेखन और प्रशासन के क्षेत्र में नये कीर्तिमान स्थापित कर रही हैं।

आज महिलाओं ने सिद्ध कर दिया कि महिलाएँ केवल घर पर नही बल्कि देश की बागडोर भी सम्भाल रखी है। इन्होनें सिद्ध कर दिया कि महिलाएँ किसी भी क्षेत्र में पीछे नही है इसका मुख्य कारण महिला शिक्षा एवं सशक्तिकरण हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. सचदेव डी. आर. भारत में समाज कल्याण प्रशासन, किताब महल प्रकाशन, इलाहबाद, 2013 पृ. 257
2. डॉ. मुखर्जी रवीन्द्रनाथ, भारत में सामाजिक परिवर्तन रावत पब्लिकेशन, 2008 पृ. 226
3. डॉ. शर्मा वीरेन्द्र, भारत में भ्रष्टाचार की चुनौती कारण और निवारण जनतंत्र का शाप भ्रष्टाचार, मुरेना
4. बी. एन. सिंह, जनमेंजय, नारी जगत की स्थिति का परिदृश्य, आधुनिकता ओर नारी सशक्तिकरण रावत पब्लिकेशन, नई दिल्ली
5. टाइम न्यूज सर्वे वूमेन एवं मैन इन इंडिया, केन्द्रिय सांख्यिकी संस्थान, नई दिल्ली 2004
6. लवानिया, एम. एम. भारतीय महिलाओं का समाजशास्त्र रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर 2008
7. सिंह वंदना, नारी सशक्तिकरण दशा व दिशा, प्रतियोगिता दर्पण जुलाई 2006
8. नईदुनिया, 8 मार्च 2017

****

सामाजिक आदत तथा पर्यावरण प्रदूषण (सोनकच्छ के गंजपुरा ग्राम के विशेष संदर्भ में)

डॉ. ऋचा एस. मेहता *

प्रस्तावना – पर्यावरण – बहुत ही सरल शब्दों में प्रकृति में हमें चारों ओर जो भी दिखाई देता हैं, वो पर्यावरण कहलाता है। पर्यावरण दो शब्दों के मेल से बना है। परि+आवरण अर्थात् चारों ओर का आवरण जल, थल, वायु, अग्नि, आकाश, जिसने व्यक्ति को चारों ओर से घेर रखा है।

प्रदूषण – पूर्णत: व अंशत: मानवीय क्रियाओं के परिणामस्वरूप पर्यावरण का संतुलन बिगड़ रहा है, इन क्रियाओं का हानिकारक प्रभाव पर्यावरण प्रदूषण कहलाता है।

प्रदूषण

- उत्पत्ति के आधार पर
  - प्राकृतिक प्रदूषण
    - धूल जीवाणु खनिज पदार्थ
  - मानव जनित प्रदूषण
    - धुआँ, राख घरेलू कचरा सीवर का जल औद्योगिक कचरा अस्पतालों का जैविक कचरा रासायनिक
- प्रकृति के आधार पर
  - ठोस अपशिष्ट
  - द्रव अपशिष्ट
  - गैसीय अपशिष्ट
  - ध्वनि अपशिष्ट
  - ताप अपशिष्ट
  - विकरण अपशिष्ट

चूँकि समाज कई प्रकार के समाज है। जैसे ग्रामीण समाज नगरीय समाज, जनजातीय समाज, आदिम समाज, उसी प्रकार आदतें भी भिन्न-भिन्न हैं। यहाँ पर कुछ सामाजिक आदतों व पर्यावरण प्रदूषण के संबंध में हम विचार करेंगे।

पुरूषों की स्थिति व जनसंख्या का विस्तार व धनत्व – पर्यावरण प्रदूषण का एक मुख्य कारण जनसंख्या का घनत्व है। पितृसत्तात्मक परिवार में पुरूषों की स्थिति सदा स्त्रियों से ऊँची मानी गई है। अपनी शक्ति प्रदर्शन आदत के कारण समस्त अधिकारों का वह स्वामी बन गया व समाज में उसने ऊँचा स्थान प्राप्त कर लिया। आज प्रत्येक धार्मिक कार्य बिना पुरूष वर्ग के सम्पन्न नहीं होता। इस ऊँची स्थिति के कारण महिलाओं के शिक्षा व विकास की तरफ किसी का ध्यान ही नहीं गया और उस पर समाज का जो बोझ बढ़ता गया, वह ढोती गई इस पुत्र मोह की सामाजिक आदत के कारण जनसंख्या बढ़ती गई। बाल-विवाह समाज में एक व्याप्त आदत है। अभी भी छोटी उम्र में ग्रामीण क्षेत्र में बच्चों का विवाह हो जाता है। व्यक्ति की बच्चे उत्पन्न करने की सबसे ज्यादा शक्ति 19-25 वर्ष के बीच रहती है। इस कारण परिवार नियोजन के प्रयत्नों के बाद भी जनसंख्या बढ़ रही है।

पुत्र की आवश्यकता के कारण प्रत्येक परिवार यह चाहता है कि उसके परिवार में एक पुत्र हो। आज शिक्षित समाज जनसंख्या में नवीन चिकित्सा का उपयोग पुरूषों व महिलाओं के अनुपात को बिगाड़ रहा है तथा जनसंख्या के संतुलन को बिगाड़ रहा है।

जंगलों की सामग्री नष्ट होना तथा सामाजिक आदत – जनजातियों में अन्न उत्पन्न करने के लिए झूम खेती की जाती थी। जंगलों को काटकर अन्न उत्पन्न करते थे। प्राचीनकाल में अन्न उत्पन्न करने की वह सामाजिक आदत लाभकारी थी, किन्तु इससे अनेकों प्रदूषण उत्पन्न करने वाले प्रभाव भी उत्पन्न हुए। पहले गतिशीलता तीव्र गति से नहीं होती थी। अत: जनजाति को अपने पूर्व स्थान में पहुँचने में करीब 25 वर्ष लग जाते थे और इन 25 वर्ष में वृक्ष विकसित हो जाते थे। आज गतिशीलता तीव्र हो गई है और यह घेरा पूर्ण करने में उसे 10 वर्ष लगते हैं और इन 10 वर्षों में वृक्ष विकसित नहीं हो पाते और इस जंगल काट कर अन्न उत्पन्न करने की आदत के कारण जंगल समाप्त हो रहे हैं। वृक्ष पर्यावरण के लिए बहुत उपयोगी हैं। वो वायुमण्डल की हानिकारक गैस उज2 को सोखकर प्राणवायु ज2 पर्यावरण को देते है।

दाह संस्कार आदि में भी हम लकड़ी का उपयोग करते हैं और जंगलों को काटकर इस आवश्यकता की पूर्ति की जाती है। प्राचीन काल में यह सामाजिक आदत सही थी पर विज्ञान के विकास के कारण अन्य जरिए शवदाह के लिए उपलब्ध है। पर हम उसे नहीं अपनाते।

आदिवासी ग्रामीण क्षेत्र में अभी भी भोजन पकाने के लिए चूल्हें वह लकड़ी का उपयोग किया जाता है। चूल्हे बनाने की वही पुरानी आदत है। जिससे बहुत अधिक धुआँ उत्पन्न होता है। जो वायु प्रदूषण करता है। लकड़ी के उपयोग से जंगलों को भी हानि पहुँचती है। सरकार ने बहुत कोशिश की उन्हें चिमनी वाले चूल्हे में भोजन पकाना बताए लेकिन वो अपनी आदत नहीं बदल पाए जिसके कारण धुआँ बढ़ता ही गया।

जल प्रदूषण की सामाजिक आदत – जल स्नान करने के लिए सफाई के लिए, भोजन पकाने में वातानुकूलित यंत्रों के लिए काम में लिया जाता है। इन क्रियाओं के बाद अपशिष्ट जल को घरेलू बहिस्त्राव के रूप स्थानीय क्षेत्रों से प्रवाहित कर दिया जाता है। इस जल में सड़ी-गली सब्जियाँ एवं फल, चूल्हे की राख, घर पर कूड़ा-करकट, कपड़ों के अंश आदि मिश्रित होते हैं। यह मलिन जल खुली नालियों से होकर समीपी जल स्त्रोतों में मिश्रित होकर प्रदूषण फैलाता है।

गणेश व दुर्गा पूजा के समय इन देवी-देवताओं की बड़ी-बड़ी मूर्तियों की स्थापना की जाती है। उससे अनेकों प्रकार के पेन्ट लगाए जाते हैं। पूजा के बाद मूर्तियों को पानी में विसर्जित किया जाता है। जिससे पानी को प्रदूषित करते हैं। जिसके कारण पानी में ज2 घोलने की शक्ति प्रदान करती हैं। ऐसी

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ, जिला – देवास (म.प्र.) भारत

धार्मिक मान्यता है कि गंगा नदी में शव विसर्जित करना चाहिए और औंकारेश्वर में पूजा की सामग्री डालनी चाहिए। इस आदत के कारण भी जल प्रदूषित होता है।

कुँभ सिंहस्थ आदि के समय एक सीमित समय में इतनी बड़ी जनसंख्या स्नान करती है। पहले नदियाँ बहुत गहरी रहती थी तथा पानी का बहाव रहता था तथा जनसंख्या भी कम थी इस कारण पुण्य करने की सामाजिक आदत प्रदूषण नहीं फैलाती और एक सीमित जगह पर इतनी बड़ी जनसंख्या में नहाने से Septic Zone का निर्माण होता है और पानी प्रदूषित होता है।

दाह संस्कार, मुँडन आदि में भी नदी के किनारे बालों का मुँडन कराते है और यह बाल नदी के पानी में मिलकर उसे प्रदूषित करते हैं।

वायु प्रदूषण व सामाजिक आदत – ग्रामीण क्षेत्र में मल त्याग की प्रक्रिया खुले मैदानों में की जाती है, जहाँ गर्मी के कारण मल सूखता है व वायु को प्रदूषित करता है। अभी शौचालय की व्यवस्था होते हुए भी आदत के कारण व्यक्ति खुले मैदानों में जाते है।

तिरूपति में बच्चे से लेकर बूढ़े सब बाल उतारते हैं। पहले यह बाल यहाँ–वहाँ उड़ते रहते थे। क्योंकि वह खुली जगह फेंक दिए जाते थे। आज उनका औद्योगिक उपयोग शुरू हो गया है और बालों के उपयोग के लिए फैक्ट्री बन गयी हैं, जो अप्रत्यक्ष रूप से वायु प्रदूषण करती है।

नगरीय आदतें – नगरों में तेजगति का जीवन हैं। जनसंख्या का दबाव भी ज्यादा है। ट्रेफिक लाइट जब लाल बत्ती होती है। तब व्यक्ति रूकता है, लेकिन गाडीबंद नहीं करता, उसके कारण धुआँ उड़ता है जिससे वायु प्रदूषण होता है। इस आदत के कारण उज2 उज2 गैस आदि कई साँस संबंधी बीमारियों को जन्म देती है। इस प्रदूषण के कारण आज स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है। लेखक एरिक फॉन डेनिकेन ने अपनी किताब चेरिएटस ऑफ द गॉडस में लिखा कि कभी मंगल ग्रह में भी जीवन था किन्तु वहाँ के ओजोन परत के नष्ट होने से जीवन समाप्त हो गया। उसी तरह पृथ्वी की ओजोन परत के नष्ट होने से जीवन समाप्त हो गया। उसी तरह पृथ्वी की ओजोन परत नष्ट हो रही है। यदि उसे नहीं बचाया जाएगा तो यहाँ भी जीवन नष्ट हो जाएगा।

उपयोगितावादी आदतों की अपेक्षा हम शहर निवासी भोगवादी आदतों की तरफ जा रहे है। इस कारण हमारी आवश्यकता बढ़ती जा रही है, जो ऊर्जा का शोषण कर प्रदूषण विकसित करते हैं।

शहरों में स्थान की कमी के कारण हम ऊँची–ऊँची बिल्डिगों में रहते हैं। पॉलीथीन ने हमारे जीवन में एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया है। आज खाने–पीने से लेकर पहनने तक हर सामान पॉलिथीन की थैलियों में पैक किया जाता है। उपयोग के बाद यह थैलियाँ कहीं भी फेंक दी जाती है, जिसके कारण पर्यावरण प्रदूषण में सहायक बनती है। अभी जब मुंबई में भीषण वर्षा के कारण बाढ़ आयी, तब शोध से पता किया गया तो ज्ञात हुआ कि थैलियाँ जो फेंकी जाती है, उन्होंने पानी का निकास बंद कर दिया था। जिससे नालियाँ, तालाबों सभी जगह पानी रूक गया था। जिसके कारण इतनी बड़ी हानि उठानी पड़ी और बहुत व्यक्तियों का जीवन समाप्त हो गया। उपयोग के बाद यह थैलियाँ कहीं भी फेंक दी जाती है, जिसके कारण पर्यावरण प्रदूषण में सहायक बनती है।

उद्देश्य – व्यक्तियों की सामाजिक आदतों का जानना जो प्रदूषण में सहायक हैं और पर्यावरण को प्रदूषित करती है।

पद्धतिशास्त्र – क्षेत्र सांवेर ग्राम पंचायत जनपद पंचायत, सोनकच्छ में ग्राम गंजपुरा स्थित है जिसमें सामाजिक आदत के कारण पर्यावरण प्रदूषण ज्यादा पाया गया।

निदर्शन – गंजपुरा ग्राम की कुल जनसंख्या 2762 हैं। जिसमें महिलाएँ 1362 पुरूष 1400 हैं। इनमें से 50 व्यक्तियों पर अध्ययन किया गया जिसमें 35 महिलाएँ और 15 पुरूष हैं। यह अध्यापन उद्देश्यपूर्ण निदर्शन के आधार पर किया गया।

तथ्य संकलन के साधन –प्रश्नावली का निर्माण सामाजिक आदतों पर आधारित था जो सूचनादाता को वितरित करके उनसे आदतों के विषय में जानकारी एकत्रित की गयी।

तथ्यों का विश्लेषण –

सारणी क्र. 01

अपने घर में कचरा कहाँ फैकते हैं

फेंकते	संख्या	प्रतिशत	
बाहर	10	20	सामाजिक आदत के अनुसार कचरा
खिड़की	13	26	30 प्रतिशत कचरा पेटी में डालते है।
कचरा पेटी	15	30	लेकिन 26 प्रतिशत खिड़की के बाहर
सड़क पर	12	24	

सारणी क्र. 02

पूजा सामग्री कहाँ विसर्जित करते हैं

विसर्जन	संख्या	प्रतिशत	
नदी	20	40	पूजा सामग्री 40–40 प्रतिशत नदी
तालाब	20	40	और तालाबों और 20 प्रतिशत अन्य
अन्य	10	20	किसी भी स्थान पर डालने की सामाजिक आदत पाई गई।
योग	**50**	**100**	

सारणी क्र. 03

गणेशजी की प्रतिमा, माताजी की प्रतिमा कहाँ विसर्जित करते हैं

विसर्जन	संख्या	प्रतिशत	
नदी	30	60	प्रतिमाओं का विसर्जन 60 प्रतिशत
तालाब	15	30	नदी और 30 प्रतिशत तालाबों में
अन्य	05	10	डालने की सामाजिक आदत पाई गई
योग	**50**	**100**	

सारणी क्र. 04

क्या आप धूम्रपान करते हैं, हाँ–नहीं हाँ तो कहाँ

धूम्रपान	संख्या	प्रतिशत	
घर में	15	30	40 प्रतिशत धूम्रपान मित्रमण्डली के
बाहर	15	30	साथ और 30–30 प्रतिशत बाहर
मित्रमण्डली	20	40	धूम्रपान करते है।
योग	**50**	**100**	

सारणी क्र. 05

ट्राफिक लाल बत्ती होने पर वाहन चालू रखते हैं

उत्तर	संख्या	प्रतिशत	
हाँ	40	80	सिग्नल लाल होने पर 80 प्रतिशत
नहीं	10	20	व्यक्ति गाड़ी चालू रखने की सामाजिक आदत पाई गई।
योग	**50**	**100**	

सारणी क्र. 06

धार्मिक आयोजनों में माइक प्रयोग करते हैं

उत्तर	संख्या	प्रतिशत	
हाँ	45	90	धार्मिक आयोजनों में माइक का प्रयोग 90 प्रतिशत लोग करते हैं, जबकि 10 प्रतिशत नहीं।
नहीं	05	10	
योग	**50**	**100**	

सारणी क्र. 07

मुंडन संस्कार और मृत्यु उपरातंत बाल उतारकर कहाँ फैंकते हैं

विसर्जन	संख्या	प्रतिशत	
नदी 20		40	मुंडन और मृत्यु उपरांत बाल 40 प्रतिशत नदी में, 40 प्रतिशत तालाब और 20 प्रतिशत अन्य किसी भी स्थान पर डालने की आदत पाई गई।
तालाब 20		40	
अन्य कहीं भी	10	20	
योग	**50**	**100**	

सारणी क्र. 08

विभिन्न पारिवारिक आयोजनों में भोजन के बाद (दोना-पत्तल) का कचरा कहाँ फेंकते है

विसर्जन	संख्या	प्रतिशत	
जला देना	25	50	(दोना-पत्तल) का कचरा 50 प्रतिशत जला देना और 15 प्रतिशत कचरा पेटी में, 10 प्रतिशत अन्य किसी भी स्थान पर डालने की सामाजिक आदत पाई गई है।
कचरा पेटी	15	30	
अन्य स्थान	10	20	
योग	**50**	**100**	

सारणी क्र. 09

गुटका या पान की पींक कहाँ थूकते है

विसर्जन	संख्या	प्रतिशत	
कचरा पेटी	10	20	पान या गुटका थूकने की आदत 50 प्रतिशत रास्ते में, 30 प्रतिशत वॉश बेसीन में, 20 प्रतिशत कचरा पेटी में सामाजिक आदत पाई गई
चलते-फिरते रास्ते में	25	50	
वाश बेसीन में	15	30	

सारणी क्र. 10

फूल माला का प्रयोग जो विभिन्न आयोजनों में करते हैं, उनको कहाँ फेंकते हैं

विसर्जन	संख्या	प्रतिशत	
नदी	15	30	फूल-माला 50 प्रतिशत कहीं भी और 30 प्रतिशत नदी में तथा 20 प्रतिशत तालाब में फेंकने की पर सामाजिक आदत पाई गई।
तालाब	10	20	
किसी भी स्थान	25	50	
योग	**50**	**100**	

सारणी क्र. 11

वाहन की सर्विसिंग निर्धारित समय कराते है

उत्तर	संख्या	प्रतिशत	
हाँ	17	34	वाहन की सर्विसिंग 46 प्रतिशत समय पर नहीं कराते और 34 प्रतिशत सही समय पर सर्विसिंग कराने की सामाजिक आदत पाई गई
नहीं	23	46	
योग	**50**	**100**	

सारणी क्र. 12

बस या रेल में यात्रा करते समय खाद्य-पदार्थ का कचरा कहाँ फेंकते हैं

फेंकना	संख्या	प्रतिशत	
खिड़की से	38	76	खाद्य पदार्थ 76 प्रतिशत खिड़की से बाहर और 14 प्रतिशत बस या रेल के अंदर और 100 प्रतिशत कचरा पेटी में डालने की सामाजिक आदत पाई गई
कचरा पेटी	05	10	
बस या ट्रेन में	07	14	
योग	**50**	**100**	

सारणी क्र. 13

आतिशबाजी का प्रयोग करते है

	हाँ	नहीं	प्रतिशत
आतिशबाजी	84 प्रतिशत	16 प्रतिशत	100

सारणी क्र. 14

सामान लाते समय पॉलिथीन का प्रयोग करते है

उत्तर	संख्या	प्रतिशत	
हाँ	41	82	पॉलिथीन का प्रयोग 82 प्रतिशत
नहीं	09	18	लोग करते हैं, जबकि 18 प्रतिशत नहीं करने की सामाजिक आदत पाई गई।
योग	**50**	**100**	

निष्कर्ष - गंजपुरा ग्राम के महिलाओं और पुरूषों से विभिन्न प्रश्नों को पूछा गया, उसके आधार पर जो निष्कर्ष प्राप्त हुए उससे पता चलता है कि मनुष्य की सामाजिक आदतों के कारण जलवायु, ऊर्जा मृदा, सभी प्रकार का प्रदूषण फैलता है। इस लघु शोध से पता चलता है कि यदि आपकी आदतों को सुधारा जाए तो इस भयानक पर्यावरण प्रदूषण से मानव अपने जीवन को सुरक्षित रख सकता है। यदि उसने अपने सामाजिक आदतों को नहीं सुधारा तो शीघ्र इस पृथ्वी से मानव का नाम समाप्त हो जाएगा।

सुझाव - मानव को सुधारने का एक साधन है। नैतिकता से संबंधी शिक्षा का प्रचार करना और अमल करना। नैतिकता में जब परिवर्तन होगा तभी मनुष्य का विकास होगा।'जिओ और जीने दो' विकसित करना होगा। जागरूकता होना। कचरे को कचरा पेटी या उपयुक्त स्थान पर ही डालें। अभी सरकार ने 'स्वच्छ भारत अभियान' के तहत जगह-जगह गीला और सूखा कचरा एकत्रित करने के लिए कचरा पेटी लगवाई हैं, धीमे-धीमे आदतों में सुधार आएगा और यह देश पर्यावरण प्रदूषण से मुक्त होगा।

'सुजला, सुफला, शस्य-श्यामला धरती' इन महत्वपूर्ण पंक्तियों के जरिए इस देश और भूमि को बचाना है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शुक्ला शशि, तिवारी एन.के. - पर्यावरण एक परिचय।
2. सिंह सविन्द्र - पर्यावरण भूगोल।
3. टाक एल.एस. - हमारा पर्यावरण।
4. जाट बी.सी., गुर्जर आर.के. - पर्यावरण भूगोल।
5. डॉ. गुर्जर आर, डॉ. जाट बी.सी. - संसाधन एवं पर्यावरण।

नारी उद्धार मानव अधिकार

डॉ. ज्योति सक्सेना *

प्रस्तावना – ''अधिकार दिलाए कौन तुझे, यह तो लड़कर लेना होगा। जंजीरे जो पहनी तूने, तोड़ उन्हें बढ़ता होगा।''

दर्द का अपना पैमाना होता है, इस पैमाने पर अधिकार और कर्तव्य दोनों को ही परखा जाता है। दर्द अपनी आह प्रकट करता है और इस आह को अधिकारों एवं कर्तव्यों के माध्यम से ही हल किया जा सकता है।

मानव अधिकार ऐसे अधिकार हैं, जिनके हकदार सभी मनुष्य हैं – चाहे वे किसी भी देश, धर्म या जाति के हों, परन्तु इसके बावजूद भी आज हम, पूरे विश्व में, कहीं किसी ने किसी रूप में मान अधिकारों का हनन होते देखते हैं। हर कमजोर वर्ग कभी न कभी इसकी चपेट में आ ही जाता है। महिलाएं, विशेष रूप से भारतीय महिलाएं एक ऐसा मानव समूह है, जो अत्याचार से अत्यधिक रूबरू है। हमारे देश में बालिका की त्रासदी तक से ही प्रारम्भ हो जाती है। जब लड़की पैदा होने के भय से भ्रूण हत्याएँ होती है। यदि बालिका भ्रूण रूप में बच भी गई तब पैदा होने के समय से ही उसे उसके भाई के समान व्यवहार नहीं मिलता। हमारे भारतीय समाज में बेटा पाने की चाह परम्परावादी रही है।

महिला को बेटी के रूप में, बहू के रूप में तथा पत्नी के रूप में विभिन्न अत्याचारों व प्रताड़नाओं से गुजरना पड़ता है। महिलाएं हालांकि मानव आबादी का आधा हिस्सा है, लेकिन उन्हें जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उपेक्षा और भेदभाव का समाना करना पड़ता है। संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम द्वारा तैयार कराई गई 10वीं वार्षिक रिपोर्ट के अनुसार विश्व में सबसे बड़ा भेदभाव लिंग भेद हैं।

लिंग आधारित भेदभाव के पीछे हालांकि सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक स्वार्थ बताए जाते हैं, किन्तु इस तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता कि लिंग के आधार पर भेदभाव का बड़ा कारण यह है कि पुरूष और महिलाओं की भूमिकाओं में निरंकुश तरीके से विभाजन किया गया है। लिंग भेद तथा शोषण की प्रवृत्ति अपने चरम रूप में देखा जाता है, विडम्बना की बात है कि स्वयं उपेक्षितों ने लिंग संबंधी परम्पराओं, भेदभावों को चाहे–अनचाहे जीवन के एक अपरिहार्य तथ्य के रूप में अधिकतर स्वीकार कर लिया है।

21 वीं सदी में प्रवेश के साथ ही प्रत्येक क्षेत्र में परिवर्तन एवं विज्ञान तथा तकनीकी क्षेत्र में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त करने के साथ महिला अधिकारों को सुरक्षित रखने हेतु सरकार द्वारा भारतीय दण्डसंहिता फौजदारी धारा 498 के अंतर्गत महिला को परेशान करने, उस पर जुल्म करने, उसे परेशान करने वाला वातावरण निर्मित करने तथा उस पर हिंसा के खिलाफ दण्ड का प्रावधान है।

1. समान कार्य के लिए महिला एवं पुरूष को समान वेतन मिलेगा।
2. काम के स्थल पर हाजिरी देने के बाद महिला से यदि काम नहीं भी लिया जाए, तो भी वह वेतन पाने की अधिकारी होगी।
3. किसी भी प्रकार के गुनाह पर पूछ परख हेतु सूर्यास्त के पश्चात और सूर्योदय से पूर्व, महिला को पुलिस चौकी मे नहीं बुला सकेंगे। महिला अपराधी की देखभाल हेतु महिला पुलिस की व्यवस्था की जाएगी।
4. विधवा, परित्यक्ता स्त्री जो 18 वर्ष से बड़ी है वह बालक को गोद ले सकती है।
5. विवाह के समय लड़की की उम्र 18 वर्ष पूरी होनी चाहिए।
6. प्रचलित रीति–रिवाज के अनुसार वर–वधू यदि हिन्दू नहीं हो तो कोर्ट के प्रमाण पत्र के आधार पर विवाह किया जा सकता है।
7. हिन्दू विवाह नियम के अनुसार यदि पत्नी जीवित हो तो दूसरा विवाह नहीं किया जा सकता है।
8. विवाह के समय स्त्री को दिए गए सामान पर सिर्फ स्त्री का ही अधिकार रहेगा तथा यह स्त्रीधन कहलाएगा।
9. विवाह के 7 वर्ष के अन्दर यदि कोई स्त्री आत्महत्या करे तो उसकी मृत्यु के संबंध में कोर्ट यह मानकर चलती है कि उसकी मौत पति तथा ससुराल पक्ष के कारण हुई।
10. पति द्वारा शारीरिक या मानसिक अत्याचार किए जाने, पति धर्म परिवर्तन करे, सन्यास लेने, पागल हो जाने, अथवा भयंकर कुष्ठ रोग हो जाए तो स्त्री संबंध विच्छेद कर सकती है।
11. पति से अलग होने वाली कोई भी निराश्रित हिन्दू स्त्री पति से स्वयं का खर्च मॉगने का अधिकार रखती है, जो उसके अलग रहने के कारण उसे करना पड़ रहा है।
12. यदि पत्नी धर्म बदल ले अथवा व्यभिचारिणी हो तो पति से किसी भी प्रकार का खर्च मॉगने का अधिकार नहीं रखती है।
13. विधवा स्त्री पुनर्विवाह करने की अधिकारी है, परन्तु विवाह के बाद उसे पूर्व पति की सम्पत्ति का हक नहीं मिलेगा।
14. स्त्री की मर्जी के बिना, नशा करके अथवा मानसिक रूप से कमजोर स्त्री के साथ सम्भोग, बलात्कार है।

1. स्त्रियों को स्वयं के स्वतंत्र अस्तित्व को स्थापित करना होगा।
2. उनकी स्वयं की आर्थिक स्थिति में सुधार करना पड़ेगा।
3. स्त्रियों को स्वंय की रक्षा संबंधी नियमों की जानकारी प्राप्त करना होंगी।

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) कॅरियर कालेज ऑफ लॉ, भोपाल (म.प्र.) भारत

4. महिलाओं को अधिक से अधिक शिक्षित बनाना होगा तथा महिला शिक्षा संबंधी व्यापक प्रचार प्रसार करना होगा।
5. महिला दक्षता वृद्धि की भावना विकसित करनी होगी। समाज के नेता, शिक्षक, समाज सुधारक, विचारकों को स्वयं की कार्यकुशलता के आधार पर महिलाओं पर होने वाले अन्याय एवं अत्याचारों के विरूद्ध आवाज उठानी होगी।
6. महिला समस्याओं को लैंगिक समस्या के रूप में नहीं देखकर मानव अधिकार के संदर्भ में देखना होगा, क्योंकि स्त्री और पुरूष विश्व रचना के दो पहिए हैं। यदि इनमें एक पहिला बड़ा और दूसरा छोटा है, तो परिवार रथ के असन्तुलित होने का भय निष्चित ही होगा।

महिला अधिकारों का हनन रोकने, उन्हें समाजिक न्याय दिलाने तथा स्वाभाविक हक दिलाने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, राष्ट्रीय महिला आयोग, जैसी संस्थाओं का गठन किया गया है, जो महिलाओं को शोषण से मुक्त कराकर अधिकारों के प्रति जागरूक कर रही है।

महिला को जागरूक करने के लिए उत्तरोत्तर जागरूकता की जरूरत है। उनकी सृजनशील, प्रजातांत्रिक शक्तिशील स्वनिर्भर, खुश तथा सत्यम् शिवम् सुनदरम् के गुणों से युक्त बनाना होगा।

महिला सशक्तिकरण हेतु महिला को सशक्त बनाकर ही सशक्त रखा जा सकता है। सशक्त होने पर महिला समग्र विकास की भावना से स्वयं ही जुड़ जाएगी।

''अधिकार मुझे है, इतना तो कि यह उत्तर तो जाून।
कितना मेरी पीड़ा में साथ तुम्हारा मानू।। ''

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नारी सशक्तिकरण, डॉ. हरिदास रामजी शेंडे 'सुदर्शन'', प्रकाशक- ग्रन्थ विकास, सी 37 पंचवटी राजा पार्क आदर्श नगर जयपुर।
2. नारी सशक्तिकरण, डॉ. हरीदास रामजी शेण्डे (सुदर्शन) ग्रंथ विकास, सी-37 पंचवटी राजापार्क आदर्श नगर, जयपुर।

****

वैश्वीकरण के दौर में महिला उद्यमिता के अवसर एवं परिणाम

डॉ. निधि माहेश्वरी *

प्रस्तावना – वर्तमान में विश्व की विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं के मध्य व्यापार, पूँजी, सेवाओं और तकनीक ज्ञान के निरंतर आदान–प्रदान से विश्व का भूमण्डलीयकरण या वैश्वीकरण हो रहा है। वास्तव में वैश्वीकरण अग्रेंजी शब्द ग्लोबलाइजेशन का अनुवाद है। वैश्वीकरण से तात्पर्य है, सभी राष्ट्र बिना किसी प्रतिबंध सम्पूर्ण विश्व से वस्तुओं और सेवाओं का व्यापार कर सके। वैश्वीकरण के अंतर्गत भारत अन्य देशों से विदेशी व्यापार बढ़ाकर अपनी आर्थिक शक्ति को बढ़ाकर विश्व के अग्रणी देशों की पंक्ति में आ जाएगा।

भारत के पास वर्तमान में प्रशिक्षित मानव संसाधन, भौगोलिक संसाधन तथा जैव विविधता के साथ वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास के लिये सक्षम आधारभूत ढॉचा उपलब्ध है। किन्तु फिर भी भारत की मूलभूत समस्याएं गरीबी, बेरोजगारी, सामाजिक विषमता अभी भी समाप्त नहीं हुई है। विकासशील राष्ट्रों में अग्रणी होने के कारण भारतीय जनसंख्या इन समस्याओं से निपटने के लिए प्रयासरत् है। भारतीय महिलाऐं भी वैश्वीकरण की दशाओं से प्रभावित हुई है।

भारत में कुल जनसंख्या का 50 प्रतिशत भाग महिलाऐं है, विश्व की अन्य महिलाओं की तुलना में भारतीय महिलाऐं उद्यमिता के क्षेत्र में कुछ प्रतिशत पिछड़ी रही है। बसंत देसाई के शोध पत्र के अनुसार सन् 1988–89 में विश्व के 1.70 मिलियन उद्यमी में से भारतीय महिला उद्यमी मात्र 9.01 प्रतिशत ही थी।हमारी सामाजिक पृष्ठ भूमि एवं सांस्कृतिक विशेषताऐं महिलाओं में उद्यमिता की भावनाओं को विकसित होने से रोकती है। किन्तु आधुनिक परिवेश में महिलाऐं किसी मायने में पुरूषों से सर्वथा पीछे नहीं है। अतीत में जहॉ उसका जीवन केवल घर की चार दीवार तक ही सिमित था , एवं उसे स्तरहीन समझा जाता था, वहीं गतिशील समय की धारा में महिलाओं की स्थिति में अमूलचूल परिवर्तन निर्देशित हो रहा है। आज वैश्वीक स्तर पर विभिन्न क्षेत्रों में जैसे राजनैतिक, प्रशासनिक, समाजसेवा और उद्योग क्षेत्र में भी वे महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

संविधान के अनुच्छेद 15 में यह वर्णित है कि ''राज्य किसी नागरिक के विरूद्ध केवल धर्म, वंश, जाति,लिंग, जनसंख्या अथवा इनमें से किसी भी आधार पर भेदभाव नहीं करेगा''। आजादी के बाद नारी विकास पर विशेष बल दिया गया है, जहॉ तक इनके शैक्षिक वातावरण का प्रश्न हैं इसमें विशेष सुधार परिलक्षित होता हैं जहॉ स्वतंत्रता के समय महिलाओं की साक्षरता का प्रतिशत 6: था, वहाँ आज 54.6: तक पहुँच गया है। केरल भारत का सर्वाधिक साक्षरता वाला राज्य हैं, इसी कारण वहाँ महिला उद्यमिता का विकास भी हुआ हैं। **केरल राज्य सरकार** के द्वारा प्रकाशित आँकड़े यह बताते हैं कि महिला औद्योगिक इकाइयों की संख्या जो कि 1981 में 358 थी बढ़कर 1984 में 782 हो गई। महिला शिक्षा का ही परिणाम है कि केरल की महिलाऐं औद्योगिक क्षेत्र में प्रवेश कर रही हैं। इसी प्रकार महाराष्ट्र राज्य की महिलाऐं भी उद्यमिता के क्षेत्र में अग्रणी हैं। वर्तमान में नारियाँ जिन महत्वपूर्ण पदों पर आसीन है, वे पुरूषों की तुलना में कम बुद्धिमता का परिचय नहीं दे रही है। शिक्षा, खेल व्यवसाय, प्रशासन आदि संबंधी उत्तरदायित्व निर्वाह के साथ पुलिस अधिकारी, पायलेट आदि के दायित्वों को सम्भाल रही हैं। एक सर्वेक्षण के आधार पर यह स्पष्ट हुआ हैं कि विश्व के विकासशील देशों मे 50: अन्न का उत्पादन महिलाओं के ही सहयोग से होता हैं। भारत में भी कृषि के क्षेत्र में महिलाओं का योगदान कम नहीं हैं। एक सर्वे के अनुसार हरियाणा में महिलाएँ 9 घंटे कृषि कार्यों में सहयोग करती हैं। क्यूबा में 95: स्त्रियाँ पुरूषों के साथ कार्य करती है, वही अफ्रीका महाद्वीप में 50: पशुपालन का कार्य निश्चय ही महिलाओं द्वारा होता हैं।

खुले शैक्षिक वातावरण ने महिलाओं को साक्षार बनाया है, अपितु वे आर्थिक क्षेत्र में भी आगे बढ़ने लगी हैं। वर्ष 1990 के दशक में उद्यमिता के क्षेत्र में भी महिलाओं का पदार्पण सराहनीय हैं। वर्तमान में महिलाएँ अचार, पापड़, मसाला आदि उद्योगो में ही संलग्न नहीं हैं, बल्कि इलेक्ट्रिकल, इलेक्ट्रॉनिक्स इंजीनियरिंग संबंधी व्यवसायों में लगकर आर्थिक स्वालम्बन प्राप्त कर रही हैं। सामान्यत: जो महिलाएँ किसी उद्योग की स्थापना कर उसमें स्वयं की पूँजी विनियोजित करती हैं अर्थात् 51: पूंजी उस महिला की हों, वह उपक्रमी महिला द्वारा संचालित हो एवं उपकरण में कार्यरत कर्मचारियों में 50: महिलाएँ हो तो उन्हें महिला उद्यमी कहा जाता हैं। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री शूम्पीटर ने महिला उद्यमी को बडे ही सुन्दर ढंग से परिभाषित किया हैं। वे कहते हैं कि– ''वे महिलाएँ जो उद्योग क्षेत्र में नवप्रर्वतन का कार्य करती है और व्यवसाय का जोखिम वहन करती है, उसे आगे बढ़ाती है उन्हें महिला उद्यमिता की संज्ञा दी जाती हैं। महिला उद्यमी गुजरात में सोलर कूकर का उत्पादन कर रही हैं। उड़ीसा में T.V. Capacitors के निर्माण में लगी हुई हैं। श्रीमति सोमती मोररजी 'शिपिंग कार्पोरेशन' श्रीमति यमुताई क्रितोसकर 'महिला उद्योग लिमिटेड' श्रीमति नीता मल्होत्रा 'एक्सपोर्ट निर्यात' और श्रीमति शहनाज हुसैन ''हर्बल सौन्दर्य प्रसाधनों के निर्माण' क्षेत्र में विश्व में प्रसिद्ध हैं।

महिला उद्यमिता के क्षेत्र में शहनाज हुसैन एक ऐसा चिरपरिचित नाम है जो विश्वस्तर के महिला उद्यमियों में अपना स्थान रखती हैं। एक परम्परागत मुस्लिम परिवार की महिला ने Domestic Harbal Market में विश्व स्तर पर अपनी पहचान बनाई हैं। आज अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इनके उत्पाद मात्र

* विभागाध्यक्ष (समाजशस्त्र) सेवासदन महाविद्यालय, बुरहानपुर (म.प्र.) भारत

एक उत्पाद से शुरू होकर अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर निर्यात हो रहे हैं। लगभग 132 देशों में जिनमें मध्यपूर्व , दक्षिण,पूर्व , एशिया , आस्ट्रेलिया और सम्पूर्ण यूरोप के देशो में शहनाज हुसैन Group of Companys के उत्पाद बेचे जाते है । शहनाज हुसैन के स्वयं के शब्दों में '' मै भाग्य में विश्वास नहीं करती , फेल शब्द मेंरे शब्दकोष में नही है , मै कभी फैल नहीं हुई क्योंकि मैंने कभी कोशिश नहीं छोडी '' ।

1991 के प्रारम्भिक आर्थिक सुधारों से भारतीय अर्थव्यवस्था में पेशागत एवं प्रबंधकीय पदों पर महिलाओ की संख्या में वृद्धि हुई है । परन्तु उद्यमिता के क्षेत्र में अभी भी लिंग भेद पाया जाता है। पुरूषो की अपेक्षा महिलाओं में भौगोलिक गतिशीलता का अभाव पाया जाता है।

भारतीय ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि में वैज्ञानिक तकनीक के प्रयोग से उत्पादन बढा है । किन्तु मानवीय श्रम का कम उपयोग होने कारण बेरोजगारी भी बढी है । शहरी क्षेत्रो में शिक्षा की सुविधाओं के परिणामस्वरूप महिलाओ के आर्थिक सशक्तिकरण में वृध्दि हुई है । एक बड़ा परिवर्तन वैश्वीकरण के कारण यह हुआ है कि बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के प्रवेश से Knowledge Processing Out sourcing (KPO) अर्थात् वह प्रक्रिया जिसमें ज्ञान आधारित सेवाएँ जैसे ßÊÁÊ आदि दुसरे देशों से कराई जाती है । वर्तमान में बडी संख्या में विकसित देश अपनी अनेक ज्ञान आधारित सेवाएँ भारत से कराना चाहते है, क्योंकि ऐसा करना उनके लिऐ सस्ता होगा । परिणामस्वरूप श्रम की अंतर्राष्ट्रीय गतिशीलता भी बडी है । बहुत से उच्च शिक्षित भारतीय छात्र पश्चिमी एशिया , अमेरिका , खाडी और अरब देशों में हुए है,यह जानना भी महत्वपूर्ण है कि पिछले एक दशक में महिलाऐं भी शिक्षित होने के कारण अन्य राष्ट्रो में नौकरी करने में पीछे नहीं है, यह भारतीय नारी के स्वावलम्बन का परिणाम है ।

यद्यपि सरकार भी महिलाओ के उत्कर्ष के लिए प्रयासरत् है, महिलाऐं उद्यमिता के क्षेत्र में एक आत्मनिर्भर व सशक्त साधन के रूप में सामने आई है जिससे समाज में उनका सम्मानीय रूप प्रगट हो रहा है । अत: हम कह सकते है कि भारत ही क्या वरन् सम्पूर्ण विश्व में महिला उद्यमियों का उज्जवल भविष्य दिखाई दे रहा है । संविधान द्वारा स्त्री और पुरूषो को समानता का दर्जा दे दिया गया है तथा उन्हें कानूनी दृष्टि से भी बराबर के अधिकार प्रदान किए गए है । किन्तु समाज की यह विडम्बना रही है कि समान रूप से कदापि स्वीकार नहीं किया है । आज आवश्यकता इस बात कि है कि पुरूष व स्त्री में तादाम्य हो क्योंकि दोनों एक - दुसरे के पूरक है । दोनों को समय के बदलते परिवेश के अनुरूप अपने आपको भी बदलना होगा महिलाओं को भी चाहिए कि वे मार्ग में आने वाले अवरोधो का सामना करके स्वंय उनका निराकरण कर अनुकूल वातावरण बनाऐ । नैपोलियन बोनापार्ट ने नारी में निहित इन्हीं सम्भावनाओं को ध्यान में रखकर कहा था - मुझे एक योग्य माता दो , मै तुमको एक योग्य राष्ट्र दूँगा ''। अत : यह कहना सर्वथा उचित होगा कि आधुनिक समाज में नारी की भूमिका महत्वपूर्ण है। अब वे दिन दूर नहीं जब महिलाऐं अबला के स्थान पर सबला शक्तिस्वरूपा कहालाएगी।

वैश्वीकरण आने के फलस्वरूप उत्साही महिलाओं को उद्यमी बनाने का कार्य काफी चुनौती पूर्ण है । महिलाओं को उद्यमी बनाने के अवसर उपलब्ध कराने के लिए उनकी आवश्यकताओ को समझने की दिशा में सामाजिक बदलाव आया है । लेकिन यह भी सच है कि महिला उद्यमियों के लिए अनुकूल वातावरण तैयार हो जाने के बाद उन्हें भी वही परेशानियाँ झेलनी होगी जो पुरूष उद्यमियों को पेश आती है । लेकिन इन परेशानियों का सामना करने के लिए हमें शहनाज हुसैन , श्रीमती नीता मल्होत्रा ,श्रीमती यमुताई क्रितोसकर जैसी महिलाओं की और उन्मुख होकर उनसें प्रेरणा लेकर अपने लिए मार्ग प्रशस्त करना होगा । तभी वैश्विक स्तर पर भारतीय महिलाऐं अपनी पहचान बना पायेगी । अवसर प्राप्त होने पर महिलाओं में उत्कृष्ट वैज्ञानिक , इंजीनियर और डॉक्टर बनकर दिखलाया है । इसमें कोई संदेह नहीं कि वे श्रेष्ठ उद्यमी भी बनकर दिखा सकती है ।

वैश्वीकरण आने के फलस्वरूप भारत के स्थानीय बाजार एवं सम्पूर्ण परिवेश पर कई सकारात्क व नकारात्क प्रभाव पड़ेगे । लेकिन इन प्रभावों से डरने की बजाय हमें हमारे बाजार की गुणवत्ता बढ़ानी होगी और साथ ही हमारी सामाजिक , सांस्कृतिक धरोहर की रक्षा करनी होगी और इस वैश्वीयता का बड़ी ही दृढता के साथ सामना करना होगा ।

यह सत्य है कि वैश्वीकरण के जो भी विवरण हमें मिले है सौद्देश्यवादी (Teleological) नहीं है । ये सब विवरण निश्चित रूप से यह मानकर चलते है कि वैश्वीकरण एक ऐतिहासिक प्रक्रिया है, जिसका उद्देश्य एक सार्वभौमिक मानव समाज का निर्माण करना है । दुनियाभर की यह धारणा रही है कि किसी तरह सम्पूर्ण वसुधा को एक कुटुम्ब के सुत्र में बांध दिया जाए। उद्देश्य स्पष्ट हो जाने पर भी इस धारणा में द्वंद हैं, कहीं धूप है , कहीं छाया । इस प्रबंध को गिडेन्स ने भी स्वीकार किया है , उनका निष्कर्ष है कि वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप जो भी परिवर्तन आता है, वह समान नहीं होता है । वे लिखते है '' वैश्वीकरण एक द्वंदात्क प्रक्रिया है, यह इसलिए कि इसके कारण जो भी परिवर्तन आता है, कभी एक समान नहीं होता इसके परस्पर विरोधी अभिवृत्तियाँ होती है । '' ठीक है कि वैश्वीकरण में द्वंद निहित है , पर यह द्वंद अंत में चलकर किस यथार्थ या तात्विक स्वरूप को ग्रहण करता है। इसका अभी हमारे पास उत्तर नहीं है ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. S. Khanka 2008, Enterpreneurial development Tejpur UniversityAsam, SChand & Company Ltd. Ramnagar New Delhi - 110055
2. Jyoti Ghosh, Globalization and woming India some micro considerations.
3. एस.एल दोषी (2005) आधुनिकता उत्तर आधुनिकता एवं नव-समाजशास्त्रीय सिद्धांत, रावत पब्लीकेशन्स, सत्यम अपार्टमेंट जैन मंदिर रोड, सेक्टर 3, जवाहरनगर जयपुर एवं नई दिल्ली।
4. डॉ. डी.आर. सचदेव (2007) , भारत में समाज कल्याण प्रशासन, किताब महल एजेंसी, डॉ. सरोजनी नायडु मार्ग, ईला।
5. डॉ. जी.आर. मदन, परिवर्तन एवं विकास का समाजशास्त्र, विवेक प्रकाशन, 7-यु.ए., जवाहर मार्ग दिल्ली 7
6. Rajendra Sharma, Vipul Patel (2008) - Enterpreneurship development Davi Ahilya Prakashan Subhash Chowk Indore- 452002

****

घरेलू हिंसा और कानून

फरहत मंसूरी * डॉ. अर्चना गौर **

प्रस्तावना – यह शायद औरतों की नियति ही है कि उन्हें न केवल घर के बाहर भेदभाव और हिंसा का शिकार होना पड़ता है। घर के भीतर होने वाली हिंसा पति द्वारा (वैवाहिक हिंसा) भी हो सकती है और पति के अन्य रिश्तेदारों द्वारा (घरेलू हिंसा) भी। तस्वीर का दुर्भाग्यिपूर्ण पक्ष है कि पति के हाथों पिटने वाली अधिकांश महिलाएँ इसे अपनी नियति मान कर चुपचाप सब कुछ सहन करती रहती हैं।

पति के हाथों मार खाने की दुर्भाग्यिपूर्ण घटनाएँ सिर्फ हमारे देश में ही नहीं होती है, बल्कि दुनियाभर में यह अपराध होता है। पिछले दिनों पति के हाथों पिटने की अमानवीय प्रवृत्ति पर 'यूनिसेफ' द्वारा दुनियाभर के कुल 57 देशों में एक अध्ययन कराया गया जिसके नतीजे बेहद चौंकाने वाले हैं। पति द्वारा पत्नि की पिटाई के मामले में, दुनिया के 57 देशो में भारत 25वें स्थान पर है। यहाँ की पत्नियाँ, पति के हाथो मार खाने का ज्यादा विरोध नहीं करती है। इंडोनेशिया में 25 फीसदी, नेपाल में 23 तथा माली की 89 प्रतिशत महिलाएँ, पति से संबंध समाप्त कर लेने या घर छोड़ देने के मुकाबले पति के हाथों पिटने को ही उचित मानती हैं। पति के द्वारा पत्नी की पिटाई केवल अनपढ़ और निम्न तबके के लोगों के बीच ही नहीं है बल्कि पढ़ी-लिखी अत्याधुनिक युवतियाँ भी पति के हाथों पिटती हैं।

घरेलू हिंसा से महिलाओं को बचाने के लिए आवश्यक है कि घरेलू हिंसा अधिनियम 2006 को सख्ती से लागू किया जाए एवं समाज में और महिलाओं में जागरूकता लायी जाए।

उद्देश्य –

1. घरेलू हिंसा से तात्पर्य।
2. घरेलू हिंसा के कारण।
3. वैवाहिक हिंसा का समाधान।
4. घरेलू हिंसा निवारण कानून।

घरेलू हिंसा का सीधा सा अर्थ है, घर के भीतर महिलाओं के खिलाफ होने वाली हिंसा और मार-पिटाई। घरेलू हिंसा को वैवाहिक हिंसा भी कहा जाता है क्योंकि इसके दोनों पक्ष विवाह के बंधन में बंधे होते हैं।

घरेलू हिंसा एक व्यापक शब्द है, जिसे पारिवारिक हिंसा भी कह सकते है। इसमें सास, ससुर, देवर, ननद आदि द्वारा स्त्री (बहू) को सताना और मारना-पीटना भी शामिल है। इसके विपरीत वैवाहिक हिंसा अपेक्षाकृत एक संकुचित शब्द है जिसमें केवल पति-पत्नि के बीच होने वाली हिंसा को रखा जाता है। वैवाहिक हिंसा में पति द्वारा पत्नि के खिलाफ और पत्नि के द्वारा पति के विरूद्ध, दोनों प्रकार की हिंसाओं को सम्मिलित किया गया है। यह अलग बात है कि पत्नी द्वारा पति के खिलाफ की जाने वाली वैवाहिक हिंसा के मामले बहुत कम देखने को मिलते हैं। इसका कारण यह है कि स्त्रियों में पुरूषों की अपेक्षा आक्रामकता काफी कम पायी जाती है।

वैवाहिक हिंसा की प्रकृति पर प्रकाश डालते हुए गैसिल ने कहा है कि – 'वैवाहिक संबंधो में हिंसा होना एक सामान्य प्रक्रिया है।' लेकिन गैसिल के इस मत से सहमत नहीं हुआ जा सकता है क्योंकि बर्तनों को साथ रखने पर उनका खड़कना अनिवार्य नहीं है। यदि चार बर्तनों को कायदे से संभाल कर सजा कर रखा जाए तो जरूरी नहीं है कि वे टकराए ही। इसी प्रकार यदि समझदारी और सामंजस्य से काम लिया जाए तो वैवाहिक संबंधो को बिना हिंसा या प्रतिरोध के भी निभाया जा सकता है।

सन् 1973 में भारतीय लेखिका आशा श्रीवास्तव ने वैवाहिक हिंसा के आठ कारण बनाए है –

1. आर्थिक तनाव।
2. तनावग्रस्त यौन संबंध।
3. प्रेम विवाह के बाद रोमांस का बुखार उतरना।
4. जीवन स्तर में आया अचानक परिर्वतन।
5. किसी व्यक्ति की आत्म-अभिव्यक्ति को दबाकर रखना।
6. परवरिश का तरीका और बचपन का माहौल।
7. युगल द्वारा अपनी जिम्मेदारी से मुंह मोड़ना।
8. संबंधियों द्वारा उकसाना।

वैवाहिक हिंसा के विभिन्न रूपों और कारणो को जान लेने के बाद यह भी जानना जरूरी है कि इसे किस प्रकार रोका जा सकता है ?

1. परस्पर समायोजन करना।
2. विवाद की स्थिति में मध्यमार्ग अपनाना।
3. महत्वपूर्ण निर्णयों में जीवन साथी को भागीदार बनाना।
4. आपसी सामंजस्य बनाए रखना।
5. साथी की संतुष्टि को प्राथमिकता।
6. एक साथ रहने की कला का विकास।
7. परस्पर एक दूसरे का ख्याल रखना।
8. साझेदारी की कला का विकास।

यदि युगल परस्पर संबंधों में सामंजस्य बनाकर रखें, तो वैवाहिक हिंसा को काफी हद तक टाला जा सकता है। इसी प्रकार समायोजन द्वारा भी परस्पर संबंधों में मधुरता कायम रखी जा सकती है।

घरेलू हिंसा एक विश्वव्यापी समस्या है और दुनिया भर की महिलाएँ किसी न किसी रूप में इसका शिकार होती ही है। संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष की एक रिपोर्ट के मुताबिक भारत में 15 से 49 वर्ष की 70 प्रतिशत

* शोधार्थी (समाजशास्त्र) बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) राजमाता सिंधिया शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

महिलाएँ किसी न किसी रूप में, कभी न कभी घरेलू हिंसा का शिकार होती रही है।

घरेलू हिंसा को रोकने के लिए भारत सरकार ने सन् 2005 के अंत में 'घरेलू हिंसा निषेध कानून, 2005' को लागू करने संबंधी अधिसूचना जारी कर दी जिससे यह महत्वपूर्ण कानून पूरे देश में 2006 में लागू हो गया। महिला एवं बाल विकास मंत्रालय ने एक अन्य अधिसूचना भी जारी की जिसमें यह कानून लागू करने संबंधी नियम कायदो का उल्लेख है। घरेलू हिंसा संबंधी यह विधेयक अगस्त 2005 में संसद द्वारा पारित किया गया था और सितम्बर 2005 में राष्ट्रपति महोदय ने भी इसे अपनी संस्तुति प्रदान की। प्रारंभ में इस कानून के तहत महिलाओं को पति व बिना विवाह साथ रह रहे पुरूष और उसके रिश्तदारों के हाथों हिंसा से बचाने की बात कही गयी थी लेकिन बाद में पति की माँ, बहन तथा अन्य महिला रिश्तदारों को भी इसके दायरे में ले आया गया। कहा जा सकता है कि पहले यह सिर्फ वैवाहिक हिंसा को रोकने के लिए था लेकिन अब इसके द्वारा संपूर्ण घरेलू हिंसा को रोकने की बात कही गयी है।

घरेलू हिंसा निवारण कानून एक महत्वपूर्ण कानून है और इसके द्वारा घरेलू हिंसा को प्रभावी तरीके से रोका जा सकेगा। इस कानून में निम्नलिखित कृत्यो को अपराध घोषित किया गया है –

1. महिला का शारीरिक, भावनात्मक, आर्थिक या यौन शोषण करना या इसकी धमकी देना।
2. महिला को ताना मारना।
3. पुरूष द्वारा घर में महिला के स्वास्थ्य, सुरक्षा, जीवन और शरीर को कोई नुकसान या चोट पहुँचाना।
4. महिला को किसी भी प्रकार शारीरिक या मानसिक कष्ट देना या ऐसा करने की मंशा रखना।
5. महिला का यौन उत्पीड़न।
6. महिला की गरिमा व प्रतिष्ठा को ठेस पहुँचाना।
7. बच्चा न होने या पुत्र न होने पर ताने मारना।
8. महिला को अपमानित करना।
9. महिला की आर्थिक व वित्तीय जरूरतों को पूरा न करना।
10. महिला (पत्नी) को शारीरिक संबंध बनाने या अश्लील चित्र आदि देखने को मजबूर करना।
11. सेक्स के दौरान ऐसा कृत्य जिससे पत्नी को चोट पहुँचती हो।
12. दहेज न लाने के लिए प्रताड़ित करना।
13. महिला को गलत नाम से पुकारना और उसके बच्चो को स्कूल कॉलेज जाने से रोकना।
14. महिला या बच्चो को पीटना, धक्के मारना, घूंसे मारना।
15. महिला को आत्महत्या की धमकी देना।

इस कानून में एक महत्वपूर्ण प्रावधान यह भी है कि किसी लड़की को उसकी मर्जी के बिना विवाह के लिए मजबूर करना भी अपराध होगा। यदि लड़की अपनी पसंद के किसी व्यक्ति विशेष से विवाह करना चाहती है तो उसे रोकना भी कानूनन जुर्म होगा। इसके अलावा महिला को नौकरी करने से रोकना या फिर उस पर नौकरी छोड़ने के लिए दबाव बनाना महिला या बच्चों के किराए के मकान का किराया न देना, घरेलू समान या घर के किसी हिस्से का उपयोग करने से रोकना, महिला व बच्चों को उनके ही वेतन को खर्च न करने देना, महिला की नौकरी में किसी प्रकार की बाधा पहुँचाना तथा महिला व बच्चों को जीवन–निर्वाह के लिए धन, रोटी, कपड़ा व दवाई आदि उपलब्ध न कराना भी अपराध माना जाएगा।

इस कानून के प्रावधानों का उल्लंघन करने को संज्ञेय और गैर–जमानती अपराध माना जाएगा। दोषी पाए जाने पर एक साल की सजा या 20 हजार रूपये का जुर्माना या दोनो सजाए साथ–साथ दी जा सकती है। कानून में पीड़ित महिला की मेडीकल जाँच, कानूनी सहायता, सुरक्षा व छत मुहैया कराने का काम करेंगे, स्पष्ट है कि इस कानून में घरेलू हिंसा को रोकने के लिए बेहद सख्त प्रावधान किए गए है। लेकिन वास्तविकता यह है कि मात्र कानून बना देने से ही महिलाओं को घरेलू हिंसा से मुक्ति नहीं मिल पाएगी। इस समस्या का समाधान तभी संभव है, जब पुरूष और महिलाएँ दोनों मिलकर प्रयास करे। इस कानून में प्रावधान किया गया है कि प्रत्येक जिले में कम से कम एक संरक्षण अधिकारी अवश्य नियुक्त किया जायेगा। कोशिश की जाएगी कि यह अधिकारी यथा संभव महिला ही होगी। सवाल है कि इतनी बड़ी संख्या में संरक्षण अधिकारी आऐंगे कहाँ से। महिलाओं के बीच जागरूकता का अभाव भी इस कानून की सफलता की राह का सबसे बड़ा रोड़ा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. नारायणी नारायण प्रकाश, मानवधिकार एवं महिलाएं, सब लाइम पब्लिकेशन जयपुर, 2005
2. सुरेश चन्द जैन, महिला अधिकार कानून, तुलसी साहित्य पब्लिकेशन मेरठ ।
3. सिंह निशांत, महिला विधि, राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली ।

****

गर्भपात महिला अधिकार एवं कानून

डॉ. ज्योति मेहता *

प्रस्तावना – पिछले कुछ दशकों में अनुप्रयुक्त नीतिशास्त्र के क्षेत्र में हुए विकास ने गर्भपात, इच्छा मृत्यु, आत्महत्या जैसे विषयों को प्रमुख रूप से समाज में विश्लेषण के लिए ध्यान आकर्षित किया है। गर्भपात एक ऐसा विषय है, जो सामाजिक, धार्मिक, मनोवैज्ञानिक एवं दार्शनिक सभी क्षेत्रों से विश्लेषण की अपेक्षा रखता है। सरल शब्दों में गर्भपात को भ्रूण की इच्छापूर्वक समाप्ति के रूप में समझा जा सकता है। गर्भपात से जुड़ा विवाद मुख्यत: एक स्वायत्ता (माता) का अपने शरीर व जीवन के स्वरूप के चयन का अधिकार व एक संभाव्य व्यक्ती (भ्रूण) का '**जीवन का अधिकार**' से जुड़ा है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट के अनुसार दुनिया में हर रोज 1.25 लाख गर्भपात होते है। भारत में आर.टी.आई से मिली जानकारी चौंकाने वाली व चिंताजनक है। हमारे यहाँ विवाह के लिए लड़के की उम्र 21 वर्ष और लड़की की उम्र 18 वर्ष निर्धारित है। लेकिन इंटरनेट और सोशल नेटवर्किंग साइट ने सेक्स को सुलभ बना दिया है। जिसके परिणामस्वरूप गर्भपात कराने वाली छोटी उम्र की लड़कियों की संख्या बढ़ी है।

भारत में विशेषकर महानगरों में छोटी उम्र की लड़कियों द्वारा गर्भपात कराने के मामले में 67 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है। वर्ष 2014–15 मे जिन 31,000 महिलाओ ने गर्भपात कराया उनमें 1600 की उम्र 19 साल से व 186 की उम्र 16 साल से कम थी।

15 से 19 साल की लड़कियों द्वारा गर्भपात कराए जाने के मामले मे विगत साल की तुलना में 47 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

भूमंडलीकरण के इस युग में हम किसी भी समस्या को सर्वथा अलग व विश्व से कट कर नहीं समझ सकते। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा महिला के प्रजनन संबंधी अधिकारों को एक मानवाधिकार के रूप में पहचान दी है।

चयन समर्थकों का तर्क है कि चूंकि भ्रूण का अस्तित्व पूर्ण रूप से महिला की शरीर पर निर्भर करता है और किसी भी महिला को अपने शरीर पर सम्पूर्ण अधिकार है। इसलिए उनके पास गर्भपात चयन करने की पूर्ण स्वतंत्रता होनी चाहिए।

इसके अतिरिक्त उनके सामाजिक कारण जैसे विवाह पूर्व संबंधों के कारण अथवा बलात्कार के फलस्वरूप धारण किया गया गर्भ को नष्ट करना शामिल है। इन परिस्थिति में सामान्यत: माँ व बच्चे दोनों ही के लिए समाज में सम्माननीय स्थान प्राप्त करना कठिन है। इसके अतिरिक्त व्यक्तिगत कारण भी हो सकते है जैसे माता पिता की आर्थिक स्थिति ऐसी न हो कि वे एक अतिरिक्त बच्चे की जिम्मेदारी ग्रहण कर सके या गर्भधारण से स्त्री के स्वास्थ्य पर किसी प्रकार की असामान्यता हो जो भविष्य में एक स्वस्थ मनुष्य के रूप में विकसित होने में बाधा पहुँचाए।

उपरोक्त परिस्थितियों मे किसी महिला को गर्भपात के अधिकार से वंचित रखना उस महिला को एक सामाजिक व मानसिक त्रासदी पहुँचाना है।

प्राय: सभी धर्म हिन्दू , इस्लाम, ईसाई व बौद्ध जैन धर्म गर्भपात को जीव हत्या के रूप में देखते है और इसे पाप या अशुभ की श्रेणी में रखते है। इसके अनुसार प्रत्येक जीवन ईश्वर की देन है और माता का भ्रूण पर सम्पुर्ण अधिकार नहीं होता वह तो साधन मात्र है। इसलिए स्वयं ईश्वर द्वारा दिए गए जीवन को नष्ट करने का अधिकार उसे नहीं है। गर्भपात को निर्दोष जीव से उसके जीवन का अधिकार छीनने की प्रक्रिया के रूप में देखा गया है।

दार्शनिक दृष्टी से इस विषय का महत्व व्यक्तित्व की अवधारणा से जुड़ा है जब हम स्त्री के अधिकार के विपरीत भ्रूण के अधिकारों की बात करते है तो यहाँ यह तय करना आवश्यक है कि क्या हम भ्रूण को व्यक्ति की श्रेणी में रख सकते हैं ? हालांकी जीवन की उत्तपत्ति भ्रूण के विकास के किस चरण में होती है, इसे लेकर मतभेद है।

व्यक्तित्व को बौद्धिकता, चेतना, आत्म सजगता व सम्प्रेषण की क्षमता जैसे विषयों के माध्यम से समझा जा सकता है।

कानून: लैटिन अमेरिका के साथ देशों और यूरोप मे गर्भपात पूरी तरह से प्रतिबंधित है, जबकि कनाडा में महिलाओं को स्वेच्छा से गर्भपात कराने की छूट है। आयरलैंड, चिली और पराग्वे जैसे ईसाई बहुल राष्ट्रों में गर्भपात तब तक गैरकानूनी है जब तक की माँ की जान को खतरा नही है। चीन में 6 माह के गर्भ को गिराया जा सकता है।

वही भारत में गर्भपात को एक सीमा रेखा तय कर वैध करार दिया है। मेडिकल टर्मिनेशन ऑफ प्रेग्नेंसी वर्ष 1971 कर तहत 12 सप्ताह तक के गर्भ को डॉक्टरी देख–रेख और उसकी सलाह के बाद ही गिराया जा सकता है। वही 20 से 24 सप्ताह के दौरान 2 चिकित्सकों की आपसी राजामंदी से यह सिद्ध होने पर ही प्रेगनेंसी गर्भवती के लिए मृत्युकारक हो सकती है या अजन्मा बच्चा भविष्य मे विकलांग या मानसिक रूप से विक्षिप्त हो सकता है, पर ही गर्भपात की अनुमति है।

गर्भपात का स्वास्थ्य पर प्रभाव: चिकित्सकों की राय में किसी भी परिस्थिति में गर्भवती के स्वास्थ्य के लिए यह घातक है। चिकित्सकों के अनुसार गर्भपात करने के बाद अक्सर देखा गया है कि दो बार प्रेगनेंसी डिटेक्ट नहीं हो पाती। वही कई बार यूट्रस संबंधी बीमारियों का सामना करना पड़ता है। बार बार गर्भपात कराने से गर्भाशय की दीवार बेहद पतली हो जाती है जिसके फटने से महिला की मौत हो सकती है। ऐसे बहुत से केस प्रत्यक्ष उदाहरण है जिसमें गर्भपात के दीर्घकालिक दुष्परिणाम आए हैं। गर्भपात की समस्या हमारे वास्तविक जीवन से सीधा संबंध रखती है।

* प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने राष्ट्रपति बनने से पूर्व गर्भपात कराने वाली महिलाओं को सजा देने की बात कही थी। उसी तरह से महिला और बाल विकास मंत्री मेनका गांधी ने गर्भपात खासकर गर्भ में लड़कियों की मौत रोकने के लिए भ्रूण के लिंग का पता लगाने का सुझाव दिया था। लिंग पात कर उसे रजिस्टर कराना चाहिए। इसके बाद अंत में यह देखा जा सकेगा कि बच्चा पैदा होता है या नहीं।

उपरोक्त संदर्भ में कुछ लोग इसे महिलाओं के प्रति कुंठित मानसिकता और उनकी आजादी पर रोक लगाने वाला मान रहे हैं, तो वहीं कुछ लोग इसे महिलाओं के लिए सुरक्षा और लिंगानुपात को कम करने वाला बता रहे हैं।

वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम 2015 इंडेक्स के मुताबिक भारतीय महिलाओं की स्थिति गत वर्षो के मुकाबले काफी सुधरी है कुल 145 देश के वैश्विक जेंडर गैप इंडेक्स में भारत 114 वें स्थान से ऊपर उठकर 108 वें स्थान पर आ गया है।

निष्कर्ष प्रकृति द्वारा प्रजनन की क्षमता महिलाओं को प्रदान की गई है। परंतु होने वाले बच्चे के प्रति माता व पिता दोनों का उत्तरदायित्व व अधिकार है। परंतु वर्तमान में जहां कुछ महिलाएं प्रजनन जैसे नैसर्गिक अधिकार को कार्य में बाधा के रूप में देखती है, ऐसे में गर्भपात के निर्णय में पिता के पक्ष पर भी विचार किया जाना आवश्यक है।

कम उम्र में लड़कियों द्वारा गर्भपात कराने के मामले में सरकार को इंटरनेट और सोशल नेटवर्किंग वेबसाइट जिसमें सेक्स को किशोर किशोरियों के लिए सुलभ बना दिया है परंतु सरकार को इस विषय में कड़े कानून बनाकर ऐसी वेबसाइट पर रोक लगाने की आवश्यकता है।

गर्भपात के आलोचकों के अनुसार गर्भपात को न्यायसंगत बनाने से ऐसे मामलों में वृद्धि हो सकती है। जहां पुरुषों द्वारा स्त्रियों को भोग्या के रूप में देखा जाता है। इसके अतिरिक्त महिलाओं के लिए भी अपने यौन सुरक्षित एवं कर्मो के प्रति उत्तरदायी होने की बात कही गई है, जो एक सामाजिक एवं नैतिक सामाजिक परम आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. महिला विधि भरती - 210
2. गर्भ का चिकित्सकीय समापन अधिनियम 1971

****

महिला सशक्तिकरण एवं स्वयं सेवी संगठन

नवनीता तिवारी *

प्रस्तावना – नारी एक पहलू हैं जिसके बिना किसी समाज की रचना संभव नहीं है। समाज में नारी एक उत्पादक की भूमिका निभाती है। नारी के बिना एक नए जीव की कल्पना भी नहीं कर सकते अर्थात् नारी एक सर्जक है, रचनाकार है। फिर भी इस पितृसत्तात्मक समाज में उसे हीन दृष्टि से देखा जाता है। इसे विडम्बना ही कहना चाहिए कि जिस देश में ''यत्र नार्यस्तु पूजयन्ते' कहकर नारी के सर्वत्र अभिवंदनीय माना जाता रहा उसी भारत में नारी को एक लम्बे अरसे तक भयंकर कारूणिक स्थितियों से गुजरना पडा।

महिला सशक्तिकरण का अर्थ सिर्फ महिलाओं द्वारा अर्थ अर्जन कर पारिवारिक आय में बढत करने से ही नहीं है वरन अनिवार्य रूप से महिलाओं की स्थिति सुधार से भी है। नारी में सामर्थ, आत्म चेतना और विश्वास जाग्रत करने से है। स्वयं सेवी संगठनों ने पिछले दशक से महिला कार्यक्रमों को वेग प्रदान करने तथा उन्हें नई दिशा देने के क्षेत्र में अत्यधिक योगदान दिया है।

स्वयं सेवी संगठनों द्वारा जहां महिलाओं के लिए जागरूता कार्यक्रम चलाए वही उन्हें प्रशिक्षण देकर रोजगार के अवसर भी उपलब्ध करवाए व वृहत्त बाजार भी उपलब्ध कराया। साथ ही साथ लघु भारती निगम, जिला पंचायत, डुडा, बैंक ईत्यादी के द्वारा उन्हें लोन दिलवाकर उन्हें आर्थिक रूप से सक्षम बनाने का मुख्य कार्य किया। यदि महिलाएं आर्थिक रूप से निर्भर होगी तो उनमें निर्णय लेने की क्षमता का विकास हो सकेगा। जीवन के गुणवत्ता संबंधी तत्वों पर ध्यान देकर आर्थिक विकास में अपनी भागीदारी सुनिश्चित करेगी।

आज भारतीय समाज में महिलाओं की तस्वीर बदल रही है। राजनैतिक एवं सामाजिक प्रतिबध्दता ने ऐसे वातावरण का निर्माण कर दिया है। जिसमें महिलाएं अपने को स्वतंत्र महसूस कर रही है। उनसे जुडे विभिन्न, उपबंधों, अधिनियमों और योजनाओं ने उनके लिए जहां शिक्षा के नए अवसर प्रदान किये है। वहीं रोजगार के नए अवसर भी बढाएं है। प्रत्येक स्तर पर महिलाओं की क्षमता को स्वीकार किया जा रहा है। संवैधानिक उपबंधों ने महिलाओं को बराबरी का हक दिलाया तो अधिनियम ने उन्हें संरक्षण प्रदान किया। सामाजिक जीवन के मूल्यों में बदलाव आने से एक सकारात्मक प्रभाव परिलक्षित हो रहा है। ऐसे में महिलाओं के दायित्वों की रूपरेखा भी नए परिवेश के साथ बदल रही है।

शायद ही आज कोई क्षेत्र ऐसा हो जहाँ महिलाएं अपनी उपस्थिति का आभास न करा रही हो। सरकारी एवं स्वयं सेवी संगठन स्तर पर विगत छ: दशकों के प्रयास पुरूषों के नजनिये में बदलाव लाने में काफी हद तक सफल हुए है। फिर चाहे वह बदलाव बाध्यकारी नीतियों से या जागरूकता से ही क्यों न आ रहे हो। सामाजिक परिदृश्य में महिला मजबुर नहीं मजबुत नजर आ रही है। अपने एवं परिवार से सम्बंधित निर्णयों में वह काफी हद तक केन्द्रीय भूमिकाओं का निर्वहन कर रही हैं। महिला अधिकारों ने ऐसी प्रक्रिया को जन्म दे दिया है। जिसमें वे संगठित होकर अपने सतत विकास को प्राप्त कर रही है।

शिक्षा का स्तर बढा है, तो काम काजी महिलाओं की संख्या भी बढने लगी है। स्वयं सेवी संगठनों के द्वारा महिलाओं को उनकी क्षमताओं से मजबुती के साथ अपने अस्तित्व का आभास भी कराया है। कामयाबी ही नई–नई मिसालें बन रही महिलाएं सशक्तिकरण के उदाहरण है। प्रत्येक स्तर पर उनकी आवाज को पहचान मिल रही है। इन अधिकारों की बदोलत सामाजिक बदलाव में महिलाओं के प्रति संवेदनशीलता बढ़ी है, जिसको पुरूष स्वीकार भी कर रहे है। बावजूद इसके महिला अधिकार और सशक्तिकरण भारतीय समाज की आवश्यकता है। स्वयं सेवी संगठनों के जागरूकता कार्यक्रम के द्वारा यह बात कही गई कि किसी एक वर्ग को दबाकर विकास को प्राप्त नहीं किया जा सकता। महिलाएं हमारे समाज का हिस्सा है, उनकी तरक्की को किसी भय या शंका के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए। दोनों वर्गो का दायित्व एक दूसरे के प्रति सम्मान और विश्वास को बढावा देना चाहिए। जहां पुरूष मानसिकता में बदलाव की आवश्यकता हैं वहीं महिलाओं को बदलते परिवेश में उन दायित्वों का निर्वहन करना होगा जो अभी तक पुरूषों के लिए निर्धारित थे। महिलाओं के लिए यह राह मुश्किल अवश्य है किन्तु नामुमकिन नहीं ।इस राह में सहायक भुमिका का निर्वन स्वयं सेवी संगठनों द्वारा किया जा रहा है।

स्वयं सेवी संगठनों द्वारा यह ज्ञात किया गया है कि आधुनिकता के वर्तमान युग में समाज में महिलाओं की स्थिती का परिदृश्य एक और तो उत्साह जनक हैं तथा महिलाएं पुरूषों से कंधे से कंधा मिलाकर कार्य करती नजर आ रही है। परन्तु दुसरी और आज भी लाखों महिलाएं गरीबी शोषण उत्पीड़न और सामाजिक उपेक्षा के कारण दयनीय जीवन व्यतीत करने को अभिशप्त है। स्वयं सेवी संगठनों द्वारा इन द्वितीय श्रेणी की महिलाओं के उद्धार के लिए अथक प्रयास किये जा रहे है। स्वयं सेवी संगठनों द्वारा इन महिलाओं को समाज की मुख्य धारा से जोड़ने का कार्य किया जा रहा है।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि स्त्रियां इतनी उन्नति कर चुकी है कि अब शायद ही कोई इसलिये उनकी अनदेखी करें की वे स्त्रियां है। देश के स्थायी संतुलित व समन्वित विकास में महिलाओं की भागीदारी आवश्यक है। इसलिए महिलाओं को उचित सम्मान और हर क्षेत्र में समान अवसर प्रदान करना जरूरी है। महिलाओं का सामाजिक विकास और आर्थिक व राजनैतिक

* शोधार्थी (समाजशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

क्षेत्र में पर्याप्त भागीदारी सामाजिक न्याय व समावेशी विकास को स्थायी व अर्थपूर्ण बनाने के लिए जरूरी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शर्मा प्रज्ञा : भारतीय समाज में नारी, पाइन्टर पब्लिषर्स जयपुर-2001
2. नाटाणी प्रकाश नारायण ,ज्योती गौतम: (पेज न. 36 लिंग एवं समाज, रिसर्च पब्लिकेशन जयपुर (नारीवादी विचारों की उत्पत्ति)
3. डॉ. नरेन्द्र शर्मा कुसुम : मीलों मुझको चलना है-पेज न. 19
4. डॉ. शकुंतला वैश्य : महिला सशक्तिकरण: - प्रमुख चुनौतियां एवं संभावनाएं पेज न. 30 भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिती का परिदृश्य

****

Technique of Narration in R K Narayan's "Annamalai"

Dr. Manisha Verma *

Introduction - "Annamalai," one of the most anthologized short stories of R K Narayan. It is also the story of a servant and the delineation of the character owes much to the reactions and perceptions of the master who is also the narrator of the story. In the light of the views of Percy Lubbock who takes the 'whole intricate question of the method in the craft of fiction' to be 'governed by the relation in which the narrator stands to the story,' (Lubbock251) it is easy to assert that the narrator of the story bears an unusual relation with the protagonist and it is this strain of the relation between thes two that the essential fictive value of the narrative is worked out. It is the narrative structured around a single character who is a gardener in the house of the narrator. The story is essentially a first person narrator and the narrator offers a sharp and scintillating contrast to the protagonist-Annamalai and helps us perceive the finer details of the character of the protagonist.

"Annamalai" Draws a very close parallel with "A Breathe of Lucifer". Both the stories are knit around the servants with unpredictable temperament. They share a number of common characteristics with each other. Likewise the first person narrators in both the stories are the masters of these servants enduring their whims and eccentricities. The views of N C Soni and H C Trivedi capture our attention. They put forth the idea of comparability that subsists between the two narratives and say;

"Annamalai" and "A Breathe of Lucifer" deal with two simple, uneducated, sincere hard working, faithful servants. Annamalai is a household servant. Sam is a Christian male nurse or attendant. Bothe leave the scene rather too abruptly. There is something fierce as well as soft about them. They serve their master with scrupulous care throught. But both are governed by their own impulses and leave their master in the end in an unceremonious way. Their company and conversation inspire their masters to narrate the story. (Atmaram, 191)

The narrative opens with a profound revelation of the technique of narration employed by the author. The use of first person pronouns-'I' and 'me' make it clear that the story teller is a first person 'dramatized' narrator (Booth152). The technique of narration also captures our attention due to sudden and subtle intervention of the epistolary method. 'I had deciphered and read out to Annamalai, says the narrator, 'on an average one letter every month for a decade and half when he was gardener, watchman and general custodian of my property at New Extension.' (Narayan, "Annamalai" *Under the Banyan Tree and Other Stories*, 117) The action of the story owes its birth and life to the memories evoked in the mind of the narrator after reading the letter of the protagonist. The revelation begins, when after the formal reading, the narrator comes to know the real purpose of writing the letter that Annamalai is 'weak, decrepit and in bed, and need money for food and medicine.'(Narayan, "Annamalai" *Under the Banyan Tree and Other Stories*, 118) The narrative is structured on the pillars of paradoxes. The two principal characters- the narrator and Annamalai, are at sharp contrast with each other. The narrator goes on assembling the events that owe their origin to the memory. The violent self contradictions in the gardening methods of Annamalai go on intensifying the paradoxical suggestions in the narrative. The narrator protested when the Tacoma hedges 'bordering the compound developed into green rampart, shutting off the view in every direction.' The narrator confides that Annamalai would not immediately contradict him but speaks sternly to 'think of them,' furnishing the reason that a plant cut in summer will die at roots,' and if reminded in rain, he is ready with another excuse that 'if a plant is trimmed in rain it rots.' The narrator further confides that Annamalai, at a sharp contrast with previously furnished excuses, 'one day, irrespective of his theories, he would arm himself with a scythe and hack blindly whatever came within his reach, not only the hedge I wanted to be trimmed but also a lot of others I wanted to keep.' (Narayan, "Annamalai" *Under the Banyan Tree and Other Stories*, 131) It is important to note that the character of Annamalai is a flat character who despite unpredictability and paradoxes, is 'constructed around,' as E M Foster says, 'a single idea or quality.' (Forster73) It is further noticeable that the narrator of "A Breathe of Lucifer" is enduring temporary blindness as his eyes are bandaged for about a week. If the narrator of "A Breathe of Lucifer" is suffering from temporary blindness, the narrator of "Annamalai" has a more severe problem before him. He helplessly realizes that and confesses that 'the only way to exist in harmony with Annamalai is to take him as he was.' He further confesses that 'to improve or to enlighten him would only exhaust the

* Guest Faculty (English) Govt. College, Tendukheda, Distt. Narsinghpur (M.P.) INDIA

reformer and disrupt nature's design.' (Narayan, "Annamalai" *Under the Banyan Tree and Other Stories*, 133) There are a number of incidents that illustrate different aspects of the character of the protagonist. Rustic humor is one of the eye catching aspects of the character of the protagonist. The tailor incident is also of great revealing significance. The protagonist admits that this incident ended their association. The narrator in this part of the story advances with antithetic tonal variations; that of the narrator who is conscious and curious and that of the protagonist who is spontaneous and confident. This part of the narrative also brings into being a piece of epistle which brings into being which excites the curiosity of the narrator and paves way for the advancement of the action. The letter enshrines information that 'the tailor has sold his machine to another tailor and has been decamped.' The narrator informs that the protagonist's animosity softens after reading the letter but in a very unpredictable manner, he says that he doesn't 'care for them.' He also reacts in a very abrupt manner and says; 'What shall I do now? The rascal has been decamped.' (Narayan, "Annamalai" *Under the Banyan Tree and Other Stories*, 139) Annamalai's rationalization of the situation caused by the decamping of the old tailor and his replacement by a new one who is also 'son of a wrestler,' is another masterstroke depicting the character of the protagonist, he says that if his brother 'has no place to sleep in, let him remain awake.' (Narayan, "Annamalai" *Under the Banyan Tree and Other Stories*, 140) It is this unpredictability of the protagonist that results into the further precipitation of the action escalated through dramatic interactions between the protagonist and narrator, thus, enhancing the importance of dialogues in the narrative. The climax is also a corollary of the impulsive and unpredictable behavior of the protagonist. The narrator confides;

One week later, one morning, I heard the sound at the gate; noticed him standing outside, his trunk and gunny sack stuffed with odds and ends on the ground at his feet he wore a dark coat, which he had preserved for occasions, a white dhoti and a neat turban on his head. He was nearly unrecognizable in this garb. He said, 'I am going by eight o'clock train today. Here is the key of your basement room.' He then threw open the lid of his trunk and said, 'See if I have stolen anything of yours but that lady calls me a thief. I am not a rascal.'

It is further noticeable that the climax of the narrative draws a sharp contrast with the expository part of it. When the narrator, at the time of the protagonist's departure stops him for giving money and goes back to bring money for him, he finds that Annamalai 'was gone' when he returns with a ten rupee note. (Narayan, "Annamalai" *Under the Banyan Tree and Other Stories*, 140)

"Annamalai" is thus a complex narrative in which the author employs first person autobiographical narrator to tell the story. The most eye-catching aspect of the narrative is that the narrator is fully dramatized and confidently narrates about the various aspects of the character of the protagonist-Annamalai, who is his gardener. The speeding train of autobiographical narration enjoys subtle intervention of the epistolary technique. It is further noticeable that the epistles also serve to escalate the action to the unpredictable denouement, and, at the same time, these epistolary pieces also serve to unfold the finer aspects of the character of the protagonist. The most scintillating aspect of the technique of narration is the subtle and unpredictable interplay caused by the shift of points of view as the story is told from the point of view of the narrator and at the same time the narrator also shows frequent inclinations towards the protagonist.

It is clear from the above discussion that the first person autobiographical narrator is one of the most function and conspicuous devices used by R K Narayan in rendering a form and shape to his shorter narratives. The stories discussed above, acquaint us with three different shades of the same technique. "A Breathe of Lucifer" and "Annamalai" are the narratives knit around two different servants with two different cultural, educational and ethnic background. Sam, on one hand, is a Christian with urban sophistication gifted with verbal wit that enables him to shape and reshape the lies perceived through occasional and rather partial scope of ratification as his master, who is also the narrator of the story is enduring blindfolded for one week. "Annamalai" is the narrative in which the master displays frequent bafflement cause by the eccentric and unpredictable behavior of the protagonist. The narrators in "A Breathe of Lucifer" and "Annamalai" serve as filters and convey us the finer aspects of the character through the screening by the narrators as the narrators, in both these short stories, enjoy the distinction of identity from their respective protagonists.

References :-

1. Abrams. M H. *A Glossary of Literary Terms*. Madras; Macmillan,1992
2. Booth, Wayne C. *The Rhetoric of Fiction*. New York, Dover Publications, 1951.
3. Forster. E M. *Aspects of the Novel*. London; Penguin, 1990.
4. Lubbock Percy. *The Craft of Fiction*. London; Jonathan Cape, 1965
5. Narayan R K. "A Breathe of Lucifer" *Under the Banyan Tree and Other Stories*. Mysore, Indian Thought, 1999.
6. Narayan R K. "Annamalai" *Under the Banyan Tree and Other Stories*. Mysore, Indian Thought, 1999.
7. Soni N.C. and Trivedi S.C. "Short Stories of R K Narayan; An Estimate" *Perspectives on R K Narayan*. Ed. Atmaram. New Delhi, Vimal, 1961.

****

An Analytical Study of the Treatment of Love in Ravinder Singh's Selected Novels- "I Too Had a Love Story" and "Can Love Happen Twice?"

Dr. Digvijay Pandya * Apurva Upadhyay **

Abstract - Ravinder Singh is appreciated as one of the most emerging young authors in India. Coming from a small town in Orissa, his ascendancy in literature is truly commendable. He is blessed with an art for which every author craves, i.e. the ability to influence the readers' state of mind with the emotions in his stories. He is author to numerous novels of romance tragedy genre. This research paper is based on two of his novels in which he has very effectively presented stages of love starting from the initial days of meeting and blithe, followed by tragic calamitous events in relation, and then coping with it by concrete faith.

Introduction - The first novel which Ravinder Singh wrote was an effort to pen down his emotions, after he faced a mental turmoil of losing his beloved. It titled "i too had a love story" and was amongst the bestsellers. Inspired by his ownstory. The book starts off with the tale of Ravin and Khushi and their unconventional love that fails to reach its destination due to a tragic accident. The manner in which Singh has depicted a variety of emotions in the book is simple, yet very effective. While reading the novel, readers may relate to the joy of friendship, sorrows, and complications that one has to in the path of life.

In the beginning, the story describes the sweet and sour experiences of Ravin with his friends and his reunion with three of his collage mates- Happy, Amardeep or Ramji and Manpreet. In this reunion, discussions on marriage plans, takes place between the three, after which Ravin decides to get registered on a matrimonial website named shaadi.com for finding a suitable match for him. He soon comes across a profile of girl named Khushi and approaches her for friendship, which she accepts. Months passed being friends, and then ultimately they realize that they have fallen in love with one another. The moment finally comes when they were to meet the first time. At the first site itself Ravin gets mesmerized form the beauty of Khushi. Time passed with frequent meets, strengthening the bond more and more between the love mates, and meanwhile Ravin also meets Khushi's family. Conversations about their marriage started advancing further. On this point the lines of the book can be referred which are as such "not everyone in this world has the fate to cherish the fullest form of love; some are born, just to experience the abbreviation of it."

If we come back to the theme of the story now, it suggests that it being a story with a tragic end, the author here describes the fact that unlike all fictional love stories, the real ones do not always have a happy ending, some stay incomplete and some push us towards the darkest ends of our lives. This point comes to reality when this sweet relation gets struck by a tragic incident where on the day when Ravin and Khushi were to get engaged, Khushi met with an accident, which results in her demise. This deadly incident leaves Ravin broken with a deep grief for life which can be felt in the lines of his book "she died, I survived and because I survived, I die every day." He was finding it difficult to live with this fact that his beloved Khushi was no more with him and all the time he was surrounded by the thoughts that how, at times life can be pleasant to some and can be so ruthless to other people. To cope with such a disturbed state of mind he decided to pen down his feelings which took the form of his first novel "i too had a love story". It would not be appropriate to say that this book only sympathizes with the writer for his deep grief and turmoil, but it also claims appreciation for the courage he has shown to bring his feelings to paper and for having the strength to fight back the obstacles he had come across in his life. This story exemplifies the fact that relations are not always pleasant, also if you love someone truly, the story will last long for generations. The second novel which Singh wrote can be recognized as a sequel to his first novel, it titled "can love happen twice. The novel is about the time in Ravin's life when he felt that the tree of love flourished for the second time in his heart. The story is based on Singh's effort to move his life forward after the tragic incidence of

* Associate Professor (Basic Science & Humanities) Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Research Scholar (English) University of Pacific, Udaipur (Raj.) INDIA

losing his love. The tale revolves around Ravinder's visit to Belgium for a company project. Moving to a different country helped Singh in providing a much needed change to advance his life. The visit took new dimensions when on a day suddenly he meets a girl named Simar in a gym. She was pursuing her MBA in Belgium, and basically belonged to Gurgaon. Soon they became friends, and on a sudden day she asked Singh about his girlfriend. Singh handed over his book 'I too had a love story' to her.

After lots of sharing and knowing one another, they realized that they had started to feel for each other and love was again in the air for the pair. After 10 months of togetherness Singh returns back to India. As it is said that where there is true love distance does not matter much, and so the couple got connected through video chatting and through such other ways. On Simar returning back to the country they met each other's families and decided to marry after Simar completes her education. But soon Ravinder realizes that Simar's thinking to settle after marriage is not on the same terms in that of his own and she wanted to settle in Belgium with him. Singh tries to make her understand that he cannot leave his parents.

Her unwillingness to accept Singh's terms resulted in their separation on 24th February, the same day when Khushi died. Thus we can conclude that the story is written with an intention to make today's generation understand the real meaning of love and its complications.

Conclusion- Ravinder Singh novels and writing style is centralized on the mentality of youth and their moments of merry as well as difficulties in their relations. Both the novels on which this research is conducted and paper is written, are emotionally very touching and it depicts how one can encounter peaks in life at a moment and has to face valleys the other. The book "i too had a love story" on one hand shows how Ravinder felt the wonderful feeling of love for the first time in his life, but could not take it to its destiny. on the other hand the second of his novels "can love happen twice" starts from where he left his first novel, and the story revolves around the second incidence in his life, when he felt that he has fallen for a girl for second time in his life but he could not advance this relation too, now because of misunderstandings among them. These lines from the second novel truly depict the feel of this novel, "Things didn't work between the two of them, because they loved the same person. He loved her and she loved herself".

For love to survive and flourish, there needs to be maturity and sacrifice in a relationship, otherwise there is always the danger of 'complicated status' that threatens the very essence of the beautiful emotion of love. – Ravinder Singh in his Blog

References :-

1. Singh, Ravinder. *Can love happen twice?* New Delhi: Penguin Metro Reads, 2011. Print.
2. Singh, Ravinder. *I too had a love story*. New Delhi, India: Penguin Metro Reads, 2012. Print.
3. *Ravinder Singh*. N.p., n.d. Web. 25 April 2017.
4. Blog post. *Ravinder Singh Blog*. Ravinder Singh, 09 Apr. 2012. Web. 02 Mar. 2017.
5. Blog post. Ravinder Singh,Devapriya Roy, Scroll in, 23 Aug. 2016.

****

Every Man In His Humour as a classical comedy

Dr. Rashmi Nagwanshi *

Introduction - Ben Johson describes nature and presents complete humour. He is capable of giving withy satire; he seems to return to the presentation of popular wit and humour and presents humour on the basis of his main aim.

Every Man In His Humour conforms to the classical principles of composition. Ben Johnson's Individual talents have been displayed in this comedy. The unity of time is closely observed. The action covers twelve hours. The action begins in the morning at the know well's house and ends at Clements's house. The unity of place has also been observed. All scenes are taken in London. The unity of action has been maintained typically. The plot contains many actions. The plot is complex and loose and lacks coherence. Some minor action also from an integral part of the whole action. The unity consists in the oneness of many parts. The unity of tone has been maintained to some extent. There is found pure comedy fun and humour in this Comedy. Thus the classical element observed; 1 By the unities of time, place action and tone 2 stress on truth of life 3 satirical spirit.

In his 'Apology for poetry' Sidney expounded the principles and techniques of classical comedy. Johson loosed his classicism or neo classical theory of comedy on these principles. However, he was a mighty man of letters and did not wholly depend on them. In fact he have them his individual colour and interpretation, as he was a man and writer of original bent of mind. In short, he followed the classical precepts in the Every Man in His humour is one of Jonson's best known and most influential plays. Initially staged in 1598. Jonson is seen developing the device of exaggeration and caricature in order to make them appear ridiculous. His purpose is to ridicule their humours. The humours are given a homeopathic treatment. They are followed free play to run to excess, and in this way they spend themselves out. At the end of the play, the characters are out of their humour.

'Every Man in His Humours' is a classical comedy in Every sense of the term and as distinct from the romantic comedy of William Shakespeare. Its classical character is quite evident in its faithful observance of the three Unities of Time, Place and Action the unity of tone and in its emphasis of being true to life.

Comedy of Ben Jonson's mirror everyday life of the people of London. The satire purpose dominates the theme of them. His comedy imparts a shrewd commentary on the town life of the time. He has described the whole range of London society from courtier to water courtier. He has faithful mirrored the variety of its fashions.

It is well exemplified that Ben Jonson had an intensive knowledge and experience of human nature and human life. The way of his observing of human nature and aspects of life was very keen and exact. He was entirely familiar to the internal and contemporary life of London and its social affairs, so because of his intense knowledge about all these facts, he had familiarized himself with various kinds of humours and affections. The characters in the play we plain and simple. They are characters introduced in the play are the character of humour. They represent certain follies' and vices, defects and drawbacks. They are found showing imperfections, eccentricities, abnormalities and absurdities of human nature spirit and not in the letter. Hence his plays are different from other plays of the same genre. 'Every man in his conforms more closely to the classical principles of play of writing than any of his other plays. Nevertheless, it is in this play that Johson's individuality is most strongly felt.

It is well tried when unity of action has been observed in typical Jonsonian manner. The Plot is composed of several actions which are deftly linked together It is complex and loose because the dramatist who is also the satirist, seek' to exhibit every man suffering the effect of his 'humours'. Comparatively speaking, Volpone, the Alchemist' can boast have been made integral part of the main action. On the whole, unity of action is also more on less observed as "the unity does not consist is simplicity 'but in the oneness of many parts."

Unity of tone was aimed at but not completely attained by the playwright. Though Johson treats abnormality or imperfection in character sarcastically rather than sympathetically, as in the case of "Volphone" which has the ferocity of the fox. Yet 'Every man in His Humour' maintains a comic tone throughout its course. Thus unity of tone has been seriously dept; the serious not mixed with the comic. True to life both in character and incident. Renaissance Criticism emphasized that both action and character must be in like the people of their class in real life. That is to say comedy must be 'an imitation of the common errors of life; exiting instructive laughter.

References :-

1. Chambers, E.K. The Elizabethan Stage, 4 volumes, oxford clarendon press, 1923.
2. Holliday, F.E.A. Shakespeare Companion 1564-1964. Baltimore, Penguin 1964.

* **H.O.D. (English) Govt. College, Junnardeo, Distt. Chhindwara (M.P.) INDIA**

हरिशंकर परसाई की व्यंग्य रचनाओं में यर्थाथवाद

सोनिया राठी *

शोध सारांश – हरिशंकर परसाई की रचनाएं आजाद भारत का सृजनात्मक इतिहास कही जा सकती हैं। इन रचनाओं का वर्तमान भारत की यथार्थ स्थितियों के संदर्भ में ही आकलन किया जा सकता है। सामान्य सामाजिक स्थितियों को परसाई ने वैचारिक चिन्तन से पुष्ट करके प्रस्तुत किया है। स्वतंत्र भारत के सकारात्मक–नकारात्मक सभी पहलुओं की परसाई ने बखूबी पड़ताल की है। परसाई की रचनाओं में उस पीड़ित भारत की छटपटाहट को महसूस किया जा सकता है, जो शोषकों के तिलिस्म में कैद है। शोषक इस तिलिस्म को बनाए रखने के लिए तरह–तरह के छद्म करते हैं। इन छद्मों का खुलासा परसाई करते हैं। अपनी वैचारिक प्रतिबद्धता और सतर्क वैज्ञानिक दृष्टि के कारण परसाई छद्म के उन सभी रूपों को आसानी से पहचान लेते हैं जिन तक सामान्यत: रूढ़िवादी दृष्टि नहीं पहुँच पाती। परसाई का रचना संसार बहुत व्यापक है। निजी अनुभूतियों की निर्वैयक्तिक अभिव्यक्ति उनके व्यंग्य लेखन की विशिष्टता है। परसाई की सृजनशील दृष्टि निम्नवर्गीय सामान्य आदमी से प्रारम्भ होकर बहुराष्ट्रीय समस्याओं तक को अपने भीतर समेटती है। परसाई व्यंग्य के माध्यम से सृजन और संहार दोनों एक साथ करते हैं। परसाई का व्यंग्य जब शोषक वर्ग के प्रति होता है, तो वह उस वर्ग के प्रति घृणा और आक्रोश उत्पन्न करता है लेकिन जब वही व्यंग्य अभावग्रस्त व्यक्ति पर होता है, तो करुणा पैदा करता है। हिंदी साहित्य में व्यंग्य को केंद्र में लाने और व्यापकता प्रदान में हरिशंकर परसाई का महत्तवपूर्ण योगदान है।

प्रस्तावना – हरिशंकर परसाई ने कहानियाँ, उपन्यास, संस्मरण, लघुकथाएँ, बाल कहानियाँ लिखी लेकिन उनकी ख्याति व्यंग्यकार के रूप में ही है और उन्हें व्यंग्य विधा को स्थापित करने का श्रेय दिया जाता है। व्यंग्य शब्द की व्यंजना शक्ति से उपजता है और शब्द की तीनों शब्द शक्तियां अभिधा, लक्षण, व्यंजना शुरू से ही मौजूद हैं। परसाई से पूर्व और समकालीन साहित्यकारों ने भी व्यंजना शक्ति का प्रयोग किया लेकिन इन्हें ही व्यंग्य का जनक माना गया। जिस प्रकार प्रेमचन्द से पूर्व भी उपन्यास लिखे गए लेकिन प्रेमचन्द ने उपन्यास के क्षेत्र में ऐसे क्रांतिकारी बदलाव किए कि उपन्यास का जिक्र आते ही प्रेमचन्द का नाम आता है, वैसे ही व्यंग्य का जिक्र आते ही हरिशंकर परसाई का नाम उभरता है। परसाई ने न सिर्फ व्यंग्य के स्तर को उठाया, अपितु इसे स्वतंत्र विधा के रूप में स्थापित किया। हरिशंकर परसाई जी की पहली रचना स्वर्ग से नरक जहां तक है, जो कि मई 1948 में प्रहरी में प्रकाशित हुई थी, जिसमें उन्होंने धार्मिक पाखंड और अंधविश्वास के खिलाफ पहली बार जमकर लिखा था। धार्मिक खोखला पाखंड उनके लेखन का पहला प्रिय विषय था। सदाचार का ताबीज परसाई जी की प्रमुख रचना है। इस कृति में उन्होंने रिश्वत लेने देने के मनोविज्ञान को प्रमुखता के साथ उकेरा है। लेखक के रूप में उन्होंने कहानी–संग्रह हंसते हैं रोते हैं, जैसे उनके दिन फिरे उपन्यास– रानी नागफनी की कहानी, तट की खोज, ज्वाला और ज्वाला : संस्मरण, तिरछी रेखाएं की सृजना की। निबन्ध और व्यंग्य संग्रह में उन्होंने तब की बात और थी, भूत के पाँव पीछे, बेईमानी की परत, अपनी अपनी बीमारी, प्रेमचन्द के फटे जूते, माटी कहे कुम्हार से, काग भगौड़ा, आवारा भीड़ के खतरे, ऐसा भी सोचा जाता है, वैष्णव की फिसलन, पगडंडियों का जमाना, शिकायत मुझे भी है, सदाचार का ताबीज, विकलांग श्रद्धा का दौर, तुलसीदास चन्दन घिसे, हम एक उम्र से वाकिफ हैं, की सृजना की।

प्रेमचंद के फटे जूते शीर्षक निबंध में परसाई जी ने प्रेमचंद के व्यक्तित्व की सादगी के साथ एक रचनाकार की अंतर्भेदी सामाजिक दृष्टि का विवेचन करते हुए आज की दिखावे की प्रवृत्ति एवं अवसरवादिता पर व्यंग्य किया है। परसाई अपने व्यंग्यों के माध्यम से सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विषमताओं पर चोट करते रहे। परसाई की रचनाएं पढ़ने पर तो हंसने, हंसाने और मनोरंजन की तासीर देती है, लेकिन उसके पीछे एक बहुत गहरी मार्मिक पीड़ा छिपी रहती थी। वे समाज की विषमताओं पर व्यंग्य के जरिए ही सवाल उठाते थे, और सामाजिक यथार्थ को हमारे सामने खड़ा करते थे। परसाई ने अपनी रचनाओं के माध्यम से सामाजिक और राजनैतिक व्यवस्था में पिसते मध्यमवर्गीय मन की सच्चाइयों को बेहद बारीकी से टटोला। वे धर्म के पाखंड, सांप्रदायिकता और राजनीति पर भी चोट करते रहे।

परसाई ने जबलपुर से वसुधा नाम की साहित्यिक मासिकी निकाली, नई दुनिया में सुनो भइ साधोय, नई कहानियों में पांचवां क1लम और उलझी–उलझी तथा कल्पना में और अन्त में इत्यादि कहानियां, उपन्यास एवं निबन्ध लेखन भी किया। लेकिन परसाई को व्यंग्यकार के रूप में जो ख्याति मिली, वैसी हिंदी साहित्य में आज तक किसी को नहीं मिल पाई। इस तरह परसाई मुख्यत: व्यंग्य लेखक के रूप में स्थापित हो गए।

समाज के विद्रूप चेहरे पर तंज कसते नमूनों की भरमार है, परसाई जी के साहित्य में। एक व्यंग्यकार के लिए जरूरी होता है कि उसके पास पारखी नजर हो। वो ऐसे तथ्यों को पहचाने जो शाश्वत हैं, जिन पर व्यंग्य करना जरूरी है। परसाई जी इसमें सिध्दहस्त थे। उन्होंने राजनीति, अन्धविश्वास, सामाजिक बुराइयों को पकड़ा और बड़ी शालीनता से उनको आईना दिखाया। जिन विषयों पर उनकी लेखनी चली वे आज भी प्रासांगिक हैं। मर्म को पकड़ना और उस पर प्रहार करना भी व्यंग्यकार के लिए जरूरी है, साथ ही चोट

*शोधार्थी, जैन विश्वविद्यालय, बेंगलोर (कर्नाटक) भारत

कितनी गहरी हो इसका तजुर्बा भी उसे होना चाहिए। शब्दों की मारक क्षमता का नियंत्रित प्रयोग ही व्यंग्यकार को व्यंग्यकार बनाता है, अन्यथा सच को कड़वे शब्दों में कहना बड़ा आसान है। परसाई जी के व्यंग्य और निबन्धों में भाषा का प्रयोग बड़ा नियंत्रित है।

परसाई मार्क्सवादी थे, इसलिए यह मिथ्या धारणा निर्मित हुई कि वे नितान्त धर्म विरोधी थे। वस्तुत: वे धर्म नहीं अपितु पाखंड विरोधी थे। धर्म, विज्ञान और सामाजिक परिवर्तन में उन्होंने लिखा– सच्ची धर्मानुभूति स्व के त्याग से ऊँचे स्तर की है– यह ऐसी धर्मानुभूति नहीं है कि सुबह भगवान की पूजा की। एक सौ ग्यारह नंबर का तिलक लगाया, दुकान गए और दिनभर आदमियों को लूटा।

नितान्त मामूली सी घटना में व्यंग्य पैदा करके परसाई ने एक बड़े सत्य का उद्घाटन किया है– यही परसाई की खासियत है। यथास्थितिवादी, भाग्यवादी, चेतना शून्य भारतीय समाज पर परसाई का व्यंग्य–प्रहार चूहा और मैं कहानी में देखने को मिलता है। कहानी में चूहे ने रात रात भार लेखक को तंग कर मजबूर कर दिया कि वह रोटी, पापड़ के कुछ टुकड़े फर्श पर छोड़ दे। यानी चूहे ने अपना हक ले लिया परसाई सूक्ति–रूप में लिखते हैं कि इस देश का आदमी कब चूहे की तरह आचरण करेगा?

व्यंग्य अपने आप में गंभीर विषय है। परसाई की रचनाओं में यही गंभीरता मिलती है। 'एक मध्यवर्गीय कुत्ता' लेख में कुत्तों की अहमियत आदमी से बढ़ जाने पर वे लिखते हैं–

य माफ करें। मैं बंगले तक गया था। वहां तख्ती लटकी थी– कुत्तो से सावधान। मेरा ख्याल था, उस बंगले में आदमी रहते हैं पर नेमप्लेट कुत्तो की टँगी दीखी।

दिखावा भारतियों की सबसे बड़ी बीमारी है। झूठी शानो–शौकत पर उनका व्यंग्य देखिए–

मेरा ख्याल है, नाक की हिफाजत सबसे ज्यादा इसी देश में होती है। और या तो नाक बहुत नर्म होती है या छुरा बहुत तेज, जिससे छोटी–सी बात से भी नाक कट जाती है।

साहित्यकार की वास्तविक स्थिति से एक साहित्यकार परिचित होता है, साहित्यकार किस प्रकार के दंभ पालते हैं, इस पर की गई उनकी चोट देखिए–

सुबह की डाक से चिट्ठी मिली, उसने मुझे इस अहंकार से दिन भर उड़ाया कि मैं पवित्र आदमी हूँ, क्योंकि साहित्य का काम पवित्र काम है। दिन भर मैंने हर मिलने वाले को तुच्छ समझा।

समाज में व्याप्त बुराइयों को निष्पक्षता से देखना एक व्यंग्यकार के लिए जरूरी है। परसाई जी तथाकथित क्रांतिकारियों और आध्यात्मिकों पर प्रहार करते हैं। निंदा करने की बढ़ती प्रवृति को देखते हुए वे चुटकी लेते हैं–

निंदा में विटामिन और प्रोटीन होते हैं। निंदा खून साफ करती है,पाचन क्रिया ठीक करती है, बल और स्फूर्ति देती है। निंदा से मांसपेशियाँ पुष्ट होती हैं। निंदा पायरिया का शर्तिया इलाज है। संतों में परनिंदा की मनाही होती है, इसलिए वह स्वनिन्दा करके स्वास्थ्य अच्छा रखते हैं।

वे सिर्फ व्यंग्य करके अपने कर्त्तव्य की इति श्री नहीं कर लेते अपितु कारणों की तह तक जाते हैं। 'आवारा भीड़ के खतरे' निबन्ध में वे युवकों की हिंसक प्रवृति पर लिखते हैं–

युवक साधारण कुरता–पाजामा पहिने था। चेहरा बुझा था, जिसकी राख में चिंगारी निकली थी, पत्थर फेंकते वक्त। शिक्षित था। बेरोजगार था। नौकरी के लिए भटकता रहा था। धंधा कोई नहीं। घर की हालत खराब। घर में अपमान, बाहर अवहेलना। वह आत्मग्लानि से क्षुब्ध। घुटन और गुस्सा एक नकारात्मक भावना। सबसे शिकायत। ऐसी मानसिकता में सुंदरता देखकर चिढ़ होती है।

परसाई संपदा और संस्कृतिहीनता के रिश्ते को बखूबी जानते थे। समाज में विद्यमान आर्थिक विषमता तो असह्य थी ही, धन का फूहड़ प्रदर्शन भी उन्हें पीड़ित करता था। अपनी–अपनी हैसियत व्यंग्य में वे विवाह समारोहों में होने वाली फिजूलखर्ची को निशाना बनाते हुए लिखते हैं मेरे सामने एक पैसे वाले युवक की शादी का निमंत्रण–पत्र रखा है। कई रंगों का है। इतने गहरे रंग हैं कि पढ़ा नहीं जाता कि शादी के बारे में लिखा है या श्राद्ध के। अब शादी और श्राद्ध शब्द समाज में मौजूद दो परस्पर विपरीत वर्गों के परिचायक बन जाते हैं साथ ही हमें हमारे समय में लगातार महँगे होते जा रहे विवाह–समारोहों पर प्रश्नचिह्न लगाने को मजबूर करते हैं। परसाई का व्यंग्य करूणाजनित है– उनका क्रोध उनकी करूणा, संवेदनशीलता से ही जन्मा है। धनपतियों, नवकुबेरों ने करूणाधारित मानवीय सामाजिकता का श्राद्ध कर दिया है, यह तथ्य उनके क्रोध का कारण है। परसाई के व्यंग्य की मूल प्रेरणा है– उनका सौन्दर्य–बोध। समाज में बाहर–भीतर की हर विसंगति पर वे व्यंग्य करते ही इसलिए हैं कि समाज हर तरह से सुसंगत और सुंदर हो। आर्थिक समानता समाज की बाहरी सुंदरता है तो आत्मा का उन्नयन भीतरी सुंदरता। इसलिए वे स्थूल उपभोक्तावादी प्रवृत्ति को लक्ष्य करते हैं– सुंदरी गुलाब से ज्यादा बैंगन को पसन्द करने लगी। मैंने कहा देवी तू क्या उसी फूल को सुंदर मानती है, जिसमें से आगे चलकर आधा किलो सब्जी निकल आये? पुष्पलता और कद्दू की लता में तू क्या कोई फर्क नहीं समझती? तू क्या वंशी से चूल्हा फूँकेगी? और क्या वीणा के भीतर नमक–मिर्च रखेगी? स्थूल इन्द्रिय सुखों को ही जीवन का पर्याय समझने वाले वर्ग पर कितना गहरा व्यंग्य है।

भोलाराम का जीव वर्तमान भ्रष्टाचार पर एक सटीक व्यंग्य है। प्रस्तुत व्यंग्य में पौराणिक प्रतीकों का अवलम्बन लेते हुए भोलाराम नामक एक साधारण व्यक्ति की, सेवा निवृत्ति के पश्चात् आने वाली समस्याओं का व्यंग्यात्मक चित्रण है। समय पर पेंशन न मिलने के कारण भोलाराम की जीवात्मा मरने के पश्चात् भी पेंशन प्रकरण से सम्बन्धित कागजों में अटकी है। उसकी आत्मा पेंशन प्रकरण के निराकरण हुए बिना स्वर्ग भी जाना नहीं चाहती। व्यंग्य अत्यंत मार्मिक है। तथा हृदय में करुणा उत्पन्न करता है। परसाई जी ने इस व्यंग्य के माध्यम से नौकरशाही लालफीताशाही, घूसखोरी तथा प्रशासकीय लेटलतीफी की ज्वलंत समस्याओं पर करारा प्रहार किया है। व्यंग्य में पैनेपन के साथ–साथ शिष्ट हास्य का भी समावेश है तथा वर्तमान व्यवस्था के अन्य पक्षों को छुआ है। व्यंग्य भ्रष्ट तथा असंवेदनशील व्यवस्था की और सहज रूप से ध्यान आकर्षित करता है। व्यंग्य का उद्देश मात्र त्रुटियों को उजागर करना और किसी को चौट पहुँचाना नहीं है। बल्कि प्रत्येक व्यक्ति के मन में परदुरू खटकातरता, संवेदनशीलता और कर्तव्य परायणता की भावना जगाना है। वे अपने समकालीन व्यंग्यकारों– श्रीलाल शुक्ल, शरद जोशी, रवीन्द्रनाथ त्यागी आदि से अधिक प्रतिबद्ध थे। इसीलिए वे अकेले ऐसे व्यंग्यकार हैं, जिन पर आलोचकों ने सर्वाधिक लिखा है। विषय–वैविध्य और सूक्ष्म दृष्टि तथा पठनीयता के लिहाज से परसाई प्रेमचन्द के सर्वोच्च उत्तराधिकारी हैं।

उपसहांर – हिंदी में संत–साहित्य से व्यंग्य का आरंभ माना जा सकता है। कबीर व्यंग्य के आदि प्रणेता हैं। उन्होंने मध्यकाल की सामाजिक विसंगतियों पर व्यंग्यपूर्ण शैली में प्रहार किया है। परसाई की रचनाएं आजाद भारत का सृजनात्मक इतिहास कही जा सकती हैं। इन रचनाओं का वर्तमान भारत

की यथार्थ स्थितियों के संदर्भ में ही आकलन किया जा सकता है। परसाई की रचनाओं में उस पीड़ित भारत की छटपटाहट को महसूस किया जा सकता है, जो शोषकों के तिलिस्म में कैद है। शोषक इस तिलिस्म को बनाए रखने के लिए तरह-तरह के छद्म करते हैं। इन छद्मों का खुलासा परसाई करते हैं। हरिशंकर परसाई ने कहानियाँ, उपन्यास, संस्मरण, लघुकथाएँ, बाल कहानियाँ लिखी लेकिन उनकी ख्याति व्यंग्यकार के रूप में ही है और उन्हें व्यंग्य विधा को स्थापित करने का श्रेय दिया जाता है। व्यंग्य लेखन को साहित्य में प्रतिष्ठा दिलाने में परसाई जी का योगदान अमूल्य है। हरिशंकर परसाई की भाषा में व्यंग्य की प्रधानता है। उनकी भाषा सामान्य और सरंचना के कारण विशेष क्षमता रखती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. लेखन कला और रचना कौशल, मैक्सिम गोर्की, परिकल्पना प्रकाशन, 2006
2. हरिशंकर परसाई व्यंग्य की व्याप्ति और गहराई, वेद प्रकाश साहित्य भंडार प्रकाशन, 2013
3. परसाई रचनावली, राजकमल प्रकाशन, 1998
4. तुम्हारा परसाई, कान्ति कुमार जैन, वाणी प्रकाशन, 2004
5. देश के इस दौर में, विश्वनाथ त्रिपाठी, राजकमल प्रकाशन, 2000

****

मालती जोशी की कहानियों में शिल्प- वैविध्य

जगदीश चौहान * डॉ. श्रीमती मंजुला जोशी **

प्रस्तावना – साहित्यकार के साहित्य को प्रभावी ढंग प्रदान करने का महत्वपूर्ण कार्य शिल्प विधान का होता है। प्रत्येक साहित्यकार चाहे वह काव्य सृजन करें, कहानी लिखें अथवा गद्य की किसी भी विधा को अपने लेखन का आधार बनाए वह शिल्प पर ध्यान अवश्य देता है। यदि सुंदर शरीर पर गहने पहना दिए जाए, तो वह उस शरीर को और सुंदरता प्रदान कर देता है। यदि शरीर सुंदर न भी हो तो, आभूषण अपना प्रभाव उस शरीर पर अवश्य दिखाते हैं। डॉ. वैकुण्ठनाथ ठाकुर ने भाषा की प्रभावशीलता के संबंध में अपने विचार व्यक्त किए हैं, ' कहानी की भाषा को प्रभावित करने वाले स्त्रोत कौन है ? निश्चत ही कहानीकार की शिक्षा दीक्षा के माध्यम से भाषा और साहित्य की सुदीर्घ परम्परा भाषा के सर्वसम्मत प्रयोग और साहित्य की सौन्दर्यमयी शैली का असर कहानी की भाषा पर होता है, किन्तु इससे भी अधिक असर उस परिवेश का होता है, उस वातावरण का होता है, जिससे प्रेरणा लेकर कहानीकार घटनाओं और पात्रों का सृजन करता है । यदि सामान्य जन जीवन से घटनाएँ और पात्र लिए गए हों, तो निश्चय ही कहानी का भाषा पर जन जीवन में प्रयुक्त भाषा का असर होगा । आधुनिक विश्व विद्यालय जीवन से संबद्ध कहानियों में हिन्दी, अंग्रेजी का मिश्र रूप प्रयुक्त हुआ है, जो हम पढ़े-लिखे समाज के बीच व्यवहृत पाते हैं। '[1]

सर्वप्रथम कहानीकार भाषा पर ध्यान देता है कि वह पात्र के वर्ग शिक्षा व व्यक्तित्व के अनुरूप हो, इसके अभाव में पात्र के साथ-साथ कहानी व कहानीकार अपना अस्तित्व खो देते हैं।

मालतीजी ने भाषा के इस भाग का अपनी कहानियों में सदैव ध्यान रखा है। उनकी हिरोइन साँस-साँस पर पहरा बैठा, संदर्भहीन, छोटा सा मन बड़ा सा दु:ख, मैं तो शकुन हूँ , जैसी कहानियों में भाषा पात्रानुरूप हैं। 'हिनोइन' कहानी में एक बर्तन साफ करने वाली की भाषा – ' अरे वो माथुर साब भी एक नंबरी थे। बस आते जाते कभी मेरी चुटैया खींच दे कभी धोल जमा दे, कभी चिकोटी काट ले इतनी गुस्सा आती थी कि बस ।'[2]

'संदर्भ हीन' कहानी में काम करने वाली महिला अपनी मालकिन के संबंध में कहती है कि 'खसम खाके बैठी है म्हारी बाई, तो पालटी तो करे गाच । रासलीला बिगर जिंदगी कैसे बीते हो। छोरा तो भेज दी हो अम्रीका ने छोरी को भेज दी बोर्लिडंग । अब अकेली कई करें बापड़ी । '[3]

मालतीजी ने आवश्यकतानुसार विदेशी भाषा के शब्दो का प्रयोग भी कहानी को प्रभावी बनाने के लिए किया है। उनके द्वारा अंग्रेजी भाषा के शब्दो का प्रयोग बिलकुल अस्वाभाविक नहीं लगता कुछ उदाहरण दृष्टव्य है-

'लीव इट टू मी। सब सम्हाल लूँगा । '[4]

वैसे ही आलंकारिकता गद्य की भाषा को भी शोभान्वित करती है। मालती जी ने अपनी विभिन्न कहानियों में इस आलंकारिक भाषा का प्रयोग किया है।

' यह बात वे कुछ इस अंदाज में कहती , मानो बेटा होता, तो सीधा झूले से उतरकर बाप का हाथ बाँटने पहुँच जाता है । '[4]

इसी प्रकार मालतीजी ने काव्यात्मक व चित्रात्मक भाषा का प्रयोग भी अपनी कहानियों में किया है, जिससे कहानी शिल्प की दृष्टि से अच्छी बन सके।

'खिड़की से छनकर आती रोशनी में मैंने देखा महारानी बेसुध होकर सो रही है। सोने का स्टाइल वही पुराना रजाई सिर के ऊपर तक लपेट लेंगी , पैर भले ही खुले रह जाएँ। '[6]

जैसे काव्य में बिम्बों और प्रतीकों का प्रयोग किया जाता है, वैसे ही मालतीजी ने अपनी कहानियों में भी इनका प्रयोग कर लेखन को प्रभावी बना दिया है।

' यह तो बहुत बाद में जाना कि कुछ पौधे ऐसे होते हैं, जो सहज ही में दूसरी जगह जड़ नहीं पकड़ते और अपना अस्तित्व खो बैठते है।'[7]

कहीं – कहीं भावों की अभिव्यक्ति तथा पात्रों के व्यक्तित्व को दर्शाने के लिये व्यंग्यात्मक भाषा को भी मालती जी ने आधार बनाया है –

' फिर अंजू चलने की मुद्रा से खड़ी ही रही, तो उस चण्डी स्वरूपा ने कहा – देखो बहन, अब चाय पीकर ही जाना, नहीं तो बुढ़िया मेरे सातों पुरखों को तारकर रख देगी। '[8]

भाषा के साथ-साथ कहानी में संवादो की महत्ता भी कम नहीं होती । संवाद कहानी की घटना को गतिमान बनाने का कार्य करते हैं। साथ ही कहानी को रोचक, प्रभावी व सजीव बनाने में भी संवाद महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। संवाद के स्वरूप के संबंध में निबंधकार डॉ. गुलाबरायजी ने कहा है कि – ' कथोपकथन या वार्तालाप पात्रों के द्वारा ही हम पात्रों के हृदयगत भावों को जान सकते हैं, यदि वार्तालाप पात्रों के चरित्र के अनुकूल न हो, तो हम चरित्र का मूल्याकंन करने में भूल कर जाएगे। कहानी में कथोपकथन का तिहरा काम रहता है। उसके द्वारा पात्रों के चरित्र का परिचय ही नहीं मिलता, वरन् उसके सहारे कथानक भी अग्रसर होता है और एक उबरने वाले प्रबंध के भीतर आवश्यक सजीवता उत्पन्न हो जाती है। '[9]

संवादों की महत्ता के संबंध में डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा ने लिखा है कि – ' संवाद अपने प्रकृतत्व औचित्य और व्यावहारिक रचना से ही अपने सौन्दर्य और आकर्षण को समझा देते हैं, उसमें तर्क-वितर्क , चिन्तन-मनन की उतनी अपेक्षा नहीं होती । ..... संवाद से अन्य सभी तत्वों का सीधा संबंध होता है। संवाद जहाँ एक ओर कथा के प्रसार का मुख्य साधन

* शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
** विभागाध्यक्ष (हिन्दी) शासकीय शहीद भीमानायक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

होता है, वहीं चरित्र के उद्घाटन का भी, साथ ही देश काल का भी पर्याप्त बोध करा देता है। '[10]

संवाद के स्वरूप और उसकी महत्ता को ध्यान में रखते हुए मालतीजी ने अपनी कहानियों की संवाद-योजना का भी विशेष ध्यान रखा है। सहज स्वाभाविक व संक्षिप्त संवादों में अपने पात्रों की विचाराभिव्यक्ति की है। कथानक को गति प्रदान करना कहानीकार का उद्देश्य होता है, इसलिए वह अपनी कहानी की संवाद योजना इसी प्रकार की रखता है। भावात्मक संवाद भी कहानी की रोचकता में अभिवृद्धि करते हैं। ' शापित शैशव' कहानी में पारूल की सौतेली माँ भावुक होकर पारूल से कहती है कि - 'जायदाद का मुझे लोभ नहीं है। मुझे तो एक घर, एक जीवन-साथी की तलाश थी - वह मुझे मिल गया। साथ ही एक प्यारी-सी बीटिया भी मिल गई। अब मुझे कुछ नहीं चाहिए। इत्मीनान रखो, मैं तुमसे तुम्हारे पापा का प्यार भी नहीं छीनूँगी, बल्कि मैं तो अपने हिस्से का प्यार भी तुम्हें देना चाहती हूँ।'[11]

मालतीजी ने विषयानुरूप अपनी कहानियों में लंबे संवाद भी लिखे हैं। विषय के गांभीर्य को स्पष्ट करने के लिए ये संवाद कहानी के लिये सर्वथा उपयुक्त होते हैं।

मालतीजी ने जैसे पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग किया है, ठीक वैसे ही पात्रानुकूल संवाद भी लिखे है। पात्र के वर्ग , परिस्थिति , स्वभावानुसार संवाद लिख कर कहानी को प्रभावी बनाया है।

नौकरानी व मालकिन के मध्य होने वाला यह संवाद पात्रानुकूल संवाद का अच्छा उदाहरण है-

'अच्छा चल पाँच मिनट सुस्ताकर चाय पी ले, ' नीलम ने उसे शीतल का कप पकड़ाते हुए कहा, कि तेरा भी व्रत है ?

काहे का ? तीजा का ? अरे मैं नहीं करती ।

क्यों री । पहले तो खूब करती थी। शीतल ने पूछा ।

अब किसके लिए भूखी मरूँ, जीजीबाई ?

मतलब ?

मतलब ये अपने खसम को छोड़े बैठी है। अब ये व्रत क्यों करेगी । खसम शब्द से ही जाहिर था अम्मा खूब खूब नाराज है बसंती से '[12]

व्यंग्यात्मक संवाद कहानी को, उसके कथानक को प्रभावी व रोचकता प्रदान करने का काम करते हैं। मालतीजी ने हास्य, व्यंग्य संवादों का भी प्रयोग किया है।

' तो श्रीमानजी क्या अपने - आपको चंकी पांडे या आमीर खान की पीढ़ी का समझ रहे थे। खुद भी चालीस को छू रहे थे, पर उनका एक ही प्लस पाइंट था, और वह यह कि अब तक कुँवारे थे, और शायद इसीलिए किसी ज्योतिषी की आस लगाए बैठे थे '[13]

शैली पाठक को अपने कथानक के साथ संबंध रखने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। शैली ऐसी हो कि वह पाठक को अपनी ओर आकर्षित कर सके। डॉ. गुलाबरायजी ने शैली के संबंध में अपने विचार व्यक्त किए हैं - 'अच्छी शैली में व्यक्तित्व व निर्वैयक्तित्व का मिश्रण वांछनीय है। चाहे जितना उपयोग करे, लेखक अपने व्यक्तित्व में से अपने को निकाल ही नहीं सकता । फिर भी विषय को इतना व्यक्तित्व देना चाहिए कि वह स्वयं बोलने सा लगे। '[14]

मालतीजी ने अपनी कहानियों के लिये प्रसंगानुकूल तथा आवश्यकतानुसार हिन्दी की लगभग सभी शैलियों को प्रयुक्त किया है। उन्होंने विवेचन, प्रश्न शैली, संवाद शैली विवरण शैली, व्याख्यात्मक शैली, आत्मकथात्मक शैली, वर्णन शैली, सहज शैली, पत्र शैली , स्मृतिप्रधान शैली आदि का प्रयोग किया है ।

उनकी उफान , प्रतिदान, कोख का दर्प मध्यांतर, में प्रश्न शैली के भी दर्शन होते हैं -

' क्या बात है अम्मा ? किसी ने कुछ ..... मेरा मतलब है, तुम्हारा अपमान किया है किसी ने ? मेरे ख्याल से उन लोगों ने क्या तुम्हारी खातिर में कुछ कमी रह गई ? लेन-देन में कुछ कसर रह गई क्या ? हुआ क्या है आखिर '[15]

मालती जी ने प्रसंगानुकूल अपनी कहानियों पराजय , मैं तो शकुन हूँ, सफेद जहर, चोरी, नैहर छूटो जाय में पत्र शैली का प्रयोग किया है।

इसी प्रकार सती, पहली बार, परायी बेटी का दर्द, अस्तित्व-बोध, मन धुआँ-धुँआ आदि कहानियों में स्मृति प्रधान शैली का प्रयोग किया है -

' याद आती है, गर्मियों की एक शाम । हम लोग सड़क पर नदी पहाड़ खेल रहे थे । बड़ी बहने अपनी सिलाई - कढ़ाई लेकर बरामदे में बैठी हुई थी। तभी दरवाजे पर एक ताँगा रूका और हम लोग विश्वास ही न कर पाए । ताँगे से दीदी उतर रही थीं साथ में जीजाजी भी थे । '[16]

जैसे भाषा, संवाद व शैली कथानक को सजीव प्रभावी व रोचक बनाकर पाठक को अपने से जोड़कर रखते है, वैसे ही वातवारण तत्व भी कथानक में तत्कालीन परिस्थितियों का उद्घाटन कर कथानक को मजबूत यथार्थ बनाने में योगदान देता है। वातावरण के अंतर्गत तत्कालीन समस्त परिस्थितियाँ सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, नैतिक, धार्मिक समाहित रहती है। डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्माजी ने वातावरण के संदर्भ में अत्यंत उपयुक्त बात कही है- ' इसका संबंध कहानी के दृष्टार्थ अर्थात् प्रतिपाद्य प्रभान्विति से अधिक होता हैं। यह किसी एक अथवा अनेक तत्वों में योग नहीं देता , वरन् कहानी की समष्टि का मानस पर छायात्मक प्रभाव डालता है। अथवा स्वयं में कहानी का इष्ट बनकर अन्य तत्वों को अपने अंग रूप में स्वीकार करता है। इस तरह किसी भी कहानी को पढ़ लेने पर एक प्रकार के वातावरण का अनुभव पाठक करता है।'[17]

वातावरण कहानियों में चित्रित घटनाओं को स्वाभाविकता , विश्वसनीयता तथा यथार्थ आधार प्रदान करता है।

मालती जी की कहानियों में सामाजिक तथा पारिवारिक वातावरण की अधिक चित्रित हुआ है। उसके अंतर्गत सामाजिक, रीति-रिवाज, परम्पराएँ , कुरीतियाँ , आचार-विचार पारिवारिक विघटन, उन पात्रों का पारस्परिक सामंजस्य व वैमनस्य आदि का चित्रण मिलता है। परिवार में मानसिक, तनाव व खिंचाव के वातावरण की सृष्टि करता यह उदाहरण -

' कुसुम ने सोचा कि शायद उसे अपने किए पर पश्चाताप हो रहा है। उसकी क्षमा-याचना का वह कोई अच्छा सा उत्तर सोच रही थी कि रमा दाँत पीसकर बोली, आग लगाकर चल दी महारानी। इसीलिए तो आई थी। अब तो कलेजे में ठंडक पड़ गई होगी। अब दोबारा कभी मेरे दरवाजे पर मत आना । अगर आओ, तो अपने भाई का मरा मुँह देखो। '[18]

तत्कालीन समाज में बेटी के प्रति जो हीन भावना थी, उसका चित्रण भी मालतीजी ने बहुत अच्छे ढंग से किया है। उसके जन्म को अशुभ, पालन-पोषण व विवाह को बोझ समझा जाता था।

नारी के प्रति इस प्रकार की हीन भावना पुरूष प्रधान समाज की देन है, जो हमेशा लड़के की चाह में ही रहता है। उसे अपने का उद्धारक व वंश चलाने वाला मानता है, लेकिन कभी यह विचार नहीं करता कि उसे जन्म देने वाली भी एक नारी ही है। पुरूष अपनी इस सोच के लिए, इस अभिलाषा की पूर्ति के लिए नारी का बलिदान कर देता है।

मालतीजी ने अपनी कहानियों में शहरी और ग्रामीण दोनों ही वातावरण का चित्रण किया है। गाँवों में जहाँ बडे-बड़े घर होते हैं, वहीं शहरों में छोटे-छोटे कमरे ही होते हैं। गाँव में बहू बेटी को घर की मर्यादा में घूँघट निकालकर रहना पड़ता है, वहीं शहर में उनका जीवन स्वतंत्र रूप से बपीतता है। मालती जी ने ग्रामीण वातावरण का सटीक चित्रण किया है - ' ले-देकर एक गाँव ही रह गया है। दीपू की तो वहाँ मौज रहती है। पर मम्मी बेचारी बड़ी परेशान हो जाती है। न बिजली है, न नल बस गर्मी में तपते रहो। किताब तो वहाँ छूती तक नहीं। गाँव की औरतों से घिरी दादी के पास बैठी रहती है। खूब आगे तक सिर ढके चुप-चुप रहने वाली यह मम्मी कितनी अजनबी सी लगती है। कितनी बेचारी सी।'[19]

इस प्रकार मालतीजी ने समाज के रीति-रिवाज व पारम्परिक मर्यादा पर वातावरण के प्रभाव का भी चित्रण अपनी कहानियों में किया है।

निष्कर्षत: मालतीजी की कहानियाँ शिल्प की दृष्टि से प्रभावपूर्ण है। उन्होंने प्रसंगानुकूल भाषा, शैली व संवाद के साथ-साथ वातावरण की सृष्टि भी बडी सहजता से की है। कहीं भी उनकी कहानियों में असहजता या अस्वाभाविकता नहीं लगती। शिल्प कला की दृष्टि से उन्होंने पाठकों पर अपना प्रभाव स्थापित किया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. डॉ. वैकुण्ठनाथ ठाकुर - हिन्दी कहानी का शैली विज्ञान 44, 66
2. मालती जोशी - शापित शैशव तथा अन्य कहानियाँ - हिरोइन - 100
3 मालती जोशी - मध्यान्तर-संदर्भहीन 52
4. मालती जोशी - मालती जोशी की कहानियाँ - कवच 16
5 मालती जोशी - दस प्रतिनिधि कहानियाँ - प्रतिदान 36
6 मालती जोशी - शापित शैशव तथा अन्य कहानियाँ -एक घनीभूत विद्रोह 131
7 मालती जोशी - मध्यान्तर-अस्ताचल 39
8 मालती जोशी - बोल री कठपुतली -प्रश्नों के भँवर 14
9 डॉ. बाबू गुलाबराय - काव्य के रूप 223
10 डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा - कहानी का रचना विधान 121
11 मालती जोशी - शापित शैशव तथा अन्य कहानियाँ - शापित शैशव 28-29
12 मालती जोशी - शापित शैशव तथा अन्य कहानियाँ - एक क्रांति सीमित-सी 105
13 मालती जोशी - मोरी रंग दी चुनरिया - यातना चक्र 57
14 डॉ. बाबू गुलाबराय -सिद्धांत और अध्ययन 35
15 मालती जोशी - मन ना भये दस बीस ' उफान 61
16 मालती जोशी - बोल री कठपुतली - पराई बेटी का दर्द 60
17 डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा - कहानी का रचना विधान 186
18 मालती जोशी - बोल री कठपुतली - हमको दियो परदेस 54
19 मालती जोशी - मन ना भये दस बीस - घर 56

****

वैश्वीकरण और समकालीन हिन्दी कविता

सविता *

प्रस्तावना – वर्तमान समय को हम वैश्वीकरण का युग कह सकते हैं। यह एक प्रकार से महाजनी सभ्यता का विस्तार है। भू–मण्डलीकरण को हम भूमण्डीकरण भी कह सकते हैं, जिसका मुखिया अमेरिका है। भूमण्डलीकरण की अवधारणा को हम 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का आधुनिक संस्करण भी मान सकते है किन्तु यह पूरी तरह सही नहीं हैं क्योंकि भूमण्डलीकरण का सूत्र वाक्य 'कृण्वन्तों विश्व बाजारम्' अर्थात् यह कुटुम्ब संस्कृति को विस्थापित करके बाजार संस्कृति को स्थापित करना चाहता है। इसका सबसे मुख्य उद्देश्य सम्पूर्ण विश्व को एक 'ग्लोबल विपेज' में तब्दील करना है। हम कह सकते हैं कि वैश्वीकरण एक ऐसी नयी विश्व–व्यवस्था है, जिसके माध्यम से समस्त भूमण्डल का सुख–दु:ख, हानि–लाभ एक करने की अपार सम्भावनाओं की तलाश की जाती है।

गाँधी जी हिन्दी स्वराज में जिस पश्चिमी सभ्यता से अलग रहने को कहा था, आज हम उसी पश्चिमी सभ्यता को उदारवाद, नवउदारवाद, नवपूँजीवाद, देहभोगी, उपभोक्तावाद आदि के माध्यम से अपनाते जा रहे है, जिसका परिणाम यह हुआ कि हम अपनी ही सभ्यता, संस्कृति, दर्शन, खान–पान, रहन–सहन आदि से विलग होते जा रहे हैं।

वर्तमान समय में कम्प्युटर, इण्टरनेट, मीडिया क्रांति आदि के माध्यम से सम्पूर्ण विश्व के दु:ख–दर्द, तकलीफों, मतभेदों, द्वन्दों आदि को वैश्वीकरण के मुखिया अर्थात् अमेरिका द्वारा करने का प्रयास किया जाता है। किन्तु वास्तविकता कुछ और ही है, वास्तव में भूमण्डलीकरण और अमेरिका वर्चस्व के कारण व्यक्ति और समाज की सृजनशीलता का क्षरण हुआ है।

समकालीन हिन्दी कवियों ने भूमण्डलीकरण रूपी संकट से उबरने के लिए अपनी धारदार कविताओं के माध्यम से जनता को जाग्रत करने का प्रयास किया है। समकालीन हिन्दी कवियों ने भूमण्डलीकरण के माध्यम से बाजारवार, पलायनवाद, उपभोक्तावादी संस्कृति, महँगाई, राजनीतिक विद्रुपता आदि का विरोध किया है।

भूमण्डलीकरण का सीधा संबंध कारपोरेट संस्कृति अर्थात्– बाजारवाद से है जिसकी चरम परिणति है– उपभोक्तावाद यानी अपरिमित सुखभोगवाद। वैश्वीकरण के माध्यम से विज्ञान पर आधारित आधुनिकीकरण अर्थात् तर्क प्रधान समाज का विकास होता है, जिसमें भोगवादी संस्कृति का विकास होता है तथा पारिवारिक मूल्यों का निरन्तर ह्रास होता जा रहा है। वर्तमान आधुनिक युग में परिवार के मूल्यों एवं स्वरूपों में परिवर्तन हुआ है जिसके द्वारा परिवार के व्यक्तियों का वस्तुकरण होता जा रहा है।

भूमण्डलीकरण से बाजारवाद को प्रोत्वाहन मिलता है किन्तु भारत का इतिहास गवाह है कि जब–जब विदेशी सत्ता, विदेशी व्यापार एवं पाश्चात्य संस्कृति का वर्चस्व भारत में बढ़ा है, तब–तब देश के उद्योग–धन्धे, व्यापार, भारतीय बाजार आदि चौपट हुये है। बाजारवाद भारतीय समाज के लिए किस तरह खतरनाक साबित हो रहा है, इसका नमूना हम रामदरश मिश्र की 'विश्व ग्राम' कविता में देख सकते हैं–

'अब तो विश्व के सम्पन्न वणिक देश
विश्वग्राम का मोहक नारा देकर पिछड़े देशों में
फैलाते जा रहे हैं बाजार का रंगीन माया जाल
यानी एक नया उपनिवेश
उनके द्वारा बनायी गयी वस्तुएँ
दूसरे देशों के लिए
जरूरी न होकर भी जरूरी बनती जा रही हैं
उनके मोहक पाष में बंधकर
लोग उन्हें सगर्व सजाते रहे है अपने घरों में
और अनजाने ही स्वयं निष्कासित
होते जा रहे हैं घर से।'[1]

बाजारवाद के माध्यम से व्यक्ति विदेशी सामान को खरीदने में लाखों रूपये खर्च करने को तैयार रहते है, किन्तु अपने देश में निर्मित कुटीर उद्योगों की वस्तुओं को खरीदना अपनी शान के खिलाफ समझते हैं। इससे कहीं न कहीं व्यक्ति अपनी सभ्यता, संस्कृति से दूर होता जाता है।

वर्तमान समय में विज्ञान, प्रौद्योगिकी आदि जीवन का आधार बने हुए है। विज्ञान ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन किया है। विभिन्न प्रकार की औषधियों ने जहाँ आज जीवन प्रत्याशा को बढ़ाया है वहीं, विभिन्न प्रकार के कीटनाशकों एवं उर्वरकों के प्रयोग से कृषि की वैज्ञानिक तकनीकी थोपी गयी। फसलों को कीड़ों आदि से बचाने के लिए फसलों के जीवन तक में परिवर्तन किया गया है किन्तु इन सबका परिणाम बहुत भयंकर है। अत्यधिक कीटनाशकों का प्रयोग एवं उर्वरक रसायनों के प्रयोग से उपजे अनाज को खाने से मानव विभिन्न प्रकार की बीमारियों से ग्रसित होजा जा रहा है। समकालीन कवि ज्ञानेन्द्रपति की 'नुकसान' कविता के माध्यम से इस विडम्बना को समझ सकते हैं–

'जान–माल का नुकसान बताने वाली खबरों में
वह नहीं बताया गया है।
जान उनकी, जिनकी जान सस्ती है,
माल उनका, जिनके पास महँगा माल है
तरह–तरह के नुकसानों में नहीं है हरसू
कीड़ों से बचाने के लिए
फसलों के पूरे जीन बदले जा रहे हैं
नैतिकता के नुकसान का खामियाजा

*शोधार्थी (हिन्दी) भाषा अध्यनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

पूरे समाज को भुगतना पड़ेगा।।'[2]

समकालीन कवि इस बात से कतई अंजान नहीं नहीं है कि विश्व के लिए विकास और प्रगति की अवधारणाा काफी बदल चुकी है। स्वार्थी मनुष्य ने अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए जैव विविधता का भी विनाश करने से पीछे नहीं हटता है।

भूमण्डलीकरण के दौर में सबसे अधिक पलायन या विस्थापन हुए हैं। विकास के नाम पर सरकार एवं बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ किसानों एवं आदिवासी लोगों से उनके गाँव, खेत, जंगलों आदि से बेदखल कर रहे हैं। तथा निम्न वर्ग के किसान, मजदूर, आदिवारी आदि शहरों की तरफ रोजगार की तलाष में पलायन कर रहे हैं।

'समकालीन कवि ऋतुराज की यपुनर्वास' कविता में हम विस्थापन का दर्द झेल रहे लोगों की तकलीफ को समझ सकते हैं–

'एक षड्यन्त्र ने बेदखल कर दिया किसी किसान को
किसी गोंड आदिवासी को कि यहाँ सड़क बननी है
यहाँ बांध के पानी से सिचांई होनी है
यहाँ फैक्ट्री लगने से हजारों लोगों को काम मिलेगा
चतुर सुजान अपने भव्य महलों की रक्षा के लिए
ऐसे ही सपनों के घर बनाते हैं और ढहा देते हैं उन्हें
छूसरों के घरों पर
वे कहते हैं हमारे भी नुकसान हुआ है
चलो, फिर से बना देते है, तुम्हारा घर
इसी तरह उजाड़ के बाद होता है पुनर्वास।।'[3]

औद्योगिक विकास के नाम पर जिस आम आदमी को स्वावलम्बी बनाने की बात की जा रही है, वही आम आदमी मजदूर बनकर दर–दर की ठोकरें खा रहा है जो किसान समाज का पालक कहा जाता है, वही किसान आत्महत्या करने के लिए मजबूर है। आखिर क्या–क्या कारण है कि किसान आत्महत्या करने के लिए मजबूर है, जबकि भारत दिन–प्रतिदिन विकास के पथ पर अग्रसर हो रहा है। अगर हम इनकी वजह को देखें तो यही बात सामने आती है, विकास गाँव को मुख्यधारा से जोड़ने की बात करती है जिसके माध्यम से गाँव, मजदूर व किसानों का कल्याण होगा किन्तु सच्चाई कुछ और ही है। वर्तमान समय में किसान को अपनी फसल की सिंचाई के लिए नहरों से पानी नहीं मिलता, बीजघरों से उचित मूल्यों पर फसलों के बीज नहीं मिलते हैं, प्राकृतिक आपदाओं से नष्ट हुई फसल का उचित मुआवजा नहीं मिलता, बैंकों से ऋण भी उन्हें आसानी से नहीं मिलता। इन सब समस्याओं से त्रस्त किसान के पास आत्महत्या के अतिरिक्त दूसरा रास्ता नहीं रहता क्योंकि उनकी जीविका का आधार उनके खेत, फसल ही होती है जब वे नष्ट हो जाते हैं तो किसान जीकर भी क्या करेगा। आत्महत्या की विडम्बना को हम लीलाधर मंडलोई की कविता 'अपमान' के माध्याम से समझ सकते हैं–

'एक किसान और मर गया
इसे आत्महत्या कहना
अपमान होगा
मरने के समय
वह बैंक का दरवाजा खटखटा रहा था
बेषक यह आत्म हत्या नहीं है, हत्या है।[4]
पर हत्यारा कौन है?
धूमिल के शब्दों में–
ठस पर मेरे देश की संसद मौन है।'[5]

पूँजीवाद और साम्राज्यवाद के नवीनतम रूप वैश्वीकरण के इस दौर में पूरे विश्व को एक गाँव में तब्दील करने की योजना है किन्तु इस योजना में सब से अधिक नुकसान गाँव के किसान व मजदूर वर्ग का हुआ है। ग्लोबल गाँव में गाँव की असली तस्वीर ही गायब है। विकास के नाम पर किसानों को उनके गाँव से छल–बल से भगाया जा रहा है। नंदीग्राम व भूमि अधिग्रहण की भयावहता हमारे सामने सामने है। उदय प्रकाष की यचौथा शेर' कविता में किसानों पर अत्याचार का यथार्थ चित्रण मिलता है–

'बीस मारे गये कर्नाटक में
बिहार में तीस
बंगाल में चालीस, पंजाब में पचास
लोग मरे
लोग लापता हुए
लोगों ने आत्महत्याएं की
लोग निकाले गए
लोग छांटे गये।'[6]

इस आत्महत्या के प्रश्न को समकालीन कवि प्रेमषंकर रघुवंषी भी उठाते हैं–

य'दिल्ली को जाने बिना
इस देश को नहीं जाना जा सकता क्या?
जबकि हमारे क्षेत्र में
डूब को जाने बिना
नर्मदा सागर में डूब गये सैकड़ों हरसूद
किसानी कर्म जान लेने के बाद भी
खेतों की गोद में
आत्महत्या को मजबूर
होते जा रहे हैं किसान।।[7]

वर्तमान समय में भूमण्डलीकरण एक शब्द नहीं रहा बल्कि एक संस्कृति के रूप में इसका प्रयोग हो रहा है। पूँजीवाद और नवउदारवाद ने सभी परम्परागत प्रतिमान ध्वस्त कर एक नयी संस्कृति को स्थापित किया है। जिसका संबंध नव साम्राज्यवाद से है। हम भूमण्डलीकरण को नव साम्राज्यवाद का ही रूप मान सकते हैं। वर्तमान समय में पूँजी का वर्चस्व बढ़ने से भारतीय समाज की पुरानी संस्कृति चूर–चूर हो रही है तथा उसका स्थान नवीन संस्कृति का विकास हो रहा है, जो पूरी तरह से पूँजी पर आधारित है। हम नस्लवाद, जातिवाद, क्षेत्रवाद आदि को इसी नयी संस्कृति की देन कह सकते हैं। वर्तमान समय में परिवार के स्वरूप में भी परिवर्तन आया है। संयुक्त परिवार के स्थान पर एकल परिवार की प्राथमिकता ने अनेक समस्याओं जैसे– एकाकीपन, कुण्ठा, निराषा, पारिवारिक असुरक्षा आदि को बल मिला है। वर्तमान समय में व्यक्ति आलीशान इमारतों एवं सर्वसुख भोगकर भी घर की तलाष में भटकता रहता है। यह उसी घर की तलाष है, जिसे केदारनाथ सिंह एवं अज्ञेय जी अपनी कविताओं के माध्यम से खोजते रहते हैं–

''वह घर नहीं मिला
मरूस्थल जहाँ जलहरी में देवता मर रहे हैं,
जलहरी सूख रही है।''[8]

संयुक्त परिवार के विखण्डित होने की परम्परा से दु:खी समकालीन कवि राजेष जोषी का कहना है कि–

य'सुख–दु:ख में भी पहले की तरह इकट्ठा नहीं होते हैं लोग

सब बेचैन भाग रहे हैं।''[9]

आज के भूमण्डलीकरण के दौर में भारतीय अर्थव्यवस्था को विश्व पूँजीवाद का एक हिस्सा बनाने का प्रयत्न किया जा रहा है। वर्तमान समय में जन संचार के साधनों का प्रयोग वस्तुओं का प्रचार कर सामाजिक वर्गभेद को नकारने की कोशिश हो रही है। सामान्य जनता पर अभिजात्य वर्गीय मूल्यों को लादा जा रहा है, जो लाखों लोगों की भूखमरी, निर्धनता आदि को नज़रअंदाज कर लेती है। वर्तमान समय में जनसंचार के बढ़ते वर्चस्व को स्पप्निल श्रीवास्तव के शब्दों में इस प्रकारसे समझा जा सकता है–

'सारा शहर एंटिना से भर जाएगा
छत पर नहीं मिलेगी परिन्दों को जगह
टेलीविजन पर हत्यारे का हुलिया बयान
हो रहा है
संगीत में हत्या की चीख
भरी हुयी है।
हर शो की अगली किश्त में
आदमी के मारे जाने के तरीके
दिखाये जाएगे।'[10]

भूमण्लीकरण के माध्यम से सभी देशों के ऊपर अमेरिका सरकार ने अपना एकाधिकार जमाने के नये–नये तरीके खोज निकाले है। जिसके माध्यम से वह देशों के खनिज तत्वों, संपदाओं आदि में हस्तक्षेप करने लगा है। जिसके चलते अन्तर्राष्ट्रीय विश्व संगठनों का मानना है कि वैश्वीकरण के फलस्वरूप भी उन देशों की हालत नहीं सुधरी है, जो भूख, गरीबी एवं बेरोजगारी एवं आर्थिक विपन्नता से त्रस्त थे। हांलाकि सभी देशों के बारे में ऐसा नहीं कहा जा सकता है, कुछ ऐसे भी देश हैं, जिन्होंने वैश्वीकरण के फलस्वरूप अपने जीवन स्तर में काफी सुधार किया है किन्तु अगर हम भारत जैसे विकासशील देश की बात करें तो यहाँ पर वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप शहरीकरण, बाजारवाद, उत्तर–आधुनिकता आदि को बढ़ावा मिला है, चूंकि भारत सदैव से ही गाँवों का देश रहा है। गाँव ही भारत की अर्थव्यवस्था की नींव रहे हैं; किन्तु वर्तमान समय में भारतीय कृषकों का अस्तित्व खतरे में है। उनकी कृषि उपज एवं कुटीर उद्योग भी विलुप्तप्राय होने की कगार पर है फिर भी किसान प्रतीक्षा कर रहा है, सब कुछ ठीक होने की। वह प्रतीक्षा करना ही नियति समझता है। इसी प्रतीक्षा में हस किसान की निराषा, कुण्ठा, एवं मजबूरी को देख सकते हैं। ऋतुराज की यप्रतीक्षा' कविता को नमूने के तौर पर देख सकते हैं–

'वे केवल प्रतीक्षा करना जानते हैं
क्योंकि जीवित बचे रहना उनकी मजबूरी है
खुद के होने और पहचानने के लिए
जैसे रात प्रतीक्षा करती है प्रेम की,
जैसे मानसून उठता है पूरब से
फिर पश्चिम से तो सारा देश प्रतीक्षा करता है
सुख समृद्धि की
गणदेवता कुछ दिनों के लिए जाग्रत हो जाते हैं
फिर हताश होकर सो जाते हैं
या चले जाते है, बीहड़ों की तरफ।।[11]

वैश्वीकरण के फलस्वरूप भारतीय संस्कृति और सभ्यता का अस्तित्व खतरे में पड़ गया है। वर्तमान समय की भोगवादी संस्कृति के फलस्वरूप अपने सांस्कृतिक मूल्यों, रीति–रिवाज, रहन–सहन आदि को भूलकर पाश्चात्य संस्कृति को बड़ी तत्परता से अपना रहे हैं। वैश्वीकरण के फलस्वरूप ही हम अपनी लोक संस्कृति, लोक–गीतों, त्यौहारों आदि को मनाने में पिछड़ापन महसूस कर रहे हैं। वर्तमान समय में भारत की वैवाहिक संस्कृति आदि में परिवर्तन हुआ है। हम पाश्चात्य संस्कृति व सभ्यता का अन्धानुकरण कर रहे हैं। अपनी परम्पराओं को लागू करने में हम पिछड़ापन महसूस कर रहे है, जिससे हमारी पुरानी परम्पराएँ दम तोड़ रही हैं। 'प्रेम अम्बुज' ने सांस्कृतिक संकट को लेकर लिखा है कि–

''वे चाहते है कि मैं अपना जन्म स्थान अपनी भाषा भूल जाऊँ अपनी नदी का नाम और उसका संगीत।।''[12]

समकालीन कवि बद्रीनाथ भी प्रेम की संस्कृति को बचाने का प्रयास करते हैं–

य'कोई रोम बचाएगा, कोई मदीना
कोई चाँदी बचाएगा, कोई सोना
मैं निपट अकेला
कैसे बचाऊँगा तुम्हारा प्रेम पत्र।।''[13]

वैश्वीकरण के फलस्वरूप मीडिया क्रांति की नव सांस्कृतिक साम्राज्यवादी शक्तियों ने विश्वभर के नये सृजन, चिन्तन के अवसर प्रदान किये हैं। वर्तमान समय में अर्थ (पूँजी) ज्ञान और मीडिया आदि ने मिलकर लोगों के सोचने का तरीका बदल दिया है। वर्तमान समय में मीडिया के माध्यम से पूरे विश्व में घटित होने वाली घटनाएँ लोगों को दी जाती है। इन घटनाओं व खबरों में अच्छी जानकारी कम होती है तथा हत्या, लूट–पाट, आगजनी, बलात्कार आदि की खबरे अधिक रहती है। मीडिया के माध्यम से ये खबरें जब आम जनता तक पहुँचती है जिससे आम जनता दषहत में आ जाती है तथा वह अनजाने डर की वजह से सदैव आतंकित रहती है। समकालीन कवि यऋतुराज' की यलोक कल्याणकारी राज्य' कविता को एक व्यंग्य के रूप में देखा जा सकता है–

'मैं अखबार नहीं पढ़ता हूँ
वह मुझे आतंकित करता है
खबर देता है आतंक में जीने के सिवा
अब कोई रास्ता नहीं बचा है
सत्ताएँ, उनका प्रतिरोध, स्वचालित मषीनों की
निर्ममता, वाक्–छल और आर्थिक परिश्रम के
विफल हो जाने की निराशा के बीच
अखबारी दुनिया उलटबाँसियों की एक दुनिया है।।'[14]

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि हमें भूमण्डलीकरण, उदारीकरण, निजीकरण, बाजारीकरण, उपभोक्तावादी संस्कृति, मॉल कल्चर आदि का प्रतिरोध करने की आवश्यकता है क्योंकि हमें अपनी सभ्यता, संस्कृति, भाषायी विविधता, कृषि, गाँव आदि को बचाना है। हमारी सभ्यता, संस्कृति, कृषि, धर्म, रीति–रिवाज, गाँव यही सब हमारे भारतीय होने की पहचान है। इसके लिए हमें अपने वर्तमान सुख–सुविधाओं में थोड़ी कटौती करनी पड़ेगी। अपने लोभ–लालच छोड़ने होगें। जिससे हम अपने भविष्य को सुरक्षित रख सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. रामदरश मिश्र– विश्वग्राम, समकालीन हिन्दी कवि, पृ.222
2. ज्ञानेन्द्रपति– नुकसान, शब्द लिखने के लिए ही यह कागज बना है, पृ.54
3. ऋतुराज– पुनर्वास– बया पत्रिका– अंक जुलाई–सितम्बर– 2014, पृ.67

4. लीलाधर मंडलोई– अपमान, बची हुई पृथवी ' अन्तर्देशीय', पृ.26–27
5. धूमिल– संसद से सड़क तक, पृ.6
6. उदय प्रकाष– चौथा शेर, वैश्वीकरण और हिन्दी कविता, पृ.207
7. प्रेमशंकर रघुवंशी– आत्महत्या, समकालीन भारतीय साहित्य, पृ.223
8. केदारनाथ सिंह– घर की तलाश, जमीन पक रही है, पृ.206
9. राजेश जोशी– संयुक्त परिवार, एक दिन बोलेंगे पेड़, सभ्भावना प्रकाशन, पृ.39
10. स्वप्निल श्रीवास्तव– ऐंटिना, समकालीन भारतीय साहित्य, पृ.190
11. ऋतुराज– प्रतीक्षा, बया पत्रिका– अंक जुलाई–सितम्बर– 2014, पृ.66
12. प्रेम अम्बुल– संकट, भारतीय साहित्य, पृ.28
13. बद्रीनाथ– प्रेम पत्र, समकालीन हिन्दी साहित्य, पृ.207
14. ऋतुराज– कल्याणकारी राज्य, बया पत्रिका– अंक जुलाई–सितम्बर, 2014, पृ.66

****

सार्वभौमिक मानव मूल्य और लोक साहित्य

डॉ. अमित शुक्ल *

शोध सारांश – यदि मानव मूल्यों को सहेज कर इस समाज में साहित्य के माध्यम से अगर उन्नति की ओर ले जाना है तो लोकसाहित्य इसके बीच की कड़ी अत्यंत सशक्त माध्यम है। लोकसाहित्य में जहां पारिवारिक संबंधों की मूलवत्ता को सशक्त रूप में अभिव्यक्ति मिली है। वहीं उनमें पारिवारिक संबधों की मूलवत्ता को सशक्त रूप में अभिव्यक्त किया है लोक साहित्य में निष्कपट हृदय की जो भावनाए मुखरित हैं। उनमें सच्चाई अनुभूति की गहराई एवं सामयिकता का यथार्थ शायद अभिजात वर्गीय कवियों तथा लेखकों की अलंकृत वाणी में देखने को नहीं मिलता, हर देश हर जाति की भाषा का अपना एक लोक साहित्य होता है, जो जनमानस की अभिव्यक्ति होता है। वह जनवाणी व लोकवाणी है, यह किसी व्यक्ति विशेष का नहीं है बल्कि समूह की वाणी है। इसका क्षेत्र अत्यंत व्यापक है।

शब्द कुंजी – मानव, मूल्य,लोक,साहित्य,समाज, जनमानस,आत्मीयता,मानव हृदय,लोकप्रतिनिधि, आत्मा,कृत्रिमता,लोकमानस,लोक सोच,दर्पण,संवेदना,लोकप्रतिनिधि, भू–मण्डलीकरण

प्रस्तावना – लोक साहित्य से ही किसी देश की सभ्यता को जाना जा सकता है, क्योंकि वह मानव की भावना से जुड़ा साहित्य है। यह मानव के हृदय में लिपटा रहता है, जो कृत्रिमता से कोसों दूर रहता है। इसमें मानवता की झलक, आत्मीयता को सहज ही देखा जा सकता है। 21 वीं शदी के भूमण्डलीकरण के इस युग में लोक साहित्य का महत्व और बढ़ गया है, क्योंकि यही दूर होते रिश्तों को जोड़ने का कार्य कर सकता है।लोक साहित्य में लोकगीतों, लोकगाथाओं, लोककहावतों, लोकनाट्यों में मानवता की झलक स्पष्ट दृष्टिगत होती है, क्योंकि यह लोक का, लोकमानस का और लोक सोच का एवं उसके मन का दर्पण होता है। यह धरती मानव हृदय के लिए अनुभवों और अनुभूतियों की पाठशाला है। मानव ने जब पहली बार इस धरती पर आँख खोली तो उसे पीठ पर हल्की सी थपकी और कानों में लोरी की मिठास का अनुभव हुआ। उसकी मधुर मुस्कान और किलकारी से माँ निढाल हो गई। इस प्रकार अनुभूतियों के रहस्यमय, सरस एवं रोमांचक वातावरण ने मानव के जीवन को इन्द्रधनुषी रंग दे दिए, इससे लोकमानस कभी गाने लगा, कभी थिरकने लगा और कभी पुलकित होकर गंगोत्री बन गया। उसके उद्गार लोककथाओं की सरिता बन गये। उसकी वाणी से ऐसा आकर्षण और जादू समा गया कि लोक के लिए शब्द कहावतें बन गई। उसकी भाषा में मुहावरे जुड़ गये और लोक साहित्य के लिये भावभूमि तैयार हो गई, जहाँ विभिन्न विधाओं के माध्यम से मानव की अनुभूतियाँ अभिव्यक्ति का रूप लेने लगीं। लोक साहित्य मानव के हृदय में समाये हुए भावों को विभिन्न रूपों में अभिव्यक्त देता है। इसमें क्षेत्र विशेष की आत्मा बोलती है। मानव के संस्कार और जीवन का चिरंतन सत्य बोलता है, यहाँ संस्कृति रूपायित होती है। कहावतों और मुहावरों में भी लोक को वाणी मिलती है, अनुभवों का संसार सामने आता है। मानव के व्यवहार, उसके आचार–विचार, उसके आचरण और जीवन दृष्टि के चित्र साकार होते हैं। लोक के आदर्श उसके जीवन की आधारभूत मान्यताए, कहावतों और मुहावरों में संचित होती है। ये मानवीय व्यवहार के विभिन्न रूप संवेदनाओं का विचित्र संसार, जीवन की हरियाली, मरण की उदासी, संघर्षों से जुड़ा जीवन, देखा हुआ समय भोगा हुआ यथार्थ, भविष्य की आशा, मन की व्यथा, रिश्तों की मिठास और बदलने या टूटने का दर्द सब कुछ रूपायित होता है। सत्ता और सेवा के दृश्य, मानव मन मानवेतर जगत का तारतम्य, मन की उड़ान, कल्पना की डोर और सबसे बड़ी बात यह है, एक अज्ञात रहस्य लोक की अनुभूति। यहीं जन्म मिलता है कहावत को और उपजता है, मुहावरा व कंठ से फूट पड़ता है जीवन का संगीत। 21 वीं सदी के भू–मण्डलीकरण के इस दौर में मूल्यहीनता, निराशा, हिंसा, आतंक ने जहाँ मानव में एक भय उत्पन्न कर दूरियाँ बढ़ा दी हैं ऐसे समय में लोकसाहित्य के माध्यम से मानव मूल्यों और संवेदनाओं को समाज में बनाए रखना एक महत्वपूर्ण कड़ी है क्योंकि लोक साहित्य में मानवीय सरोकारों के प्रति गहरी आस्था दृष्टिगत होती है। इनमें हृदय के वास्तविक उद्गार प्रस्फुटित होते हैं। ये किसी देश–परदेश अथवा क्षेत्र की सभ्यता संस्कृति और रीति–रिवाजों का मुँह बोलता साक्ष्य है। इसमें यथार्थ और आदर्श का सुन्दर समन्वय मिलता है। जो साहित्य मानव जीवन के केवल एक पक्ष का वर्णन उपस्थित करता है। वह सच्चा साहित्य नहीं कहा जा सकता है। जिस साहित्य में जन–जीवन की आशा निराशा सुख:दुख हर्ष–विषाद आदि सभी भावनाओं का चित्रण हो वही सच्चा अमर और लोकप्रतिनिधि साहित्य है, जिसकी झलक लोक साहित्य में मिलती है। लोक साहित्य उस निर्मल दर्पण के समान है, जिसमें मानव का अखिल तथा विराट स्वरूप पूर्णरूपेण प्रतिबिंबित होता है। लोक साहित्य की निर्मल निर्झरणी में अवगाहन कर केवल शरीर ही पवित्र नहीं होता प्रत्युत आत्मा भी पावन बन जाती है। भारत वर्ष के प्रत्येक जनपद का अपना लोक साहित्य रहा है। भोजपुरी, मगही, मैथिली, बुंदेली, अवधी, मालवी, निमाड़ी, छत्तीसगढ़ी, राजस्थानी, गुजराती, हरियाणवी, पंजाबी, काश्मीरी, मलयाली, कन्नड़, बंगला, ओड़िया, संथाली, मुंडारी आदि अनेक प्रकार के लोक साहित्य प्रचलित हैं। लोकभाषाओं में राष्ट्रभक्ति, प्रेम विरह, पाप–पुण्य, संयुक्त परिवार के चित्र, सास–बहू, ननद–भाभी, देवर–भाभी, भाई–भाई संबंध एवं प्रेम

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

वैमनस्य, बंन्ध्या का विलाप, कुँआरी लड़की की व्यथा–कथा, कन्यादान, बेटी की विदाई, वियोगिनी की दशा, बारहमासा, छमासा, चौमासा, विवाह के प्रसंग, देवी–देवताओं के गीत आदि की मर्मस्पर्शी अभिव्यंजना हुई है। साहित्य को जन जीवन, लोक जीवन और समाज से अलग नहीं किया जा सकता किन्तु साहित्य का सम्बन्ध स्पष्ट रूप से भाव और शब्द से है। शब्द का संबंध कर्म से और भाषा का संबंध समाज से है। साहित्य, समाज और मानवीय कर्म की संरचना है।[3] उसमें उसकी अनुभूति की संरचना का प्रयोग होता है। वह समाज के सांस्कृतिक बदलाव का हथियार बन जाता है। यही हथियार लोक जीवन एवं लोक संस्कृति की रक्षा का आधार बनता है। लोक चेतना ही वह व्यापक आधार है, जो लोक जीवन को झंकृत करता है और संवेदनशील साहित्यकार को अपने देश की संस्कृति के प्रति आकृष्ट और जागरूक करता है। साहित्य का विस्तार लोक जीवन, लोक साहित्य, लोक चेतना एवं लोक संस्कृति के माध्यम से ही संभव है। अत: लोक चेतना, साहित्य की सर्जनात्मक कल्पना है। ऐसे साहित्य में मनोवैज्ञानिकता एवं मानवीय अनुभूतियॉ परिलक्षित होती है। नगरों, गाँवों, महानगरों में जो सभ्यता पनपी है, वह सतत् विकासशील मानवीय चेष्टा की परिणति है और यही चेष्टा संस्कृति एवं लोक संस्कृति को अपने में समाविष्ट रखती है। लोक जीवन की कोख से उत्पन्न साहित्य, केवल लोक साहित्य ही नहीं है शिष्ट सहित्य भी है। राहुल सांकृत्यायन का कहना सही है कि – लोक जीवन से उत्पन्न लोक साहित्य एवं शिष्ट साहित्य सभी देशों और प्रदेशों में अपना अद्भुत सौन्दर्य और माधुर्य रखता है। इसके पीछे लम्बी और अविच्छिन्न परम्परा है। दीर्घजीवी साहित्य के सृजन के लिए हमें लोक जीवन तथा लोक सांस्कृति की विरासत को महत्त्व देना होगा। जो लोग लोक जीवन की परम्परा से कटकर प्रतिबद्ध साहित्य का सृजन कर रहे हैं वे न तो अपना, न अपने समाज का और न अपने देश का भला कर रहे हैं। मानवता के लिए अदम्य प्रेम तथा लोक जीवन को समग्र रूप से देखने के कारण ही साहित्य स्थायी या कालजयी बन सकता है। लोक जीवन निरंतरता का नाम है, यही निरंतरता परम्परा बनती है। यह परंपरा सदा जीवन्त और जागृत नहीं रहती। यदि कोई लेखक उसी जागृत क्षण को पकड़कर साहित्य का सृजन करता है तो वही उसके लेखन का सर्वोत्तम समय है। यह बहुमूल्य समय जीवन की दिव्यता से निर्मित करने का है।[4] यह जीवन संवारने और लेखन को परिष्कृत करने का क्षण है। लोक जीवन की चेतना को संवारने और उसकी समूह चेतना को समन्वित करने का समय है। बड़ी और महान् कृतियाँ समय के ऐसे ही क्षण से जन्म लेती है लोक जीवन और लोक संस्कृति और परम्परा का अक्षुण्ण प्रभाव साहित्य पर पड़ता है। साहित्य और लोक संस्कृति का घटक मनुष्य, केवल मनुष्य होता है, जो मनुष्यता की सपूर्ति में लगा रहता है। जीवन को जीने में उसकी आस्था है संहार करने में नहीं। वह अर्थ से बँधी है पर उसकी केन्द्रीयशक्ति अध्यात्म है। कुण्ठा, निराशा और अनास्था की मनस्थितियों से व्यक्ति ही नहीं, परिवार तक टूट जाता है, लेकिन लोक चेतना और लोक संस्कृति की सहज आशा और आस्था उसे जोड़े रहती है। लोक जीवन में व्याप्त लोक संस्कृति के संस्कारों, त्योहारों, रीति रिवाजों, आदि ने व्यक्ति को व्यक्ति और समाज तथा परिवार में बाँधने का ऐसा प्रयत्न किया है कि आधुनिक यांत्रिकता और वैज्ञानिक बौद्धिकता के लगातार हमले उसे तोड़ नहीं सके। असल में लोक संस्कृति में वह रस है, जो लोक जीवन के निर्जीव को भी अपनी संजीवनी से हरा भरा रखता है। वह कर्माश्रयी ऊर्ज्जा बनकर विजातीय तत्त्वों से जूझती रहती है। और वह समन्वयकारी स्वच्छंदता बनकर लोक जीवन और परम्परा का विकास करती है। इसी विकास में साहित्य अपना उपजीव्य खोजता है। लोक जीवन और लोक संस्कृति में सामूहिक सामाजिकता की चेतना काम करती है, जो पारस्परिक सहानुभूति या प्रेम के आधार पर सबको जोड़ती है। किसी भी तरह के भेदभाव से मुक्त होने के कारण उसकी पाचनशक्ति बहुत तेज है।[5] उसमें आर्य, द्रविड़, कोलकिरात, निषाद और अनेक जनजातीय संस्कृतियों के तत्त्वों का संघटन मिलता है। तथ्य तो यह है कि लोक जीवन के लिए जो भी उपयोगी हुआ वह लोक संस्कृति और उसका साहित्य बन गया। सच यह है कि लोक जीवन में व्याप्त लोकसंस्कृति, परम्परा और साहित्य ही भारतीय संस्कृति, परम्परा और साहित्य की जड़ में है। उसके रस से भारतीयता का पौधा हरा भरा रहता है। अगर गहराई से सोचें तो यह पाएगे कि लोक जीवन और लोक संस्कृति ही भारतीयता की रक्षा करते है। टुटते हुए परिवार, समाज को लोक संस्कृति और साहित्य के मेड़, मैर ही जोड़ते है। समाज बिखरता है, तो लोक संस्कृति के उत्सव उसे एक करते है। देश यदि प्रदेशों, भूगोलों और भाषा में बँटता है तो लोक जीवन के गीत ही उसे समेटते है। वे जुड़ाव की संजीवनी है। जहाँ कहीं लोक जीवन, परम्परा और साहित्य की बात होती है, आज का व्यक्ति जो भौतिकता की होड़ और जीवन की यांत्रिकता से पूरी तरह घिर गया है। तत्काल संकीर्णता, पक्षधरता और आंचलिकता का आरोप लगा देता है लोक संस्कृति और साहित्य ही, वह माध्यम है जो आज भी देश में और साहित्य में मन की उत्फुल्लता, आशा और आस्था के आवेग को बनाये रखता है। परम्परा और लोक जीवन के साहित्य में व्यक्त संस्कार, उत्सव, रीति रिवाज, लोक मूल्य आदि भी व्यक्ति से बाँधते हैं। जब तक लोक जीवन और परम्परा से उपजीव्य बनाकर साहित्य जीवित है, तब तक भारतीय जनजीवन, उसकी एकता और उकी संस्कृति मर नहीं सकती। लोक जीवन, लोक चेतना और परम्परा का प्रयोग नयी कविता और आधुनिक साहित्य में भी हुआ है, यह उसकी निरन्तरता का प्रमाण है। जो सहित्य अपना उपजीव्य भारतीय परिवेश, लोक जीवन और परम्परा में खोजता है वही दीर्घजीवी होता है।[6]

निष्कर्ष यह है कि आज भले ही मानवीय मूल्यों का क्षरण होता दिखाई दे रहा है। परन्तु यह सत्य है कि लोकसाहित्य की सर्वाधिक सशक्त भूमिका ने एक नई उर्जा व शक्ति दी है। आज मानवीय मूल्यों के प्रति ये साहित्य पूर्णत प्रतिबद्ध है।ष्लोक साहित्य लोक संस्कृति का फोटोग्राफर है, जो उसकी विभिन्न भंगिमाओं को उजागर करता है तथा जिसमें हमें प्रकृति व जन जीवन के समस्त पक्षों की झांकी देखने को मिलती है पर आज के भूमंडलीकरण के इस दौर के कोलाहल पूर्ण औद्योगिक प्रगति के युग में मानव प्रकृति के सम्पर्क में रहकर भी उसके शाश्वत सौंदर्य के अवलोकन और अनुभूति से वंचित है। मानव की संवेदनशील भावनाएं आज अशक्त होती जा रही हैं देखा जाए तो आज पाश्चात्य सभ्यता और तथाकथित आधुनिकता के मोह में हमारी सोच अभिव्यक्ति और भाषा का सहज स्वरूप प्रदूषित हो गया है। कहावतें, मुहावरे और यहां तक कि इस विरासत से जुड़ी सटीक शब्दावली भी लुप्त हो रही है, लोकसाहित्य उपेक्षित हो रहा है हम अपनी सभ्यता, संस्कृति और धरती के मूल संस्कारों से वंचित हो रहे हैं। मूल्यहीनता के इस दौर में तमाम कोशिशों के बावजूद भी परिणाम लोकसाहित्य में खोजने के लिए आत्मनिरीक्षण प्राचीन संस्कृकि और नवजगरण विवेकशील आधुनिकता और विकास का सामाजिक, आर्थिक न्यास से संबध स्थापित करना आवश्यक हो जाता है। लोक साहित्य की सभी विधाओं में इन मूल्यों के उत्तर किसी न किसी रूप में मिलते अवश्य हैं, आवश्यकता उनके स्वरूप को सही मायने मे परखने की है। अत: अपनी जड़ों और संस्कृति को जोड़े रखने के लिए लोकसाहित्य और उसकी विधाओं के संरक्षण करने की अत्यंत

आवश्यकता है।7

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सम्मेलन पत्रिका हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, अंक 77 पृष्ठ 22।
2. सम्मेलन पत्रिका, लोक संस्कृति विशेषांक, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग सन् 25, 127, 141, 152।
3. सार संक्षेपिका एवं कार्यवाही विवरण कल्याण स्नातकोत्तर महाविद्यालय भिलाई- पृ.- 20,22, 35।
4. डॉ. अमित शुक्ल का लेख, विन्ध्य वैभव पत्रिका अंक तृतीय 2009 प्रकाशक : श्रीराम विन्ध्य विकास समिति रीवा पृ.-14, 15, 45, 46।
5. चौमासा अंक 79 संपादक- डॉ. कपिल तिवारी पृ.-36, 107
6. भारतीय लोक साहित्य- श्याम परमार, पृ.-36, 40, 48
7. स्वयं का सर्वेक्षण और निष्कर्ष

****

बाल साहित्य की संस्कार क्षमता एवं उपादेयता

अनिता बिरला *

प्रस्तावना – बालक और बाल साहित्य की चर्चा होने पर द्वारिका प्रसाद माहेश्वरी के गीत की यह पंक्तियाँ सहज स्मृति में आ जाती है–

बालक सुमन पराग सरस, रस गंध है,
बालक वाल्मीकि का पहला छंद है,
बालक परमहंस शिव सुंदर सत्य है,
बालक सरगम कला स्वयं साहित्य है।

प्रस्तुत पंक्तियाँ बालक की सम्पूर्ण विशेषताओं को प्रतिबिंबित करती है अर्थात् बालक ही कल है। कला की सबसे महत्वपूर्ण चीज पराग भी बालक ही है। फूलों का रस और वातावरण को भीनी–भीनी खूशबू से महकाने वाली सुगंध है। वाल्मीकि के मुख से निकलने वाला प्रथम छंद भी बालक ही है और बालक ही परमात्मा का अंश शिव, सुंदर और सत्य है। अर्थात् संसार की क्रियाशीलता व निरंतरता का मूल आधार बालक ही है। बालक के बिना संसार व समाज की कल्पना नहीं की जा सकती। बालक ही वह एफ डी है जो बुढ़ापे में व्यक्ति का सहारा बनती है।

बालपन मानव जीवन की नींव होता है। बाल्यावस्था में जिन संस्कारों, आदतों और विचारों से नीवं को मजबूत बनाया जाता है। उसी पर व्यक्ति, समाज व राष्ट्र के भव्य भवन का निर्माण होता है। यदि नींव मजबूत रहेगी तो कभी भी भवन के गिरने का खतरा नहीं रहेगा और यदि नींव ही कमजोर रहेगी तो भवन के गिरने का भय सदैव बना रहेगा। अत: बाल साहित्य बालक को संस्कारों से परिपूर्ण कर की नींव मजबूत करता है।

बालक के विकास के लिए जिस प्रकार जल और वायु आवश्यक है। शारीरिक विकास के लिए उत्तम भोजन आवश्यक है। उसी प्रकार बालक के बौद्धिक व चारित्रिक विकास के लिए उत्तम बाल साहित्य नितांत आवश्यक है।

बाल साहित्य बालक की रूचियों कल्पनाओं बौद्धिक क्षमताओं उनकी सूझ–बूझ उनका परिवेष उनकी मानसिकता आदि को केन्द्र में रखकर लिखा जाता है। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् के ग्रंथ मातृ भाषा हिन्दी शिक्षण के अनुसार बाल साहित्य बाल्यावस्था की शारीरिक मानसिक तथा मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं का ध्यान में रखकर लिखा गया साहित्य है।

अर्थात् बाल साहित्य बच्चों की भाषा में उनकी मानसिक स्तर पर उनके मन के भावों को परखकर उनकी रूचि व कल्पना का ध्यान रखकर लिखा जाता है। जिसका प्रत्यक्ष उद्देश्य तो बालक का मनोरंजन होता है, परंतु अप्रत्यक्ष उद्देश्य बालक को संस्कार सम्पन्न करना व जीवनोपयोगी शिक्षा प्रदान करना होता है। प्रसिद्ध बाल साहित्यकार विष्णुकांत पाण्डेय लिखते है– बच्चों के स्वस्थ मनोरंजन के साथ उनके भावी जीवन के लिए उन्हें स्वयं तैयार कर देने की परोक्ष उत्प्रेरणा देने वाला साहित्य ही सच्चा बाल साहित्य है।

प्रारंभ से ही बाल साहित्य की महत्ता को समझकर कभी माँ तो कभी दादी–नानी द्वारा बालकों का मनोरंजन करने व संस्कार सम्पन्न करने के लिए नीतिगत कहानियों का सहारा लिया गया तो कभी बालक के चंचल मन को शान्त करने के लिए लोरियों का।

प्रारंभिक बाल साहित्य केवल मौखिक रूप लोककथाओं एवं परीकथाओं व लोरियों के रूप में था। परंतु बाद में धीरे–धीरे लिखित रूप में पंचतंत्र, हितोपदेश, जातक कथाएँ, विक्रम बेताल आदि रूपों में आया।

चाहे पंचतत्र के रचयिता विष्णु शर्मा हो या हितोपदेश के रचयिता नारायण पंडित अथवा अन्य श्रेष्ठ बाल साहित्यकार सभी ने बाल मनोविज्ञान को समझकर ऐसा साहित्य सृजित किया जो न केवल बालक का प्रत्यक्ष रूप से मनोरंजन करता था।

बल्कि उन्हें अप्रत्यक्ष रूप से जीवन मूल्यों की शिक्षा देकर संस्कार सम्पन्न भी करता था। आज बाल साहित्य मौखिक व लिखित श्रव्य दृष्य सभी रूपों में प्राप्त होता है। आज बाल साहित्य शिशु गीत बाल कविता, बाल कहानी, बाल नाटक, बाल उपन्यास, यात्रा वृतांत, जीवनी, संस्मरण तथा स्फुट बालोपयोगी लेखन आदि विविध विधाओं में प्राप्त होता है। इस बदलाव के बावजूद आज भी बाल साहित्य का मुख्य लक्ष्य बाल कल्याण ही है।

डॉ. ओमप्रकाश सिंहल ने किस प्रकार चींटी जैसे छोटे जीव पर कविता लिखकर उसे बाल प्रेरणा का केन्द्र बनाया है। चींटी के माध्यम से वे बाल पीढ़ी को मेहनत करने मिलजुलकर रहने व निरंतर प्रयत्न करने की प्रेरणा देते है। उदाहरण –

नन्हीं सी चींटी देखो
कितनी मेहनत करती है
जगह सूंघती फिरती है
सदा मेल से रहती है
मुँह से दाना ले जाती
अपने बिल में रख आती
गर्मीभर यह करती काम
वर्षा में करती आराम

स्वस्थ बाल साहित्य जहाँ एक ओर बच्चों को आदर्श नागरिक बनाता है वहीं उनमें अच्छे संस्कार डालकर उनके भविष्य को भी उज्ज्वल करता है। बच्चों के बौद्धिक और चारित्रिक विकास के लिए उत्तम व स्वस्थ बाल साहित्य अति आवश्यक है। बाल साहित्य की संस्कार क्षमता पर प्रकाश डालते हुए श्री भगवती प्रसाद द्विवेदी कहते है– सच्चा बाल साहित्य न तो कोरा उपदेश होता है। और न आंकड़ों के मायाजाल में उलझता हैं।

* शोधार्थी (हिन्दी) भारतीय बाल साहित्य संस्थान, इन्दौर (म.प्र.) भारत

सही मायने में बाल साहित्य बाल मन की गुत्थियों को सुलझाने और उसे जीवन मूल्यों से जोड़ने का एक नायाब जरिया है।, उनके अनुसार आदर्ष बाल साहित्य वह है, जो बच्चों के अंतर्मन के कौतूहल और जिज्ञासाओं के तर्कपूर्ण सरस मनोरंजक ढंग से शान्त करता है।

आज आवश्यकता इस बात की है कि माता-पिता बाल साहित्य की उपयोगिता समझे और बच्चों को सिर्फ सारी आधुनिक सुविधाएँ देकर ही अपने कर्त्तव्य की इतिश्री न समझें बल्कि बच्चों के लिए समय निकालें उन्हें बाल साहित्य की अच्छी पत्रिकाओं एवं पुस्तकों से जोड़ें। यदि बाल साहित्य के आधारभूत तत्वों पर दृष्टि डाली जाये तो मनोरंजन कौतूहल, भाषा की सरलता, सत्य बोलने की सीख, निरंतर कर्म करने की सीख, किसी भी प्राणी को कष्ट न देने की सीख एवं लोभ, क्रोध, मोह, लालच से बचने की सीख दी गई हैं। बाल साहित्य में उपलब्ध ज्ञान के असीम तत्वों से बालक में सहज रूप से ही अच्छे गुणों का विकास हो जाता है।

बालक परिवार समाज व देश की सर्वांगीण सम्भावना शक्ति है। बाल साहित्य बालक में उन अंकुरों को प्रस्फुटित करता है, जो बड़े होकर उन्हें जीवन के सत्य को पहचानने में सहायता करता है। बच्चों में आत्मनिर्माण एवं आत्मज्ञान का सबसे बड़ा साधन बाल साहित्य ही है। बाल साहित्य बालक में नवीन चेतना जाग्रत कर उसके आत्मविश्वास को दृढ़ कर जीवन संग्राम में दृढ़तापूर्वक खड़े रहने की शक्ति प्रदान करता है। बाल साहित्य में बालक के चरित्र निर्माण व व्यक्तित्व निर्माण के सभी गुण समाए हुए है। बाल साहित्य न केवल बालक को मनोरंजन प्रदान करता है बल्कि उसे ज्ञान व संस्कारों से परिपूर्ण कर उसके भविष्य को उज्ज्वल बनाता है।

आज साइबर युग में बच्चा या तो दिनभर कार्टून देखता है। कम्प्यूटर पर वीडियो गेम खेलता है। अथवा मनोरंजन के नाम पर कुछ भी देखता रहता है। परिणाम स्वरूप बाल पीढ़ी तेजी से अनचाही दिषा में जा रही है। उसमें जीवन मूल्यों का हास हो रहा है। अत: बाल पीढ़ी को एक सकारात्मक दिशा देने, उसे जीवन मूल्यों से जोड़ने उन्हें संस्कारों से परिपूर्ण करने के लिए बाल साहित्य की आवश्यकता को माता-पिता एवं शिक्षकों को समझना होगा। बालक के शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक एवं चारित्रिक विकास के लिए सिर्फ किताबी ज्ञान पर्याप्त नहीं इस बात को माता-पिता और शिक्षकों को समझकर उत्तम बाल साहित्य का चयन उनके लिए करना होगा। डॉ. सत्येन्द्र वर्मा के अनुसार बाल साहित्य सद्प्रेरणा के लिए दीप स्तंभ का कार्य करता है।

साहित्य में जादुई शक्ति होती है। यह शब्दों का एक मृदु जंगल है। जिसको पढ़ने से विभिन्न परिस्थितियों में विभिन्न रसों की अनुभूति होती है। बच्चे प्रतिपादित समस्या के प्रति सोचते है। विचार करते हैं चिंतन करते है। पुन: एक निश्चित धारणा बनाते है। इस माध्यम से वह जीवन के प्रति व्यावहारिक हो जाते है। और उनमें कठिन परिस्थितियों पर विजय प्राप्त करने की शक्ति जाग्रत होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मातृभाषा हिन्दी शिक्षण, पृष्ठ 314
2. बाल साहित्य परम्परा और जयप्रकाष भारती का बाल साहित्य, पृष्ठ 11
3. समकालीन हिन्दी बाल साहित्य, शुचिता सेठ, पृष्ठ 89
4. हिन्दी बाल साहित्य विमर्श साहित्यिक साक्षात्कार डॉ. शकुंतला कालरा पृष्ठ 128
5. समकालीन बाल साहित्य परख और पहचान, डॉ. सुरेन्द्र विक्रम, पृष्ठ 16

****

भाषा को प्रभावित करने वाले तत्व

डॉ. निरुपमा व्यास *

प्रस्तावना – भाषा को प्रभावित करने वाले तत्वों का संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत किया है। भौगोलिकता का भाषा पर किस तरह प्रभाव पड़ता है। मौसम के कारण भाषा किस तरह प्रभावित होती है। भाषा को प्रभावित करने में इतिहास किस प्रकार योगदान देता है। सामयिकता भी भाषा को प्रभावित करने वाला तत्व है। शिक्षा से हमारी भाषा बहुत अधिक प्रभावित होती है। रहन- सहन का भी भाषा पर प्रभाव पड़ता है।

भाषा के कारण व्यक्ति के जीवन में निखार आता है। वस्तुत: आज हिन्दी कोई एक भाषा नहीं है, वह राष्ट्र की एक ऐसी सामान्य भाषा है, जिसके विभिन्न रुप, विभिन्न वर्गो में पाए जाते है। राष्ट्र की कुछ भाषाएँ भिन्न लिपियों में आबद्ध होकर या भिन्न साहित्य के रुप में सीमित होकर स्वतंत्र हो गयी है। जबकि शेष सभी भाषाएँ राजस्थानी ब्रज, अवधी मैथिली आदि तथा उनसे समबद्ध बोलियाँ हिन्दी में आती है।

भाषा का महत्व इतना अधिक है कि हमारे देश के अन्तर्गत बोली जाने वाली विभिन्न प्रकार की भाषाएँ हिन्दी, अंग्रेजी, मराठी, पंजाबी, राजस्थानी, हरियाणा, उड़िया, गुजराती, बंगला, तमिल, तेलगु, कन्नड़, उर्दू, मलयालम आदि भाषाओं को यहाँ के विभिन्न प्रान्तों और क्षेत्रो के लोग बोलते है और समझते है। इस प्रकार से हमारा देश बहुभाषी देश है।

समीक्षा

भौगोलिकता – भाषा-विज्ञान से भूगोल का घनिष्ट संबंध है। कुछ लोगों का मनना है कि भौगोलिक परिस्थितियों का भाषा पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। किसी स्थान विशेष में बोली जाने वाली भाषा में वहाँ के पेड़ पौधे, जानवर, प्राणी आदि के लिए शब्द अवश्य मिलते है।

किसी स्थान में एक भाषा का दूर तक प्रसार न होना भाषा का कम विकास होने का ध्योतक है। किसी स्थान विशेष में बोलियों का अधिक होना भी भौगोलिक परिस्थितियों पर निर्भर करता है। भूगोल देशों, नगरों, नदियाँ तथा प्रान्तों आदि के नामों के रुप में भाषा विज्ञान को अध्ययन की बड़ी मनोरंजक सामाग्री प्रदान करता है।

भौगोलिक परिस्थितियों का वहाँ के निवासियों पर प्रभाव पड़ता है। अत: भौगोलिक आधार पर उच्चारण में भी अंतर पाया जाता है।शीत प्रधान देशों में शीत के कारण उच्चारण में भी अंतर पाया जाता है शीत प्रधान देशों में शीत के कारण मुहँ कम खोलने के कारण उच्चारणों में अस्पष्टता रहती है। 'श' व 'स' अक्षरों की ध्वनियों में अतंर का अभाव होता है।

किसी भाषा का कम या अधिक विस्तार भौगोलिक परिस्थितियों पर निर्भर है। समस्थलों की भाषा अधिक विस्तृत क्षेत्र में फैलती है और विषम पर्वत आदि से युक्तस्थलों की भाषा अल्प क्षेत्र तक सीमित रहती है।

भौगोलिक परिस्थिति के कारण ही उच्च जर्मन और निम्न जर्मन में ध्वनि -परिवर्तनों का कारण सरलता से समझा जा सकता है।

''भूगोल'' या ''जलवायु'' का भाषा पर प्रभाव पड़ता है या नहीं इस विषय पर प्राय: काफी मतभेद रहे है। जर्मन भाषा-शास्त्री फाईनरीश और कोलित्स आदि ने भाषा के परिवर्तन में भौगोलिक प्रभाव को विशेष महत्व दिया है।

मौसम – मौसम में भिन्नता होने के कारण व्यक्ति के रहन - सहन एवं बोली में भी अंतर पाया जाता है। जिस स्थान पर मौसम अधिक गर्म रहता है, वहाँ के लोग प्राय: बोलते समय उच्चारण बहुत जल्दी-जल्दी करते है। जहाँ मौसम अधिक ठण्डा होता है। वहाँ के लोग सामान्य उच्चारण करने में भी कठिनाई का अनुभव करते है और वे बहुत धीरे-धीरे कंपकपाती हुई आवाज में शब्दों का उच्चारण करते है। जहाँ मौसम सामान्य होता है। वहाँ के लोगों के बोलचाल में स्थायित्व पाया जाता है। उनकी भाषा में भी यह अंतर दिखाई देता है।

इतिहास – भाषा के परिवर्तन में इतिहास का बहुत बड़ा योगदान है। यद्यपि इतिहास में राजनीति, धर्म, संस्कृति आदि सभी का बहुत बड़ा योगदान है। इस ऐतिहासिक प्रभाव से विशेष अभिप्राय राजसत्ता में परिवर्तन, क्रांति, विप्लव आक्रामक जाति का आगमन, व्यापारिक संबंध आदि से है। इसे राजनीतिक प्रभाव भी कहा जाता है।

यही इतिहास भारतीय भाषाओं का भी है, जो जाति भारत में आई है, उसने भाषा पर भी अपना प्रभाव छोड़ा है। इसमें हिन्दी में फारसी, अरबी, तुर्की, अंग्रेजी आदि के सैकड़ो शब्द प्राप्त होते है। कुछ शब्द ऐसे है। जो भाषा में इतने अधिक घुल मिल गए है कि उन्हें विदेशी शब्द कहना कठिन है। विदेशी भाषा के प्रभाव ने ध्वनि, शब्द, अर्थ और वाक्य विन्यास पर भी अपना प्रभुत्व दिखाया है।

सामयिकता – भाषा एक परिवर्तनशील सामाजिक सम्पत्ति है। भाषा में यह परिवर्तन सतत् एवं सहज रुप में होता रहता है। भाषा में परिवर्तन विविध दिशाओं में देखा जाता है। भाषा पर सामयिक प्रभाव होता है। कुछ विद्धानों का कहना है, कि भाषा कठिनता से सरलता की और परिवर्तित होती है। प्राय: जलवायु का भाषा पर प्रभाव होता है। ऐसे स्थान की जलवायु अधिक अच्छी होती है। वहाँ प्राय: सभी जगह के लोग आते-जाते रहते है। कुछ समय वहॉ रहना भी पसंद करते है। जिससें उस स्थान के निवासी अन्य भाषा-भाषी लोगों के संपर्क में आते है। उनके आपसी संबधो से भाषा मे परिवर्तन आ जाता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है। भाषा पर प्रत्येक समय का प्रभाव सदा एक सा नहीं रहता। समय का प्रभाव भाषा को प्रभावित करता है और वह परिवर्तित होती रहती है। हमें वह परिवर्तन तत्काल समझ में आ जाए। ऐसा आवश्यक नहीं है।

शिक्षा – संसार में शिक्षा के कारण भाषा भी प्रभावित होती है। प्रत्येक व्यक्ति के उच्चारण में अंतर होने के कारण जब वह बदले हुए रुप में बोलता है, तो अन्य सुनने वाले लोग भी वैसा ही बोलने का प्रयास करते है। प्राचीन काल से अब तक हुई शैक्षणिक प्रगति के कारण ही समय-समय पर भाषा का परिवर्तित रुप देखने को मिला है। शिक्षा के प्रभाव से ही महात्मा गांधी ने

* हिन्दी साहित्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

हिन्दी -उर्दू के मिले हुए रुप को हिंदुस्तानी नाम दिया तथा अन्य लोगों ने भाषा के उसी रुप को अपनाकर लिखना प्रारंभ कर दिया। जिसका प्रभाव हिन्दी व उर्दू दोनों भाषाओं पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा था।

मध्य-युग में ब्रज भाषा के कारण ही पंजाब के सिक्ख गुरुओं से लेकर असम के कृष्ण भक्तों ने ब्रज भाषा में अपनी रचनाएँ लिखी। क्योंकि उस समय साहित्य के क्षेत्र में और बोलचाल के रुप मे ब्रज भाषा ही चलन में थी। इसलिए इस का प्रभाव शिक्षा पर भी दृष्टिगोचर होता है। शिक्षा के कारण विविध अंचलो के साहित्यकार हिन्दी में लिखने का प्रयास करते है। तथा अपने अंचल के सैकड़ों शब्दों का हिन्दी में प्रयोग करते है। इसके कारण हिन्दी के स्वरुप में परिवर्तन होता है। ज्ञान की उपयोगिता के कारण ही भाषा के विकास में समाज का महत्व होने के साथ-साथ व्यक्ति का महत्व प्रमुख होता है। शिक्षा के प्रभाव से भाषा में व्याकरण का समावेश होता है। जिससे भाषा में शुद्ध और अशुद्ध का प्रयोग करने की सीख मिलती है। भाषा का सम्यक् ज्ञान होने पर ही व्याकरण सीखी जा सकती है और व्याकरण का ज्ञान होने के बाद भाषा की त्रुटियों को दूर कर, उसके अशुद्ध रुप को शुद्ध रुप में बदला जा सकता है। व्याकरण सदा परिष्कृत भाषा को ही अपनाता है। शिक्षा का प्रसार बोलियों के अतंर को कम करने में और भाषा के परिवर्तन एवं विकास में सहायक होता है। इस प्रकार व्याकरण भाषा का अनुगामी है, जो भाषा को विविध रुप में परिवर्तित कर उसे विकास की चरम सीमा पर पहुँचाता है। ''भृर्तहरि'' का कथन है कि अशिक्षा आदि के द्वारा जो अशुद्ध शब्दों का प्रयोग किया जाता है। उन स्थानों पर विद्वान श्रोता शुद्ध शब्दों को समझ लेते है''।

''जैस्पर्सन आदि पाश्चाय भाषाविदों का मत है कि बच्चा जब भाषा सीखता है, तो सबसे पहले यह एक शब्दात्मक वाक्य ही सीखता है। उसमें अर्थ की पूर्णता निहित रहती है। बड़ा होने पर वह बड़े वाक्यों का उच्चारण करता है। अशिक्षित व्यक्ति भी वाक्यों का प्रयोग कर विचार- विनिमय करते है''।

शिक्षा के कारण व्यक्ति में उचित और अनुचित पर सोचने और विचार करने की शक्ति मिलती है। शिक्षा के कारण व्यक्ति की भाषा को परिष्कृत और परिमार्जित रुप प्राप्त होता है।

(सांस्कृतिक प्रभाव) रहन-सहन -भाषा को प्रभावित करने वाले कारणों में रहन-सहन भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। रहन-सहन की चर्चा, सांस्कृतिक प्रभाव एवं वातावरण के अंतर्गत की जा सकती है।

स्वतंत्रता के पूर्व देश में केवल अंग्रेजी भाषा ही चलन में थी तथा अन्य भाषाओं का स्थान गौण था। अन्य बोली व भाषा की अपेक्षा की जाती थी। किंतु स्वदेशी आंदोलन ने देश के प्रति आदर का भाव जगाया और अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दी का अधिकाधिक प्रयोग किया जाने लगा।

शिक्षा ही नहीं अपितु वेशभूषा रहन-सहन आदि भाषा को परिवर्तित करते है। बंगाली बोलने वाले व्यक्ति का खान-पान और रहन-सहन अलग होता है, यह प्रभाव केवल बंग्ला भाषा में ही नहीं अपितु हिन्दी बोलते समय भी दृष्टिगोचर होता है।

''महर्षि दयानंद ने अन्य भाषाओं के शब्दों के स्थान पर संस्कृत निष्ठ हिन्दी पर बल दिया। सभी आर्य-संस्थाओं और आर्य विद्वानों ने इस नियम का पालन किया। परिणाम स्वरुप हिन्दी में संस्कृत निष्ठ शब्दावली बहुत बड़ी मात्रा में प्रयुक्त होने लगी पंजाब में हिन्दी भाषा के प्रचार का पूरा श्रेय आर्य समाज को है''।

शोध प्रविधि - इसका अध्ययन करने से हमें विभिन्न भाषाओं का ज्ञान प्राप्त हुआ है। हमें इसके द्वारा भाषा की गहराई को नापने में मदद मिली है। इसमें विभिन्न भाषाओं और उसके रुपों को पहचानने में सहायता मिली है।

भाषा को प्रभावित करने वाले तत्वों का अध्ययन किया गया। जिससे विभिन्न क्षेत्रों की भाषा को जानने के अवसर प्राप्त हुए।

इसमें द्वितीयक डाटा का प्रयोग किया गया है। विभिन्न प्रकार के लेख पत्र-पत्रिका, समाचार-पत्र, किताबों का अध्ययन किया गया है। भाषा विज्ञान में कहीं-कहीं एक अध्याय हिन्दी रुपों पर मिल जाता है, वही पर्याप्त नहीं है।मैने इस कमी को दूर करनें का प्रयास किया है। भाषा और सहित्य की समझ के लिए यह आवश्यक है कि भाषाओं का ठीक तरह से ज्ञान हो, जो इसके अध्ययन के माध्यम से प्राप्त हो सका है।

उद्देश्य - हमारा उद्देश्य भाषा के विभिन्न पहलुओं को अध्ययन करना है। जिसमें हिन्दी का सार्थक प्रयोग किया जा सके। एक ही भाषा का प्रयोग सब जगह नहीं किया जा सकता। विदेशों से संपर्क करते समय कूटनैतिक भाषा का प्रयोग सावधानी पूर्वक करना पड़ता है। व्यापार, व्यावसाय की भाषा अलग होती है।

संसदीय भाषा, सरकारी भाषा और जनता में प्रचलित भाषा अलग होती है। बात करते समय दोनों पक्षों की स्थिति के अनुसार शब्द-चयन करना पड़ता है। अशिक्षित के साथ, ग्रामीण, के साथ पढ़े लिखे स्नातक व्यक्ति के साथ अहिन्दी भाषा-भाषी के साथ अपने से वरिष्ठ के साथ और अपने मातहत के साथ हम अलग-अलग भाषा का प्रयोग करते है। हर कदम पर भाषा बदल जाती है।

भाषा-विज्ञान का उद्देश्य भाषा और समाज के सह संबंध का अध्ययन करना है। ''भाषा किस प्रकार समाज को बांधती है। किसी समाज में एक से अधिक भाषाओं का प्रयोग होता है। तो उस **समाज की भाषा** कैसी होती है''।

भाषा-विज्ञान का प्रमुख उद्देश्य भाषिक विकल्पन का विश्लेषण करना है। किसी व्यक्ति या समाज द्वारा प्रयुक्त होने वाले भाषा के विभिन्न रुपों को भाषिक विकल्पन या भाषा भेद कहते है। भाषा का उदेश्य इतना अधिक है कि भाषा मानव-व्यवहार का केन्द्र होती है।

सुझाव :

1. व्याकरण सम्मत भाषा का प्रयोग किया जाना चाहिए।
2. भाषाओं का पूर्णतया ज्ञान होना चाहिए।
3. मौखिक भाषा की अपेक्षा लिखित भाषा का प्रयोग ज्यादा करना चाहिए। क्योंकि लिखित भाषा अधिक समय तक सुरक्षित रह सकती है। स्थान और समय के अनुसार भाषा बदलती रहती है।

एक ही भाषा का ज्ञान आवश्यक नही है। कूटनीति की भाषा अलग होती है। व्यापारिक भाषा अलग होती है। ग्रामीण और शहरी भाषा मे भी अंतर होता है। अत: सभी भाषाओं का ज्ञान होना आवश्यक है।

4. भाषा का प्रयोग हर-व्यक्ति के द्वारा किया जाता है। चाहे वह किसी भी शहर, प्रांत तथा जाति का हो। वह किसी भी भाषा का प्रयोग करता है। इसलिए हमारे समाज में भाषा को प्रथम दर्जा दिया जाना चाहिए।
5. भाषा परिवर्तनशील होती है। परिस्थिति के अनुसार भाषा का प्रयोग किया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथो की सूची :-

1. विभिन्न पत्र पत्रिका
2. भाषा विज्ञान - डॉ. भोलानाथ तिवारी
3. भाषा विज्ञान के सिद्धांत और हिन्दी भाषा- डॉ. द्वारिका प्रासाद सक्सेना
4. भाषा विज्ञान एवं भाषा शास्त्र - डॉ. कपिल देव द्विवेदी आचार्य
5. भाषा विज्ञान की भूमिका- पं.शिवशरण शर्मा
6. संरचनात्मक भाषा विज्ञान- भारत भूषण चौधरी।

राजेन्द्र यादव के कथा साहित्य में वस्तु और शिल्प

डॉ. गीता तिवारी *

प्रस्तावना – वस्तु- साहित्य की सफलता सदैव इस बात पर निर्भर की जाती है कि लेखक अपने समाज के परिवेश के प्रति कितना सतर्क रहता है। समाज का सामान्य नागरिक होने के कारण उसके साहित्य में सामाजिक समस्याओं का प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से प्रवेश हो ही जाता है। साहित्य में इतनी शक्ति नहीं है कि वह समाज को बदलकर रख दे पर इतना सामर्थ्य अवश्य है कि उसे सही दिशा की ओर उन्मुख कर दे। साहित्यिक पृष्ठभूमि के आधार पर किसी एक समस्या को लक्ष्य बनाकर विधिवत सुलझाने का प्रयास आजकल कहीं नहीं मिलता है। इसलिए श्री यादव जी के साहित्य में पारम्परिक, विश्लेषण को कहीं भी स्थान नहीं है। जीवन के सान्दर्भिक मूल्यों और संबंधों के वर्तमान संकट को सूक्ष्म दृष्टि से जानने के बाद ही साहित्य को रचने का प्रयास किया है।

जीवित, ठोस और साकार मनुष्य की संवेदनाओं को अभिव्यक्त करने के प्रयास में जिन समस्याओं ने उनका ध्यान आकर्षित किया है, वे मनुष्य के वास्तविक जीवन से जुड़ी है। समय की मानसिकता से जुड़कर आने वाली ये समस्याएँ अभिव्यक्त भी बहुत प्रमाणिकता से हुई है, कारण यह है कि ''अपने संबंधों और संदर्भो में जीने वाली आदमी का वह एक प्रामाणिक दस्तावेज है। आज के सम्पूर्ण समय के संघातों के बीच सांस लेते मनुष्य की कुंठाओं, आकांक्षाओं, प्रयत्नों और हताशाओं को अगर हम ईमानदारी और कलात्मक प्राभाविष्णुता से आंकें तो हमें किसी शास्त्रीय प्रमाणिकता की आवश्यकता नहीं है।''[1]

स्पष्ट है कि साहित्य में निहित समस्याओं को उन्होंने सामाजिक परिवेश से उठायाहै। लेखक के आत्मविश्वास और कौशल के साथ-साथ अनुभूतियों के कारण विश्लेषित ये समस्याएं जिस प्रकार आकर्षित करती हैं, वे प्रशंसनीय है। भावुकताओं और संवेदनाओं के स्थान पर बौद्धिक सामाजिक दायित्व को प्रश्रय देने वाले कलाकार ने साहसपूर्ण निजी समस्याओं को कभी विकसित रूप से प्रस्तुत करने का प्रयास नहीं किया है। लेखक का भी यही विश्वास है कि ''चूँकि कहानी से भी कहानीकार की अपनी धारणाएँ, अनुभव और दृष्टिकोण है। और इन सबको घेरे हैं, उसका बदलता संस्कार।''[2]

इन बदलते संस्कारों से प्रभावित होने के कारण ही उन्होंने किसी विशिष्ठ समस्या को साहित्य में स्थान नहीं दिया है। अपितु छोटी-छोटी पग-पग उलझने वाली नितान्त वैयक्तिक समस्याएँ ही ध्यान में रखी है। लेखक ने समस्यात्मक रूप को प्रस्तुत करने में संतुलित प्रकृति को ध्यान में रखा है। सारी भावुकता और संवेदनशीलता को उदात्त रूप प्रदान करने में सफल हुए हैं। समस्याओं के सम्बन्ध में उनका यह दृढ़ विश्वास रहा है कि ''कहानी हो या उपन्यास रचना जब तक अपने यथार्थ की आभ्यंतरिक आवश्यकता और वास्तविकता के दबाव से उद्भूति होकर नहीं आती, अपनी चिंतन प्रक्रिया और व्यक्तित्व की समग्रता की प्रतिछाया नहीं बन जाती, तब तक उसमें न सजीवता आती है, न शक्ति।'' [3]

वे उधार ली हुई परिस्थितियों के आधार पर रची गई समस्याओं के साहित्य सौन्दर्य को कफन का सौन्दर्य मानते हैं। व्यापक मानव संवेदना, पात्रों की परख और आत्मीय परिचय उपलब्धि है कि उन्होंने समस्याओं की पकड़ में सफलता हासिल कर उसे सौन्दर्य का नमूना नहीं बनने दिया। परिस्थितियों से सामान्जस्य कर चलने वाली घटनाओं से अभिभूत होकर पाठक सोचने को विवश हो जाता है कि कहीं उसका व्यकितत्व भी इन समस्याओं के घेरे में ही लिपटा हुआ ही तो नहीं है ? इन समस्याओं को प्रस्तुत करते समय उन्होंने प्राचीन संस्कृति की पूर्णत: उपेक्षा करते हुए कहा है-''इतिहास और दुनिया का सारा ज्ञान-विज्ञान, सारा साहित्य और शास्त्र, सारी कलाएँ और दर्शन अपनी सारी प्राचीनता और गरिमा के बावजूद आज के आदमी के लिए है।''[4]

सहज स्पष्ट है कि समस्याओं का वर्गीकरण आधुनिक मानव जीवन की धारा को समझने की मांग करता है। भिन्न-भिन्न उपन्यास के आधार पर जो वर्गीकरण किया है। उसकी पूर्णता का दावा तो नहीं किया जा सकता, परन्तु प्रमुखत: निम्न समस्याएँ ध्यान आकर्षित करती हैं।

1. पारिवारिक समस्या
2. मध्यवर्ग की समस्या
3. राजनीतिक समस्या
4. साहित्यिक समस्या
5. नारी समस्या
6. वैयक्तिक विघटन की समस्या
7. स्त्री पुरुष के संबंधों की समस्या

श्री यादव जी का शिल्प निखरा हुआ है। घटनाओं के सीमित आकार को वे कौशल से बुनते हैं कि चतुर आलोचक भी तुरंत निर्णय लेने में पीछे हट जाते हैं। कला की दृष्टि से इनका शिल्प अपने कंटकपूर्ण मार्ग को आप ही तय करता है शिल्प शैली की परिनिष्ठित भंगिमा सार्थक अर्थो का संयोजन करने में सफल हुई है। भाषा, मुहावरें, अर्थ, शब्द शक्तियों का बदलता रूप इनकी कहानियों का आधार है, स्वयं प्रयोगशीलता के सन्दर्भ में वे कहते हैं- '' जिसे हम नयी कहानी कहते हैं, वह मनुष्य के परिवर्तित परिवेश और अनुभूतियों का परिणाम तो है ही इस परिणाम की अभिव्यक्ति ने शिल्प और शास्त्र की दृष्टि से भी उसे पुरानी कहानी से अलग कर दिया है।''[5]

कहानियों के प्रगतिशील दौर में ये शिल्प के प्रति कुछ अधिक सचेत रहे हैं। सदियों से चली आ रही परम्परा से हटकर कई अनुभूतियों के लिए नये शिल्प की आवश्यकता अनुभव की है। उदाहरणत: अपने पार, फ्रेंच लैदर',

* अध्यापक, शासकीय पू. माध्यमिक विद्यालय, बरा,जिला-रीवा (म.प्र.) भारत

'पिल्ला', कुतिया' 'अंधाशिल्प और आँख वाली राजकुमारी–जैसे कहानियाँ इस बात की पुष्टि करती हैं कि जीवन की रंग बिरंगी संवेदनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए नवीन शिल्प की ही आवश्यकता होती है। इस तथ्य की पुष्टि उन्होंने भी की है– ''अतीत मुक्त वर्तमान छाया में स्थित आत्म सजग व्यक्ति की संवेदना, अपने यथार्थ को देखने के सारे दृष्टिकोण, रागबोध को ही बदल देती है और कहानी की बुनावट, निर्वाह और शैली स्थायित्व सभी में मौलिक अन्तर आ जाते हैं।' [6]

कथ्य और कथन की दृष्टि से उनकी कहानी में पर्याप्त नवीनता है। बौद्धिकता प्रदर्शन में कहीं–कहीं कहानियों का शिल्प कृत्रिम व उखड़ा हुआ लगता है। अन्त तक पहुँचते–पहुँचते माने शिल्प कहानी के उद्देश्य को ग्रस लेता है। 'ढोल, फ्रेंच लेदर रोशनी कहाँ है' जैसी कहानियों में सशक्त कथानक की संभावनाओं के होते हुए भी शिल्प प्रयोग की नवीनता ने उन्हें उभरने नहीं दिया।

यह एक सत्य परन्तु यथार्थ है कि कहीं–कहीं उनकी कहानियों का उद्देश्य शिल्पगत, प्रयोग की विविधता ही लगता है। जैसा कि सुरेश का कहना है– ''राजेन्द्र यादव की कहानियाँ शिल्प प्रयोग की दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय हैं, उनकी रुचि जितनी शिल्प प्रयोग की रही है, उतनी अन्य बातों की ओर नहीं।'[7]

स्पष्ट है कि लेखक ने शिल्प स्वतन्त्रता: के पक्ष में किसी भी प्रकार की आलोचना की चिंता नहीं की है। दृष्टिकोण के बदलाव को मान्यता देते हुए अपनी समस्त कहानियों में शिल्प की यथार्थ प्रवृत्ति को स्थान दिया है। अपने आस–पास सिमटकर रहने वाली शिल्प युक्त कहानियों के लिए कहते हैं कि मेरी 'खेल खिलौने' जहाँ लक्ष्मी कैद है, ऐसी ही कहानियाँ है, व्यक्ति और परिवेश में आपसी संबंधों को संपूर्ण जटिलता में पकड़ने के प्रयास में ये या इस तरह की कहानियाँ अधिक गहरी, कलात्मक और प्रभावशाली हो गयी हैं। उनके अक्सर दो–दो तीन – तीन अर्थ ध्वनित होते थे। वे सार्थक प्रयोग की उत्कृष्ट कहानियाँ है।'[8]

उनकी शिल्प विधा में प्रतीक, बिम्ब, संकेतिकता केवल चमत्कार या चौकाने की प्रवृत्ति दिखाने के लिए उपयुक्त नहीं हुए परिवेश की उलझती स्थिति को दृढ़ता से मानने की वह कलात्मक मजबूरी मानी जा सकती हैं। इसलिए निर्मल वर्मा ने स्पष्ट कहा है कि–''शिल्प और यथार्थ को विभिन्न वस्तुएं मानकर शिल्प के क्षेत्र में छोटी–छोटी कान्तिनुमा हलचलें पैदा करने वाले साहसी कलाकार भी नई कहानीकारों के बीच में है। ऐसी अनेक साहित्यिक कहानियों का वैचित्रय 'शिल्पय है और ''शिल्प' नई कहानी है। कहानी के शिल्प और यथार्थ को विभाज्य मानकर गुणा भाग करने का ही यह परिणाम है कि उनकी कहानियाँ ने केवल बेढ़गी होती हैं, बल्कि यथार्थ के नाम पर शुद्ध समझौता होती हैं।'[9]

व्यंजता और ताजगी के परिपूर्ण शिल्प के ऐसे उदाहरण बिखरे पड़े हैं। कई प्रकार के अन्तर्द्धवन्द व बाह्य द्धन्द्ध के चित्रण में सफलता प्राप्त करने वाली शिल्प कला से रथ में यथार्थवाद के घोड़ों को जुताकर कथावस्तु को प्रतिपथ पर दौड़ाया है। विवेकशील पाठकों के लिए –वैचारिक तर्क–वितर्क का सटीक स्पष्ट कलातत्व बिखरा पड़ा हैं, लेखक के अधिकाधिक तटस्थ रहने के कारण ही चरित्र विधान में शिल्प का सहज उपयोग हुआ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. प्रेमचन्द्र की विरासत और अन्य निबंध पृ. 111
2. एक दुनिया समानान्तर है पृ0 51
3. कहानी स्वरूप और समवेदना पृ. 46
4. प्रेमचन्द्र की विरासत और अन्य निबंध पृ. 46
5. नई कहानी की मूल संवेदना– डॉ. सुरेश सिंहा पृ. 111
6. नई कहानी सफलता और सार्थकता – डॉ. नामवर सिंह पृ. 53
7. कहानी स्वरूप और संवेदना – पृ. 73
8. कहानी स्वरूप और संवेदना पृ. 99
9. कहानी स्वरूप और संवेदना – पृ. 88

****

साहित्यिक शोध की प्रविधियाँ और उनका अध्ययन

अशोक बैरागी *

प्रस्तावना – 'अनुसंधान का शाब्दिक अर्थ लक्ष्य बाँधना, निशाना लगाना, योजनाबद्ध रूप से किसी भी वस्तु अथवा विषय का पीछा करना है। शोध शब्द भी अनुसंधान के पर्यायवाची के रूप में प्रयुक्त है।''[1] अनुसंधान और आलोचना को पयार्यवाची समझाना सही नहीं है, क्योंकि दोनों में आधारभूत अन्तर है। **'वेस्टर की न्यू वर्ल्ड डिक्षनरी में अनुसंधान को परिभाषित करते हुए इसे व्यवस्थित, सावधानीपूर्वक और संतुलित अन्वेषण कहा गया है, जिसमें ज्ञान के किसी विशेष क्षेत्र में स्थापित तथ्यों या सिद्धांतों की खोज की जाती है।''**[2]

वस्तुत: शोध तीन विशेष ज्ञानों के लिए प्रयुक्त होता है– 1. साहित्यिक शोध 2. मानविकी शोध 3. वैज्ञानिक शोध। साहित्यिक शोध में किसी भाषा के साहित्य और साहित्य की भाषा का अनुसंधान किया जाता है। मानविकी शोध का संबंध समाज विज्ञानों के शोध से होता है, जिसमें साहित्य के अलावा कला के सभी विषय आते है। इस शोध में सर्वेक्षण का भी अत्यंत महत्व है। वैज्ञानिक शोध प्रयोगात्मक होता है और इसे प्रयोगात्मक शोध के रूप में देखा जाता है।

साहित्य अथवा काव्य जो हिन्दी में समान अर्थों में ही प्रयुक्त होते हैं– उनको प्रमुख तत्वों के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है। विषयवस्तु, भाव, विचार, शिल्प तथा भाषा के आधार पर साहित्यिक अनुसंधान अनेक भावों में वर्गीकृत किया गया है, हिन्दी में साहित्यिक अनुसंधान को निम्न प्रकारों में रखा जा सकता है– 1. वस्तु तथ्यात्मक अनुसंधान 2. भावानुसंधान 3. विचारानुसंधान 4. प्रवृत्तिमूलक अनुसंधान 5. कलानुसंधान 6. भाषानुसंधान 7. पाठानुसंधान आदि।

शोध का सबसे प्रथम चरण होता है, विषय या समस्या का चयन। विषय का चुनाव करते समय यह देखना होगा कि विषय के संबंध में आवश्यक तथ्यों को संकलित किया जा सकेगा, शोध कार्य साधनों की सीमितता को ध्यान में रखते हुए समय पर पूरा किया जा सकेगा या नहीं तथा विषय की सामान्यीकरणों व नियमों के प्रतिपादन की दृष्टि से उपयोगिता है अथवा नहीं। विषय के दोषपूर्ण चुनाव से श्रम व साधनों का अपव्यय होता है।

'श्रीमती पी. वी. यंग ने निम्न बातों का ध्यान रखने पर जोर दिया है– विषय ऐसा हो जिसे शोधकर्ता समझ सके, उपलब्ध प्रविधियों से शोध किया जा सकता है या नहीं यह निश्चित होना चाहिए, उस विषय से निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं या नहीं आदि।'[3]कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि विषय उपयुक्त हो, सुलभ हो, मौलिक हो, विषय सामग्री सुलभ हो एवं विषय रूचिकर हो। इन सभी बातों का ध्यान रखकर ही विषय का चयन शोधार्थी को करना चाहिए। विषय चयन में शोधार्थी को संबंधित साहित्य का अध्ययन करना होता है। इसके साथ ही उसे पूर्व में प्रकाशित शोध प्रबंध जो उसके विषय से संबंधित हो का अध्ययन, विभिन्न शोध पत्रों का अध्ययन, पुनरावलोकन, आलोचना आदि का अध्ययन कर ही विषय का चुनाव करना चाहिए।

विषय चयन के उपरान्त रूपरेखा निर्माण का कार्य करना होता है, जिसमें विषय की संक्षिप्त जानकारी के साथ, विषय की मौलिकता, अध्यायों का क्रम, विषय की भूमिका, शोध की विधियाँ, शोध की परिकल्पना आदि का संक्षिप्त विवरण होता है। शोध के लिए उपलब्ध साहित्य, शोध का उद्देश्य, शोध का संभावित योगदान शोध की प्रविधि एवं शोध कार्य के दौरान परिकल्पना का भी अत्यधिक महत्व है।

'परिकल्पना के निर्धारण के उपरान्त नये–नये प्रयोग करना भी आवश्यक है।''[4]परिकल्पना का शाब्दिक अर्थ है, पूर्व चिन्तन, जिसे अंग्रेजी में (Hypothesis) कहा जाता है। यह अनुसंधान की प्रक्रिया का दूसरा महत्वपूर्ण स्तम्भ है। इसका तात्पर्य यह है कि किसी समस्या के विष्लेषण और परिभाषीकरण के पश्चात उसके कारणों तथा कार्य–कारण के सम्बंध में पूर्व चिन्तन कर लिया गया है। यह निश्चय करने के पश्चात उसका परीक्षण प्रारंभ हो जाता है। गुड तथा स्केट्स के अनुसार–**''परिकल्पना एक अनुमान है, जिसे अंतिम अथवा अस्थायी रूप में किसी निरीक्षित तथ्य अथवा दषाओं की व्याख्या हेतु स्वीकार किया गया हो एवं जिससे अन्वेषण को आगे पथ–प्रदर्शन प्राप्त होता हो।''**[5] इस प्रकार परिकल्पना एक अनुमान है, जो शोधार्थी को दृष्टि प्रदान करता है। एक अच्छी परिकल्पना समस्या के लिए सुझाया गया एक उत्तर होती है। परिकल्पना शोधार्थी जो शोध करने जा रहा है। उसके बारे में पूर्वानुमान को दर्शाती है। परिकल्पना के लिए कुछ बाते अत्यंत महत्वपूर्ण है जैसे– परिकल्पना समस्या का पर्याप्त उत्तर होनी चाहिए, परिकल्पना स्पष्ट होनी चाहिए, परिकल्पना सिद्ध करने योग्य होनी चाहिए, परिकल्पना विशिष्ट होनी चाहिए, परिकल्पना किसी सिद्धान्त को समर्पित होनी चाहिए एवं परिकल्पना से आँकड़े प्राप्त किए जा सकते हो। इस तरह की परिकल्पना विषिष्ट परिकल्पना होती है।

शोध के लिए सबसे आवश्यक होता है, सही सामग्री का संकलन। सामग्री संकलन से ही शोध विशिष्ट बन पड़ता है। शोध प्रबंध से संबंधित सामग्री का तात्पर्य उन उपकरणों से होता है जिस आधार पर शोध ग्रंथ लिखा जाता है। इन आवश्यक सूत्रों के संकलन के लिए विवेक की अत्यंत आवश्यकता होती है अन्यथा अनावश्यक सामग्री संकलन से भी शोध कार्य करना कठिन हो जाता है। शोध में उपलब्ध सामग्री की पड़ताल करना, उनकी प्रमाणिकता सिद्ध करना और तथ्यों को सही रूप में ग्रहण कर अर्जित ज्ञान के आधार पर ज्ञात से अज्ञात की ओर जाना महत्वपूर्ण होता है। सहायक सामग्री, संदर्भ ग्रंथ, सहायक ग्रंथ आदि का विश्लेषण ठीक प्रकार से कर

* शोधार्थी (हिन्दी) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

लेना चाहिए। सहायक सामग्री में पांडुलिपि, साक्षात्कार, प्रश्नावली एवं समंको को संग्रहीत करने की योजना बनानी चाहिए।

शोध कार्य में सामग्री संकलन के विविध प्रकार है, जिसमें प्राथमिक एवं द्वितीयक समंक एकत्रित करना होते है। प्राथमिक समंक के चार भाग होते है यह अधिक महत्वपूर्ण और उपयोगी होते है– 1. अवलोकन, पूर्ण सहभागिता, अर्द्धसहभागिता 2. साक्षात्कार 3. अनुसूची 4. प्रश्नावली। इसमें आँकड़े व्यक्तिगत, अप्रत्यक्ष रूप से संबंधित व्यक्ति के परिचित के द्वारा, संवाददाताओं के द्वारा, प्रश्नावली एवं अनुसूचियों के द्वारा प्राप्त किए जाते है। द्वितीयक समंक मौलिक होते है, यह एक बार प्रकाशित होने के बाद पुन: प्रयोग में लाए जाते है। द्वितीयक समंक के दो प्रकार होते है– 1. व्यक्तिगत प्रलेख 2. सार्वजनिक प्रलेख। व्यक्तिगत प्रलेखों में पत्र, डायरी, संस्मरण, जीवनी, आत्मकथा आदि आते है। सार्वजनिक प्रलेख दो प्रकार के होते हैं– 1. प्रकाशित– इसमें शोध संस्थानों के प्रतिवेदन, पत्र–पत्रिका, समाचार पत्र एवं व्यक्तिगत शोध प्रकाशन आते है। 2. अप्रकाशित– इसमें अप्रकाशित शोध, दस्तावेज, पाण्डुलिपि, लोक साहित्य, अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशन, सरकारी प्रकाशन, अर्द्धसरकारी प्रकाशन, समितियों आयोग द्वारा प्रकाशन, एवं शोध संस्थाओं के प्रकाशन मुख्य होते है।

प्राथमिक समंक विश्वसनीय होते है। यह व्यापक होते है। इनमें मौलिकता विद्यमान रहती है। इनका तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है। इनमें अशुद्धि की उपलब्धता नहीं के बराबर रहती है, परंतु प्राथमिक समंक में पक्षपात होने का डर बना रहता है। यह एक मुश्किल कार्य होता है और इसमें मानव श्रम की आवश्यकता होती है साथ ही समय भी अधिक लगता है। द्वितीयक समंक प्राप्त करने में सुलभ होते है। तथ्यपरक होते है। समय की बचत के साथ इनमें तटस्थता रहती है, किंतु इनमें अविश्वसनीयता का डर रहता है। समय के दुरूपयोग के साथ इनकी तुलना भी संभव नहीं होती है। साथ ही इनमें मौलिकता का अभाव होता है।

सामग्री संकलन के पष्चात प्रबंध लेखन की प्रक्रिया शुरू होती है। शोध लेखन में भूमिका का भी महत्वपूर्ण स्थान है। भूमिका में शोधार्थी की क्षमताओं और संभावनाओं का सूत्रपात होता है। एक भूमिका सम्पूर्ण शोध ग्रंथ का अंश होती है। भूमिका में विचार वैचारिक भावभूमि पर अवस्थित होकर प्रस्तुत होते है। प्रबंध लेखन एक उद्देश्य को लेकर किया जाता है। उद्देश्य के अधार पर शोध के तीन प्रकार होते है– 1. मौलिक शोध, 2. सैद्धान्तिक शोध एवं 3. व्यावहारिक शोध। शोध का उद्देश्य समस्या का निर्धारण कर उसका हल प्रदान करना होता है। साथ ही आगे शोध के लिए नये तथ्य स्थापित करना, ऐसे सत्य की लगातार खोज करना जो पूर्ण रूप से ज्ञात न हुआ हो, सत्य के साथ तथ्य की खोज करना आदि कार्य प्रबंध लेखन में आते है। एक शोध लेखन की प्रक्रिया समस्या चयन से होती हुई परिकल्पना, सामग्री संकलन, आँकड़ों का वर्गीकरण, सर्वेक्षण, प्रश्नावली, अनुसूची, साक्षात्कार, संदर्भ ग्रंथ, सहायक ग्रंथ, अवलोकन, परीक्षण, निष्कर्ष, सम्पादन, परिशिष्ट, प्रतिवेदन आदि चरणों से होकर गुजरती है। तब कहीं जाकर एक शोध मूर्त रूप लेता है। इसके पश्चात शोध का व्यवस्थापन होता है, जिसमें शोध का टंकण, पाद टिप्पणी, उद्धरण, सन्दर्भिका, परिशिष्ट आदि की व्यवस्था की जाती है। इसके पश्चात शोध का परीक्षण कर उसका प्रकाशन किया जाता है।

'शोध प्रबंध लिखने में शोध के नियमों का भी पालन करना पड़ता है, जिसमें शीर्षक देने के साथ ही उद्धरण और टिप्पणियाँ देना भी आवश्यक है, साथ ही संदर्भ ग्रंथों की जानकारी भी देना आवश्यक होता है। इसी से शोध प्रबंध लेखन में सहायता मिलती है। अनुसंधान अपने में ही एक प्रबंधात्मक व्यवस्था है, जिसमें शोध प्रबंध का लेखन करते हुए क्रमबद्ध संयोजन आवश्यक होता है।''[6]शोध प्रबंध लेखन की प्रक्रिया में आधार ग्रंथ, सन्दर्भ ग्रंथ और सहायक ग्रंथों की प्रमुख भूमिका होती है। शोध प्रबंध लेखन के पश्चात उसका सार संक्षेप भी दिया जाता है। शोध प्रबंध लेखन में मूल पुस्तक के संदर्भ देना ही पर्याप्त नहीं होता, बल्कि विभिन्न स्रोतों से भी सामग्री जुटाना आवश्यक है। यदि रचनाकार जीवित है तो उससे साक्षात्कार करना भी प्रासंगिक और आवश्यक होता है। संक्षेप में शोध प्रबंध में इन सभी तत्वों के आधार पर अनुसंधान होता है और यह सब उसकी संरचना का अनिवार्य भाग है। इस प्रकार गहन चिंतन, मनन, एवं अध्ययन के साथ अनुसंधान कठोर परिश्रम की मांग करता है, तब कहीं जाकर शोध में मौलिकता का आगमन होता है। इस प्रकार किया गया साहित्यिक शोध लोकमंगल की भावना से ओतप्रोत होकर तथ्यपरक जानकारी उपलब्ध करवाता है और भविष्य के अनुसंधान के लिए एक विशिष्ट मार्ग प्रशस्त करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. साहित्यिक अनुसंधान – डॉ. राजेन्द्र मिश्र, पृष्ठ संख्या 13 .
2. वेस्टर न्यू वर्ल्ड डिक्शनरी, पृष्ठ संख्या 1208 एवं 336 .
3. सामाजिक अनुसंधान की प्रविधियाँ – साहित्य भवन पब्लिकेशन .
4. शोध प्रविधि – डॉ. विनयमोहन शर्मा, पृष्ठ संख्या 43 .
5. शोध प्रविधि – श्रीपाल सकलेचा एवं नीलम नाहर, पृष्ठ संख्या 58 .
6. अनुसंधान की प्रविधि और प्रक्रिया – डॉ. राजेन्द्र मिश्र, पृष्ठ 32 .

****

अमृतराय के "धुआँ" उपन्यास में सामाजिक चेतना

विद्या बिसेन *

प्रस्तावना – कथा साहित्य यथार्थ के अधिक निकट होता है। इसमें भी उपन्यास का क्षेत्र अपेक्षाकृत व्यापक होने का कारण जीवन के विविध पक्षों को अधिक सुन्दर, विस्तृत एवं यथार्थ चित्र उपलब्ध होता है। डॉ. सुरेश सिन्हा के अनुसार 'उपन्यास यथार्थ की प्रतिच्छाया है।'[1] एक कथाकार अपने साहित्य में सम्पूर्ण जीवन को प्रस्तुत करता है। जीवन से प्रेरणा लेकर ही उसके साहित्य का निर्माण होता है। कथा/उपन्यास साहित्य सामाजिक चेतना का कलात्मक रूप है। युगचेतना उपन्यासकार को तत्कालीन परिवेश से परिचित कराने के साथ-साथ युग जीवन के सत्यं, शिवं एवं सुन्दरं का भी ज्ञान कराती है।

सामाजिकता से प्रतिबद्ध साहित्यकार युगीन परिवेश से रचना की सामग्री जुटाता है और शोषण के विरूद्ध चेतना उत्पन्न करता है। अमृतराय का साहित्य इसी कारण अपने युग की चेतना का वाहक है उसमें तत्कालीन सामाजिक अन्याय का न केवल यथार्थ चित्रण है अपितु उसके विरूद्ध विरोध की प्रेरणा भी है न केवल सामाजिक अपितु आर्थिक, धार्मिक और राजनैतिक चेतना से भी उनका उपन्यास साहित्य ओत-प्रोत है। एक ओर गांधी जी के मानवतावादी दृष्टिकोण ने अमृतराय के युग की सामाजिक चेतना को प्रभावित किया तथा वही दूसरी ओर ब्रह्म समाज, आर्य समाज, प्रार्थना समाज, रामकृष्ण मिशन जैसे सुधारवादी-सामाजिक संस्थाओं की प्रगतिशील विचारधारा ने। सुधारवादी आन्दोलनों के द्वारा ये संस्थायें जिस प्रगति का मार्ग प्रशस्त कर रही थी। उसी को साहित्यकारों ने अपने साहित्य द्वारा सुधारने का प्रयत्न किया अमृतराय भी मध्यवर्गीय सामाजिक नवचेतना के जागरूक साहित्यकार है। जीवन के आंतरिक एवं बाह्य संघर्षों में उन्होंने समन्वय स्थापित कर नव निर्माण का मार्ग निर्देशित किया।

'धुआँ' अमृतराय का एक सामाजिक राजनैतिक उपन्यास है जिसकी आत्मा तो राजनैतिक है परन्तु देह सामाजिक। प्रस्तुत उपन्यास अमृतराय की महत्वपूर्ण वृहद्काय औपन्यासिक कृति है। जिसमें मानव जीवन से संबंधित अनेक पक्षों और उनकी समस्याओं को बखूबी चित्रित किया गया है किन्तु हम यहां सामाजिक समस्या और उसके प्रति लेखक की चेतना पर दृष्टि डालेंगे-

रूढ़िवादिता का विरोध – भारतीय रूढ़िवादी समाज में शिक्षा का प्रसार होने पर भी उसकी संकीर्णता एवं मानसिक पिछड़ापन आधुनिक उदार विचारों से उसे दूर रखता है। आधुनिक युग में पैदा होने पर भी ऐसे व्यक्ति मानसिक विकास एवं संस्कारों की दृष्टि से बहुत पीछे रह जाते है और अपने इन्हीं परम्परावादी विचारों के कारण उनके चारों ओर भ्रम का घेरा बन जाता है, जिससे वे स्वयं तो दुखी होते है दूसरों को भी दुखी कर देते है। अमृतराय परम्परावादी रूढ़ नैतिक मूल्यों के घोर विरोधी है। क्योंकि ये मनुष्य को सिर्फ यातनाएँ पहुँचाते है, और अनर्थकारी होते है। इसी का एक उदाहरण 'धुआँ' में छात्रावास के कठोर अनुशासन से उत्पन्न होता है, जहाँ लड़के-लड़कियों के पारस्परिक स्वछन्द मिलन को देश, समाज तथा उनके हित में अनर्थकारी माना जाता है। वहाँ की छात्राएँ यह सोचने पर विवश हो जाती है 'इतनी सब जकड़बन्दी के मारे तो और भी जी करता है कि जो भी मिल जाए उसी के साथ सो रहूँ।'[2] जबकि अमृतराय इस पारस्परिक स्वच्छन्द मिलन को स्वाभाविक विकास के लिए नितान्त आवश्यक मानते है तथा उसमें किसी प्रकार की बुराई नहीं समझते। उनका विश्वास है कि इस प्रकार की रूढ़िवादिता अधिक दिन नही चलेगी।

काम भावना को भी अमृतराय जी नैसर्गिक इच्छा मानते है जिसका दमन न उचित है न सम्भव। 'धुआँ' में ''काजल' में यही भावना व्यक्त की गई है। वे मानते है कि इसमें जकड़ा हुआ व्यक्ति समय आने पर पीड़ा से कराह उठता है और मुक्ति की आशा लिए झटपटाता रहता है। सत्रह वर्ष की अल्पायु में विधवा हुई काजल शारीरिक भूख से विवश हो अवैध सम्बंध के कारण समाज में कलंकित हो कांशी आ जाती है। 'आखिर उसने एक दिन उस समाज को मुर्दा बच्चे को गठरी के समान गंगा की पावन धारा में बहा कर अपनी दोनों भूखों को एक कर दिया और अब वह बहुत सुखी है।'[3] इसी उपन्यास में शंकर भी सामाजिक कलंक से बच नहीं पता। वह रेखा को गुण्डों से तो बचा लेता है किन्तु समाज की आलोचना से उसकी रक्षा नहीं कर पाता।

असमानता एवं शोषण के विरूद्ध चेतना – पूँजीवाद का विरोध अमृतराय के उपन्यासों की नींव है। वे इसे शोषण का एक दूसरा ही रूप मानते है। शोषण के प्रत्येक स्वरूप के वे उग्र विरोधी रहें है। उनके अनुसार पूंजीवाद के चौखटे में मनुष्य प्रारम्भ से ही घिरा रहता है और अकेले इससे बाहर निकलना असंभव है। पूँजीपति वर्ग द्वारा निर्धनों का सदैव ही शोषण होता रहता है। फलस्वरूप उनकी दशा इतनी शोचनीय हो जाती है कि उनके बच्चों का समुचित भरण-पोषण सम्भव नहीं हो पाता। लेखक का मानना है कि यदि उनके माता-पिता अपेक्षाकृत सम्पन्न एवं शिक्षित होते तो उस स्थिति में स्वयं भी भली प्रकार रहन-सहन का सामान्य स्तर बनाए रह सकते तथा अपने बच्चों के सुनहरे भविष्य को भी सँवार लेते।

यह तो सत्य है कि पूँजीवादी और सामन्तवादी प्रवृत्ति के जमीदारों का विरोध करना कठिन है। समाजवादी व्यवस्था यथा दानशीलता, धर्म में झूठी आस्था, अवसरवादिता, साम, दाम, दंड, भेद आदि शोषण के उपकरणों की चर्चा अमृतराय ने अपने उपन्यास साहित्य में की है। 'बीज' में 'उषा', 'हाथी के दाँत' में 'रावल' इसी का उदाहरण प्रस्तुत करते है। अमृतराय भूख को सर्वाधिक महत्व देते है। क्योंकि उनके अनुसार भूख आर्थिक विवशता का दूसरा नाम

* शोधार्थी (हिंदी) रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

है। जिससे युवा लड़कियॉ को अपना शरीर बेचने के लिए मजबूर कर दिया जाता है। ऐसी स्थिति में विवश होकर वैश्यावृत्ति अपनाना सामाजिक दृष्टि से भले ही निन्दनीय हो अमृतराय की सामाजिक चेतना इसे नितान्त स्वाभाविक एवं उचित मानती है।

(3) निर्धारित विवाह पद्धति का विरोध – समाज में रूढ़िवादिता के कारण माता–पिता अपनी सन्तान का विवाह स्वेच्छा से निर्धारित करते थे। जिसमें सन्तान की इच्छा को महत्व नहीं दिया जाता था। परिणामस्वरूप विवाह जीवन भर के लिए बोझ बन जाता था। अमृतराय इस प्रकार के विवाह को सामाजिक बन्धन मात्र मानते है, आत्मिक नहीं। जिससे सन्तान दूषित मानसिकता का शिकार होने लगती है। ऐसे में अमृतराय जी ऐसे रूढ़ जर्जर संस्कारों को हीन दृष्टि से देखते है और नये समाज के निर्माण में बाधा समझते है। प्रस्तुत उपन्यास का पात्र शिशिर लतिका से स्वयं ही विवाह का निश्चय कर लेता है। यही स्थिति 'बीज' उपन्यास के नायक सत्य और नायिका उषा की भी है। दोनों प्रेम विवाह कर लेते है, जिससे सत्य की माँ क्रुद्ध हो जाती है और बाद में अलग रहने का निर्णय कर लेती है। लेखक ने इसे सही भी माना है। लेखक ऐसी स्थिति में मॉ और पुत्र का पृथक रहना ही एकमात्र उपाय समझते है। इस प्रकार वे सयुक्त परिवार प्रथा का भी बहिष्कार करते है। इसे लाश ढोने के समान व्यर्थ समझते है। लेखक द्वारा इस प्रकार की मानसिकता एवं सोच आधुनिक चेतना सम्पन्न नारी को इसके विरूद्ध विद्रोह करने की प्रेरणा देती है। अत: अमृतराय जी के अनुसार इन मुर्दा रूढ़ियों को और तथाकथित परम्पराओं को जिनके कारण हम नितान्त हीन बन जाते है, त्यागना ही श्रेयस्कर है।

(4) भ्रष्ट प्रशासन के विरूद्ध चेतना – पूंजीपतियों और जमीदारों के समान सरकार के अधिकांश विभागों की मनोवृत्ति भी स्वार्थी होती हैं। अपने परिवार के भरण–पोषण के लिए धन एकत्रित करने के साधनों के औचित्य, अनौचित्य का विचार त्याग देते है। धुआँ उपन्यास में 'हाराधन' के माध्यम से पुलिस विभाग की आलोचना की है, जो सदैव अपनी हित चिन्ता में ही लीन रहता है। परिवार के भरण–पोषण हेतु वह पुलिस की जासूसी करता है। अपने जीवित रहने के लिए दूसरों को मृत्यु के मुख में भेजता है। लेखक के अनुसार ऐसा व्यक्ति कुत्ते के समान है और उसे जीवित रहने का अधिकार नहीं है। शिशिर हाराधन की जीवन लीला समाप्त कर देता है क्योंकि वह जानता है कि ऐसे व्यक्ति का जीवन सामाजिक शान्ति में बाधक है। अमृतराय शिशिर के इस कृत्य को पाप नहीं मानते क्योंकि शिशिर ने यह कार्य अन्याय को समाप्त करने के लिए किया है और उनकी दृष्टि में अन्याय का प्रतिकार कभी पाप नहीं होता। वे मानते है 'नपुंसक होकर कोई देश कैसे जी सकता है।'[4]

स्वतंत्रता के पश्चात् कांग्रेस सरकार में भी चारित्रिक दृढ़ता का अभाव पाया गया जिसके कारण प्रशासन में सुधार के स्थान पर अवनति ही दृष्टिगोचर हुई। अछुतोद्धार की समस्या भी इसी दुर्बलता का परिणाम है। जो हमें 'बीज' उपन्यास में दिखाई देती है। जहॉ 'पेट की लड़ाई' कायम हो जाती है। उषा का निम्न वर्ग के लोगों में जाकर काम करना उसको न केवल आत्मिक सन्तोष देता है अपितु उसकी जागरूकता का भी प्रतीक है।

(5) भ्रष्टाचार का विरोध – पूॅजीपति अपने धन के बल पर उचित अनुचित कार्य करने में समर्थ होते है और सरकारी अफसर भी इनकी चापलूसी करते है। क्योंकि 'चॉदी के जूते की मार बड़ी गहरी होती है।'5 और यही से ब्लेक मार्केट को बढ़ावा मिलता है। क्योंकि समस्त अभाव निर्धन वर्ग के लिये है और वही सम्पन्न वर्ग सदैव निश्चिन्त रहता है। शोषण की यह स्थिति निर्धन वर्ग को सम्पन्न वर्ग के विरूद्ध उत्तेजित करती है। उनकी दृष्टि में 'सम्पन्न वर्ग चोर है, काला व्यवसाय करने वाला है।'[6]

प्रस्तुत उपन्यास की अन्य पात्र 'रेखा वर्मा' गुंडों द्वारा अपमानित किए जाने पर अपयश के भय से आत्महत्या कर लेती है। ''महावीर सिंह' इसका दोषी सरकार को मानते हैं उनके अनुसार एक सभ्य सुसंस्कृत सरकार के लिए यह चिन्ता का विषय है, 'आखिर क्यों इस लड़की ने छत पर से कूदकर अपनी जान दे दी ..... पुलिस नाम की भी तो कोई चीज है ..... क्या करती है ? क्यों नही पकड़ती और कोड़े लगाती इनको।'[7]यह प्रश्न समाज के साथ–साथ तत्कालीन प्रशासन से भी है। प्रशासन जनता से अनुशासन की मॉग करता है किन्तु स्वयं जनता में अराजकता फैलाता है। परिणामत: पापाचारी समृद्ध हो रहे है तथा शुद्ध हृदय व्यक्तियों का जीवन यापन दुरूह होता जा रहा है।

वर्तमान समय में शिक्षक केवल आर्थिक दृष्टिकोण से शिक्षण कार्य करते है। व्यक्ति तथा समाज की हित चिन्ता से उसका कोई सरोकार नहीं। धन ही उनका अंतिम ध्येय है। विद्यार्थी वर्ग भी इस भ्रष्टाचार से अछूता नही रहा। ग्रामीण विद्यार्थी नगर में शिक्षा अध्ययन के लिए आते है किन्तु सर्वप्रथम वे ग्रामीण वस्त्रों का त्याग कर स्वयं को नगरीय वातावरण में ढालने का प्रयत्न करते है। लेखक के अनुसार – 'चीप पाप्युलेरिटी है जो सारहीन है तथा जिसके पीछे भागने से नैया डूबी ही समझती चाहिए।'[8] लेखक मानते है कि जो खान–पान, रहन–सहन सामन्तवादी वातावरण से प्रेरित हो उसके लिए परिवर्तन विकास और क्रान्ति को समझना असम्भव है।

हमारी अनेक दुर्घटनाएँ इसी सामाजिक पिछड़ेपन का शिकार है। परीक्षा में असफल छात्र नौकरी न मिलने के भय से आत्महत्या कर लेता है, कोई नवविवाहिता दहेज प्रताड़ना से तंग आकर अपना जीवन समाप्त कर देती है, कोई विधवा निराश्रित हो बच्चों सहित कुऍ में कूद जाती है। इन समस्त दुर्घटनाओं का मूल हमारी सामाजिक अनीति है। यदि उसे मिटाया जा सके तो उपरोक्त स्थितियों में सुधार सम्भव हो सकेगा।

अत: स्पष्ट है कि अमृतराय जी का उपन्यास साहित्य सामाजिक यथार्थ से सम्पृक्त है। उन्होंने विभिन्न भूमिकाओं में सामाजिक यथार्थ को ही अभिव्यक्ति नही दी है, बल्कि अनेक अवसरों पर उस विवेकी चेतना को भी स्फूर्त किया है, जिससे चिन्तन के नये आयाम संप्रेषित होते है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भी बहुत दिनों से चली आई हुई रूढ़ियॉ उनके अपने समय में भी बरकरार रही है। उन्होंन उन रूढ़ नैतिक नियमों का प्रस्तुतीकरण तो किया है साथ ही उनके प्रति अपना विरोध भी प्रकट किया है।

इस प्रकार हम पाते है कि अमृतराय ने अपने सामर्थ्य के अनुसार विभिन्न कृतियों के माध्यम से समाज में व्याप्त भ्रष्ट, गलित और निष्प्राण परम्पराओं का खण्डन करते हुए स्वस्थ जीवन की दिशा को प्रशस्त करने में महत्वपूर्ण योग प्रदान किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. सुरेश सिन्हा – हिन्दी उपन्यास उद्भव और विकास पृ0 03
2. अमृतराय – धुआँ पृ0 454
3. अमृतराय – धुआँ पृ0 61
4. अमृतराय – धुआँ पृ0 50
5. अमृतराय – धुआँ पृ0 24
6. अमृतराय – धुआँ पृ0 24
7. अमृतराय – धुआँ पृ0 363
8. अमृतराय – धुआँ पृ0 331

पंत का प्रकृति प्रेम और उनकी काव्य यात्रा के विविध सोपान

ममता चण्डाला *

प्रस्तावना – पंत का जन्म अल्मोड़ा जिले के कौसानी नामक ग्राम में 20 मई 1900 ई. को हुआ। जन्म के छह घण्टे बाद ही उनकी माँ का निधन हो गया। उनका लालन पालन उनकी दादी ने किया उनका प्रारंभिक नाम गुसाई दत्त रखा गया। वे सात भाई बहनों में सबसे छोटे थे उनकी प्रांरभिक शिक्षा अल्मोड़ा में हुई। 1918 में वे अपने मँझले भाई के साथ काशी आ गए और क्विस कॉलेज में पढ़ने लगे वहाँ से माध्यमिक परीक्षा उत्तीर्ण कर वे इलाहाबाद चले गये उन्हें अपना नाम पंसद नहीं था। इसलिए उन्होंने अपना नाम सुमित्रानंदन पंत रख लिया।छायावादी कवियों में सबसे सहज,अत: तत्काल स्वीकार्य और लोकप्रिय होने वाले कवि पंत थे। उनकी कविता में प्रकृति प्रेम के साथ मानवतावादी दृष्टिकोण भी उपस्थित था।पंत ने स्वयं कहा की कविता करने की प्रेरणा मुझे सबसे पहले प्रकृति निरीक्षण से मिली जिसका श्रेय मेरी जन्म भूमि कूर्मांचल प्रदेश को हैं। पंत के काव्य में प्रकृति का आलम्बन,उद्दीपन, संवेदनात्मक,रहस्यात्मक,प्रतीकात्मक सभी रूपों में चित्रण हैं। साथ ही उन्होंनें अलंकारों का सुन्दर प्रयोग किया।

अलंकार योजना–

मानवीकरण अलंकार – सिन्धु सेज पर धरा वधू अब,
तनिक संकुचित बैठी सी

रूपक अलंकार– इस हृदय कमल का घिरना,
अलि अलकों की उलझन में आँसू मरंद का गिरना
मिलना नि:श्वास पवन में।

विरोधाभास अलंकार– हिम शीतल प्रणय अनल वन
अब लगा विरह में जलने

अंसगति अलंकार– मेरे जीवन की उलझन, बिखरी थी उनकी अलकें,
पीली मधु मदिरा किसने, थी बंद हमारी पलकें।

जो उनकी कविताओं को पाठक के लिए उसी तरह सुन्दर और रस से परिपूर्ण बनाते है, मानों कोई सुन्दर स्त्री सौंदर्य की भांति रस उत्पन्न करती हैं। प्रकृति के चित्रण में मानवीकरण अलंकारो का प्रयोग इतना सुन्दर जान पड़ता हैं। मानों वह प्रकृति ना होकर कोई मानवीक्रियाएँ करती सुन्दरी हो जो अपने नाना रूपों के वेश बनाकर प्रत्येक मनुष्य कों अपनी ओर आकृष्ट करती हैं। कही उसमें हर्ष उल्लास कही शांत वेदना है, तो की कही दुख के क्षण को प्रदर्शित करती हुई जान पड़ती हैं। पंत की परिवर्तन कविता में मानव जीवन की क्षणभंगुरता पर प्रकृति के आँसू बहाते दृश्य का मनोहारी चित्रण हैं।

'अचिरता देख जगत की आप,शून्य भरता समीर नि:श्वास डालता पातों
पर चुपचाप ओस के आँसू नीलाकाश'

युगबोध के अनुसार अपनी काव्य – भूमि का विस्तार करते हुए वे विविध सोपान से गुजरे। मानववाद से वह समाजवाद कि ओर आकृष्ट हुए तथा समाजवाद से वे अरविंद दर्शन कि ओर प्रवृत हुए। इसके साथ ही उन्होने समाज में व्याप्त अतिवादिता और संकीर्णता का घोर विरोध भी किया। पंत की प्रारंभिक कविताएँ जहाँ प्रकृति प्रेम से सम्पन्न छायावादी कविता थी, तो बाद में उनकी कविता में प्रगतिवाद के दर्शन होते हैं। जहाँ शोषण का विरोध करती यथार्थपरक कविताँए लिखी गई। अपने काव्य के तीसरे चरण में अन्तश्चेतनवादी युग के अरविंद दर्शन से प्रभावित काव्य रूप के दर्शन होते हैं। और अंतिम चरण में नवमानवतावादी युगीन रूप मिलता हैं।

छायावाद के चार स्तम्भों में प्रसाद पंत निराला, वर्मा जी में पंत प्रकृति के सुकुमार कवि कहे जाते हैं। इस काल को प्राकृतिक सौंदर्यवादी युग भी कहा जाता हैं। पंत के काव्य में प्रकृति चित्रण के विभिन्न रूपों को देखा जा सकता है। इन विभिन्न रूपों में उपादानों के सौंदर्य चेतना का जो निखार अथवा विशेषता इनके काव्य में आयी है। वह प्रकृति के सभी रूप प्रस्तुत करती है–

1. **आलम्बन रूप –** जब प्रकृति के किसी प्रकार की भावना को ग्रहण करके उसका ज्यों का त्यों वर्णन किया जाता हैं। तो वह चित्रण आलंबन रूप होता है।

पावस ऋतु थी पर्वत प्रदेश
पल पल परिवर्तित प्रकृति वेश
मेखलाकार पर्वत अपार
अपने सहस्त्र दृग सुमन फाड़
अवलोक रहा है बार बार
नीचे जल में निज महाकार
जिसके चरणों में पला ताल
दर्पण सा फैला है विशाल।

2. **उद्दीपन रूप –** पंत जी ने प्रकृति को भावोत्तेजना का माध्यम भी बनाया है, जब मन में कोई भाव उत्पन्न होता है तो प्रकृति के साहचर्य से उन भावों में तीव्रता आ जाती है। नौका विहार कविता में गंगा की शांत धारा,चाँदनी लहरों के सौंदर्य का आलम्बन गत चित्रण मन में आंनद की सृष्टि करता है किंतु इसी बीच कोक पक्षी बोलकर कवि के मन में व्याप्त विरह को बढ़ा देता है।

वह कौन विहंग! क्या विकल कोक
उड़ता हरने निज विरह शोक
छाया की कोकी को विलोक।

3. **कोमलांगी प्रकृति –** पंत जी का मन प्रकृति की कोमल छवि के अंकन में ही अधिक रमा हैं। प्रकृति का शांत, सुन्दर, आकर्षक और प्रिय रूप सभी

* एम.ए.(हिन्दी),बी.एड.नेट वाटर वर्क्स रोड़, प्रतापगढ़ (राज.) भारत

के लिए सुख तथा आनंद का स्त्रोत है।

सिहर उठे पुलकित हो द्रुम दल,सुप्त समीरव हुए अधीर,
झलका हास कुसुम अधरों पर,हिल मोती का सा दाना।
खुले पलक,फैली सुवर्ण छवि,खिली सुरभी को ले मधुबाल,
स्पन्दन,कम्पन,नवजीवन फिर सीखा जग ने अपनाना।

पंत के काव्य के विविध सोपान–पंत की काव्य यात्रा चार प्रमुख चरणों को लेकर चली थी।

1. छायावादी युग – इस युग के प्रमुख काव्य संकलन हैं।

(1) वीणा (2) ग्रंथि (3) पल्लव (4) गुंजन

छायावाद में प्रकृति सौंदर्य को नारी के सौंदर्य की उलझन से दूर रखता कवि कहता है।

छोड़ो द्रुमों की मृदु छाया
तोड़ प्रकृति से मोह माया

छायावाद में रहस्यवादी भावना का भी समावेश है। जो अज्ञात सत्ता की ओर निमंत्रण देते प्रतीत होती है। रहस्यवाद के साथ सौंदर्य का भाव उनकी कल्पना को अनेक रूपों में प्रस्तुत करता जाता हैं। जिससे सौंदर्य की अनुभूति के प्रसार के कई मार्ग खुल जाते हैं। छायावाद में रहस्यात्मक प्रकृति तो दिखाई देती हैं। लेकिन उसमें भावात्मकता के दर्शन ही होते हैं। कबीर की तरह उसमें साधनात्मक रहस्यवाद नहीं हैं। इसका कारण कवि का प्रकृति प्रेम अपनी प्रिया और माँ के रूप में चित्रित करना हैं। कही प्रकृति सौंदर्य मुग्धा यौवना के रूप में चित्रित हैं, तो कही आंनद विभोर कर और प्राणों में स्फूर्ति भरने वाली सरंक्षक के रूप में हैं। कही इन सबसे परे प्रकृति को मौन निमंत्रण देता कौन कहकर अज्ञात परम सत्ता का आभास भी उनके काव्य में देखा जा सकता हैं। पंत ने अपने काव्य में प्रकृति चित्रण में उपमानों का चयन उसी प्रकृति से किया हैं।

'न जाने सौरभ के मिस कौन
संदेशा मुझे भेजता मौन'

कलावाद में यूरोप के काव्यक्षेत्र का प्रभाव भी पंत पर दिखाई देता हैं। जो उनकी इन पंक्तियों में देखा जा सकता हैं–

सुंदर विश्वासों से ही बनता रे सुखमय जीवन

छायावाद रूप में पल्लव छायावाद का घोषणा पत्र कहा गया हैं। जिसमें कविता के स्वरूप को समझाते हुये पंत जी ने काव्य भाषा के स्वरूप पर अपने विचार प्रस्तुत किए है।

मानवीकरण रूप – पंत प्रकृति पर मानवीय रूपक डालकर कभी उसे हँसाते रूलाते और विविध क्रियाकलाप करते दिखाई देते हैं, तो कभी गंगा को तनुअंगी नायिका के समान शांत दुग्ध धवल से लिपटी नायिका के समान चित्रित करते।

'सैकत शैया पर दुग्ध धवल तन्वगी गंगा'

2. प्रगतिवादी युग – पंत जी के काव्य विकास का दूसरा चरण प्रगतिवादी रचनाओं के रूप हमारे समक्ष प्रस्तुत होता हैं। प्रगतिवादी रचनाओं में इनकी ग्राम्या,युगान्त,युगवाणी रचनाँए मिलती हैं। जिनमें पुरानी परम्पराओं को नष्ट कर नवीन परम्पराओं के प्रतिस्थापन की बात कही गई है।

प्रगतिवाद युग में पूंजीवादी व्यवस्था का विरोध,शोषक का विरोध,शोषित के प्रति दया व सहानुभूति के भावों का समावेश है।प्रगतिवादी युग में कवि ने पुराने मूल्यों रूढ़ियों निष्क्रियताओं को छोड़कर तथा पुराने बंधनों को तोड़कर आगे बढ़ने की बात कही हैं। वे प्रगतिवादी युग में दो धाराओं को समावेश करते चले थे, जहाँ विचारों में मार्क्सवाद के सिद्धांतों के समर्थक थे। वही वैयक्तिगत रूप में वह गाँधी जी के विचारों का समर्थन करते है। उनके विचारों में ऐसे कार्यो पर ध्यान दिया जाना चाहिए जिससे किसी का शोषण ना हो और साथ ही वह समाजोपयोगी भी हो वे स्पष्ट घोषणा करते है, जो जीर्ण–शीर्ण है, निष्प्रभ मृत प्राय: है। उसे हटाकर नवीन मूल्यों की स्थापना की जाये।

3. अरविंद दर्शन से प्रभावित – अरविंद साहित्य को पढ़कर और उससे प्रभावित होकर उनके चिंतन को नई दिशा मिली।अरविंद दर्शन से प्रभावित उनकी प्रमुख रचनाए है। स्वर्ण किरण, स्वर्ण धूलि,उत्तरा हैं।

4. नवमानवतावादी दर्शन – पंत जी की कविता में चौथा चरण नवमानवतावादी युग के रूप में सामने आया। इस युग में चिदम्बरा महाकाव्य पर इन्हें ज्ञानपीठ पुरस्कार भी मिला हैं। नवमानतावादी युग में मानवता का संदेश सुनाना पंत के काव्य का आकर्षण है। उनका परिवर्तित रूप जिसमें उन्होंने समय व परिस्थितियों के अनुरूप अपने काव्य में रंग उभारे है। पंत ने अपने काल क्रमिक विकास में समाज को एक प्रेरणा देने का प्रयास किया प्रांरम्भ में छायावाद से अनुप्राणित विचार रहे बाद में प्रगतिवादी कविताएँ लिखी फिर अरविन्द दर्शन का प्रभाव उनकी कविताओं में देखा गया तथा अन्त में विश्वबंधुत्व एवं विश्वकल्याण की भावना का स्वर मुखरित हुआ पंत की शब्द चयन की शक्ति अपूर्व है।

छायावाद के भीतर माने जाने वाले सब कवियों में प्रकृति के साथ सीधा प्रेम संबध पंत का ही दिखाई देता है। इस समय पंत प्रकृति प्रेम मे निर्लिप्त थे कर्ममार्ग पर उनका ध्यान नही था आगे जाकर कवि का साक्षात्कार जगत और जीवन से हुआ। जगत की परिवर्तनशीलता मनुष्य जाति को चिर काल से क्षुब्ध करती आ रही है परिवर्तन संसार का नियम है। जीवन के व्यापक क्षेत्र में प्रवेश के कारण कवि की कल्पना ऊँचे नीचे दुर्गम रास्तों से होकर सहज भाव भूमि पर उतरती प्रतीत हुई। अत: कवि कहता है सुन्दरता का आलोक स्त्रोत है फुट पड़ा मेरे मन में जिससे नवजीवन का प्रभात होगा फिर जग में।

संदर्भ ग्रंथ सूची:–

1. विश्वनाथ त्रिपाठी–हिन्दी साहित्य का सरल इतिहास।
2. आ.रामचन्द्र शुक्ल–हिन्दी साहित्य का इतिहास।
3. डॉ.अशोक तिवारी–हिन्दी साहित्य का इतिहास।
4. डॉ. नगेन्द्र–हिन्दी साहित्य का इतिहास।

****

मैत्रीय पुष्पा के कथा-साहित्य में बदलते जीवन-मूल्य और नारी

डॉ. रश्मि प्रीति गुरु *

प्रस्तावना – हमारा वर्तमान परिवेश बड़ी तीव्रता के साथ बदल रहा है फिर यह परिवेश चाहे महानगर का हो, कस्बा का हो या गाँव का हो। बदलाव की यह प्रक्रिया अपनी तीव्र गति के साथ हर जगह पहुँच रही है। इस बदलते सामाजिक परिवेश के कारण समाज में नैतिक मूल्य भी बदल रहे हैं। परम्परागत व्यवस्था एक परिवर्तन के दौर से गुजर रही हैं। समय-समय पर सामाजिक संगठन टूटा हुआ परिलक्षित होता हैं। इस प्रकार के संगठन के विपरीत दिखाई देने वाली दशाएँ जो उत्पन्न होती हैं, इन्हें सामाजिक विघटन कहना तथ्य संगत है। तात्पर्य यह है कि सम्पूर्ण समाज परिवर्तन की ओर है और जब परिवर्तन आता हैं या तो उसमें विकास की संभावना होने के बाद भी नैतिक मूल्यों के बाद में विघटन अधिक दिखाई देता हैं।

मैत्रीय पुष्पा ने अपने कथा-साहित्य में बदलते हुए जीवन-मूल्यों की चर्चा की हैं। मनुष्य जीवन संघर्ष इसलिए करता हैं ताकि वह सर्वांगीण विकास कर सके। वह अपने व समाज के विकास के लिए कुछ निश्चित मूल्यों की स्थापना करता है यही मूल्य मानव-मूल्य का या जीवन-मूल्य कहे जा सकते हैं। मैत्रीय पुष्पा के नारी पात्र समाज में परम्परागत मूल्यों का विरोध कर नये मूल्यों की स्थापना करते है।

मैत्रीय पुष्पा ने अपने उपन्यासों में समाज के बदलते हुए परिवेश को दिखाया हैं। मैत्रीय पुष्पा ने अपने उपन्यासों में समाज में नारी की वर्तमान स्थिति को लाने का प्रयास किया हैं। पीड़ा मोहभंग, कुण्ठा, असंतोष, आस्था, हताशा, मृत्युबोध, जुझारुपन, व्यंगकटुता एवं मानसिकता, चौमुखी आयाम व्यक्त हुए हैं।

मैत्रीय पुष्पा ने अपने कथा साहित्य में समाज के बदलते हुए जीवन-मूल्यों और उस बदलाव की स्थिति का चित्रण किया हैं। मैत्रीय पुष्पा ने 'स्मृतिदेश' उपन्यास में भुवन की जो कथा कही हैं। उसमें नारी के परंपरागत मूल्यों को उठाया गया हैं। 'भुवन' और चंदर परंपराओं को तोड़ने का साहस नहीं रख पाते हैं और दोनों कुण्ठित मानसिकता में जीते रहते हैं। इनके उपन्यास के नारी पात्र परम्परागत जीवन-मूल्यों को तोड़कर नये मूल्यों की स्थापना करते हैं। 'भुवन' के अंदर जीवन-मूल्य बदलने का साहस नहीं है। इसी कारण वह परिस्थितियों से संघर्ष करती हुई 'भुवन' छोटी उम्र में बाल के गाल में समा जाती हैं। उपन्यास की प्रमुख नारी पात्र 'उर्वशी' स्वयं तो समाज की रूढ़ि परंपराओं को झेलती हैं परन्तु समाज में अन्य नारी के लिए सम्मान जनक स्थिति की यह दिशा दिखा जाती है।

'उर्वशी' स्वयं के लिए तो समझौता करती ही है परन्तु जब नारी के अधिकार और सम्मान की बात सामने आती है, तब वह अपनी जान की बाजी लगाकर अधिकार की रक्षा करती है।

उपन्यास 'इदन्नमम' में मैत्रीय-पुष्पा ने समाज में नारी की स्थिति और बदलते जीवन-मूल्यों की चर्चा की है। उपन्यास के दो नारी पात्र परम्पराओं, रीति-रिवाज, धार्मिक आस्थाओं, अंध-विश्वासों का जमकर विरोध करते है। उपन्यास की प्रमुख नारी पात्र 'मंदा' एक समन्वयवादी पात्र की भूमिका निभाती हैं, वह राजनैतिक क्षेत्र में अपनी भूमिका को स्पष्ट करती है। चुनावी माहौल में वह नेताओं को जमकर आड़े हाथ लेती है। 'मंदा' बदलते जीवन-मूल्य और नारी का प्रतिनिधित्व करती है।

'इदन्नमम' की 'कुसमा' भाभी रीतिरिवाजों परंपराओं आदि का जमकर विरोध करती है। 'चाक' उपन्यास में मैत्रीय पुष्पा ने नारी और समाज के बदलते जीवन-मूल्यों की चर्चा की हैं। 'रेशम' समाज के रीति-रिवाजों का खुला विरोध करती है, वह स्वतंत्र जीने की अभिलाषी है। वह नये मूल्यों को साबित करना चाहती है।

'चाक' उपन्यास की प्रमुख नारी पात्र 'सारंग नैनी' पढ़ी लिखी होकर पहिले तो घर परिवार और गोबर के चक्रव्यूह में फंसकर परंपरावादी हो जाती हैं। 'सारंग' समाज के रीति-रिवाजों को तोड़ती हैं और अपने पति रंजीत से छुपाकर प्रधानी पद के लिए पर्चा भरती है, इसके बाद वह निडर हो जाती है और उसकी चेतना जाग्रत हो उठती है। यह बदलते हुए जीवन मूल्यों की बहुत बड़ी बात हैं।

मैत्रीय पुष्पा ने 'अलमा कबूतरी' उपन्यास में बदलते हुए जीवन-मूल्यों को उठाया है, उपन्यास में नारी के बदलते जीवन मूल्य के प्रश्न को उठाया है। उपन्यास में 'शीलोय बदलते हुए जीवनमूल्य और नारी की स्वतंत्रता की पक्षधर है, वह नारी को भी पुरुष के समान मानती है और बदलते जीवनमूल्य तथा नारी के संघर्ष की कथा को उठाने का प्रयास किया हैं।

मैत्रीय पुष्पा ने अपनी कहानियों में बदलते जीवन-मूल्य और नारी को उठाया हैं। समाज में रहते हुए आधुनिकता के प्रभाव के कारण नारी की सोच और चिन्तन में अंतर आया है। परम्परागत मूल्य धीरे-धीरे बदलते जा रहे है। आदमी अपने आप तक सीमित रह गया है। कहां माँ को 'धरा' से विशाल मानने की परम्परा कहाँ एक माँ का बोझ बन जाना इस बात से स्पष्ट होता हैं। कैलाशो देवी अपने तीनों पुत्रों के लिए बोझ बन जाती है। यह बदलते जीवन मूल्य का प्रभाव हैं।

'ललमनियां' कहानी संग्रह में बदलते-जीवन मूल्य और नारी को उठाया गया है। ग्रामीण परिवेश में नारी को लेकर जागरुकता आने लगी है। अब समाज में पुरानी परम्पराओं और रीति-रिवाज टूट रहे हैं यह बदलते हुए जीवन-मूल्यों का उदाहरण है। ग्रामीण परिवेश में नारी की अब चेतना सामने आ गई हैं और वह अपने निर्णय लेने के लिए स्वतंत्र हो गयी है।

* अतिथि विद्वान (हिन्दी) अमर शहीद चन्द्रशेखर आजाद शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, निवाड़ी, जिला-टीकमगढ़ (म.प्र.)भारत

इस प्रकार निष्कर्ष रुप में कह सकते है कि बदलतजे जीवन–मूल्यों की मैत्रीय पुष्पा के नारी पात्र विशेष रूप से रीति–रिवाजों, मर्यादाओं और संबंधों के खोखलेपन को नकारते है तथा नये मूल्यों की स्थापना करते हैं, ये मूल्य नारी के स्वतंत्र व्यक्तित्व के विकास की ओर संकेत करते हैं। मैत्रीय पुष्पा की कहानियों और उपन्यासों में बदलते हुए जीवन–मूल्यों और नारी की सामाजिक स्थिति में उठाने का प्रयास किया हैं कि नारी समाज और परिवार में अब पुरुष की मोहताज नहीं है। ये कहानियां जीवन के यथार्थ से जुड़ी सामाजिक की वास्तविक स्थिति को सामने रखती है। इनके नारी पात्र नये मूल्यों को स्थापित करने और नारी चेतना को जग्रत करने के लिए संघर्षरत् दिखाई देते है।

मैत्रीय पुष्पा ने अपने कथा साहित्य में बदलते हुए जीवन–मूल्यों और नारी की चर्चा की हैं। मैत्रीय पुष्पा के कथा–साहित्य की नारियाँ परंपरागत जीवन–मूल्यों का तोड़ती है और नये मूल्यों की स्थापना करती हैं, जिसमें सबसे प्रमुख है, नारी स्वतंत्रता की आवाज हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. 'स्मृतिदेश' मैत्रीय पुष्पा – किताब घर नई, दिल्ली, पृ. 48, 50
2. 'बेतवा बहती रही' मैत्रीय पुष्पा किताब घर, दिल्ली, पृ. 74, 123, 142
3. 'चाक' उपन्यास मैत्रीय पुष्पा – राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, .पृ. 326, 327, 246
4. 'अलमा कबूतरी' – मैत्रीय पुष्पा, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली पृ. 43, 120, 123
5. डॉ. मोहनी शर्मा – हिन्दी उपन्यास और जीवन मूल्य, पृ. 33, 34

****

वैदिक पर्यावरण विज्ञान : आधुनिक सन्दर्भ

डॉ. चारू मिश्रा *

प्रस्तावना – पर्यावरण शब्द परि तथा आङ् उपसर्गपूर्वक परणार्थक वृङ् तथा वृञ् धातुओं से ल्युट् प्रत्यय के योग से निष्पन्न होता है। परित: सम्यक् वृणाति आच्छाद्यति जगदिति पर्यावरणम्। वेदों में पर्यावरण के लिए 'वृतावृता'[1]'परिवृता'[2] 'पर्यभवत्'[3]आदि शब्द प्रयुक्त हुए हैं। पर्यावरण के अन्तर्गत वायु, जल, पृथ्वी आदि शक्तियां हैं, जिन्हें जीव ने प्रदूषित कर दिया है। पर्यावरण एक व्यापक शब्द है। यह उन सम्पूर्ण शक्तियों, परिस्थितियों एवं वस्तुओं का योग है, जो मानव जगत् को परावृत करती है तथा उनके क्रियाकलापों को अनुशासित करती है। हमारे चारों ओर जो विराट प्राकृतिक परिवेश व्याप्त है, उसे हम पर्यावरण कहते हैं।

औद्योगिक और कृषि विकास के लिए प्रकृति प्रदत्त संसाधनों जैसे भूमि, जल, वायु, आकाश, पहाड़, हरे-भरे वन, जीव-जन्तु, खनिज तेल आदि के अनियंत्रित उपयोग ने प्राकृतिक सन्तुलन बिगाड़ दिया है। प्रकृति – सूखा, बाढ़, भूकम्प, तूफान, मौसम तथा जलवायु में भारी परिवर्तन जैसी अप्राकृतिक आपदाओं के रूप में बदला ले रही है।

प्रदूषण पर्यावरण के तत्वों का असन्तुलित होना ही प्रदूषण है। आज समस्त विश्व को इनसे खतरा है – हे अग्नि! आकाश में हानि मत पहुँचाओं।[4] अन्तरिक्ष की हिंसा मत करो, जल की हिंसा मत करो।[5]

हम सभी सृष्टि के अभिन्न अंग हैं। जीव-प्राणी, वनस्पतियां, विशाल सागर, अन्तरिक्ष, धरा, उत्तरी तथा दक्षिणी ध्रुव आदि सभी परस्पर एक-दूसरे से बंधे हुए हैं, जिसके परिणामस्वरूप ही पृथ्वी पर जीवन का प्रादुर्भाव हो सका है तथा यह प्रक्रिया आगे भी जारी व गतिशील रहेगी। प्रकृति मनुष्य की सहचर, उसकी पोषक, उसको धारण करने वाली, उसकी माँ, उसकी जीवन दायिनी है। शुद्ध वायु के द्वारा ही प्राणबल परिपुष्ट होता है और प्राणी नि:संदेह दीर्घजीवी व स्वस्थ हो सकता है, किन्तु यह तभी सम्भव है जब मनुष्य यज्ञ कर्म को नियतरूप से करता रहेगा। ऋग्वेद के एक मन्त्र के अनुसार शुद्ध ताजी वायु अमूल्य औषधि है, जो हमारे हृदय के लिए दवा के समान उपयोगी है, आनन्ददायक है तथा आयु को बढ़ाने वाली है।[6] वेदों में वृक्षों को नमन अर्थात् बहुपयोगी वर्णित किया गया है।[7] वृक्ष संसार की रक्षा करते हैं और उसे प्राणवायु (ऑक्सीजन) रूपी दूध पिलाते हैं अत: उन्हें माता कहा गया है।[8] वृक्ष मनुष्य को जीवित रखते हैं अत: उन्हें मानव मात्र का रक्षक कहा गया है।[9] वृक्ष वायुमण्डल के दोषों को समाप्त करते हैं।[10] ऋग्वेद में कहा गया है कि वृक्ष फूलें-फलें, वे बढें और हमारी भी वृद्धि हो।[11] यजुर्वेद का कथन है कि वृक्ष-वनस्पतियों को न काटें और न हानि पहुँचावें।[12]

'अर्थवेद' में पृथ्वी को माता की संज्ञा प्रदान कर पूजा गया है।[13] संसार को शस्य सम्पन्न बनाने वाले जलवर्षक मेघों को पिता मानकर उनसे अपने पालन-पोषण, रक्षण एवं संवर्धन की कामना की गयी है।[14] जीवन का प्रमुख आधार भूमि है। प्रति व्यक्ति जीवन का आधार सिकुड़ रहा है। कुछ स्थानों पर बंजरीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ हो चुकी है। मिट्टी की उर्वरा क्षमता क्षीण हो रही है। वास्तविकता यह है कि जनसंख्या का बढ़ता प्रतिशत, वनों का अवैज्ञानिक तथा अत्यधिक दोहन, कृषि भूमि का घटना, आवासीय भूमि का बढ़ना तथा उद्योगों की बढ़ती संख्या ही पर्यावरणीय समस्या का मूल है। जनता की गरीबी और अशिक्षा ने इस समस्या को अधिक जटिल बना दिया है। दरअसल बढ़ते शहरीकरण के चलते पर्यावरण असन्तुलन बढ़ा है। शहरों के बाहरी इलाकों में विस्तार हो रहा है। यह विकास अनियोजित तरीके से तो हो ही रहा है, इसमें शहरी नियमों और मापदण्डों का उल्लंघन भी हो रहा है।

भूमि के साथ शांत बर्ताव मनुष्य के लिए हमेशा ही एक नैतिक और पारिस्थितिक अनिवार्यता रहा है। धरती के खिलाफ हिंसा पारिस्थितिक संकट के रूप में दिखती है। आज हम भौतिक रूप से जितने अमीर होते जा रहे हैं, पर्यावरण के लिहाज से उतने ही गरीब। हमें यह तय करना होगा कि क्या हम कॉर्पोरेट लालसा पर टिके बाजारू कानून का पालन करेंगे या पृथ्वी की उत्पत्ति की विविधता को अक्षुण्ण बनाए रखने की दशा में सोचेंगे। मृत मिट्टी और सूखी नदियां भोजन और जल नहीं दे सकती। आज मानवाधिकारों व सामाजिक सुरक्षा के लिए चल रहे संघर्ष में सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण धरती माँ के अधिकारों की सुरक्षा है।

जल ही जीवन है, यदि यह प्रदूषित है, तो साक्षात् विष है। शुद्ध जल ही अमृत है।[15] नि:सन्देह जल व जीवन एक-दूसरे के पर्याय हैं। जल के बिना जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती है। मनुष्यों को चाहिए कि जल में, आकाश में जो हानिकारक तत्व उपस्थित हों, उन्हें उपकरणों एवं शास्त्र विधि द्वारा नष्ट करें।[16] सूर्य रश्मियों द्वारा, यज्ञ द्वारा वाष्पीकरण प्रक्रिया से जल शोधन किया जाता है।[17] अग्नि भी जल शोधन की एक प्रक्रिया है। इसीलिए उबले हुए जल को कीटाणु रहित माना जाता है।[18]

जल के पास ठौर ठिकाना बनाने और उसे बूँद-बूँद सहेजने वाली हमारे पूर्वजों की जल संस्कृति को आज हम तिलांजलि दे चुके हैं। तभी तो आज हम सब इस अनमोल संसाधन की कमी से हलकान हैं। जैसे-जैसे भारतीयों का जीवन स्तर सुधरेगा, जल खपत बढ़ेगी। औद्योगिक विकास के साथ बिजली, पानी की मांग बढ़ रही है। ऐसे में हमें भविष्य में और पानी की जरूरत पड़ेगी। इस समस्या का केवल एक ही समाधान है, मांग, प्रबंधन और जल संसाधनों का कुशलतापूर्वक इस्तेमाल। हालांकि समाधान केवल भाषणों तक ही सीमित रह जाता है।

औद्योगिक कारखानों के जलशोधक संयंत्र दिखावटी हैं। सारे गंदे नाले, नदियों की ओर ही जाते हैं। इस प्रकार विनाश ही विनाश है, नदी तट पर शवदाह या शवों को नदी में फेंकना निर्मम है। यह किसी भी लिहाज से

* सहायक प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (संस्कृत) डॉ. बी.आर. अम्बेडकर राजकीय महाविद्यालय, अनौगी, कन्नौज (उ.प्र.) भारत

वैदिक परम्परा नहीं है। आज बालू की उपलब्धता वाली नदियों से अवैध खनन बेधड़क जारी है। इससे नदियों का अस्तित्व ही खतरे में है। शहरीकरण के कारण देश की सभी प्रमुख नदियां गम्भीर रूप से प्रदूषण का शिकार हैं। हमने नदियों की अनवरत जलराशि को अनन्तकाल से समुद्र में अविरल बहने दिया है। नदियों का जन्म केवल समुद्र में समाने के लिए नहीं हुआ है।

ग्रामीण अंचलों में कृषि कार्य में अब लगभग नियमित रूप से प्रयोग में लाये जाने वाले कीटनाशकों-उर्वरकों के कारण पारम्परिक ग्रामीण जल स्रोत भी प्रदूषित हो रहे हैं। हमें न केवल जल के परम्परागत स्रोतों - तालाबों, कुओं, बावड़ियों, नहरों - को संरक्षित करना होगा, बल्कि बारिश के जल को सहेजना भी होगा। इसके अतिरिक्त यह भी प्राथमिकता के आधार पर सुनिश्चित करना होगा कि भूजल का बेलगाम दोहन थमे और उसे प्रदूषित होने से बचाया जाए। आज यह जरूरी हो गया है कि भूमि पर अधिक से अधिक पेड़-पौधे लगायें ताकि पानी के अवांछित बहाव को रोका जा सके। नलों से भी पानी के अनावश्यक बहाव पर अंकुश लगाने की जरूरत है। यदि पानी को पुन: चक्रण विधि द्वारा प्रयोग किया जा सके तो यह प्रयास उत्तम होगा। रहीम ने कहा था, **'रहिमन पानी राखिये बिन पानी सब सून, पानी गये न ऊबरै मोती मानुष चून।'** अत: हमें जल क्रान्ति लानी होगी। पानी की महत्ताा के बारे में जागरूक होना होगा। वेदों और शास्त्रों में जल की स्वच्छता और संरक्षण के जो उपाय दिए गए हैं, उन्हें अपनाना होगा। वैदिक मन्त्रों में 'जल माताओं से पवित्रता और शुद्धि की प्रार्थना' की गई है - आपोअस्मान मातरम् शुंदयनु।

आज अंधाधुंध शहरीकरण, औद्योगीकरण तथा जीवाश्म ईंधन के अत्यधिक उपयोग एवं वनों के विनाश तथा जनसंख्या की वृद्धि के कारण ग्रीनहाउस गैसों के अनुपात में परिवर्तन से उत्पन्न ग्लोबल वार्मिंग की समस्या विश्व के लिए चिंता का विषय बनी हुई है। पर्यावरण को बचाने की मुहिम में हमको आगे आना होगा। प्लास्टिक (पॉलीथीन) का प्रयोग बन्द कर दें। जहाँ जल बचा सकते हैं उसे बचाए और हाँ! चाहें तो बच्चों के जन्मदिन पर वृक्ष लगाने की प्रथा को शुरू कर दें। हमारे ये प्रयास धरती को हरी-भरी रखने में मददगार साबित होंगे।

मत्स्यपुराण दश कूप समो वापी दशवापी समो ह्रद:।
दश ह्रद: सम: पुत्रो दशपुत्रो समो द्रुम:।।

नहीं भूलना चाहिए कि हमें जो कुदरती संसाधन मिले हैं, उसे भावी पीढ़ी को सौंपना हमारा ही कर्तव्य है। जलवायु परिवर्तन के कारण पृथ्वी पर पहले से ही खतरा मंडरा रहा है। ऐसे में हम अगर पर्यावरण की अनदेखी कर सिर्फ अंधी विकास की दौड़ लगाएगे, तो विकास की यह गाड़ी कब तक सरपट दौड़ पाएगी? आज तक हम सिर्फ प्रकृति से लेते रहे हैं, अब वक्त आ गया है कि उसे भी कुछ दें। जब तक जल, जमीन और जंगल का अस्तित्व है, तभी तक हमारा अस्तित्व है।

सम्प्रति आवश्यकता इस बात की है कि प्रत्येक मनुष्य अपने पर्यावरण के प्रति सचेत रहे और प्रकृति के साथ सामंजस्य रखे। नदियों के प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए योजनाए बनाई जाए। यथासम्भव उद्योग धंधे नगर से बाहर स्थापित किए जाए। 'वृक्ष लगाओ प्रदूषण रोको' का नारा बुलन्द किया जाय। तेज ध्वनि करने वाले वाहनों तथा वायुयानों में ध्वनि नियंत्रक लगाना अनिवार्य किया जाए। आणविक विस्फोटों पर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अंकुश लगाना चाहिए एवं सर्वसाधारण के लिए ऊर्जा को सुलभ बनाना चाहिए।

पृथ्वी को त्रासदयुक्त पर्यावरणीय प्रदूषण की स्थिति से मुक्त करने के लिए आवश्यकता है हमारे आध्यात्मिक दर्शन की, अपनी मृगतृष्णाओं की पूर्ति के लिए प्रकृति के निर्मम शोषण के स्थान पर उससे प्रेम करने की, उसे पूजने की।[19] आज कवि पन्त की इस भावना की आवश्यकता है :

छोड़ द्रुमों की मृदु छाया।
तोड़ प्रकृति की भी माया।।
बाले तेरे बाल जाल में,
कैसे उलझा दूँ लोचन?

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अथर्ववेद 10.1.30
2. अथर्ववेद 10.8.31
3. अथर्ववेद 10.2.18
4. यजुर्वेद 13.42 अग्ने मा हिंसी: परमे व्योमन्।
5. यजुर्वेद 4.2, 6.22 अन्तरिक्षं मा हिंसी: मापो.....हिंसी.....।
6. ऋग्वेद 10.186.1 वात आ वातु भेषजं शंभु मयोभु नो हृदे। प्र ण आयूँषि तारिषत्।।
7. यजुर्वेद 16.17 नमो वृक्षेभ्य:।
8. यजुर्वेद 12.78 ऋग्वेद - 10,97.4 ओषधीरिति मातर:।
9. यजुर्वेद 12.77, ऋग्वेद - 10.97.3 वीरूध: पारयिष्णव:।
10. यजुर्वेद 29.35 वनस्पति: शमिता।
11. ऋग्वेद 3.8.11।
12. यजुर्वेद 1.25 ओषध्यास्ते मूलं मा हिंसिषम्।
13. अथर्ववेद 12.1.12 माता भूमि: पुत्रोऽहं पृथिव्या:।
14. अथर्ववेद 12.1.12 पर्जन्य: पिता स उ न: पिपर्तु।
15. ऋग्वेद 1.30.19 अप्सु अन्त: अमृतम्, अप्सु भेषजम्।
16. यजुर्वेद 13.8 ये वामी रोचने दिवो ये वा सूर्यस्य रश्मिषु। येषामप्सु सदस्कृतं तेभ्य: सर्पेभ्यो नम:।
17. यजुर्वेद 1.12 पवित्रे स्थो वैष्णव्यौ सवितुर्व: प्रसव उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्य्यस्य रश्मिभि:।
18. यजुर्वेद 33.94 अन्नं पयोरेत अस्मासु धत्ता.....3.12 अग्निमूर्धा दिव:.....अपां रेतांऽसि जिन्वति।
19. यजुर्वेद 36.17 ओउम् द्यौ: शान्तिरन्तरिक्षं शान्ति: पृथिवी शान्तिराप: शान्तिरोषधय: शान्तिर्वनस्पतय: शान्तिर्विश्वे देवा: शान्तिर्ब्रह्म शान्ति:। सर्व शान्ति: शान्तिरेव शान्ति: सामा शान्तिरेधि।।

****

सितार वादन में गायन की बंदिशों का महत्व

डॉ.अंकित भट्ट *

प्रस्तावना – सितार वादन में गायन की बंदिशों का महत्व एवं विश्लेषण करने से पूर्व बंदिश क्या है, इस विषय पर चर्चा करना आवश्यक है। बंदिश मूलत: फारसी शब्द है। पं. रामचन्द्र वर्मा के उर्दू–हिन्दी शब्दकोष में इस शब्द के निम्नलिखित अर्थ मिलते हैं– (1) बाँधने की क्रिया भाव (2) गाँठ गिरह (3) छन्द की रचना (4) उपाय, तरकीब, योजना (5) इल्जाम या दोषारोपण अभियोग। बंदिश का शाब्दिक अर्थ है– बाँधने की क्रिया या भाव, पहले से किया गया प्रबंध, गीत या कविता आदि की शब्द योजना। म बंदिश राग की एक विशिष्ट आकृति है। नयी नयी आकृति का सौंदर्य पाने के लिए या एक ही राग की कई शक्लें या रूप दिखाने के लिए यह एक अच्छा तरीका है। हर बंदिश का एक मिज़ाज़ होता है। जो 'साहित्य' के आवनवं 'रसों' या 'संचारी – व्यभिचारी' भावों की परिभाषा से समझाया नहीं जा सकता। इस 'मिज़ाज' को समझकर जब बंदिश पेश की जाती है, तब इसकी आकृति का सौंदर्य खिल उठता है।

सुश्री प्रभा अत्रे ने रागों का तथा विशिष्ट रचना प्रकार का स्वरूप स्पष्ट करने वाली शब्द ताल, स्वर में बद्ध की गयी रचना को बंदिश कहा है। पं. दिनकर कैकिणी ने बंदिश को राग की परिभाषा देते हुए कहा है Bandish gives the definition of a raga or a particular thought in the rage.

शास्त्रीय संगीत के लिए उपयुक्त गेय शब्द रचना करने की प्रक्रिया को 'बंदिश' कहा जा सकता है। राग विस्तार में ताल की सहायता से सबको एक साथ बाँधे रखने का कार्य, बंदिश का विशिष्ट भाग 'मुखड़ा' ही करता है।

आचार्य बृहस्पति ने भावाभिव्यक्ति को संगीत का प्रयोजन बताते हुए शब्द कहने का ढंग, राग, ताल और लय के सुघटित रूप को 'बंदिश' कहा है, उनके अनुसार 'बंदिश' रूपी सुन्दरी की हड्डियां शब्द है। 'राग' उसका माँस और त्वचा है। 'सुरीलापन' उसकी कान्ति है, 'ताल' उसके शरीर का आकार है, 'लय' उसकी अठखेलियां है।

गायन–वादन की किसी भी विधा में बंदिश और गायन–वादन शैली ये दो वस्तुएँ मूलभूत आधार होती हैं। स्वर–तालबद्ध पद रचना या गत रचना को बंदिश की संज्ञा दी जाती है। भारतीय संगीत में बंदिशों का अत्यधिक महत्व रहा है। हिन्दुस्तानी संगीत में किसी भी रचना को बंदिश कहा जा सकता है। ध्रुवपद, धमार, ख्याल, ठुमरी, दादरा आदि सभी प्रकार की रचना को बंदिश की संज्ञा दी जाती है। बंदिश शब्द प्राचीन प्रबंध का ही पर्याय है। जिस प्रकार प्रबन्ध का अर्थ सुन्दर, श्रेष्ठ व व्यवस्थित ढंग से बंधी रचना होता है , उसी प्रकार बंदिश अर्थात् बंधन राग, स्वर, ताल, लय एवं शब्दों का।

राग के स्वरों में निरंतर उलझी रहने वाली बंदिश राग का मूर्त स्वरूप होती है। राग के स्वरों को बहुत कुछ कहना पड़ता है। बंदिश की मदद से कलाकार राग में छिपा हुआ भावाविष्कार करता रहता है। वादी–संवादी स्वरों की मदद से, स्वरों के छायाप्रकाश को चतुराई से, बुद्धीकौशल्य से दिखाते समय उसका झुकाव रगांग के महत्व को बनाए रखने का भी होता है। रागाविष्कार में बंदिश के अंग से उपज होती है, राग की व्यवस्थित प्रस्तुती हेतु अलग अलग उठान वाले रागों की बंदिश का भी संग्रह रखना पड़ता है।

बंदिश के आधार एवं आकृति तत्व : बंदिश को पूर्ण रूप से समझने के लिए बंदिश को आधार व आकृति प्रदान करने वाले तत्वों को जानना आवश्यक है। ये तत्व है– स्वर, लय व शब्द।

बंदिश में इनकी बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका होती है, किस स्वर को किस तरह लेना है, यह इन स्वर अलंकारों को समझने पर ही ज्ञात होता है।

बंदिश में आधार तत्व 'स्वर' के समान ही 'लय' तत्व का भी महत्व है, क्योंकि बंदिश में प्रयुक्त स्वर कितना अल्प अथवा दीर्घ लिया जा, यह नाप तो लय से ही निर्धारित किया जा सकता है।

वाग्गेयकार अपनी प्रतिभा व उस राग से होने वाली अनुभूति के आधार पर शब्दों का चयन करते हैं, उस राग की आकृति को बना कर प्रस्तुत करते हैं, व गायक उसी आकृति को एक सर्जक केन्द्र के रूप में आधार मानकर अपने गायन में उन रागों का विस्तार करते हैं, इस बात का रहस्य यही है कि, समूची अभिव्यक्ति बंदिशों के माध्यम से उनके दायरे से हुआ करती है।

सितार वादन में गायन की बंदिशें बहुत महत्व रखती हैं क्योंकि सितार पर तंत्रकारी अंग के साथ–साथ गायन में प्रयुक्त की जाने वाली विभिन्न तकनीके जैसे गमक, मींड़, मुर्की, खटके आदि भी उजागर की जाती है। सितार पर गमक एवं मींड़ बहुत ही प्रभावशाली रूप से बजाई जा सकती है। सितार पर 'बारीक' मींड़ का काम जिसे मुर्की कहते हैं, बहुत कर्णप्रिय लगता है।

यह बात सच है कि कंठ संगीत के सबसे निकट सारंगी वाद्य है। परंतु यह भी उतना ही सत्य है कि गायन की ऐसी कोई भी हरकत नहीं है, जो कि सितार पर निकाली नहीं जा सके। सितार वादन में गायकी अंग की मुख्य विशेषता यह है कि इसमें बाँए हाथ के द्वारा प्रयोग की जाने वाली मींड़ की प्रधानता रहती है। इसमें गमक, मींड़ द्वारा छोटे–छोटे कण, मुर्की आदि का प्रयोग होता है। गायन की बंदिशों का सितार पर वादन श्रोताओं को बहुत लुभाता है। उदाहरण – जैसे अगर राग बागेश्री का छोटा ख्याल 'कौन करत तोर विनती पिहरवा' अगर सितार पर बजे तो वह 'सितार पर ख्याल बंदिश' कहलाएगी। सितार में सारिकाएँ या परदे होते हैं, जिनसे मींड़ का प्रवाह बहुत खूबसूरती के साथ किया जा सकता है। इसी कारण से इसमें गायन की बंदिशें बहुत सुंदर लगती हैं।

* असिस्टेंट प्रोफेसर, बनस्थली विद्यापीठ, निवाई, जिला–टोंक (राज.) भारत

जो सितार के कलाकार गायकी अंग से वादन करते हैं, उनकी प्रस्तुतिकरण के समय कंठ संगीत प्रत्यक्ष न होते हुए भी अप्रत्यक्ष रूप में वादक के साथ मानसिक तौर पर रहता है। जिस प्रकार ईश्वर के साथ एकरूपता स्थापित होने पर ईश्वर के दर्शन होते हैं, उसी प्रकार गायन और वादन में परस्पर एकरूपता स्थापित होने से सच्चे संगीत का श्रवण होता है।

सितार वादन की कुछ क्रियाओं को गायन के द्वारा दर्शा पाना कम संभव है। उदाहरणार्थ – जमज़मा, कृन्तन, घसीट, मुर्की इत्यादि। इन समस्त क्रियाओं का प्रयोग गायकी अंग के वादन में किया जाता है, जो सुनने में अत्यधिक कर्णप्रिय लगता है।

हाँलाकि तंत्रकारी अंग की बंदिशों में भी गायन की बारीकियाँ उजागर की जाती हैं, परंतु यदि गायन की बंदिशें ही सितार पर बजाई जाएँ तो वह जन–साधारण एवं श्रोताओं को अपनी ओर सहज आकर्षित कर लेती हैं। सितार का गायकी अंग में बहुत ही महत्व है। गायकी अंग से जो गायन करते हैं, उसी को छोटे ख्याल को आधार मानकर नई रचनाएं बनाते हैं, जिसमें मिज़राब के बोल निश्चित करते हैं। सितार की मींड़ से श्रोता आत्मविभोर हो जाते हैं और ऐसा लगता है, मानों गायक की आवाज़ और सितार की आवाज़ एक समान ही हो जैसे तरबदार सितार मानव कंठ की भाँति गा रहा हो।

कहा जाता है कि प्रसिद्ध सितार वादक उस्ताद मुश्ताक अली खाँ साहब ने जिन बंदिशों की रचना की, वे सांगीतिक पक्ष के साथ–साथ सौन्दर्यात्मक पक्ष से भी परिपूर्ण है। खाँ साहब ने अपनी अधिकतर बंदिशों की रचना ध्रुपद के आधार पर की। ध्रुपद के आधार पर उनकी बंदिशें चार टुक की होती थी, स्थायी, अंतरा, संचारी और आभोग।

आज के युग में 'ख्याल गायकी' गायन की सबसे लोकप्रिय शैली है। सितार वादन में ख्याल की बंदिश बजने से वह श्रोताओं को अतिशीघ्र अपनी ओर आकर्षित कर लेती हैं। इसका एक कारण यह भी है कि वह गायन की बंदिश जो सितार पर बजाई जा रही है, पहले से ही श्रोता ने कुशल गायक द्वारा सुनी होती है, अत: वह उस बंदिश से बहुत जल्दी ही आत्मसार हो जाता है।

ख्याल की बंदिशें सितार पर अत्यंत सुमधुर लगती हैं परन्तु उपशास्त्रीय गायन शैलियाँ जैसे ठुमरी, टप्पा आदि अगर सितार पर बजे तो ऐसा प्रतीत होता है जैसे सोने पे सुहागा। प्राय: सितार वादक राग के बाद अपनी प्रस्तुती का समापन एक धुन के साथ करते हैं, जो कि उपशास्त्रीय वादन के अंतर्गत आता है। अब यदि उपशास्त्रीय धुन में ठुमरी बजाई जाए तो वह श्रोताओं की वादक के हुनर का और अधिक परिचय देती है। ठुमरी की खासियत होती है, छोटी–छोटी परन्तु बेहद सटीक मींड़, चंचल प्रकृति के रागों से श्रृंगार रस प्रदर्शित करना। सितार की महीन आवाज में यह सब वस्तुएं बहुत प्रभावित करती हैं। सितार वादन में यह श्रृंगार रस एवं ठुमरी का सितार में प्रयुक्त किया जाना बहुत जल्दी ही संगीत रसिकों को अपनी ओर खींच लेता है।

इसके उपरांत टप्पा का सितार में वादन वादक की कठिन साधना की और प्रकाश डालता है। टप्पों में तानों की चपलता का क्रम रहता है। साथ ही गति भी अधिक द्रुत होती है। सितार वादन में टप्पा वादन इतना सहज नहीं होता है। यही कारण है यदि सितार पर टप्पा सही ढंग एवं क्रमबद्ध तरीके से बजाया जाए तो श्रोता उससे अभिभूत हुए बिना नहीं रह सकते। गायन की बंदिशें सितार पर वादक की कुशाग्रता एवं लोकप्रियता दोनों ही कसौटी पर खरी उतरती हैं।

कई बड़े कलाकारों द्वारा सितार पर सुगम संगीत भी सुनने को मिला है। सितार पर भजन, कजरी, चैती, दादरा कव्वाली एवं फिल्म संगीत बहुत कर्णप्रिय लगते हैं। साधारण श्रोताओं के बीच सितार वाद्य को और अधिक लोकप्रिय बनाने का सुगम संगीत एक बहुत सशक्त माध्यम है। सुगम संगीत के वादन के लिए भी बहुत साधना की आवश्यकता होती है। परंतु अधिकांश सुगम संगीत सरलता से संगीत विद्यार्थियों को सिखाया जा सकता है। जिससे उनमें सितार वाद्य के प्रति और अधिक आकर्षण उत्पन्न हो जाता है, जो उनकी भविष्य की शास्त्रीय तालीम के लिए आवश्यक होता है।

इस प्रकार निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि गायन की बंदिशों के साथ–साथ सितार के सौंदर्य तत्वों ;कण, मुर्की, खटका, जमज़मा ,गमक , धसीट आदि द्व का समायोजन करके सितार वादन करना गायकी अंग कहलाता है। इससे संगीत प्रेमी गायन और वादन दोनों ही विधाओं का आनंद 'गायकी अंग' के माध्यम से प्राप्त करते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. गोस्वामी, परिणीता ; भारद्धाज, देव– देवश्रुति– पृष्ठ सं.153
2. श्रीनवल– नालन्दा विशाल शब्दसागर– पृष्ठ सं. 942
3. शर्मा , डॉ. (कु) प्रेमलता –;प्रस्तावना – उत्तर भारतीय शास्त्रीय गायन का ध्वन्यंकित अध्ययन – पृष्ठ सं. 39
4. पंडित दिनेश केकिणी से भेंटवर्ता से ज्ञात ;4.4.97 –देवश्रुति– पृष्ठ सं.154
5. गोस्वामी, परिणीता ; भारद्धाज, देव– देवश्रुति– पृष्ठ सं. 153
6. आचार्य बृहस्पति – राग रहस्य – पृष्ठ स. 24
7. परमोच्च स्वर–शिल्प का माध्यम बंदिशें ; श्रीमती माधवी नानल द्धारा प्रस्तुत व्याख्यान प्रदर्शन , संगीत विभाग,राजस्थान विश्वविद्यालय , 7 oct. 2014
8. ठाकुर , वन्दना – तरबदार सितार की उत्पत्ति – पृष्ठ सं. 119
9. उस्ताद मुश्ताक अली खाँ (व्यक्तित्वएवं कृतित्व)–डॉ. अलका नागपाल–संजय प्रकाश, नई दिल्ली–प्र.सं. 2006 – पृष्ठ सं. 81

****

Overview of Historical collections of Bombay School

Douglas M. John *

Introduction - To understand the paintings, their importance it is imperative that we know the painters who belonged to the Revival School. In this process, we will understand the city of Mumbai as it was then as well as the artists.

Here, the lives of a few artists and their works are commented upon in short. It will be interesting to search the artist in this art. The main aim of this research is the study in depth of the work of art by the students of the JJ School of Art influenced by the Indian Revival Movement.

Paintings of the Students of J.J. School of Art in its Collection - The art of those times in Maharashtra came to be known as the Bombay School of Art. Inspite of such a great heritage the history or proof of such a flourishing era is non-existent today. Even to show chronologically the phase there isn't enough art collection of the bygone era together in one place. It has become difficult to even get the personal details about the artists of those times. It's only from mid-20th century, during the British Rule, Art Schools were established in India, but still the history of origin of art as well as the development of contemporary art-sculpture is neither documented nor written. To write or document the art history of the ancient art and also of the celebrated artists of the era; has become difficult with each passing year.

In the future the history of great art and talented artists from the 19th century and 20th century Maharashtra would be impossible to procure even when you search for it. Although some information is available with the J.J School of Art, Bombay but they are not in a chronological order. The autobiography or a book including the information of great artists or their art is neither available. Even art critics who can speak with authority on the topic may have forgotten about these artists and even the work of these artists are on the verge of destruction.

Across the globe in museums of different countries, study and research is being undertaken simultaneously on the tradition of Indian arts. The writings in English and Marathi language on Indian Paintings, Sculpture and the related fields are few. Especially important events in the field of contemporary art, contribution of artists, the specialties of the artist etc. are not available in a chronological order nor proper documentation are done.

Senior Artist and Former Director of Maharashtra State Late Prof. BaburaoSadvelkar said, "ParthaMitter, an Indian Art critic and Art Historian settled in England had visited my office three years ago. He told me about his research on Indian Artists and requested my co-operation and help for his project. He wanted to specifically study about the old artists of Maharashtra (Western India). His favorite and favored artists were AabalalRehman, Dhurandar, Trindad, Haldankar, Baburao Painter, Nagarkar, Ahiwasi to name a few artists and their contemporaries.[1]

Partha Mitter said, "In the whole of India, the state of Maharashtra has contributed and worked significantly in the field of art. Except Bengal, no other province/state in India can measure up to the position of Maharashtra in the field of art. Inspite of all this, there are no as much as necessary museums of art collection established for educational purpose to study the work of these local artists. As far as Mumbai is concerned the responsibility of conserving the works of local artists is of the 'Civic Body' (Municipality).[2]

A similar situation aroused recently when on 20th January 2017, Mrs. Susan S. Bean (Visual Arts of Modern South Asia) of Harvard University came to India for her research work (thesis) on Unbaked Clay Sculptures. She approached Dr. SaryuDoshi (Former director of NGMA) to study about great sculptors and painters of Maharashtra like GanpatraoMahatre, M.V Dhurandar etc. Upon coming to Mumbai, she approached the Professors at J.J School of Art and researched about her thesis in the Library. However she did not find any suitable and relevant information and had given up hopes. Finally, Dr. SaryuDoshi asked her to approach the author (Douglas John) for the necessary help.

The English Principals with knowledge on Indian Art were present in Mumbai Art School too. From 1868 – 1895, John Griffiths served as the principal of J.J School of Arts. In 1872 he undertook the work of making facsimile copies of the mural paintings of Ajanta Caves. After having worked continuously for nine years, in the year 1881, he completed the work. On the basis of this study, John Griffiths created a priceless book called, 'The Paintings in Buddhist Caves Temple of Ajanta.' For this work he had sought help of the

* **Research Scholar & Lecturer (Deptt. Drawing & Painting) Sir J.J.School of Art, Dr.D.N.Road, Fort, Mumbai (Maharashtra) INDIA**

students and teachers from J.J School of Arts. We can conclude that from this project the golden journey of J.J School started in the field of art collections.[3]

The director of J.J School Gladstone Solomon has written extensively about many hidden and lesser known facts on Indian Artists. In his writings he has given an esteemed position to the artists of Maharashtra (Bombay School of Art).

Despite such a great legacy in a city like Mumbai there are no enough museums and institutions which showcase the rich legacy of art in a chronological order. The art for which scientists, researchers and art curators keep consistently coming to Maharashtra from foreign lands; whereas we have left the traditional and contemporary art in a state of anonymity. In a few years to come the art will be on the verge of complete destruction.

But in J.J School since 1880 the priceless art collection which the college has, is completely kept under observation. Therefore it has become necessary to publish a catalogue of this priceless vintage collection of art because some of the art works (Especially Art on Paper) are feared to get decayed with time. Also, such an art catalogue which is no less than a holy book can reach maximum art enthusiasts and curators in the art world. From a perspective of protecting our traditions, this book is invaluable and priceless.

An exhibition of this art collection was organized in the year 1981 during the month of May, on the occasion of Maharashtra Utsav Celebrations at Lalit Kala Academy, Delhi. The exhibition gained huge publicity to an extent that newspapers had 4-5 pages solely dedicated to describing the art works displayed at the exhibition. Art Experts were of the opinion that the exhibition was of an historical importance. But after this exhibition no great event has happened on the paintings. All these paintings are stored at Sir J.J School of Art. Sometimes for some art festival these paintings and art works are taken for exhibition but not all the paintings are displayed from the collection.[4]

In the sesquicentenary year 2008 Sir J.J School of Art, Mumbai, the residence of deans on the campus of Sir J.J School of Art was planned to be made into an art museum. The campus was planned to be beautified and solutions were to be found for restoration of the decaying artworks. Therefore for this purpose Mrs. Sangeeta Jindal, Chairperson, Jindal Steel Work Foundation, Mumbai through letter dated 16th August 2008 has presented a policy to the government. The government has accepted the policy under certain terms and condition laid down by the government.

The Art Collection of Sir J.J School of Art, Mumbai would be displayed at Sir J.J School of Art, Mumbai and shall be organized on behalf of Jindal Steel Works Foundation Mumbai.

Dr. SaryuDoshi, Dr.Nalini Bhagwat, Mr. Manohar Mahatre along with author (Mr. Douglas John) from the institute, helped in selection of the artworks.The author presented a valid point in front of the committee (Selection Committee) that as far as possible maximum number of paintings should be displayed in the exhibition. Doing this will guarantee that the history is not confined to being locked up in the cupboards catching dust but will be publicized and reach the mass population. Along with it the threat of paintings and other artworks being stolen will also be decreased.

The artworks of this school of art are one of the finest among the world and hold's a place of pride in the history of India's Tradition of Art.

The J.J School of Arts ex-Student Alumni expressed their desire to make a memento to showcase this priceless treasure of art in the institute which are now only few.

The catalogue which was made with the help of J.Jites Association, the efforts of Prof. Paul Koli (Print Maker) and Chandra Sachdev (Painter, Owner of Gallery 7) gave a fresh scope to the art works of acclaimed artists and also the historic way in which it was publicized and gained fame which will help the future generation to know about the golden period of 150 years at J.J School of arts.

In the present situation Sir J.J School of Arts have 1) School of art collection 2) Demonstration 3) Students Art Works 4) Sculpture Collection 5) Craft Collection 6) Begree Collection 7) Printmaking Collection this is available in the current situation. The details can be classified as follows –

1. **School of art collection -** In this section there are paintings of renowned Indian artists as well as paintings of western artists. Some of these paintings are purchased by the institute (after being paid an appropriate amount).This was done to widen the horizon of students' knowledge on paintings[5]
2. **Direct Demonstration** - This collection had samples for direct observation. The aim of this section was that it would help students in understanding various concepts in their field of study so that they can solve their queries and difficulties in a practical and scientific manner after watching a live demonstration of the work by artists.
3. **Students Artworks Collection -** This collection contained the best artworks of students of different classes which were presented at the annual exhibition of the college and then presented to the art collection of college. The necessary items to make these artworks were presented by the college so that there would be no financial constraints to be faced by the students in creating an artwork.The major artworks in this collection were of Antique study, pencil drawing, head study, charcoal, portrait, and full figure charcoal, oil full figure, and Design, Indian style composition, Paintings.
4. **Sculpture Collection -** This collection had the finest artworks of the old acclaimed artists (sculptors) of Sir J.J School of Arts, Bombay and also the most excellent artworks (sculptures) made by students for the purpose of study.
5. **Craft Collection -** In this there were artworks of metal craft that are utensils, tables and mementos. Among

Fashion designing there were beautiful embroidery and minute works done on paper. In wood designing there were beautiful carved panels. But many artworks in ceramics and rexin are under the BhauDaji Lad Museum, Mumbai.

6. Begree Collection - Begree collection started when Rich business men and effluent personalities gave some paintings which they couldn't afford to maintain from their expensive art collection to Sir J.J School of Arts with a small of amount of money so that these artworks could be maintained in the same condition.[6]

7. Print making collection - In this finest artworks by the students made in the class as well as for study purpose were showcased. The artworks were displayed first at the annual exhibition and then the selected artworks were given by the students to the art collection of the college. This collection was made from artworks collected between the years 1950 – 2010. This art collection was formed and structured with the efforts of Prof. AnantNikam and was completed in the year 2011.

It is indeed a matter of pride for Sir J.J School of arts for having such a prized collection of art. It is a cultural heritage of the country and therefore efforts should be taken to declare such an important and historic piece of art as a National Treasure.

References:-

1: Sadwelkar Baburao, Vartaman chitrasutra, Mehta Publication House Pune, 1996, Page No. 92
2: Ibid, 93
3: Ibid, 149
4: Ibid, 98
5: Said the renowned painter and restorer Mr. Manohar Mhatre in his interview.
6: Said the renowned painter and restorer Mr. Manohar Mhatre in his interview.

Charcoal Drawing by K.Y.Nandankar

Portrait Painting by S.H.Raza

Moharam Processions by G.D.Deuskar

Social Processions by S.V.Gurjar

****

Evolution of moving images from mainstream to Video art and further ahead

Ritesh Kumar * Prof. Himadri Ghosh **

Abstract - To give a brief and structured form of human's imagination, place and medium plays a vital role. From the Stone Age to till date we have seen vivid medium of expressions. If art is audible then it turned into instruments, sound and music; if it is visual then it developed in the form of dance, acting, painting, sculpture and architecture. From ages time to time different media is being used by artists in their art forms like sometime in the wall of caves through charcoal sometimes through animal fats even with lime stones. Through technological advancement they used frescos, tempera, water color, oil color, Acrylic etc. expressions is never being characterized by any principles through time it evolves according to advancement in technology.

In present scenario through the progression of digital technology variety of new medium spreading their wings and video art is one of them. In this research paper will cast light on "Evolution of moving images from mainstream to Video art and further ahead".

Introduction - 35000 years ago on the walls of cave our ancestors have painted a Bison with four pairs of legs. What was in his mind that the animal had 8 limbs or what?

The answer is they wanted to show Motion.

From beginning human have been trying to make the picture move. In 1600 BC the Egyptian artists built a temple of goddess Isis which had several columns and each column had painted figure of the goddess in a little by little changed position. When someone speedily passes with their chariots the figure appeared to move. Same movement in pictures can be found in Ancient Greek's decorated pots. After the invention of *Camera Obscura*, and research done in Optics and lenses around1640 or say mid 17th century it further developed as a *Magic lantern* by Dutch scientist, *Christiaan Huygens*. This technology can project drawings and paintings in form of shadow show onto a wall as a amusements device in family or in community (From the reference of article from www.magiclanternshows.com , referred date: 21-5-2017) become one of the leading antecedents of the movies. By peak of its success at the end of the 19th and the early 20th century, this device was everywhere – in homes, churches, schools, theaters and halls. This early technology of movie projector can project hand-colored slides on a full-sized screen. After the research in optical illusion delivered new phenomenon called Persistence of vision which was being supported by *Paul Roget's* simple mechanical toy '*Thaumatrope*' supports the theory of persistence of vision which became popular in 1828. In starting of 19th century these slide had capable of rough animated projection as well as possibilities of exotic special effects in their illustrated stories, like movies now days. These projections were based on performance, using soundtrack with live performers. Those days *Joseph Boggs Beale* was the foremost magic-lantern artist used Photographic slides in their lantern performance after invention of photography techniques in 1830. Some of these bizarre slides showed beauty transforming into a beast, and some were moving caricatures or say the first cartoons that moves.

The most popular of the animated cartoons was the *Ratcatcher* in which a man while sleeping snoring vigorously, suddenly a rat appears and while running around swallowed in a gulp by the man asleep. Beale's projection had combination of fine points like story-telling, attention catching actions.

In the mid 19th century, inventions of other technological devices like '*Phenakistoscope*' and '*Zoetrope*' demonstrated

* Assistant Professor, Faculty of Design, Banasthali University (Raj.) INDIA
** Director, Faculty of Design, Banasthali University (Raj.) INDIA

that a carefully drawn sequential images or drawings, showing levels of the changing form of objects in motion with persistence of vision would create an illusion that objects actually moving if they were displayed one after the other at an adequately rapid rate. This phenomena and lust for capturing moving images and showcasing them among people lead to the last major device of this type called '*Praxinoscope*' invented in 1877. This invention was able to project 80 frames without changing reels and could project 10-15 minute films.

Invention of photography techniques in 1830, new Art culture began to sprout. In 1878 Photographer *Eadweard Muybridge* experimented with multiple cameras and showed to people how humans and animals move. Starting of 20th century almost in 1890s, the urge to capture moving photographs on screen the motion picture camera called The *Kinetoscope* was invented by *Thomas Edison* and *W.K. Dickson*. This technology was based on reels of celluloid which again invented by *George Eastman* in 1885-88. This peep show device had a disadvantage that only one viewer at a time could watch the show. Edison opens his Kinetiscope parlor in New York City and copyrights the first motion picture, *The Record of a Sneeze*. This technology began the starting of movie or motion picture. In 1906 Edison and *James Stuart Blackton* collaboratively made and realized the first combination of drawings and photography called *Humorous Phases of Funny Faces*. Blackton made around 3000 flickering drawings to make this first animated picture. This technology introduced a new dimension of art called animation films. This technology bought new business opportunity among traveling exhibitors and conveniently marks the emergence of the first motion pictures that can be considered as films at this point of time. The films of this period were seen mostly as acts in vaudeville programs. Then in 1895 *Lumiere brothers* patent a device which had movie camera with projector. This device was capable of projecting moving image that can be seen by crowd. First projected moving image was '*Arrival of a Train on Platform*". There were no editing or image manipulations were there. Then *Georges Milies* built his first film studio in 1997 and started making narrative cinemas in static shot which had lots and lots of image manipulation and tricks like stop motion and visual effects, after this started commercialization of moving images in form of cinema by other film makers. I would like to Note here that before *Georges Milies* and *Edwin S Porter* they all were inventor not Film makers who kept on reforming there devices. But soon after starting of Narrative approach in cinema and editing techniques in term of following the screen continuity started new cinematic journey which still evolving and experimented by film directors. One side a group of film makers approached towards a narrative cinema for commercial success on the other hand some still practicing film as an art of moving images in more artistically. This non-narrative based approach of experimental film can be found in European Avant-garde movements of the 1920s movie. This film making style often opposed to practicing of mainstream commercial and documentary filmmaking. These film makers/artist, experimental in nature have used various abstract techniques like out of focus, painting and scratching on film (Can be seen in *Norman Mclaren* experimental animations), rapid editing, use of non-diegetic sound or even absence of sound. The main aim was to make viewer more active and more thoughtful regarding aesthetic or say power of film. These films often made on low budgets, self-financed with small crew or some time a one man show. These films having typical features such as non-narrative, Dadaists (Rene Clair's Entracte, 1924 film featured *Marcel Duchamp*), impressionistic and even some time Surrealistic. For example well know painter *Salvador Dali* made a film *Un Chien Andalou* (1920) with the help of *Luis Bunuel*, regarded as best non-narrative/experimental film of all time. But again it was nothing new they did on the basis of experiment with moving images, back in early days Soviet Filmmakers (Sergei Eisenstiein, Lev Kuleshov, and Pudovkin), too made a cocktail of Painting, photography and moving images in their defined theories of "*Montage*". Now we don't see as a experimental cinema but back then yes it was avant-garde and later following by most of the filmmakers became mainstream. These avant-garde paths are followed in animation films also.

One of film maker *Maya Deren* made a film; *Meshes of Afternoon* (1943) is considered one of the most important American Experimental films. This movie had dream like ambience and the surrealists approach, but on other hand it seemed very personal.

In 1940s an artistic avant-garde movement happened in France known as *Lettrism*, by *Isidore Isou*. The Lettrists theories have applied to all areas of art and culture, mostly in poetry, film, painting and political theory. In 1952 this movement caused riots in the Cannes film festival, when *Isidore Isou's* "Traite de bave et deternite" (also known as Venom and Eternity) was screened. The letterist continued to cause disruptions when they announced the death of cinema and showed their new hypergraphical techniques and the most notorious film of which is *Guy Debord's Howlings* in favor of de sade.

This personal touch in films can seen when in 1960-70 decline of studio system content a new group of American filmmakers emerged and gave Auteur Theory in film literature and the media, which posited that a film director's films express their personal vision and creative insights.

Meanwhile in 1960s video technology was introduced to society. The first portable equipment was developed by the US army for inspection or to keep eye on Vietnam War. But when Brand Sony introduced his *Portapaks* for sale purpose in mid 1960s, artists positively cultivated video as a new creative medium. Like an *Auteur Theory*, Artist experiments with this new technology to explore their and medium it self's aesthetic possibilities. Which started

questioning the politics of that time and commercial interest of mass media? They took up art technique in the swell of highly politicized avant-garde and named it Video Art. Video art is named after the original analog Video tape which is being used as a storage and reproduction purpose of moving visual media. Video is an electronic medium for recording, copying, playback, broadcasting, and display purposes.

In 1897, on the occasion of Queen Victoria's diamond Jubilee *Robert W. Paul* used his camera to shoot the procession in one single shot late known as Pan Shot (from history of films, Wikipedia). But it was just like *Nam June Paik* shot the pope procession in single shot without any editing and begins a new movement in art of moving images. Artist evolved himself and video art using performance, light, sound and other contemporary digital techniques to morphed the video art in installation or performance and new media art. Recent trends in video art subsumed other disciplines such as installation, architecture, design, sculpture, electronic art, video performance and digital art and other aspects of artistic perspective. Now artists no longer are using analog video tapes for production of their art. They evolved from using digital medium using CD, DVD to other contemporary Digital video formats with higher quality including SDI, DVI, HDMI and Display Port Interface. Stereoscopic video is in popular culture now, using VGA technology which is common in creating computer virtual reality and 3-D films.

Various exhibition taking place to host Digital revolution in art and explores the impact of technology on art over the past few decades. These are showing high visual qualities and technological awakening moments. This digital revolution showcase a number of new works from contemporary artists and entertainers, culminating in a spectacular interactive laser exhibition, lets visitors interact with shows and feel that as a part of performance like augmented reality. For example the Treachery of Sanctuary by Chris Milk uses Kinetic cameras and 3D graphics to form a modern take on shadow play. New York based artist Zach Lieberman's contribution is a keyboard that samples sounds in real-time from hundreds of radio stations around the world[4]. Recently new technology launched in a form of mini drone that features all of DJI's signature technology, allowing users to seize their precious moment whenever you feel like without any help of others, with intelligent flight control options, a mechanical gadget, and a camera with incredible image quality. This technology is now looking for video artists who could push their creative limitation one step ahead.

Conclusion - Through this research paper I would like to state that evolution happens through the progression of time, it just not happened in a day. Same evolution happened with moving images also which affects art of their own contemporary period. With the advancement of technology we as an artist become aware of new medium of expression. Continuously efforts in making technology more advance and illusive pushed the boundaries of creative thinkers and executers.

Through this research I tried to grab attention towards video art was just not started suddenly in 1960s it had hiding long history of continuous effort to make moving images more thought provoking and breaking the old notions of seeing art. Through this research I also proved that artists no longer using analog video tapes to produce video art. They are using verity of other digital techniques for expression and storytelling using animation, visual effects, projection, installation, sculpture and architectural spaces. This germinates to new medium and looking for a new identity.

References :-

1. New media in Art: by Michael Rush – Pub. Thames and Hudson
2. New media in late 20th century Art
3. New media Art – Taschen Basic Art series
4. Video art : a guided tour – by Catherine Elwes
5. Illuminating Video: An Essential guide to video Art – Doug Hall and Sally Je Fifer
6. The Language of New Media – by Lev Manovich
7. The animation survival kit – Richard Williams
8. History of World cinema - Geoffrey Nowell-Smith

Web-links

1. http://www.smithsonianmag.com/arts-culture/7-ways-technology-is-changing-how-art-is-made-180952472/
2. http://www.digitalmeetsculture.net/article/digital-meets-art/?upm_export=pdf
3. http://www.balanceinteractive.com/blog/role-art-our-lives-and-how-digital-technology-impacts-it
4. https://www.theverge.com/2014/7/3/5867225/digital-revolution-barbican-london-exhibition-photo-essay
5. Wikipedia

****

Aesthetics sense of designing Jewellery

Dushyant Dave *

Introduction - Aesthetics - The word "Aesthetics" find its root in Greek word aesthesis, it refers to sensory observation and indulgent or intense knowledge. It was philosopher Baumgarten who picked the term and modified its meaning into gratification of senses. The works of art are usually conceptualized to attain sensory pleasure. Since then the concept has been applied on every form of experiencing art, i.e. aesthetic attitude, understanding, emotion, value, judgment, etc. Although nature and people have been experiencing aesthetic, the aspect is usually termed in relation to arts, especially visual art.

Diagram 1 (See in next page)

Diagram 1 explains process involved in aesthetic experience while observing art work. In this concept the observer starts off with perceptual analysis of art work, then comparison with previous experience and then eventually interprets and evaluates work of art. The work of art can be of various types such as painting, sculptures, design, jewellery product, etc, as they possess aesthetic value in them. Thus the study further progresses to investigate aesthetics involved in designing jewellery.

Jewellery designing - In Jewelry design, as in other forms of design, the Problem always begins with certain given conditions or requirements which must be kept in mind throughout the designing process. We must first consider its use, and ask the question. Is it to be a brooch, pendant or ring? Then, as most pieces of Jewelry are nothing more than the setting of some precious or semiprecious stone, it is necessary to know not only the kind of stone to be used but its size and shape before anything can be done, and it would be better if it is designed expressly for the person who has to wear it. The purpose in jewelry design is to create interest to Construction, but while doing it the designer must regularly keep in mind the purpose and material. In designing a finger ring, for example, the object is to secure or set a stone in a band of metal which is to encircle the finger. The problem is a ring. The materials are a stone and the metal, which may be silver, gold, or platinum. It is possible to carry out such a problem in a very simple manner, having no ornamentation whatever, only a proper relation between stone and metal; that is, having the right amount of metal visible in relation to the stone used. There must be, however, refinement of line in the modeling of the metal to have it in keeping with the stone.

A precious stone with delicate, transparent coloring should be treated quite differently from a semi-precious stone of opaque coloring. If ornamentation is desired it is still necessary to keep in mind its purpose and the material used. Interest may be added to the construction in various ways. The surface of the metal may be broken up by modeling or carving some intricate pattern, giving an Interesting play of dark and light, or the metal may be treated in a lighter or more open work manner by piercing or removing as much of the metal as is possible without affecting the strength of the setting, the decoration resulting in beauty of line and silhouette. In this method there are splendid opportunities for design. The ring is simply used as an illustration; all other forms of jewelry may be treated in the same manner. Before the designer can work out any of the problems for execution, it must be led to design intelligently as it will not be dependent on others for ideas. Designer must be led along various lines which will give him the necessary equipment. First of all he / she must study nature, but before an exquisite detail, knowledge of drawing must be acquired.

Although graphically expressed often makes clear the obscure meaning of words. If the designer hopes to demonstrate his ability in creating ideas, it is essential that a designer develop facility in the use of the lead pencil. This may be acquired by a systematic course of exercises at the end of which the designer will gain the ability to enable him to present ideas with clearness and precision.

Fine points of aesthetics to be considered while designing jewellery - When designing a piece of jewellery for an individual there are various aspects that should be kept in mind: particular shape, styles and colors for that particular type of beauty, requirements and limitations to make a piece comfortable and functional. If these aspects are kept in mind, a client will have piece jewellery that will fit as per individual personality, way of life, and be most becoming to the appearance. In this way wearer acquires a piece of jewellery that can become an integral part of a wardrobe and remain a cherished possession for many years and perhaps many generations. While designing every designer consider some essential elements for specific jeweled article.

Designing Earrings - Earrings are essentials element for

* Research Scholar (Visual Art) Banasthali University (Raj.) INDIA

every individual jewellery wardrobe, they are notice for their own beauty and help to shape the contour of the face to bring out a radiant glow, because an earring can enhance a women appearance and look. They should be specifically design for the individual face, or if choosing from a selection already available, they should be considered in terms of facial structure and color. If an earring is very heavy it will be both uncomfortable and the bottom of the ear will appear elongated with the strain. By piercing and using some hollow shape, a large earring can be design that is still light in weight. The hole or pierce of ear is elongated from a heavy earring (as in more mature women), and then the clip must be attached to hold the earring properly and in place as shown in colour plate 1.

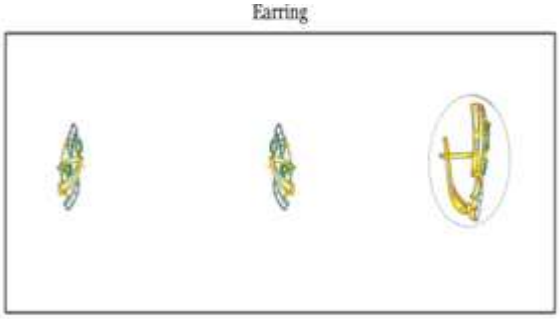

Colour Plate 1: An earring design with clip attached

Designing Necklace - There are some significant point need to seen while design a necklace for a woman with a long, thin neck will find that that choker- length necklace is most becoming to her appearance. This length tends to be broadening the face and add fullness to the neck, even more so when large beads are used. If she enjoyed a longer necklace, she can knot a long strand of beads to give bulk to the neck and minimize the length of the face. There is an endless variety of styles of gold necklace like gold beads, plain or textured gold twisted or in the form of chain; these may be narrow or wide, set with stone or plain, simple or elaborate, classical or antique or modern. A diamond necklace is the most wanted type of necklace; it may range from single strand of stone termed a riviere, or river of light, to an intricate arrangement of diamonds perhaps in combination with rubies, sapphires, emeralds. A pearl string with cut stone studded form is one of the most popular and flattering necklace it can be worn by women of every age (Colour Plate 2), and for almost every occasion. The shade and size of the pearls should be carefully selected. Strand should be placed against inside of the wrist and moved slowly back and forth to compare it with the skin tones.

Colour plate 2. A pearl string with cut stone studded form.

Designing Rings - The ring is one of the most interesting areas of jewellery design. Rings are most flexible and frequently worn of all jewellery pieces and therefore deserve a very extensive study. Rings ranges from simple ornamentation to a specific symbolism, as well as combination of both. For example, a diamond or a cocktail ring is used primarily for ornamentation. The purpose of a plain wedding band is symbolic. A stone set wedding band is used for both purposes. Rings are in constant display. A hand with long fingers is accentuated by a ring with a small round setting; it is better to wear larger cut stone as center piece as shown in colour plate 3. A little finger ring may help to diminish the length of the hand, whereas the same ring on the square hand will only accentuate the squareness. As with any well designed piece of jewellery, ring should fulfill a specific need, and need should be clarified in terms of symbolism and ornamentation before undertaking the project.

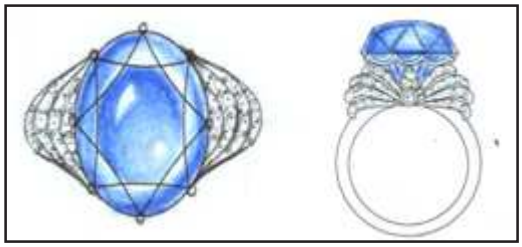

Colour Plate 3: Ring design with big stone as center.

Conclusion - No culture fails to lavish time and energy on the making and wearing of body ornaments, but there are some important aspects that need to be kept in mind while conceptualizing a jewellery design. A jewellery article always needs to be visualized with a prior and customized approach. Every aspect of client's brief needs to be incorporated aesthetically as to attain a perfect design solution. It is also to consider basic ergonomics while visualizing design as it need fit well on body and look good. But a concern needs to be shared as the jewelers and designers have been unacknowledged in spite of their valuable contribution to impart aesthetic worth in designs, partly because jewellery design is a difficult art to explain.

References :-

1. Maria Josep Forcadell Berenguer, Josep Asuncion, Drawing for Jewelers, Schiffer Publishing Ltd, 2012.
2. Pandey Prabha Indu, Dress and Ornament in ancient India, Bharatiya Vidya Prakashan, New Delhi, India,1988.
3. Dominique Audette, Jewelry Illustration, Brynmorgen Press; First edition, 2010.
4. Galli P. Maurice ,Riviere Dominique, Art of Jewelry Design: Principles of Design, Schiffer Publishing, 1998.
5. Leder, H., Belke, B., Oeberst, A., & Augustin, D. A model of aesthetic appreciation and aesthetic judgments. British Journal of Psychology, 2004.
6. Jewellery, Published by Roli & Janssen, 2008.
7. Vyas Mehta Shimul, When Jewellery Speaks, Published by Diamond World 2012.

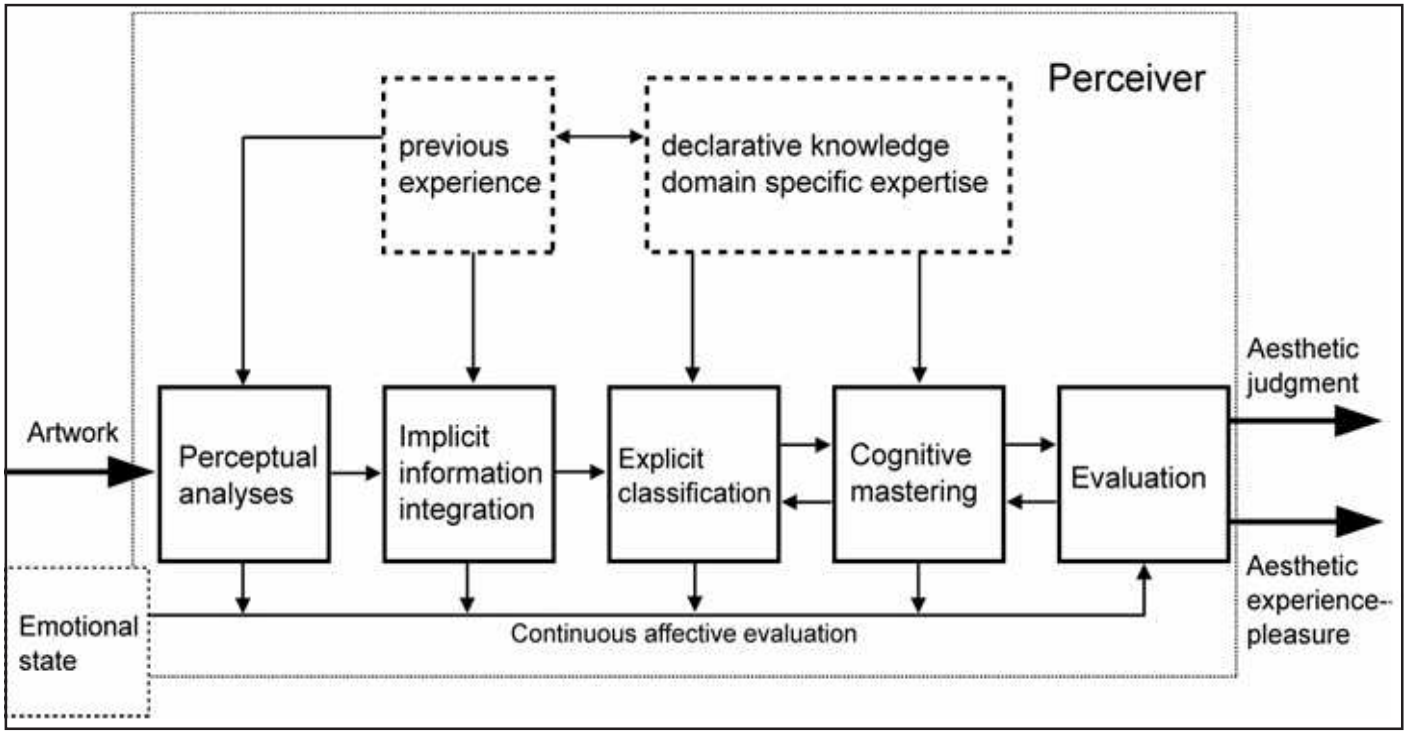

Diagram 1:
Concept of aesthetic experience
(Reference from Leder, Belke, Oeberst and Augustin, 2004)

****

कागज के कतरन का कला संसार : चित्रकार उमा शर्मा

मोहम्मद वसीम *

प्रस्तावना – आधुनिक कला में माध्यमों तथा रचना–सामग्री की दृष्टि से भी बहुतायत विविधता है। जल, टेम्परा, वाश, तैल, पेस्टल आदि के अतिरिक्त वस्तुओं को चिपका कर कोलाज बनाए जा रहे हैं। कहीं–कहीं गाढ़ा रंग लगाया जा रहा है। प्लास्टर, मिट्टी, मोम, लुगदी आदि से आकृतियों को उभार देकर रंगा जा रहा है। थर्माकोल पर भी उभारदार चित्र बनाए जा रहे हैं। लकड़ी के धरातल पर विविध प्रकार की धातुओं, प्लास्टिक के टुकड़ों तथा टेराकोटा टाइलों को लगाकर भी चित्र का रूप दिया जा रहा है। धातुओं को पीटकर रिलीफ का प्रभाव उत्पन्न किया जा रहा है। इस प्रकार सामग्री प्रयोग की दृष्टि से आधुनिक भारतीय कला में कोई निश्चित या बंधी–बंधाई परिपाटी नहीं रह गयी है। [1] इन विविध प्रयोगों से भारतीय कला अनेक नित–नवीन रूपाकारों में हम सबके सामने प्रस्तुत हो रही है। कलागत तत्वों एवं सामग्री का महत्व बढ़ जाने से नई–नई सामग्री के अविष्कार व प्रयोग की ओर कलाकार निश्चित रूप से आकर्षित हुए हैं। चित्रकार की कल्पना शक्ति कला के आयामों में बदलाव लाती है। कल्पना द्धारा ही वह अपने भविष्य को देखता–परखता और उपयोगी बनाता है। कला का संसार इतना विचित्र है कि एक छोटा सा विचार किस तरह अद्‌भुत होकर अपनी एक अलग पहँचान और दुनिया रच डालता है, इसका प्रत्यक्ष उदाहरण हैं, सुश्री उमा शर्मा और उनके अद्धितीय कोलाज। इसमें रंगों और तूलिका का प्रयोग नहीं किया जाता, किन्तु उमा के कोलाज में ना रंगों की कमी है, न रेखाओं की और यह परिपूर्णता उन्होंने प्राप्त की है– अखबार व मैगजीन के रंगीन कागजों के टुकड़ों से। इसी माध्यम से विषय व भाव के अनुरूप विविध रूपाकार उकेरती हैं। यह कोई चमत्कार नहीं, यह तो उमा शर्मा की सोच का एक रचनात्मक परिणाम है, जिसे देखते ही प्रत्येक दर्शक के मन–मस्तिष्क पर आश्चर्य का भाव उत्पन्न हो जाता है। वास्तव में उन्होंने कागज के कतरनों को अपनी कल्पनाशीलता में ढालकर चित्रों से गगन की उँचाइयों का परखा है।

कोलाज तकनीक का सर्वप्रथम प्रयोग सन् 1912–13 में चित्रकार ''ब्राक'' तथा ''पिकासो'' ने अपने चित्रों में समाचार पत्रों की कटिंग, परिचय कार्ड, कुर्सी के बेंत एवं रस्सी आदि को चित्रभूमि में चिपकाकर किया था। दो वर्षों तक निरन्तर इन चित्रकारों ने वास्तविक वस्तुओं को चित्रों में चिपकाकर इस तकनीक को समृद्ध किया। बाद में इटली के कलाकार ''कारा'' तथा जर्मन के कलाकार ''कुर्त शीतर्स'' ने सन् 1919 में इस तकनीक का प्रयोग कर रचनाएं की, और इसको परिष्कृत कर उँचाई तक पहुँचाया। [2] अनुपयोगी, रद्दी कागजों आदि से अलंकरण करने का तथा समाज पर टिप्पड़ी करने का यह एक अच्छा माध्यम है, ऐसा इन कलाकारों का मानना था। भारत के अनेक कलाकार भी कोलाज का प्रयोग करते आ रहे हैं, उनकी कलाकृतियों में प्राय: अखबार व मैगजीन के रंगीन कागज का प्रयोग होता है, साथ में अन्य माध्यम भी अपनाया जाता है, चाहें वह विविध प्रकार की सामग्री या वस्तुएं हो या फिर तूलिका द्धारा रंगाकन हो, किन्तु उमा शर्मा की चित्रण शैली अन्य कलाकारों की शैली से पृथक है। उन्होंने अपनी कलाकृतियों में रंगो के छुए बिना ही दृश्य को रंगीन चादर ओढ़ाई है। कैनवास या कैनवास बोर्ड पर मात्र अखबार व मैगजीन के रंगीन कागजों के कतरनों के संयोजन से कलाकृतियाँ पूर्ण कर लेती हैं। उमा कहती हैं– ''नो ब्रुश नो पेन्ट'' मेरा साधन है। [3] इसी विशेषता के कारण वह पहचानी जाती हैं और भीड़ की पंक्ति से अलग खड़ी दिखाई देती हैं।

सुश्री शर्मा को स्त्रियों के रचनात्मक कार्य अत्यन्त प्रभावित करते हैं। इसी कारण उनकी कला में ग्रामीण स्त्रियों को उचित स्थान मिला है, यद्यपि उनका कला संसार व्यापक है। उन्होंने अपने सृजन में विविध विषयों को लेकर अनेक चित्रों को सुन्दर व आकर्षक ढंग से उकेरा है। धार्मिक, ग्रामीण परिवेश, दृश्य चित्र एवं व्यक्ति चित्र जैसे विषयों को सम्मिलित कर अपने अनूठे माध्यम से अनूठी कला प्रस्तुत कर नयी पीढ़ी के लिए उन्होंने एक सशक्त माध्यम उपस्थित किया है, जो भारतीय कला में एक नया अध्याय जुड़ जाता है। उनकी यह कला नवोदित कलाकारों के लिए नि:सन्देह प्रेरणाश्रोत बन सकेगी। उमा के प्रसिद्ध चित्रों में– श्रीगणेश, श्रीकृष्ण, चरखे वाली, सब्जी वाली, दूध वाली, स्वागत करने वाली राजस्थानी स्त्री, कुम्हरिया, मथुरा सिटी, मथुरा, मथुरा का गाँव–1, मथुरा का गाँव–2, मथुरा बाजार–1, मथुरा बाजार–2, यमुनाघाट, सतीबुर्ज– विश्रामघाट, प्रियाघाट, मानसी गंगा, ब्रजधाम, हरिद्धार, जहाँगीर आर्ट गैलरी, साँई बाबा, गुरू शरणानन्द महाराज आदि उनके चित्रों के अनुपम उदाहरण हैं।

उपरोक्त चित्रों में ''ब्रजधाम'' नामक चित्र सबसे अधिक विख्यात हुआ है। इस चित्र को एक वर्ष की कड़ी मेहनत से बनाया गया है, जो दुनिया का सबसे बड़ा कोलाज है, [4] जिसका आकार 17 फीट X 6 फीट है। [5] इस चित्र को कैनवास पर कागज के असंख्य टुकड़े चिपकाकर मूर्त रूप दिया गया है, जिसमें मथुरा के साक्षात दर्शन होते हैं। इस कलाकृति में कलाकार सुश्री उमा शर्मा ने यमुनातट के किनारे मथुरा शहर की बसावट का दृश्य रचा है। इस दृश्य में बीहड़ की तरह दूर–दूर फैली बस्तियाँ, उनके बीच मंदिर, किले, हवेलियाँ एवं बाग–बगीचों का सौन्दर्य देखते ही बनता है, और मानस पटल पर एक अमिट छाप छोड़ता है। [6] इसी वर्ष सबसे बड़ी कोलाज के लिए यह कलाकृति ''इण्डिया बुक ऑफ रिकार्ड'' में दर्ज हुई है। यह अद्धितीय चित्र वर्तमान में रमणरेती, वृन्दावन स्थित प्रेम मन्दिर के सामने होटल ''क्रिधा रेजीडेन्सी'' में प्रदर्शित है। [7]

उमा के चित्रों की लोकप्रियता दर्शकों के बीच निरन्तर बढ़ रही है। कलामनीशियों की दृष्टि में उनकी कला अनमोल है। इन चित्रों की एक विशेषता यह भी है कि ऐसे चित्रों की अनुकृति नहीं की जा सकती है, यदि वह स्वयं भी चाहें तो नहीं कर सकतीं। प्रतिभाशाली कलाकार उमा ने तैल चित्रण और पेपर कोलाज चित्रण स्वयं ही सीखा है, उनका कोई कला गुरू नहीं है। बाल्यावस्था से ही उनका कला के प्रति झुकाव रहा है। वह अपना प्रेरणाश्रोत अपनी माँ को मानती हैं। उनका कहना है कि ''माँ ने ही हर कदम पर मेरे हौंसले को बढ़ाया और आज मैं जो कुछ भी हूँ अपनी माँ की दुवाओं की वजह से हूँ।'' [8]

कला के क्षेत्र में अनेक उपलब्धियाँ हासिल कर चुकी उमा शर्मा ने समय–समय पर अपने चित्रों की सफल प्रदर्शनियाँ आयोजित की हैं– 2008 में जहाँगीर आर्ट गैलरी, मुम्बई, 2009 में संस्कार भारती संस्थान, वृन्दावन,

* शोधार्थी (चित्रकला) जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

अर्चना आर्ट गैलरी, बड़ोदरा, 2010 में जवाहर कला केन्द्र, जयपुर, 2011 में ललित कला अकादमी, दिल्ली, 2013 में ललित कला अकादमी, लखनऊ, 2014 में आल इण्डिया फाईन आर्ट्स एण्ड क्राफ्ट सोसाइटी, दिल्ली, 2015 में पुन: ललित कला अकादमी, दिल्ली एवं जवाहर कला केन्द्र, जयपुर, और 2016 में टैवरन हॉल शिमला में। इसके अतिरिक्त वह अनेकों संयुक्त प्रदर्शनियाँ भी आयोजित कर चुकी हैं।

आज उमा के चित्र भारत में ही नहीं विदेशों में भी सराहे जा रहे हैं। यू.के., यू.एस.ए., स्विटिजरलैण्ड, म्यूजियम ऑफ सेक्रेट-बेल्जियम, भारत में- दिल्ली, मथुरा, जयपुर आदि स्थानों पर उनकी कलाकृतियाँ संग्रहीत हैं।

अभूतपूर्व कला सेवा के लिए उमा को सन् 2009 को नई दिल्ली भीखूराम जैन आर्ट-अवार्ड और सन् 2012 को लखनऊ में उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा ''यू0पी0 रत्न'' अवार्ड, इसके अतिरिक्त उन्हें स्थानीय स्तर पर भी अनेक सम्मानों से सम्मानित किया जा चुका है। [9]

निर्भीक, कर्मठ एवं सशक्त विचारों वाली उमा शर्मा की कला-यात्रा सन् 1996 में प्रारम्भ हुई, उनका पहला चित्र ''बिना रंगों के, बिना तूलिका के'' ''गणेशजी'' का था, जो किसी कला प्रेमी के घर की शोभा बढ़ा रहा है। इस चित्र में कैनवास पर मात्र मैगजीन व अखबार के रंग-बिरंगे कागज के टुकड़ों को फैवीकोल से चिपकाकर तैयार किया था। तब से सिलसिला शुरू हुआ, आज तक इसी शैली में अनेकों चित्रों का निर्माण कर चुकी हैं। लगभग 67 वर्ष की आयु में आज भी वह उसी तरह निरन्तर सक्रिय रहती हैं जैसे एक युवा कलाकार। वह कभी थकती नहीं, हमेशा अपने को ऊर्जावान बनाये रखती हैं। व्यस्तता बनाए रखना उनके जीवन का मूल मंत्र है। अन्य महिलाओं के लिये उनका कहना है कि ''हिम्मत के सामने कोई भी संकट बौना हो जाएगा।'' [10] सुश्री उमा शर्मा अपना सम्पूर्ण जीवन कला रूपी ईश्वर को समर्पित कर दिया है। वह चित्रकला की साधना में एक योगी की भाँति आज भी साधनारत हैं। उन्होंने पाँच विषय में एम0ए0 किया, और मुम्बई के एस0एन0डी0टी0 यूनीवर्सिटी से ड्राइंग एण्ड पेंटिंग में मास्टर डिग्री प्राप्त की है। इसके पहले की सम्पूर्ण शिक्षा मथुरा नगर से ही प्राप्त किया है। 10 जुलाई सन् 1972 में शान्ति देवी गर्ल्स इण्टर कालेज, मथुरा में कला शिक्षिका के पद पर नियुक्त हुई, बाद में इसी कालेज की प्रधानाचार्य बनीं, और 30 जून सन् 2013 को सेवा निवृत्त हो गयी। वर्तमान में वह पूरा समय कला-साधना में ही व्यतीत करतीं हैं। अपनी अनोखी कला को उच्च शिखर तक ले जाने में प्रयासरत हैं।

उमा को चित्रकला के अतिरिक्त संगीत में भी गहरी रूचि है। उन्हें ऐतिहासिक स्थलों पर भ्रमण करना, भारतीय लेखकों के बारे में पुस्तकें पढ़ना, पेड़-पौधे लगाना उनके अन्य शौक हैं। शब्दकोश में असम्भव शब्द नहीं है, ऐसा उनका विचार है। उदार स्वभाव वाली उमा अपने घर पर बच्चियों को चित्रकला, संगीत, सिलाई, कढ़ाई आदि का प्रशिक्षण नि:शुल्क देती हैं। यह सेवा कार्य सन् 1994 में प्रारम्भ किया था, जो आज तक जारी है। [11]

उमा शर्मा का जन्म 30 अक्टूबर सन् 1950 को श्रीकृष्ण की जन्मस्थली मथुरा में स्व0 श्री रामस्वरूप शर्मा के घर पर हुआ था। तब से अब तक इसी घर में अपने भाइयों के साथ निवास कर रहीं हैं। उनका स्टूडियो भी इसी घर में है। आज-कल वह ''नेचर बाई पेपर'' थीम पर चित्रण कार्य में व्यस्त हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आधुनिक भारतीय चित्रकला, सन् 2002, डॉ0 गिर्राज किशोर अग्रवाल, पृष्ठ सं0 217
2. दृश्यकला कोश, सन् 2015, डॉ0 हृदय गुप्त, पृष्ठ सं0 29
3. साक्षात्कार, चित्रकार उमा शर्मा, दिनांक 12.04.2017
4. सुनहरा राजस्थान, जयपुर, 24-30 दिसम्बर, सन् 2010, पृष्ठ सं0 11
5. हिन्दुस्तान, आगरा, 5 फरवरी, सन् 2011
6. सुनहरा राजस्थान, जयपुर, 24-30 दिसम्बर, सन् 2010, पृष्ठ सं0 11
7. साक्षात्कार, चित्रकार उमा शर्मा, दिनांक 12.04.2017
8. सुनहरा राजस्थान, जयपुर, 24-30 दिसम्बर, सन् 2010, पृष्ठ सं0 11
9. साक्षात्कार, चित्रकार उमा शर्मा, दिनांक 12.04.2017
10. हिन्दुस्तान, आगरा, 5 फरवरी, सन् 2011
11. साक्षात्कार, चित्रकार उमा शर्मा, दिनांक 12.04.2017

भारतीय चित्रकला में नारी आकृतियों की भूमिका और सौंदर्य

डॉ. यतीन्द्र महोबे *

प्रस्तावना – भारतीय चित्रकला में नारी आकृतियों को अलग-अलग रूप में चित्रित किया गया है। कलाकार ने लौकिक नारी के रूप वैभव से प्रेरणा लेते हुए उसे पुरूष की उत्पत्ति का आदि स्त्रोत, श्रद्धा की देवी, मातृत्व भाव तथा सौंदर्य की पराकाष्ठा आदि विभिन्न रूपों में चित्रित किया है। दूसरे शब्दों में भारतीय चित्रकला में नारी एक आदर्श रूप में दिखाई देती है। कलाकार ने नारी रूप में ऐसे अलौकिक सौंदर्य को दिखाने की चेष्टा की है, जो भारतीय मनीषा के अनुसार 'आदर्श' रही है।

'भारतीय चित्रकला के अध्ययन से प्रतीत होता है कि नारी को दो समूह में विभक्त किया गया है। प्रथम श्रेणी में आत्मिक आकृति जैसे देवी, अशांवतार तथा दूसरी श्रेणी में पृथ्वी पर रहने वाली स्त्रियों की आकृतियाँ। प्रारम्भिक कला में प्रथम श्रेणी की नारियों का अंकन अधिक हुआ है। ये देवी आकृतियां प्रतीकात्मक हैं तथा धर्म द्वारा निर्धारित की गई हैं वहीं दूसरी ओर नारी आकृतियाँ विषय और पृष्ठभूमि की दृष्टि से मानव जीवन से अपना संबंध व्यक्त करती हैं। इन देवी आकृतियों में दुर्गा, लक्ष्मी, गंगा, यमुना आदि को पूज्यनीय स्थान प्राप्त था इसके अतिरिक्त अशांवतार, अप्सरा और गन्धर्व, किन्नरियाँ, नागिनियाँ आदि भी प्रमुख आकृतियों के साथ अंकित हैं।

दूसरी श्रेणी के अंतर्गत वास्तविक जगत में रहने वाली स्त्रियों को कलाकार ने विभिन्न रूपों में जैसे, राजकुमारी, दासी, नर्तकी, माँ, अबला, विभिन्न सामाजिक उत्सवों, तीज-त्यौहारों, जुलूसों आदि में भाग लेती हुई प्रदर्शित (चित्रित) किया है। गुप्तकाल, मध्यकाल तथा आधुनिक काल तक नारी चित्रण कलाकार का प्रमुख विषय रहा, जो भावाभिव्यक्ति से परिपूर्ण है।

'भारतीय कलाकार अपने नारीरूप में 'लोकोत्तर सौंदर्य की प्रतिष्ठा करना चाहते थे। भारतीय कलाकार ने प्रकृति के अक्षय भंडार से नारी देह के प्रत्येक अंग-प्रत्यंग के सौंदर्यवर्धक उपमानों से प्रेरणा लेते हुए अपने कलागत नारीरूप का विन्यास किया है। ये उपमान जहाँ एक ओर सौंदर्यवर्धक हैं, वहीं दूसरी ओर काम उपभोग की दृष्टि से श्रेष्ठ नारी के देह लक्षण भी हैं।

कलाकार ने अपनी कलाकृतियों में नारी सौंदर्य को प्रमुख तत्व माना है। यदि हम अजंता के भित्ति चित्रों पर नजर दौड़ाए तो तात्कालिक कलाकारों ने नारी के अंग-प्रत्यंगों में अपार सौंदर्यतम एवं लावण्यता का समावेश किया है। इन कलाकारों ने भित्ति चित्रों में नारी के नग्न रूप को चित्रित कर उसमें सौंदर्य भाव को विस्थापित किया है। कारण यह था कि नग्न शरीर मानव को आकर्षित करता है और यह स्त्री और पुरूष के पारस्परिक आकर्षण का केन्द्र था तथा कलाकार इस बात से प्रभावित हुआ और इनको सुंदरता का प्रतिरूप मानकर अभिव्यक्त किया, साथ ही उसको ललितकला एवं शास्त्रीय सुंदरता के नाम से प्रचलित किया। परन्तु यह कहा भी नहीं जा सकता की कलाकारों ने नारी के नग्न स्वरूप में ही सौंदर्य को देखा, बल्कि 'भारतीय कला में नारी को नृत्य रूप में भी अभिव्यक्त किया है। साधारण रूप में इन नृत्य कला ने भावात्मक अभिव्यक्ति की दृष्टि से अंकन पर प्रभाव डाला है। हम विभिन्न गुफाओं और मंदिरों में अंकित चित्रकला और मूर्तिकला में अप्सराओं और गन्धर्वों को विभिन्न नृत्य मुद्रा में देख सकते हैं। उदाहरण स्वरूप बाघ की गुफाओं में नृत्य और संगीत के दो अंकन अति सुंदर चित्रित हैं, एक दृश्य में सात महिलाओं विविध वाद्य यंत्रों के साथ हैं। मध्य में एक नारी नृत्य करती हुई हैं। जिसके सिर पर नीली धारियों से युक्त वस्त्र लिपटा हुआ है। केशों की लटें कंधों पर पड़ी हुई हैं। कंठ में कंठमाला है। शरीर पर पूरी आस्तीन का वस्त्र पहने हुए है नीचे का वस्त्र नीली, पीली, पट्टियों से युक्त है। अन्य आकृतियाँ नग्न अंकित की गई हैं।'

मध्यकाल में राजस्थानी, मुग़ल, पहाड़ी आदि शैलियों में नारी रूपी मानव आकृतियों तथा मुखाकृति को साज श्रृंगार से अलंकृत बताया है, जो देखने में काफी मनोरम और सुंदर प्रतीत होता है। उदाहरण स्वरूप मध्यकाल की एक नवोधा सुंदरी को लीजिए उसमें रूप है, साज श्रृंगार है, वस्त्रों से अंगों का परिधान आधा उन्मिलित, आधा निलीमित। इसे हम पहली ही झलक में पहचान लेते हैं। यह परिचय बिल्कुल अद्भुत है, ऐसा लगता है उस नवोधा स्त्री में भावना रस, प्रवणता और अर्थोन्मेश करने वाली प्रतिभा अभी दूर खड़ी है, तथा उसे ध्यान से देखने पर प्रत्येक परिधान, आभरण, अलंकार, सज्जा, मेंहदी और चंदन इन सबका आशय समझ में आता है। जिसमें सौंदर्य की वृद्धि के लिए 'सादृश्य को काम में लाया गया है। जैसे- होठों पर लाली, अंगराग का प्रयोग, साथ ही पूरे वातावरण को सौंदर्यमयी एवं भावपूर्ण बनाने के लिए अंकित की गई आकृतियाँ आदि। मध्यकाल की इन नारी आकृतियों में बाह्य सौंदर्य का अपार समावेश दृष्टिगोचर होता है, तात्कालीन कलाकारों ने नारी के इस रूप रमणीयता को प्रस्तुत कर अपनी अद्वितीय कला साधना का परिचय दिया है।

परिस्थितियों ने समय का बदलाव किया और अंग्रेजों ने भारत में अपना आधिपत्य जमाया। भारत का हर नागरिक अंग्रेजों का गुलाम हो गया, जिनमें भारतीय कलाकार भी शामिल थे। यूरोपीय पद्धति में प्रशिक्षित करने के लिए कला विद्यालय खोले गए और स्त्री-पुरूषों को मॉडल के रूप में बिठाकर प्रशिक्षण दिया जाने लगा, अर्थात मानव आकृतियों का हू-ब-हू चित्रण जिनमें छाया-प्रकाश और रंग-संयोजन प्रमुख था। ये समय 19 वीं सदी के मध्य का था, उस समय राजा रवि वर्मा पहले ऐसे कलाकार थे, जिन्होंने भारतीय स्त्रियों का चित्रण अधिकता से किया। राजा रवि वर्मा ने भारतीय मिथकों और पौराणिक कथाओं से स्त्री-चरित्रों की सुंदर श्रृंखला प्रस्तुत की।

* सहायक प्राध्यापक (चित्रकला) शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

इनकी स्त्री आकृतियों को देखकर तनिक भी लालच का भाव प्रकट नहीं होता बल्कि इन नारी आकृतियों में पवित्रता एवं पूज्यनीयता का भाव स्पष्ट रूप से झलकता है। समय के साथ-साथ कलाकारों में 'मानसिक चेतना का विकास हुआ और कलाकार काल्पनिक होने लगा। मानवाकृतियों में कल्पना और तर्क शक्ति का समावेश शुरू हुआ। 'कल्पना एक ऐसी मानसिक शक्ति है, जिसके द्वारा हम अप्रत्यक्ष वस्तुओं के बिम्बों को प्रत्यक्ष करते हैं, और इन बिम्बों को संयोजित, परिवर्तित अथवा परिवर्धित कर एक कलात्मक रूप प्रदान करते हैं, और यही कलाकार के लिए सौंदर्य की प्रथम स्थिति होती है। इसके पश्चात् चित्रकार अपने लिये रंगों-रेखाओं की गति एवं लय को, अपने विषय को, यहाँ तक की अपने केनवास (चित्र फलक) को अपनी शैली तथा कौशल से पहचानता है। रंग और रेखा उसके लिए बोलती भाषा होती है।

बंगाल शैली जिसे हम पुनरूत्थान शैली के नाम से जानते हैं। इस समय कलाकारों के मानस पटल पर नई कला चेतना का जन्म हुआ। इस शैली के कलाकार ने नारी आकृतियों को परंपरा से हटकर चित्रित किया। यह तथ्य है कि बंगाल शैली के प्राय:सभी बड़े कलाकारों ने आदिवासी और आदिम भारतीय कला का स्पर्श लेकर स्त्री-जीवन के अत्यंत विचलित करने वाले पक्षों का चित्रण किया। अवनीन्द्र नाथ ठाकुर, नंदलाल बोस, विनोद बिहारी मुखर्जी, जामिनी राय, रवीन्द्र नाथ ठाकुर आदि के चित्रों में स्त्रियाँ अपने संपूर्ण रूप में उपस्थित हैं। यहाँ स्त्रियों का श्रृंगार या रचनात्मक चित्रण कम से कम है। यहाँ वे अपने दैन्य, करूणा, संघर्ष, मातृत्व और वेदना के साथ उपस्थित हैं। इस दौर में पेंटिग तथा ड्राइंग में स्त्रियाँ अपनी संघर्षमय छवि से उद्धिग्न करती हैं, और यही इसका सौंदर्य है। यहाँ वे परम्परा से यातना भोगती स्त्री के रूप में चित्रित हैं, जिसमें उम्मीद का कोई लक्षण नहीं पाया जा सकता। माँ, प्रेमिका, बहन, मजदूरनी, भिखारिणी तथा पत्नी की अनेक भूमिकाओं में इस दौर की स्त्रियाँ करूणा जगाती हैं, इन चित्रों में बहुत सहजता से समकालीन भारतीय सामाजिक जीवन में स्त्रियों की स्थिति का अनुमान लगाया जा सकता है। इस दौर के कलाकारों में ऐसा नहीं था कि उन्होंने भारतीय मिथकों को भुला दिया हो या पौराणिक चरित्रों में उनकी दिलचस्पी नहीं रही हो। वह अवश्य रही, पर उसे नये संदर्भों में रूपायित कर इन कलाकारों ने स्त्रियों की छवियों में नये अर्थ का संचार किया। इस समय प्रतिक्षारत् विरहिणी, नायिकाओं, उद्धिग्नता में पत्र लिखती प्रेमिकायें भी चित्रित की गई हैं, पर इन नारी आकृतियों में निर्मलता एवं स्वच्छता का समावेश बड़े ही सौंदयमयी ढंग से प्रस्तुत किया गया है। इनमें किसी प्रकार की कामुकता प्रदर्शित नहीं होती।

इस दौर में अमृता शेरगिल पहली महिला चित्रकार हुईं, जिन्होंने स्त्री जीवन को बड़ी गंभीरता के साथ चित्रित किया। अमृता ने घूम-घूम कर श्रमजीवी जनता का जीवन देखा और उनमें स्त्रियों के दैन्य को गंभीरता से परखा। यही कारण है कि अमृता के स्त्री चरित्र, चरित्र नहीं लगते वे कथा बनकर सामने आते हैं और हमें करूणा, सेवंदना और गहरी सोच से भर देते हैं। 'पहाड़ी स्त्रियाँ , भारतीय माँ, बाल वधु, वधु का श्रृंगार जैसे काम अमृता की श्रेष्ठता का तो प्रमाण है ही, वे कला में स्त्री जीवन के अंकन का प्रतिमान भी है। इनकी कृति चित्र-संयोजन, रंग योजना, तथा आकारिक लयात्मकता के साथ-साथ गहरी अर्थव्यंजना तथा संवेदनात्मकता प्रकट करती है, तथा इनकी नारी आकृतियों में आंतरिक सौंदर्य का अनूठा दर्शन होता है।

अमृता शेरगिल को छोड़ उस समय दूसरी ऐसी कोई महिला चित्रकार नहीं हुई जो अपनी नारी आकृतियों के बल-बूते प्रसिद्धि हासिल कर सकी हों। इनके बाद के कलाकारों की चर्चा करें तो बहुत से ऐसे कलाकार हुए जिन्होंने अपने चित्रों की पहचान मानवाकृतियों के जरिए बनाई। इन कलाकारों ने नारी-आकृतियों को विभिन्न संदर्भों में चित्रित किया है। प्रोगेसिव आर्टिस्ट ग्रुप के सदस्यों में फ्रांसिस न्यूटन, सूजा, मकबूल फिदा हुसैन, के.एच.आरा भी ऐसे चित्रकार हुए जिन्होंने नारी चरित्रों को अपनी शैली में अभिव्यक्त किया। इनके अलावा प्रसिद्ध कलाकारों में के.के. हेब्बर, परितोष सेन, एन.एस. बेंद्रे आदि की कलाकृतियों में नारी के विभिन्न रूपों का अंकन दृष्टिगोचर होता है। इन सभी कलाकारों में एम.एफ. हुसैन के चित्र नारी आकृतियों से भरे पड़े हैं। हुसैन साहब का नारी सौंदर्य के प्रति नजरिया ही अलग था। इनकी नारी आकृतियों का सौंदर्य मातृत्व भाव लिये हुए भी प्रदर्शित हैं, तो कहीं-कहीं नारी आकृतियों में रचनात्मकता की हद को लांघते भी दिखाया है, जो भारत में बहुत अधिक विवादास्पद भी रहा। अमृता के विशेष चित्रों में 'मदर टेरेसा शीर्षक कलाकृति की ओर देखें तो उसमें मातृत्व भाव स्पष्ट रूप से झलकता है। उन्होंने फिल्म अभिनेत्रियों को भी अपनी कलाकृति में स्थान दिया, उनको सौंदर्य की देवी माना। वहीं भारतीय संस्कृति की पूज्य देवियों को सौंदर्य की पराकाष्ठा के पार नग्न रूप में प्रदर्शित कर भारतीय जन की आलोचना का शिकार भी हुए।

आधुनिक कलाकारों में आज भी कई ऐसे कलाकार हैं, जो नारी आकृतियों एवं नारी चरित्र को अपनी कलाकृति का आधार बनाए हुए है। इन आधुनिक कलाकारों ने अपनी नारी आकृतियों के आंतरिक सौंदर्य पर अधिक बल दिया है। रंग, तकनीक एवं माध्यम की भिन्नता के कारण उनमें बाह्य सौंदर्य लक्षित नहीं हो पाता, लेकिन आज भी भारतीय कला में स्त्री के जीवन और उनके संघर्ष को जगह मिली हुई है, और वह आंतरिक सौंदर्य की दृष्टि से उच्च कोटि की है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. कमलेश दत्ता पाण्डे - भारतीय चित्रकला में नारी रूप विन्यास, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर , वर्ष 1992
2. डॉ. शशि झा- भारतीय चित्रकला और मूर्तिकला में नारी का स्वरूप (गुप्तकालीन), राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर
3. डॉ. संध्या पाण्डे/ डॉ.आर.पी. पाण्डे - भारतीय कला, पुनर्जागरण एवं चित्रकार, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल,, वर्ष 1997

****

सांची स्तूप में अंकित नारी के वस्त्राभूषण

सोनाली टोके * डॉ. अल्पना उपाध्याय **

प्रस्तावना – सांची की स्त्रियों के आभूषणों में अंगुलीय, रुचक, कटक, वलय, स्वस्तिक, कुण्उल, बग्र और पटक का उत्कीर्णाकन है। कलाई में कटक कानों में स्वस्तिक कण्ठ में बग्र, कानों में बालियां ललाट में तिलक पहनती थी। सांची की आकृतियों में शिरोभूषण दो प्रकार है। अलंकृत टीकरों से बना किरीट तथा टीकरों के ऊपरी भाग में पतला, चिपटा चौकोर तथा निचले भाग में लटकन कर्णाभूषणों में गोलाकार है। गले में गोल मनके की माला, चार या सात लड़ियों वाली, गोल, लम्बी अनेक प्रकार की दिखाई गई है। गले के आभूषण में हंसली या हंसों के आकार का भी दृश्य है। सांची की एक द्वार रक्षक आकृति में भी इसी प्रकार का चन्द्रकार आभूषण है, जिसमें पुष्पों और टहनियों की आकृतियां टकन के रुप में दिखाई देती है।[1] कहीं अष्ट मांगलिक प्रतीकों का भी प्रचलन दिखाई देता है, सांची की वामन आकृतियों में डोरी से लटकता एक ऐसा ग्रीवा भूषण भी दिखाई देता है जिसके मध्य में एक वर्तुलाकार टीकरा है। जिसके दोनों सिरों पर मकर आकृतियां बनी है। इन मकर आकृतियों की दुमें पीछे की ओर इस प्रकार मुड़ी हुई है कि इनका आकार अर्ध–गोलाकार है।[2] हाथों के चन्द्रकार आभूषणों पर तीन–पत्तियां नमूने वाली पुष्पाकृति सादे वृत्त तथा धारियों के अलंकरण मिलते हैं। सांची की अधिकांश आकृतियों में प्रकार का आभूषण नहीं मिलता। यह यत्र तत्र मात्र दिखाई देते हैं। यहां की आकृतियों में सादी और एक लड़ी वाली मेखला मिलती है। पैरों के आभूषणों में लचीले और चक्राकार आभूषण प्रमुख है। इनमें छल्लेदार आभूषण पेचदार प्रतीत होते हैं। कुछ उदाहरणों में इन आभूषणों को अलंकृत करने के उद्देश्य से इनके सिरों पर मकर मुख भी बनाए गए है। कभी–कभी इन छल्लों के निचले भाग पर घण्टी और ऊपरी भाग पर अन्य अलंकरण है।[3] इस प्रकार पूर्वी मालवा का सांची विदिशा परिक्षेत्र अपने वस्त्राभूषण की सौन्दर्य अभिव्यक्ति में अग्रणी रहा है।

स्त्रियों के शरीर का ऊपरी भाग प्राय: अनावृत ही रहता था किन्तु कुछ उदाहरणों में कमरदार उत्तरीय भी दिखाई देता है। सांची स्तूपों की यक्षी आकृतियां तत्कालीन स्त्रियों के वस्त्र का ज्ञान प्राप्त करने में अत्यन्त सहायक है।

शुंगकाल में साध्वी स्त्रियां उत्तरीय साड़ी और शिरोवस्त्र भी धारण करती थी। सातवाहन काल की ऋषियों की पत्नियां लहंगे के समान वस्त्र और वैकक्ष्य पहनती थी। इसके वैकक्ष्य से बांह का कुछ भाग भी ढक जाता था। पूर्वकाल की भांति इस समय भी उपानह का प्रचलन था। उपानह चर्म आदि काष्ठ दोनों के बनते थे। उपानह कई प्रकार के बनते थे यथा घुटने तक लम्बे उपानह (जिसमें ऊपर बेल बनी रहती थी) और लम्बे तथा समतल पट्टियों से अलंकृत उपानह। कुछ उपानह का अग्रभाग नुकीला भी होता था। सांची की मूर्तियों में केवल विदेशियों को लम्बा उपानह पहने दिखाया गया है। कहीं–कहीं यह युनानी चप्पल का रुप ग्रहण कर लेता है। तत्कालीन बौद्ध साहित्य में भी विविध प्रकार के उपानह का वर्णन है। सांची की आकृतियों में उपानह की अनुपस्थिति संभवत: आज के समान ही उस समय भी पूजा स्थल पर उपानह के वर्जित होने के कारण था।[4]

सांची में उत्कीर्ण नारी–आकृतियों से भी तत्कालीन स्त्रियों के प्रसाधन की पर्याप्त जानकारी मिलती है।[5] सांची के अर्धचित्रों में भारतीय वेशभूषा के अध्ययन से यह पता लगता है कि भारी भरकम कपड़ों की ओर लोगों का सुझाव कम हो गया था पर साथ ही साथ लोग सादे कपड़े बड़े चाव से और अनेक रंगों से सजाकर पहनते थे। इस युग में दक्षिणी वेशभूषा कुछ टीमटामदार होती थी। साफे भारी भरकम और आभूषणों से सजे होते थे और धोतियां भी भारी फेंटे वाली होती थी।[6]

सांची के अर्धचित्रों में स्त्रियां दो तरह की साड़ियां पहने दिखलायी गयी है। एक में साड़ी घुटनों तक पहुंचती थी और चूनन की लांग पीछे खोंस ली जाती थी, फीतेदार पर्यस्तक दोलड़ी करधनी में खोंस दिया जाता था। दूसरी तरह की साड़ी में एक भाग तो कमर में लपेट लिया जाता था और चुनन की लांग पीछे खोस ली जाती थी। साड़ी पहनने की यह रीति आधुनिक सकच्छ साड़ी पहनने की रीति से मिलती है और इसकी चलन मध्यप्रदेश और महाराष्ट्र में है।

स्त्रियों के सिर किनारदार ओढ़नियों से ढंके रहते थे। ओढ़नियों में निम्नलिखित प्रकार देख सकते हैं।

1. सिर को ढकती दोहरे किनारे वाली ओढ़नी
2. चूनन बगल में खोंसी दिखलायी गयी है।
3. सिर और चोटी को ढकती हुई घोघी के आकार की ओढ़नी।
4. बालों की सजावट को ढकती हुई दो तहों वाली ओढ़नी।
5. सिर पर ओढ़नी दोलड़ी पेंची से बंधी है।
6. सिर पर पड़ी नुकीली ओढ़नी चौलड़ी पेंची से बंधी है।
7. कभी–कभी ओढ़नी की चोटी पंखे के आकार की होती थी।
8. ओढ़नी में पंखे का आकार चोटी के पीछे दिखाया गया है।
9. पेशानी के चारों ओर टिकरेदार बद्धी है, बद्धी को ढकती हुई किनारेदार ओढ़नी है। ओढ़नी के ऊपर एक बोर अथवा चूड़ामणि है, जिसमें पंखे के आकार में पर लगे हुए है।
10. स्त्रियां विशेषकर साधुनिया कभी–कभी पगड़ी भी पहनती थी। एक

* शोधार्थी (चित्रकला) माधव महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** गाइड (चित्रकला) माधव महाविद्यालय ,उज्जैन (म.प्र.) भारत

जगह यह पगड़ी अटपटी पगड़ी का रुप ग्रहण करती है।

11. और एक जगह साफे के आकार की पगड़ी पहने है।
12. स्त्रिया कभी सिर से सटी गोल टोपी पहनती थी।
13. एक जगह इस टोपी में लटकनदार झालर लगी हुई है।
14. एक जगह जुलूस में घोड़े पर सवार राजा के पीछे एक स्त्री शिरस्त्राण पहने हुए है।[7]

स्त्रियों के शिरोवस्त्र :

1. ओढ़नी के ऊपर सिरपेंच जैसा आभरण सिरपेंच की नीचे की लड़ियां फुल्लेदार गोल तख्तियों से बनी है।
2. भारी भरकम ओढ़नी जिसकी कई तहें सिर पर पड़ती है, सीसमांग और बद्धी बेना, सिर के मध्य में एक पहियां नुमा टिकरा, ललाट पर एक गोल टीका।
3. शीश पर पगड़ी जैसा कोई आच्छादन जिसके बायें ओर कुछ दाने से निकले है। गले में खारदार, ढोलकनुमा और चपटे मनकों के कंठे।
4. सिर पर मूंगरी के आधार का गोलियाया वस्त्र जिसका एक छोर गोल के ऊपर होता हुआ दूसरी ओर खोंस दिया गया है।
5. मस्तक पर जूट बंधी वेणी जिसमें शायद फीते लगे है।
6. पगड़ी नीचे के फेंटे कान तक आ जाते है।[8]

सांची की मूर्तियों में पगड़ी (उष्णीय) बहुधा गोल टोपी की भांति है, जिसके आगे और बीच में अलंकृत गोल लगा है। कभी-कभी अर्द्धचंद्राकार फीते के सहारे अण्डाकार अलंकरण पगड़ी में लगाया गया है। कहीं-कहीं इसमें चार गोले लगे है। कहीं-कहीं गोला दाई ओर खींचा है। अण्डाकार अलंकरण कहीं-कहीं पगड़ी के आकार से भी बड़ा है। पगड़ी पतली या चौड़ी डोरियों की सहायता से गोलों को बांधकर बनी है। कहीं-कहीं इसका आकार तिकोना अर्थात् तीन गोलों वाला है। महिलाओं के केश बहुधा फीते से बंधे दिखते हैं। शालभंजिका के केश कभी-कभी कंघी की हुई दो घनी वेणियों में से अलग होकर नीचे फिर जुड़ जाते हैं लटकती हुई मणिमालाएं उन पर ऊपर से लहराई जाती है। पूर्वी तोरण-द्वार की यक्षी के सिर पर पंखदार कलंगी लगाई गई है। उसके केश ताड़ के पत्तो के समान पीठ पर छितराऐं हुए है। ऐसे केश विन्यास को बर्हभार केश कहा जाता है।

महिलाओं को घुटनों तक चिपकी हुई पारदर्शक साड़िया पहने हुए अंकित किया गया है। इनके छोर किनारों पर लटकते हैं। कहीं-कहीं शालभंजिका हाथ में साड़ी का लम्बा छोर या पल्ला पकड़े है। साड़ी का कच्छा पीछे कटि पर फेंट में जुडता है। विश्वन्तर जातक में मद्दी को वल्कलवस्त्र पहिनाया दिखाया गया है। यक्षी चौकोर गोट के कर्णफुल महीन हीरक, अष्ट मंगलक हार तथा चौड़ी मेखला धारण किए है। पैरों में एकहरे मोटे कड़े या कड़ो के साथ-साथ बहुत से पतले लच्छे है।[9]

संदर्भ ग्रंथ सुची :-

1. भारतीय श्रृंगार - गिरि कमल - मोतीलाल बनारसीदास पब्लिश, पृ. 234
2. भारतीय श्रृंगार - गिरि कमल - मोतीलाल बनारसीदास पब्लिश, पृ. 139
3. दि मान्यूमेन्ट्स ऑफ सांची
4. पूर्वी मालवा के मूर्तिशिल्प का सांस्कृतिक अध्ययन - अहिरवार डॉ. शशि वर्मा - बी.आर. पब्लिशिंग कार्पोरेशन, दिल्ली पृ. 80
5. जातक कथाओं में नारी - जैन फुलकुंवर - अनिता प्रकाशन उज्जैन, पृ. 73
6. प्राचीन भारतीय वेशभूषा - डॉ. मोतीचन्द्र - भारती भण्डार, प्रयाग पृ. 75
7. प्राचीन भारतीय वेशभूषा - डॉ. मोतीचन्द्र - भारती भण्डार, प्रयाग, पृ. 82
8. प्राचीन भारतीय वेशभूषा - डॉ. मोतीचन्द्र - भारती भण्डार, प्रयाग, पृ. 89
9. सांची - मिश्र भास्करनाथ - मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पृ. 48-49

****

White Collar Crime - A Study

Dr. Neelesh Sharma *

Abstract - This paper provides a detailed understanding behind the motives of people committing crimes. White-collar crimes account for enough violations of law. By comparison, the instances of white-collar crimes are more then the conventional type of crimes such as theft, burglary, and arson. The loss incurred through white-collar crimes is far higher then that of the conventional type. In the American Context, it has been estimated that losses from such crime may be as high as 200 billion dollars every year. In India also such type of crimes are increase.' This paper endeavored to address the intricacies involved in white-collar crimes. Therefore the concern of this paper is to define white collar crime, study its historical development and formulate tentative solutions for eradicating the problem.

Introduction - This thought evolved with the Criminologist and Sociologist Edwin H. Sutherland, in the year 1939, who popularized the term white collar crimes' by defining such a crime as one committed by a person of respectability and high social status in the course of his occupation. Sutherland also included crimes committed by corporations and other legal entities within his definition. Sutherland's study of white collar crime was prompted by the view that criminology had incorrectly focused on social and economic determinants of crime, such as family background and level of wealth. It is true to the common knowledge that there are certain professions which offer lucrative opportunities for criminal acts and unethical practices which is very often overlooked by the general mass of the society. There have been crooks and unethical persons in business, various other professions, who tend to become unscrupulous because of no reason apart from the thirst of gaining more and more for themselves. These deviants have least regard for ethical and moral human values. Therefore, they carry on their illegal activities with impunity without the fear of loss of respect and prestige. These crimes are of the nature of white collar crimes' which is the essential outcome of the development of the competent economy of the twenty-first century.

White color Crime account for enough violation of law. By comparison, the instances of white Collar Crimes are more than the conventional type of Crimes such as theft, burglary and arson. The loss incurred through white-Collar Crimes is far higher than that of conventional type. In the American context, it has been estimated that losses from such Crime may be as high as 200 billion dollars every year.

Meaning of White Collar Crime - White Collar Crimes are the crimes committed by a person of high social status and respectability during the course of his occupation. It is a crime that is committed by salaried professional workers or persons in business and that usually involves a form of financial theft or fraud. The term "White Collar Crime" was defined by sociologist Edwin Sutherland in 1939. These crimes are non-violent crimes committed by business people through deceptive activities who are able to access large amounts of money for the purpose of financial gain. White Collar Crimes are committed by people who are involved in otherwise, lawful businesses and covers a wide range of activities. The perpetrators hold respectable positions in the communities unless their crime is discovered. The laws relating to white-collar crimes depends upon the exact nature of the crime committed.

Types of White Collar Crime In India :-

1. Bank Fraud.
2. Blackmail.
3. Bribery.
4. Cellular Phone Fraud.
5. Computer fraud.
6. Counterfeiting.
7. Credit Card Fraud.
8. Currency Schemes.
9. Educational Institution.
10. Embezz1ement.
11. Environmental Schemes.
12. Extortion.
13. Fake Employment Placement Rackets.
14. Forgery.
15. Health Care Fraud etc.

The white collar crimes which are common to Indian trade and business world are hoardings, profiteering and black marketing. Violation of foreign exchange regulations and import and export laws are frequently resorted to for the sake of huge profits. That apart, adulteration of foodstuffs, edibles and drugs which causes irreparable danger to public health is yet another white collar crime common in India.

* Assistant Professor (Law) Career College of Law ,BHEL, Bhopal (M.P.) INDIA

1. Insider Trading.
2. Insurance Fraud.
3. Investment Schemes.
4. Legal Profession.
5. Money Laundering.
6. Medical profession.
7. Racketeering.
8. Securities Fraud: The act of artificially inflating the price of stocks by brokers so that buyers can purchase a stock on the rise.
9. Tax Evasion.
10. Telemarketing Fraud.

Weights and Measures: The act of placing an item for sale at one price yet charging a higher price at the time of sale or short weighing an item when the label reflects a higher weight.

White Collar Crime in India - White collar criminality has become a global phenomenon with the advance of commerce and technology. Like any other country, India is equally in the grip of white collar criminality. The recent developments in information technology, particularly during the closing years of the twentieth century, have added new dimensions to white collar criminality. There has been unprecedented growth of a new variety of computer dominated white collar crimes which are commonly called as cyber crimes. These crimes have become a matter of global concern and a challenge for the law enforcement agencies in the new millennium. Because of the specific nature of these crimes, they can be committed anonymously and far away from the victims without physical presence. Further, cyber-criminals have a major advantage: they can use computer technology to inflict damage without the risk of being apprehended or caught. It has been predicted that there would be simultaneous increase in cyber crimes with the increase in new internet web sites. The areas affected by cyber crimes are banking and financial institutions, energy and telecommunication services, transportation, business, industries etc. in India

Reasons For Growth Of White Collar Crimes In India:

1. White collar crimes are committed out of greed. The people who usually commit these crimes are financially secure.
2. Financial or physical duress.
3. White collar crimes are estimated to cost society many times more than crimes such as robbery and burglary. The amount of death caused by corporate mishap, such as inadequate pharmaceutical testing, far outnumbers those caused by murder.
4. The emergence of cutting edge technology, growing businesses, and political pressures has opened up new avenues for these criminal organizations to prosper.
5. This increase is due to a booming economy and technological advancement such as the Internet and fast money transfer systems. Law enforcement is sometimes reluctant to pursue these cases because they are so hard to track and investigate.
6. It is very difficult to detect as white collar crimes always committed in privacy of an office or home and usually there is no eyewitness.
7. But naturally a question arises that if we have specific legislations to trace out White Collar Criminality then why these offenders go unpunished. Main reasons for which these white Collar criminals or occupational criminals go unpunished are

i) Legislators and the law implementers belong to the same group or class to which these occupational criminals belong;
ii) Less police effort;
iii) Favorable laws;
iv) Less impact on individuals.

The judiciary is equally, if not more, guilty of delaying justice. With white-collar crimes on the rise, it is necessary for the judiciary and police to distinguish between white-collar crimes, petty crimes and acts of homicide and violence. Sending everyone to the same jail is also unfair. India needs different detention centers for different kinds of criminal misconduct. At this present juncture what we need is the strengthening of our enforcement agencies such as Central Bureau of Investigation, the Enforcement Directorate, The Directorate of Revenue Intelligence, The Income-tax Department and the Customs Department. Concentration and distribution of national wealth must be done in a proper manner. Speedy trial should be arranged by appointing more Judges. Central Vigilance Commission must keep a constant vigil on the workings of the top ranking officers. General public must not avoid being engaged themselves in the prosecution of the White-collar criminals as the offence in general is directed towards them. Lastly if they are traced and proved guilty then Deterrent Theory of punishment is an option one.

Laws relating to White Collar Crimes - The government of India has introduced various regulatory legislations, the breach of which will amount to white-collar criminality. Some of these legislations are Essential Commodities Act 1955, the Industrial (Development and Regulation) Act, 1951.,The Import and Exports (Control) Act, 1947, the Foreign Exchange (Regulation) Act, 1974, Companies Act, 1956, Prevention of Money Laundering Act, 2002.

The Indian Penal Code contains provisions to check crimes such as Bank Fraud, Insurance fraud, credit card fraud etc. In case of money laundering several steps have been taken by the government of India to tackle this problem. The Reserve Bank of India has issued directions to be strictly followed by the banks under KYC (Know Your Customer) guidelines. The banks and financial institutions are required to maintain the records of transactions for a period of ten years.

In order to tackle with computer-related crimes, Information Technology Act, 2000 has been enacted to provide legal recognition to the authentication of information exchanged in respect of commercial transactions. Section

43 and 44 of Information Technology Act prescribes the penalty for the following offences:

1. Unauthorized copying of an extract from any data
2. Unauthorized access and downloading files.
3. Introduction of viruses or malicious programmes.
4. Damage to computer system or computer network.
5. Denial of access to an authorized person to a computer system.
6. Providing assistance to any person to facilitate unauthorized access to a computer.

Though the focus of Information Technology Act is not on cybercrime as such, this Act has certain provisions that deal with white collar crimes. Chapter XI deals with the offence of cyber crime and chapter IX deals with penalties and adjudication of crime. Apart from this, many issues are unresolved due to lack of focus. Some of them are:

1. Inapplicability
2. Qualification for appointment as adjudicating officer not prescribed
3. Definition of hacking
4. No steps to curb internet piracy
5. Lack of international cooperation
6. Power of police to enter and search limited to public places
7. Absence of guidelines for investigation of cyber crime

There are some measures to deal with white-collar crimes. Some of them are, creating public awareness of crimes through media or press and other audio-visual aids and legal literacy programmes. Special tribunals should be constituted with power to sentence the offenders for at least 5 years and conviction should result in heavy fines rather than arrest and detention of criminals. Unless the people will strongly detest such crimes, it is not possible to control this growing menace.

Conclusion - It is clear that due to advancement of science and technology newer form of criminality known as white-collar crime has arisen. The term “white-collar crime” has not been defined in the code. But the dimensions of white-collar crime are so wide that after analyzing the provisions of Indian Penal Code 1860, we may conclude that certain offence under Indian Penal Code is closely linked with white collar crimes such as bribery, corruption and adulteration of food, forgery etc. The provisions of Indian Penal Code dealing with white-collar crimes should be amended to enhance punishment particularly fine in tune with changed socio-economic conditions. The special Acts dealing with white collar crimes and the provisions of Indian Penal Code should be harmoniously interpreted to control the problem of white-collar crimes.

References :-

1. Ratanlal & Dhirajlal, The Indian Penal Code‘, 30th edition 2006,Wadhwa
2. Williams Frank. P., Criminology Theory‘, Andersen Publication
3. Mishra R., Criminal Psychology‘, Sunit Enterprises, 2006
4. Criminal liability of corporate bodies‘ by Vikas Garg.
5. Conference report on white collar crimes‘, by Godwin Kunda
6. Report on White-collar Crimes‘ by International Monetary Fund
7. White-collar crimes- (Talk delivered in the ‘DST Programme on Forensic.

****

Remedies against infringement of patent - A judicial approach

Lok Narayan Mishra *

Introduction - Patent system in India emerged when India was a colony of the British and therefore the British used their own system as a model while drafting the Indian patent act. The first Indian act for the protection of inventions in India was based on the British patent law of 1852. Certain exclusive privileges were granted to the inventor of the new manufacturers for the period of 14 year. Thereafter the patent and design act 1911 was a detailed legislation and it's occupied the field in India, till the passing of the patent act of 1970.

Patent act 1970 reflect the concerns of a developing country, balanced with the interest and need of the inventor. Under this act, the patent are granted to encourage invention and secure that the inventions are worked in India on a commercial scale and to the fullest extent reasonably practicable. Without undue delay and patent are not granted merely to enable patentees to enjoy a monopoly for the importation of the patented article.

The main objective of this research paper is to analyses the judicial interpretation of the patent related statutory provisions and other related judicial stand. In this research paper we will discuss about the recent problem of patent and its legal remedies, firstly the paper will examine what is infringement of patent and then secondly we will review the judicial approaches in India and examine how this legislation has been applied by the Indian court.

At least the research paper will suggest various measures that we may adopt in dealing with infringement of patent.

Patent rights - According to WIPO "A patent is an exclusive right granted for an invention, which is a product or a process that provides, in general, a new way of doing something, or offers a new technical solution to a problem. To get a patent, technical information about the invention must be disclosed to the public in a patent application." In India 1957 the government of India appointed justice N.Rajagopala ayyanger to examine afresh and review the patent law in India and advise the government on necessary changes. Justice Ayyanger submitted a comprehensive report on patent law revision in September 1959. The patent bill, 1965 based mainly on the recommendation contained in his detailed report and incorporating a few more changes in the light of further examination made particularly with reference to patent for food, drugs, and medicine, was introduced in the lok sabha on 21 September, 1965. Finally the patent bill having been passed by both the houses of parliament on 19th September 1970, and it came on the statute book as the patent act, 1970.

The patent act specially enacted for protection of eventer, according to Supreme Court (m/s Vishwanath Prasad Radhey Shyam vs. Hindustan metal industries 1980[1]) the object of patent law is to encourage scientific research, new technology and industrial progress. Grant of exclusive privilege to own, use or sell the Mathis or the product patented for a limited period, stimulation new inventions of commercial utility. The price of the grant of the Monopoly is the disclosure of the invention at the patent office, which after expiry of the fixed period of the Monopoly, passes into the public domain."

Rights of Patentees - Indian patent act provide some specific and monopoly right to patentee for encourage new invention, according to patent act 1970 there are some monopoly right -

Section 48 confers exclusive rights upon the patentee to exclude third parties from making, importing, using, offering for sale or selling the patented process. The right a patentee acquires is a monopoly to him personally to manufacture the patented chattel. Without the Patent Act.[2]

Infringement of patent - Patent infringement is the act of making, using, selling, or offering to sell a patented invention, or importing into the United States a product covered by a claim of a patent without the permission of the patent owner. Further, you may be considered to infringe a patent if you import items into the United States that are made by a patented method, unless the item is materially changed by subsequent processes or becomes a trivial and nonessential component of another product. A person "infringes" a patent by practicing each element of a patent claim with respect to one of these acts. Further, actively encouraging others to infringe patents, or supplying or importing components of a patented invention, and related acts can also give rise to liability in certain cases.

Infringement is the unauthorized use of an invention claimed in a valid patent. Patent infringement is an unauthorized act of selling, manufacturing, offering to sell, importing or using in-force patented invention without the

* Research Scholar (Law) Barkatullah University, Bhopal (M.P) INDIA

permission of a patented owner.

According to patent act — As per provisions of Section 48: the following actions would amount to infringement – In case of a product patent, the following actions would amount to infringement:

Making, Using Offering for sale, Selling, or Importing for these purposes, the product and process in India without the permission of patentee. Any person who without the consent of patentee performs the above activities infringes the patent.

In patent infringement suits, the damages are not granted for the use of the patented invention during the period prior to the date of acceptance of the patent application.

In a patent infringement action, the defendant can file a counterclaim for a revocation of the patent. Consequently, the main suit and the counterclaim are heard together.

Relief in case of groundless threats - Section 106 of the Indian Patents Act 1970 grants power to the court to grant relief in case of groundless threats of infringement proceedings.

In such an action the plaintiff can pray for a declaration to the effect that the threats are unjustified; he can ask for an injunction against the continuance of the threats and also damages if any, he may have sustained thereby.

In such a suit, unless the defendant proves that there is, in fact a threat of infringement of his patent or any other right arising from the publication of the complete specification in respect of the patent the court may not grant relief to the plaintiff[3].

Patent infringement proceedings can only be initiated after grant of patent in India but may include a claim retrospectively from the date of publication of the application for grant of the patent. Infringement of a patent consists of the unauthorized making, importing, using, offering for sale or selling any patented invention within India. Under the (Indian) Patents Act, 1970 only a civil action can be initiated in a Court of Law. Sections 104 to 114 of the Indian Patents Act 1970 provide guidelines relating to patent infringement. According to Section 53, the validity of a patent is 20 Years from the date of filing a patent application.

Action of Infringement - whenever the monopoly rights of the patentee are violated, his rights are secured again by the Act through judicial intervention. The patentee has to institute a suit for infringement. The relief's which may be awarded in such a suit are:

1. Interlocutory/ interim injunction.
2. Damages or account of profits.
3. Permanent injunction.

Limitation — according to Indian Limitations act governs the period of limitation for bringing a suit for infringement of a patent, which is for 3 years from the date of infringement. If the patent has ceased to have an effect due to non-payment of renewal fee, then the patentee will not be entitled to institute the proceedings for infringement committed between the date on which the patent ceased to have an effect and date of publication of the application for restoration of patent.

Jurisdiction - A Patent holder can file a suit in a district court or high court. However where counter-claims for revocation of the patent is made by the defendant, the suit along with counter-claims are transferred to the high court for a decision on validity of a patent.

According to Section 19 of the Civil Procedure Code, the patentee can bring the suit for infringement in the court which has jurisdiction in area where he/she resides or carries on a business or personally works for the gain. The Patentee can also bring the suit for infringement in a court which has jurisdiction in the area where infringing activity took place.

Judicial approach - In India only High Courts have the power to deal with matter of both infringement and invalidity simultaneously. A specialized forum is now been established as the Intellectual Property Appellate Board (IPAB).The Patents (Amendment) Act 2002 was enacted to bring our patent regime in line with the TRIPS agreement. Patent Litigation in India has steadily increased over last 2-3 years. Dramatic swift has been observed in the innovator's perspective from the mere aspect of invention to gaining patent protection for their respective invention. Patent owners have adopted aggressive approach towards their patent protection and enforcing their proprietary rights as businesses, are now well-positioned in the realm of patent litigation. The patent owners are not at all hesitant to challenge the validity of patent rights of their rivals. There has also been gradual increase in the understanding of the complex patent infringement and validity issues.

We will discuss about some of the recent and important patent litigation cases in India.

Merck vs. Glen mark over "Sitagliptin"[4] in an interesting note, Humble Supreme Court of India on Special Leave Petition filed by Glen mark stayed the Delhi High Court order which passed injunction against Glen mark for the generic drug Sitagliptin till 28th April 2015. Merck Sharp & Dohme filed an application for an ad interim injunction restraining the respondent/defendant Glen mark Pharmaceuticals from using its patented product Sitagliptin (Indian Patent No. 209816) at the Supreme Court. The Delhi high court conclusively held that all the three ingredients (Prima facie, irreparable injury and balance of convenience) for passing the order of injunction were established by MSD and hence injected Glen mark from manufacturing and selling of Ziti and Zitamet.

Ericsson vs. Xiaomi[5]- In December 2014, Ericsson had filed a suit against Xiaomi in India for the alleged infringement of the 8 standard-essential patents. The Delhi High Court granted an ex-parte injunction on the sale, manufacture, advertisement, and import of Xiaomi's devices. Xiaomi claimed that its latest devices in the Indian market (as of December 2014), the Mi3, Redmi1S and Redmi Note 4G, contained Qualcomm chipsets, which implemented technologies licensed by Ericsson. Xiaomi

subsequently challenged the injunction before a Division Bench of the Delhi High Court, which issued temporary orders to allow Xiaomi to resume the sale, import, manufacture, and advertisement of its mobile devices subject to the following conditions: Xiaomi would only sell devices having Qualcomm chips.

Novartis vs. Cipla[6]- In another patent litigation case, Delhi High court barred Indian generic drug maker Cipla from making or selling generic copy of Novartis's "Onbrez" by giving temporary injunction to Novartis. Citing famous Roche vs. Cipla case, the court observed that Novartis has a strong prima facia case and as the validity of the patent is not seriously questioned, there is a clear way out to grant injunction. Further, the court observed that Cipla did not provide any figures about the "inadequacy or shortfall in the supply of the drug." Earlier Cipla lunched its generic version of Indacarterol in October claiming "urgent unmet need" for the drug in India. Without going conventional way, Cipla, also approached the Department of Industrial Policy and Promotion (DIPP) to exercise its statutory powers under Section 66 and Section 92 (3) to revoke Indian Patents IN222346, IN230049, IN210047, IN230312 and IN214320 granted to Novartis AG for the drug Indacaterol. Cipla argued on the basis of 3 main points i.e. "epidemic" or a "public health crisis" of COPD, unable to manufacture the same in India by Patentee and high cost of patented drug.

Conclusion - In the light of the above mentioned discuss, India might's increasing practice of licensing, patent related alliances and co working relationship. Provision in the patent act for the working and protecting of patent in India improve day by day. Indian judiciary also give valuable guideline and suggestion for improvement of patent right protection. Patent litigation in India has grown considerably and has led many Indian firms to enforce or oppose patents. In general, the awareness about patents and its commercial exploitation is being increasingly used by companies as a potent tool in formulating competitive strategy. As a result, an increased number of patent disputes are landing in courts, playing a very important role in ultimately resolving the disputes and interpreting the law.

References :-

1. Supreme court judgment date – 12/12/1978
2. Patent act 1970 sec. 48
3. Patent act 1970 sec. 104.
4. Delhi high court case no. 46/2013
5. Parent litigation case 2014-15
6. (2013) 6 SCC 1.

****

Right To Water : Prospects And Possibilities - An Over View

Dr. Neelesh Sharma *

Abstract - Water remains the fundamental necessity of mankind. This necessity has turned itself into one of the basic human rights in India. In spite of the eternal value of water, the development of the right to water seems to be very slow in India. In India, water law comprises of various elements at international and national echelons. There are various government policies that require a serious re-consideration and questions of its enforcement are often raised with no proper solutions being provided. In this light, this paper shall throw light on the different water laws prevalent in India and also its problems and prospects. The paper shall meticulously scan the existing national and international legal framework available on the issue and shall also thrive to provide remedies. An attempt through this paper shall be made to identify the core issues in the area for progress of thenation so far as water laws are concerned. We hope this paper further helps us to consolidate our thinking and actions on right to water as an explicitly guaranteed right in the Constitution .

Introduction - Water is the most vital component essential for human life . access to the safe water is a basic human necessity. As, such , each individual should have the right to accessible, affordable water in quality and quantity . supply of clean and drinkable water is a basic human environment. Water is a natural resource that calls for its judicious use. It need to be preserved for the common good of all people on this earth planet.Water is increasingly becoming scarce , currently 1.4 billion people lack access to clean drinking water and by 2025 some 3 billion people will be suffering from water shortage.About 10000 people daily due to disease caused by a lack of clean water and sanitation.

These persons consume water brought from unsafe sources such as unprotected wells, ditches, rivers or lakes. Water is the essence of life. Hence, any denial of water would imply a denial of right to life. The right to water it is not enshrined in the Indian Constitution as an explicit Fundamental Right but the Indian Judiciary, both at the state as well as at the centre, has in several judgments interpreted Article 21 of the Constitution to include a right to clean and sufficient water, a right to a decent and well life, a right to live with dignity and with peace, and a right to a humane and healthy environment which would certainly imply a right to water to all the members of the society be it is a human or animal.

Need for right to water - Recent research has shown that lack of proper water resources or inadequate technical facilities are not solely responsible for the dismal state of affairs pervading water sector,but it is mainly due to exclusion and neglect of people in the management of water affairs. In other words, it is more of and issue of water governance.

International Protection For Right To Water - The right to water finds mention in various international treaties and customary rules. It is in existence both in express and implied form. This right can be inferred from a number of international conventions which are binding upon all states making it obligatory for all states to respect the rights relating to water. Apart from the international protection accorded to right of water, there also exist a number of regional instruments strongly advocating the protection and promotion of water rights in their particular region. The material on water rights in the domain of international law is present in numerouvolumes. It has been recognized as one of the basic and fundamental rights in international law through various international instruments in the form of international human rights declarations, conventions etc. The major instrument in international echelon includes the 1979 Convention on the Elimination of All Forms of Discrimination Against Women(A) (CEDAW,), the 1989 Convention on the Rights of the Child(B) (CRC). Other treaties implicitly recognize the right, for instance the International Covenant on Economic Social and Cultural Rights. In terms of political declarations, the main resolutions were passed by the UN General Assembly and the UN Human Rights Council resolutions both in 2010. The clearest definition of the Human right to water has been issued by the United Nations Committee on Economic, Social and Cultural Rights.

Right To Water In Indian Perspective - Under fundamental rights in the Constitution of India, Article 21 entitled 'protection of life and personal liberty' states that 'no person shall be deprived of his life or personal liberty except according to procedure established by law'. This has popularly come to be known as Article on 'right to life'. In view of the scope of this right, environmental, ecological, air and

* Assistant Professor (Law) Career College of Law ,BHEL, Bhopal (M.P.) INDIA

water pollution gets included in Article 21 of the constitution of India. Further, 'the entitlement of citizens to receive safe drinking water (potable water) is part of the right to life under Article 21. As early as in 1984 (in Bandhua Mukti Morcha vs. Union of India case (1), the Supreme Court derived the concept of right to 'healthy environment' as part of the 'right to life' under Article 21. The Court, in a recent judgment (1 December 2000), had observed that 'in today's emerging jurisprudence, environmental rights which encompass a group of collective rights are described as "third generation" rights'[2]. An important ruling of the Indian Supreme Court was the case of A.P. Pollution Control Board II v. Prof. M.V. Nayudu[3]. In this case, the AP government had granted an exemption to a polluting industry and allowed it to be set up near two main reservoirs in Andhra Pradesh.

Himayat Sagar Lake and the Osman Sagar lake, in violation of the Environment Protection Act 1986. The Supreme Court struck down such exemption and held that the "Environment Protection Act and The Water (Prevention and Control of Pollution) Act 1974 did not enable to the State to grant exemption to a particular industry within the area prohibited for location of polluting industries."The Court recently reiterated again that 'the right to access to clean drinking water is fundamental to life and there is a duty on the state under Article 21 to provide clean drinking water to its citizens'. The State is duty bound not only to provide adequate drinking water but also to protect water sources from pollution and encroachment. Any act of the State that allows pollution of water body 'must be treated as arbitrary and contrary to public interest and in violation of the right to clean water under Article 21'.[4]

Legislative Enactments - A large number of enactments regarding water and water based resources have been passed concerning water supply for drinking purposes, irrigation, and rehabilitation of evacuees affected by the operations of schemes for water resources management. However, none of these laws enumerate an explicit 'right to water'. Instead, some of the laws have expressly abolished structured (rights to use a resource) and customary rights. It is largely clear from the case law that people and communities have had to claim these rights back from the authorities. In addition, the Indian Legal System provides four further legal routes to address water pollution and water quality problems, thus helping to reinstate the rights of people and other living beings to clean and unpolluted waters.There are basically two main enactments passed by the legislation. They are being listed as follows:

1. Prevention and Control of Pollution Act, 1974[14];
2. Provisions of the Environment (Protection) Act, 1986[15];
3. Indian Easements Act, 1882.
4. The Central Water Commission : It is a technical organization in the field of water resources in India. It is now being working as a part of Water Resources, Government of India. The responsibilities are to initiate, coordinate and furthering in consultation of the State Government concerned, schemes for control, conservation and utilization of water throughout the country for the purpose of flood control, irrigation, navigation, drinking water supply and water power development. The main aim is to promote integrated and sustainable development and management of India's water resources.

Conclusion - it is saddening that the adequate or denial of access to drinking water to the majority of people in India has been going on for a long time. And this has been happening despite the supreme court's rulings from time to time that access to clean drinking water is a fundamental right as part of right to life in article 21 of Indian Constitution. This shows apathy of the government, both Central and State levels.

The Government seems to have succumbed to the pressure tactics of the vested interest, who are eager to make profits by co modifying water, thereby denying access to drinking water to the poor or marginal segments of the society.

While pursuing liberalization policies in different sectors of the society, the water sector should be properly looked after as an area of public services where profit should not be the sole criteria.

While allowing public-private partnership in water sector, the emphasis should be on safeguarding the interest of the vast majority of the masses by ensuring adequate supplu of drinking water to them and the private sector can be compensated in other areas for their investment and loss in this sector. All this require legal framework which can come into existence only when Right to Water is included into the existing Fundamental Rights by amending the Constitution.

References :-

1. Bandhua Mukti Morcha Case AIR 1984 SC.
2. A.P. Pollution Control Board II v Prof. M.V. Naidu and Others (Civil Appeal Nos. 368-373 of 1999). Cited from John Lee 'Right to Healthy Environment', Columbia Journal of Environmental Law, Vol. 25, 2000. (2001) 2 SCC 62.
3. A comprehensive scheme of administrative regulation through the permit system of the Water
4. Relating to water quality and access to water through its notifications on permissible quality standards, environmental impact assessments, public hearings, etc.;

(A) Please See. Art.14(2) of CEDAW, 1979
(B) Please See. Art.24 of Convention on the Rights of the Child, 1989. Also See. International Labour Organization No. 161 concerning Occupational health Services, 1985 (Art.5); The Convention on the Rights of Persons with Disabilities, adopted in 2006 (Art.28) See. „Right to Water. available at <http://en.wikipedia.org/wiki/Right_to_water.

Child Labour And Law

Deeksha Dubey *

Introduction - One of the worst form of child exploitation is child labour and India has the largest numbers in the world one third of those under 16 are forced to work, often in the not dreadful conditions. Many children have to work for long hours and are physically abused. As many as 73 million children representing 13 percent of the child population in 10-14 years of age group are working in all kinds of jobs in different parts of the world. Even this figure might be a gross underestimate, according to the International Labour Organization (ILO)

We have several laws like the employment of children Act 1933, The Factories Act 1948, Enforcement of Child Labour Prohibition and Regulation Act 1986, etc. Prohibiting the employment of children below certain age. The constitution of India also decreases against the exploitation of children in the form of child labour.

Definition - The term 'Child Labour' suggest ILO is best defined as work that deprives children of their childhood, their potential and their dignity, and that is harmful to physical and mental development. If refers to work that is mentally, physically, socially or morally dangerous and harmful to children, or work whose schedule interferes with their ability to attend regular school or work that affects in any manner their ability to focus during war and clubs, school or experience a heath childhood.

Child labour is work that harms children or keeps them from attending school.

The International Labour Organization estimate that 215 million children between the ages of 5 and 17 currently work under conditions that are considered illegal, hazardous or extremely exploitative.

Child Labour Laws and Regulations - Child labour laws, enacted by the Federal Government, restrict when children can work and what jobs they can do. Other child labour law restrictions, regulating the type of positions young workers can hold and the type of work they can do, are also in effect. These laws are in place to ensure that children do not any work that's dangerous or bad for their health, and so that their focus remains on education.

Age Restrictions - Age plays a big role in child labour law. Once a youth reaches 18 years of age, he or she is no longer subject to the federal youth employment and child labour law provisions. In terms of labor law, an 18 year old is considered an adult, free to work any hours and in any legal job 16 and 17 year olds may be employed for unlimited hours in any occupation other than those declared. hazardous by the secretary of labour.

Causes of Child labour - International Labour Organization (ILO) suggests poverty is the greatest single cause behind Child Labour*. Lack of meaningful alternatives, such as affordable school and quality education, according to ILO is another major factor deriving children to harmful labour. Children work because they have nothing better to do.

During the school year, 14 and 15 year old children's hours are limited to 3 hours a day and 18 hours a week.

There are limits on when children can work, too- no later than 7 p.m. during the school year and no later than 9 p.m. between June 1 and Labour Day.14 and 15 year old teem may be employed in restaurants and quick service establishments outside school hours in a variety of jobs for limited periods of time and under specified conditions.

Nearly 87% of child workers in rural are working on farm, plantations, fisheries and cottage industries. Though primary education is free and compulsory, a large number of children do not go to school because they Rural India is again caught in vicious circle of poverty. The rural families have more children means more laboures to keep the hearth glowing.

Child Labour Laws and Initiatives - Almost every country in the world has laws relating to and aimed at preventing child labour. ILO has helped set international law which most countries have signed on and ratified.

According to ILO minimum age convention (C138) of 1973, child lobour refers to any work performed by children under the age of 12, non-light work done by children aged 12-14 and hazardous work done by children aged 15-17.

Article 32 of the convention addressed child labour as follows – "Parties recognize the right of the child be protected from economic exploitation and from performing any work that is likely to be hazardous or to interfere with the child's education or to be harmful to the child's health or physical, mental, spiritual, moral or social development.* Under Article 1 of the 1990 convention, a child is defined as "every human being below the age of eighteen years unless the law applicable to the child, a majority is attained earlier". Article 28 of this convention requires states to" make

* B.A. , L.L.B. (Viii Semester) Global Jindal Law University, Sonipat (Hariyana) INDIA

primary education compulsory and available free to all.
In its historic judgment the supreme court on December 10, 1996 the supreme court of India gave certain direction regarding the manner in which children in the hazardous occupations are to be withdrawn from work and rehabilitated as also the manner in which the working conditions are to be regulated and improved upon the important direction given in the judgment include payment of compensation amounting to Rs 20000 by the offending occupations constitute of the child labour.

Eliminating Child Labour - The International Programme on the Elimination of Child Labour (IPEC), founded in 1992, aims to eliminate child labour. It operates in 88 countries and is the largest program of its kind in the world.* IPEC works with international and government agencies, NGOs. The media, children and their families to end child labour and provide with education and assistance, from 2008 to 2013, the ILO operated a program through International Programme on the Elimination of Child Labour (IPEC) titled "Combating Abusive Child Labour (CACL-II)".

Conclusion - The need of the hour is vocational education right from the primary stage so that the poor students "earn and learn" at the same time. In India's prevailing scenario of over population and mounting unemployment and poverty, there is no harm if children take to their family vocations under parents guidance or take non hazardous work, otherwise they may be exploited by anti-social elements for begging, boot legging which is still worse.

Literacy is the base of nation's development. Let us not forget that ignorance leads to greater exploitation. Provision of education in a suitable institution for the child with drawn from work. Rehabilitations welfare fund giving alternative employment to an adult member of the family in place of child with drawn from the hazardous occupation.

References :-

1. "Child Employing Industries" Annals of the American Academy of Political and Social Science, vol. 35, March 1910 in JSTOR.
2. Hindman, Hugh D., Child Labour : An American History (2002).
3. Humphries, Jane, Horell, Sara (1995) "The Exploitation of Little Children", Explorations in Economic History. 32, 485-516.
4. Humbert, Franziska. "The Challeng of Child Labour in International Law", (2009).
5. Forced Labour : "Definition, Indicators and Measurement" 2004-ILO.
6. https://en. Wikipedia. org/wiki/child-Labour.

****

पर्यावरण संरक्षण के लिए किए गए अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास - एक अध्ययन

अमृत कौर बाबरा * डॉ. जे. के पटेल **

शोध सारांश – पर्यावरण मानव जीवन का आधार है। स्वस्थ एवं स्वच्छ पर्यावरण मानव जीवन के लिए आवश्यक है, यही कारण हैं कि सृष्टी में जल, वायु, पृथ्वी और वनस्पति तथा जैव विविधता पाई जाती है। पर्यावरण और मानव का सम्बन्ध तथा पर्यावरण पर मानव की आश्रित्ता सृष्टि के प्रारंभ से चली आ रही हैं और पर्यावरण विकास एवं सुधार के प्रयाय होते रहे हैं फिर भी इसकी विशिष्ट आवश्यकता जनसंख्या विस्फोट एवं अतिशय औद्योगिकरण के परिपेक्ष्य में महसूस की गई है।

प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन से परिस्थितिकी संकट अतिशयवादी औद्योगिकरण से वायु प्रदुषण, जल प्रदुषण, मृदा प्रदुषण, ध्वनि प्रदुषण, ओजोन क्षीणता, भूमण्डलीय तापमान आदि समस्याएं बढ़ने लगी है। जिससे मानव अधिकारों पर विपरित प्रभाव पड़ने लगा है। चूंकि पर्यावरण का अधिकार मानव अधिकारों के तृतीय पीढ़ी के अधिकारों से सम्बन्धित होने से यह विषय एक राष्ट्र का न होकर सम्पूर्ण विश्व समुदाय का है। पर्यावरण संरक्षण में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर किए गए प्रयासों का अध्ययन इस शोध पत्र का प्रमुख उद्देश्य है

शब्द कुन्जी – पर्यावरण, मानव अधिकार, अन्तर्राष्ट्रीय, संरक्षण।

शोध का उद्देश्य – प्रस्तुत शोध पत्र का प्रमुख उद्देश्य अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण संरक्षण के लिए किए प्रयासों का अध्ययन कर विश्लेषण करना है।

शोध प्रविधि – इस शोध पत्र की शोध प्रविधि पूर्णत: सैद्धांतिक है। सैद्धांतिक प्रविधि में द्वितीय आकड़ों की सहायता से निष्कर्ष एवं विश्लेषण किया गया है।

विवेचना – पर्यावरण संरक्षण में संयुक्त राष्ट्र संघ की अहम भूमिका है क्योंकि वर्तमान समय में पर्यावरण का खतरा सम्पूर्ण विश्व के लिए अभिशाप बनते जा रहा हैं, जहां एक ओर ग्लोबल वार्मिंग का खतरा बढ़ रहा है वही ओजोन परत में भी नष्ट होते जा रहा है। पर्यावरण को बचाने के लिए सभी देशों ने अपने-अपने स्तर पर प्रयास किए हैं किंतु कुछ राष्ट्रों में जहां पर्यावरण संतुलित है, वहां विकास नहीं हो पाया था और जिन राष्ट्रों में पर्यावरण असंतुलित है वहां औद्योगिक विकास इतना अधिक हुआ कि वे राष्ट्र आज विश्व में विकसित देशों के रूप में जाने एवं पहचाने जाते हैं। जहां पर इतना ज्यादा औद्योगिक विकास हुआ कि पर्यावरण पूर्णत: छिन्न भिन्न हो गया। वहीं विश्व के वे राष्ट्र जिन्होंने 19वीं शताब्दी के बाद अपना औद्योगिक विकास प्रारंभ किया, वहां पर्यावरण कि समस्या एवं विकास कि समस्या दोनों ही रही है।

इस स्थिति में पर्यावरण को बनाए रखने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विचार मंथन कि शुरूवात आवश्यक थी क्योंकि पर्यावरण का असंतुलन सम्पूर्ण जीवन के लिए आवश्यक है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण संरक्षण हेतु किए गए प्रयास अग्रलिखित है।

मानवीय पर्यावरण स्टाकहोम सम्मेलन (1972) – संयुक्त राष्ट्र मानवीय पर्यावरण सम्मेलन स्टाकहोम (स्वीडन) में 5 जून से 16 जून 1972 तक आयोजित किया गया। सम्मेलन का मुख्य प्रयास विश्व स्तर पर अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन द्वारा मानवीय पर्यावरण के संरक्षण तथा सुधार की विश्वव्यापी समस्या का समाधान करना था। सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य मानवीय पर्यावरण का संरक्षण करने तथा उसमें सुधार करने के लिए सरकारों तथा अंतर्राष्ट्रीय संगठनों को कार्यवाही के लिए मार्ग निर्देश देना तथा उसमें वृद्धि करना था।

महासभा द्वारा 15 दिसम्बर 1972 को एक संकल्प के माध्यम से संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम के लिए शासी परिषद् कि स्थापना की गयी। परिषद् में 58 सदस्य सम्मिलित किए गए हैं। सदस्य तीन वर्ष की अवधि के लिए महासभा द्वारा निर्वाचित किये जाते हैं। शासी परिषद् की स्थापना कई कार्यों को करने के लिए की गयी थी।

महासभा द्वारा 5 दिसम्बर, 1980 को मानवीय पर्यावरण पर संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम संबन्धी शासी परिषद् के विशेष सत्र को आयोजित करने का निर्णय किया गया। तदनुसार, संयुक्त राष्ट्र मानवीय पर्यावरण सम्मेलन के दसवीं वर्षगांठ मनाने के लिए 1982 में विशेष प्रकृति का सत्र 10 से 18 मई तक नैरोबी में आयोजित किया गया। इस सत्र में सर्व सम्मति से एक घोषणा को स्वीकार किया गया, जिसे नैरोबी घोषणा कहा जाता है। इसमें यह घोषणा की गई थी कि स्टाकहोम घोषणा के सिद्धान्त अब भी उतने ही उपयोगी एवं महत्वपूर्ण हैं, जितना 1972 में थे और यह सिद्धांत आगामी वर्षों के लिए पर्यावरण सम्बन्धी मूल आचार संहिता के सामान हैं।

ओजोन परत संरक्षण वियना अभिसमय – इस अभिसमय को पूर्णाधिकारी दूत सम्मेलन द्वारा 22 मार्च, 1985 को स्वीकार किया गया था। सम्मेलन को संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम द्वारा आयोजित किया गया था। यह अभिसमय 22 सितम्बर, 1988 से लागू हुआ। अभिसमय का मुख्य उद्देश्य राज्यों को समताप मण्डलीय ओजोन परत का संरक्षण करने के लिए एक साथ कार्य करने हेतु अन्तर्राष्ट्रीय विधिक संरचना प्रदान करना है।

वियना अभिसमय, 1985 ओजोन परत के संरक्षण के लिए

* शोधार्थी (एम. फिल. विधि) डॉ. सी. वी. रमन् विश्वविद्यालय, करगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** समआचार्य एवं विभागाध्यक्ष (विधि) डॉ. सी. वी. रमन् विश्वविद्यालय, करगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

विश्वव्यापी सहयोग का प्रारम्भिक बिन्दु है। बाद में, सितम्बर 1987 में उन पदार्थों पर, जो ओजोन परत को क्षीण करते हैं, मान्ट्रियाल नयाचार बनाया गया तथा लन्दन (1990) में, कोपेनहेगन में (1992) और वियना (1995) में मान्ट्रियाल नयाचार में संशोधन ओजोन को क्षीण करने वाले पदार्थों को कम करने तथा नियंत्रित करने में महत्वपूर्ण विकास था, जिसने ओजोन क्षीणता में महत्वपूर्ण योगदान दिया। वियना अभिसमय के 31 मार्च, 2000 तक 173 राज्य पक्षकार बन गए थे। भारत ने अभिसमय का अनुसमर्थन जून 1992 में किया था।

ओजोन परत की क्षीणता को नियंत्रित करने वाले उक्त उपाय वास्तव में महत्वपूर्ण हैं किन्तु कई राज्यों ने अपने राष्ट्रीय हितों के कारण नयाचार की सफलता के बारे में सन्देह व्यक्त किया है। सोवियत संघ ने 1989 में वर्ष 2000 तक क्लोरोफ्लुरोकार्बन पर विश्वव्यापी प्रतिबंध करार पर हस्ताक्षर करना आवश्यक बना दिया, जबकि चीन ने तीसरे विश्व के साथ विशेष व्यवहार की मांग किया। भारत ने मान्ट्रियाल नयाचार के बारे में कहा कि यह विकसित देशों का उनके अनिवार्य आवश्यकता की देखभाल करने की अनुज्ञा देता है, किंतु विकासशील देशों को उनके बढ़ने वाली आवश्यकताओं को पूरा करने की अनुमति नहीं देता।

संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण तथा विकास सम्मेलन (पृथ्वी सम्मेलन) – संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण तथा विकास सम्मेलन को आयोजित करने के विचार का अनुमोदन महासभा द्वारा 22 दिसम्बर, 1989 को एक संकल्प द्वारा किया गया था। इस संकल्प में ब्रंटलैण्ड रिपोर्ट के उत्तर में तथा उस पर कार्यवाही करने के लिए विश्व पर्यावरण तथा विकास सम्मेलन के लिए अनुरोध किया गया था। तदनुसार रिओ डे जेनेरिओ ब्राजील में 3 जून से 14 जून, 1992 तक सम्मेलन आयोजित किया गया, जिसे पृथ्वी सम्मेलन कहा जाता है। इस सम्मेलन में 182 राष्ट्रों के प्रतिनिधिमण्डलों ने भाग लिया। यह अब तक आयोजित अंतर सरकारी सम्मेलन में सबसे बड़ा था। सम्मेलन में दो प्रमुख दस्तावेजों अर्थात् कार्यवाही 21 तथा पर्यावरण तथा विकास रिओ घोषणा को और वन सिद्धांत तथा दो अंतर्राष्ट्रीय अभिसमयों को स्वीकार किया गया।

पर्यावरण तथा विकास पर रियो घोषणा – रियो घोषणा राज्यों समितियों के प्रमुख क्षेत्रों तथा लोगों के मध्य सहयोग के नये स्तरों के सृजन के माध्यम से नयी तथा साम्यापूर्ण रूप में स्वीकृत विश्वव्यापी भागीदारी को स्थापित करने के लक्ष्य के साथ सम्मेलन में स्वीकृत किया गया था। घोषणा में पृथ्वी तथा हमारे गृह के अखण्ड तथा अंतर आधारित प्रकृति को मान्यता दी गयी थी और इसमें 27 सिद्धांतों की घोषणा की गयी थी।

पर्यावरण तथा विकास पर रियो घोषणा – रियो घोषणा राज्यों समितियों के प्रमुख क्षेत्रों तथा लोगों के मध्य सहयोग के नये स्तरों के सृजन के माध्यम से नयी तथा साम्यापूर्ण रूप में स्वीकृत विश्वव्यापी भागीदारी को स्थापित करने के लक्ष्य के साथ सम्मेलन में स्वीकृत किया गया था। घोषणा में पृथ्वी तथा हमारे गृह के अखण्ड तथा अंतर आधारित प्रकृति को मान्यता दी गयी थी और इसमें 27 सिद्धांतों की घोषणा की गयी थी।

जैविक विविधता अभिसमय (1992) – यह अभिसमय संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण, जलवायु, परिवर्तन, अभिसमय (संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन संरचना अभिसमय) –

विश्वव्यापी तापन तथा ओजोन परत की क्षीणता का प्रभाव इतना भयप्रद है कि महासभा ने 6 दिसम्बर, 1988 को एक प्रस्ताव पारित किया कि जलवायु परिवर्तन मानवजाति की सामान्य चिंता का विषय है और महासभा ने यह भी निश्चय किया कि इस समस्या को हल करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय कार्यवाही की आवश्यकता है। जलवायु परिवर्तन का तात्पर्य जलवायु के ऐसे परिवर्तन से है, जो मानव के क्रियाकलापों से भूमण्डलीय वातावरण को परिवर्तित कर देता है। जलवायु परिवर्तन का परिणाम आरोही समुद्र में परिवर्तनशील ऋतु गतिमान तथा विश्वव्यापी तापन द्वारा उत्पन्न मानव स्वास्थ्य के प्रति वृद्धिगत खतरा में हो सकता है।

जलवायु परिवर्तन अभिसमय के निर्माण के लिए वार्ता अंतर-सरकारी वार्ता समिति द्वारा 1990 में प्रारम्भ की गयी। बाद में अभिसमय 9 मई, 1992 को न्यूयार्क में स्वीकार किया गया जिस पर सम्मेलन में हस्ताक्षर किया गया। अभिसमय 21 मार्च 1994 से लागू हुआ। अभिसमय का उद्देश्य कार्बन डाइआक्साइड तथा मानव निर्मित अन्य तथा कथित ग्रीन हाउस प्रभाव में वृद्धि करते है। कार्यक्रम जो भूमि के सभी वनस्पतियों के संरक्षण तथा निरंतर प्रयोग और पारिस्थितिक तंत्र से संबंधित है, के तत्वाधान में करीब 4 वर्षों के विचार विमर्श के बाद 22 मई, 1992 को नैरोबी में स्वीकार किया गया। यह अभिसमय 29 दिसम्बर, 1993 से लागू हुआ और 3 दिसम्बर, 1996 तक 165 राज्स इसके पक्षकार बन गए हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण संतुलन पर व्यापक चिंता एवं चितंन एका सार्थक कदम है- पर्यावरण को सुरक्षित रखने हेतु संयुक्त राष्ट्र संघ ने 5 जून 1973 से विश्व पर्यावरण दिवस के रूप में मनाया जा रहा है।

उपसंहार – अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण संरक्षण का कार्य संयुक्त राष्ट्र संघ के स्थापना पश्चात् व्यापक रूप से प्रारंभ हुआ क्योंकि पर्यावरण वैश्विक चिंता का विषय है। जहां एक ओर प्रत्येक राष्ट्र पर्यावरण को लेकर विधिक एवं सामाजिक सुरक्षोपाय अपनाते है। परन्तु सम्पूर्ण विश्व जब इस विषय पर चिंतन एवं मनन करने को मजबूर हुआ तब से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न अभिसमयों और घोषणाओं के माध्यम से सदस्य राष्ट्रों को यह दायित्व सौंपा गया कि पर्यावरण की सुरक्षा करना उनका कर्तव्य ही नहीं अपितु जवाबदेही है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण सरंक्षण के लिए नियमों की एक लम्बी श्रृंखला है, बशर्ते की इसके पालन को सुनिश्चित किया जा सकें।

विश्व के विकसित देश जैसे - अमेरिका, कनाडा, जापान, ब्रिटेन, रूस, फ्रांस इत्यादि देश औद्योगिक विकास में सबसे आगे हैं। किंतु ओजोन मण्डल में छेद और अन्य पर्यावरणीय असंतुलन इन्हीं राष्ट्रों में ज्यादा है। वहीं अफ्रीकी देशों में तथा भारतीय उपमहाद्वीप में औद्योगिक विकास एवं पर्यावरण संतुलन को बनाए रखना एक चुनौती है। इसलिए आवश्यक है। यदि विकास और पर्यावरण को संतुलित बनाए रखना है तो पोषणी विकास की महती आवश्यकता है। तभी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर किए गए विभिन्न अभिसमयों एवं समझौतो का पालन किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. एच. ओ. अग्रवाल 'अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार विधि'' सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद।
2. डॉ. जय नारायण पाण्डेय 'भारत का संविधान' सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद।
3. डॉ. जय जय राम उपाध्याय 'पर्यावरण विधि' सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद।
4. डॉ. अनिरूद्ध प्रसाद 'पर्यावरण एवं पर्यावरणीय संरक्षण विधि की रूप-रेखा' सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद।

वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय के शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति शिक्षकों के दृष्टिकोण का अध्ययन

प्रांजल शेखर * डॉ. अन्जनी कुमार मिश्र **

प्रस्तावना – प्राचीन काल में शिक्षण योग्यता को एक जन्मजात प्रकृति प्रदत्त योग्यता स्वीकार किया जाता था। उस समय की मान्यता थी कि अध्यापक बनने वाला व्यक्ति जन्म से ही अध्यापन सम्बन्धी प्रतिभा से सम्पन्न होता है। उसे किसी भी प्रकार के औपचारिक अथवा अनौपचारिक प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं होती। इसके साथ यह भी कहा जाता था कि किसी प्रकार के प्रशिक्षण को देकर अच्छे अध्यापक तैयार करना सम्भव नहीं है अर्थात् अध्यापक पैदा होते है न कि तैयार किए जाते है। परंतु 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध व 20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में विश्व के लगभग सभी देशों में अध्यापक के जन्मजात होने सम्बन्धी मान्यता का खण्डन किया जाने लगा तथा धीरे-धीरे सभी देशों में स्वीकार किया जाने लगा कि प्रशिक्षण देकर श्रेष्ठ व सुयोग्य अध्यापक तैयार किए जा सकते है।

अध्यापन का कार्य ऐसा नहीं है जो बिना किसी प्रशिक्षण के चाहे जो व्यक्ति सफलतापूर्वक कर सकता है। उच्च शिक्षा प्राप्त करने के साथ-साथ अध्यापन प्रणालियाँ, शिक्षण के सिद्धान्तों, शिक्षा की समस्याओं का समाधान पाठ्यक्रम, विद्यालय संगठन आदि शिक्षण के विविध क्षेत्रों में विविध प्रशिक्षण प्राप्त करना चाहिए।

शिक्षा के भिन्न-भिन्न स्तरों पर जिस प्रकार न्यूनाधिक उच्च शिक्षा की आवश्यकता पड़ती है, उसी प्रकार प्राथमिक माध्यमिक और विश्व विद्यालय के अध्यापकों के लिए प्रशिक्षण के अलग-अलग स्तर निश्चित किए गये है। भारतवर्ष में प्राचीनकाल में अध्यापक विद्यार्थी अवस्था में ही अपने गुरुओं से अध्यापन की कला सीखते थे और उसी के आधार स्वयं स्वतंत्र रूप से विद्यालय चलाते थे लेकिन शिक्षण प्रशिक्षण का अलग से कोई प्रबन्ध नहीं था। भारत में अंग्रेजी राज्य की स्थापना के बाद सरकार की ओर से शिक्षा विभाग द्वारा शिक्षायी देखरेख प्रारम्भ होने पर शिक्षण होने पर शिक्षण-प्रशिक्षण की समस्या उत्पन्न हुई। सर्वप्रथम 1881-82 में भारतीय शिक्षा आयोग ने शिक्षण प्रशिक्षण का परामर्श दिया और प्राथमिक व माध्यमिक शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए निम्नलिखित सुझाव रखे-

- प्रशिक्षण विद्यालय ऐसे केन्द्रीय स्थानों पर स्थापित किए जाने चाहिए जहां वे क्षेत्र के सभी प्राथमिक विद्यालयों की आवश्यकताओं को पूरा कर सके।
- प्रशिक्षण विद्यालय सारे देश में समान भौगोलिक अन्तराल पर स्थापित हाने चाहिए।
- स्नातक व उपस्नातक दोनों प्रकार के शिक्षकों के लिए भिन्न-भिन्न प्रशिक्षण व्यवस्था और पाठ्यक्रम का आयोजन किया जाना चाहिए।

''भारतीय शिक्षा आयोग 1882 की उपर्युक्त सिफारिशों के बाद सन् 1904 में लार्ड कर्जन ने शिक्षा-प्रशिक्षण की ओर विशेष ध्यान दिया। वर्तमान शिक्षा व्यवस्था के अन्तर्गत किसी भी शिक्षक को शिक्षण की अनुमति तब तक नहीं दी जानी चाहिए जब तक कि उसके पास यह प्रमाण-पत्र नहीं कि वह ऐसा कार्य करने के लिए योग्यता प्राप्त है। सन् 1919 कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग की रिपोर्ट में इण्टरमीडिएट व स्नातक कक्षाओं के पाठ्यक्रम में शिक्षा विषय को स्थान दिया गया। बाद में हर्टाग समिति और मुदालियर समिति तथा राधाकृष्णन आयोग ने भी शिक्षक-प्रशिक्षण पर ध्यान दिलाया।''

एक अच्छे शिक्षक के लिए न केवल कक्षा शिक्षा में प्रवीण होना आवश्यक है वरन् उसे शिक्षक के रूप में अन्य अनेक दायित्वों का पालन करना होता हैं। परीक्षा व मूल्यांकन अनुशासन, विद्यालय प्रशासन, पाठ्य सहगामी क्रियाओं का संचालन समाज में शिक्षा की महत्ता की स्थापना जैसे कार्य भी शिक्षक को करने होते है। इसके लिए शिक्षा के उद्देश्यों व राष्ट्र निर्माण में शिक्षा का योगदान पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धान्तों, मूल्यांकन विधियों, प्रशासन की तकनीकों आदि का ज्ञान भी शिक्षक के लिए आवश्यक है। सेवा में आने के उपरान्त भी समय-समय पर नवीन तकनीकों का ज्ञान शिक्षक के लिए आवश्यक होता है। शिक्षक शिक्षा के पाठ्यक्रमों में सेवापूर्व व सेवाकालीन में क्रमश: भावी शिक्षकों व कार्यरत शिक्षकों को उपरोक्त वर्णित बातों का विशद ज्ञान व अभ्यास कराया जाता है। स्पष्ट है कि शिक्षकों के लिए सेवापूर्व व सेवाकालीन शिक्षक शिक्षा की महत्ताा आवश्यकता हैं। शिक्षक शिक्षा प्राप्त करके ही वे अपने गुरुत्तार दायित्वों का निर्वाह करने में समर्थ हो सकेगें।

वर्तमान में एन.सी.टी.ई. के नये आदेशानुसार बी0एड्0 एवं एम0एड्0 का द्विवर्षीय पाठ्यक्रम पूरे देश में लागू है। अत: इस नये पाठ्यक्रम के प्रति शिक्षकों के दृष्टिकोण का अध्ययन नवीन विषय है एवं अपने आप में महत्व रखता है। इसके माध्यम से वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय के शिक्षक-प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति शिक्षकों के दृष्टिकोण को समझा जा सकता है एवं अपेक्षित सुधार सुझाए जा सकते है।

सम्बन्धित साहित्य का सर्वेक्षण-

- **कुलकर्णी (2011)** ने प्राथमिक विद्यालय में कार्यरत् बी.एड. प्रशिक्षित शिक्षकों की शिक्षण योग्यता तथा शिक्षण अभिवृत्ति के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन किया।
- **गेडाम (2011)** द्वारा शिक्षक शिक्षा ''दशा तथा नवीन दिशाएँ'' नामक शीर्षक पर शिक्षक शिक्षा के चार उद्देश्यों - पूर्व प्राथमिक स्तर पर, प्राथमिक स्तर पर ,माध्यमिक स्तर, पर एवं महाविद्यालय स्तर पर, चिंहित

* एम.एड्. छात्र, राजा हरपाल सिंह पी.जी. कालेज, जौनपुर (उ.प्र.) भारत
** असिस्टेन्ट प्रोफेसर, राजा हरपाल सिंह पी.जी. कालेज, जौनपुर (उ.प्र.) भारत

करते हुए अध्ययन किया गया है।

- **कुमार (2012)** द्वारा ''अध्यापक प्रशिक्षण संस्थानों में छात्र-अध्यापको की शिक्षण दक्षता पर एक अध्ययन'' नामक शीर्षक के अन्तर्गत अध्ययन किया गया है।

तकनीकी शब्दों का परिभाषीकरण।

- **शिक्षक-प्रशिक्षण पाठ्यक्रम –** शिक्षक प्रशिक्षण वह शैक्षिक आयोजन है जिसमें विभिन्न स्तरीय एवं वर्गीय शिक्षकों को इस तरह से शिक्षित करने के लिए प्रयत्न किया जाता है कि आने वाली पीढ़ी को मान एवं मूल्यों के हस्तांतरण के साथ ही उनके समस्त शैक्षिक एवं विकासात्मक दायित्व को ग्रहण व वहन करने में वे सक्षम हो सके तथा उनमें तकनीकी, कुशलता, वैज्ञानिक चेतना, संसाधन सम्पन्नता, सांस्कृतिक चेतना, मानवता बोध का समन्वयात्मक विकास हो सके।

एन0सी0टी0ई0 द्वारा PDSE, D.El.Ed., B.El.Ed., B.Ed., M.Ed., D.P.Ed., M.P.Ed., Diploma in Arts Education (Visual Arts), Four Year B.A. B.Ed./ B.Sc.Ed, Three Year (Part Time) B.Ed. Degree, Three Year B.Ed. M.Ed. (Integrated) Degree आदि शिक्षक-प्रशिक्षण पाठ्यक्रम संचालित किए जा रहे है।

शिक्षक-प्रशिक्षण पाठ्यक्रम की व्यापकता एवं शोध हेतु समय तथा खर्च को ध्यान में रखते हुए समग्र पाठ्यक्रमों पर शोध कर पाना दुरूह कार्य है। अत: शिक्षक-प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के अन्तर्गत वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय से सम्बद्ध महाविद्यालयों में संचालित हो रहे एम0एड्0 पाठ्यक्रम को लिया गया है।

- **दृष्टिकोण-** अभिवृत्तियाँ सामाजिक संसार में उपलब्ध व्यक्ति, वस्तु, संसाधन, व्यवसाय, जाति, धर्म, समुदाय आदि से सम्बन्धित होती है। साथ ही साथ इनका सम्बन्ध मनोवैज्ञानिक संरचना जैसे- वाद, विचार, आदर्श, चलन, प्रथाए , मूल्य, जीवन दर्शन आदि की अभिव्यक्ति से है।

रैमर्स, गेज तथा रूमेल के शब्दों में – ''अभिवृत्ति अथवा दृष्टिकोण किसी मनोवैज्ञानिक वस्तु के प्रति, अनुभवों के द्वारा संगठित, धनात्मक या ऋणात्मक प्रतिक्रिया करने की संवेगात्मक प्रवृत्ति है।''

शोध का उद्देश्य – वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय के शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति शिक्षकों के दृष्टिकोण का अध्ययन करना।

शोध की परिकल्पना – वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय के शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति सहायता प्राप्त एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में अध्यापनरत् शिक्षकों के दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

परिसीमांकन – वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय से सम्बद्ध शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों में एम.एड्. स्तर पर अध्यापनरत् शिक्षकों को न्यादर्श के रूप में सम्मिलित किया जाएगा।

शोध विधि – प्रस्तुत अध्ययन की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए शोध कार्य को सर्वेक्षण विधि द्वारा सम्पादित किया गया है।

जनसंख्या (समष्टि) – प्रस्तावित अध्ययन में वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय, जौनपुर से सम्बद्ध शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों में एम0एड्0 स्तर पर अध्यापनरत् शिक्षकों को जनसंख्या माना गया है।

न्यादर्श – शोधकर्ता ने सम्भाव्य प्रतिचयन के अन्तर्गत वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय, जौनपुर से सम्बद्ध राजा हरपाल सिंह स्नातकोत्तार महाविद्यालय, सिंगरामऊ, जौनपुर, टी0डी0 कालेज, जौनपुर, राजा श्रीकृष्णदत्त पी.जी. कॉलेज, जौनपुर महाविद्यालयों में एम0एड्0 स्तर पर अध्यापनरत् 26 शिक्षकों को न्यादर्श के रूप मे लिया है।

प्रयुक्त मापन उपकरण – प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोधकर्त्ता ने प्रमाणिक वर्तमान शिक्षक-प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति स्वनिर्मित दृष्टिकोण मापनी का प्रयोग किया है। दृष्टिकोण मापनी के सारे कथन शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम अर्थात एम0एड्0 पाठ्यक्रम के चारों सेमेस्टर से लिये गये है।

प्रयुक्त सांख्यिकीय प्रविधियाँ – शोधकर्ता ने उद्देश्यों एवं परिकल्पनाओं को दृष्टि में रखते हुए मध्यमान, मानक विचलन, मानक त्रुटि, क्रांतिक अनुपात (Critical Ratio), क्रान्तिक-अनुपात, स्वतंत्रता का अंश (Degree of Freedom) एव T-Table का प्रयोग किया गया है।

आँकड़ों का विश्लेषण एवं व्याख्या – शोधकर्ता ने शोध समस्या के समाधान हेतु बनाई गई शून्य परिकल्पनाओं के परीक्षण के लिए मध्यमान, मानक विचलन एवं टी-मान सांख्यिकीय प्रविधियों का प्रयोग किया है जिसे सारिणी 1 में दर्शाया गया है-

परिकल्पना का परीक्षण :

H_1 : वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय के शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति सहायता प्राप्त एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में अध्यापनरत् शिक्षकों के दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर है।

H_{01} : वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय के शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति सहायता प्राप्त एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में अध्यापनरत् शिक्षकों के दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका 1 – (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका 1 से स्पष्ट है कि वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय के शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति सहायता प्राप्त एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में अध्यापनरत् शिक्षकों के दृष्टिकोण मध्यमानों के अन्तर का t-मान 2.23 है जो कि मुक्तांश 24 तथा सार्थकता स्तर 0.05 पर t- के तालिका मान 2.06 से अधिक है। अत: मध्यमानों के मध्य सार्थक अन्तर है। अत: शून्य परिकल्पना (H_{01}) अस्वीकृत होती है तथा शोध परिकल्पना (H_1) स्वीकृत की जाती है। अत: हम कह सकते हैं कि वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय के शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति सहायता प्राप्त महाविद्यालयों के शिक्षकों का दृष्टिकोण स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में अध्यापनरत् शिक्षकों के दृष्टिकोण से उच्च पाया गया।

निष्कर्ष – 0.05 सार्थकता स्तर पर वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय के शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति सहायता प्राप्त एवं स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में अध्यापनरत् शिक्षकों के दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर है अर्थात् शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति सहायता प्राप्त अध्यापनरत् शिक्षकों का दृष्टिकोण स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों में अध्यापनरत् शिक्षकों के दृष्टिकोण से उच्च है।

शैक्षिक निहितार्थ – कोई भी शैक्षिक शोध कार्य तब तक पूर्णता को प्राप्त नहीं हो सकता जब तक उसका शैक्षिक महत्व नहीं हो। प्रस्तुत शोध में वीर बहादुर सिंह पूर्वान्चल विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों के शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन किया गया है, जिसका प्रमुख उद्देश्य प्रशिक्षणार्थियों में शिक्षण व्यवसाय में कितना रूचि रखते है और उनका दृष्टिकोण क्या है यह पता लगाना था।

शिक्षकों हेतु शैक्षिक निहितार्थ :

1. प्रशिक्षण के लिए प्रवेश करने वाले प्रशिक्षार्थियों की उनके शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम के प्रति अभिवृत्ति को शिक्षकों द्वारा मापन किया

जाना चाहिए।

2. शिक्षा प्रक्रिया तभी सुचारूपूर्वक संचालित हो सकती है, जब शिक्षक और विद्यार्थी के सम्बन्ध में प्रगाण एवं मधुर है।
3. शिक्षकों को समय-समय पर शिक्षक प्रशिक्षण प्रशिक्षणार्थियों को मार्गदर्शन देना चाहिए जिससे उनके भविष्य में आने वाली कठिनाईयों को दूर किया जा सके।
4. शिक्षकों को शिक्षक प्रशिक्षण प्रशिक्षणार्थियों को पाठ्यक्रम सरल एवं मधुर रूप से पढ़ाना चाहिए जिससे वे भविष्य में शिक्षक बनने के बाद अपने शिक्षार्थियों को उसी के अनुसार शिक्षा दे सकें।

शैक्षिक प्रशासन हेतु निहितार्थ – इस अध्ययन के माध्यम से शैक्षिक प्रशासन को निम्न तथ्यों का ज्ञान होगा :

1. महाविद्यालयों में प्रशिक्षणरत् शिक्षक प्रशिक्षण प्रशिक्षणार्थी अपने निर्धारित उद्देश्यों को पूरा करने की ओर कितने प्रयत्नशील है।
2. शिक्षक प्रशिक्षण प्रशिक्षण कार्यक्रम कितना सोद्देश्यपूर्ण, सरल एवं नवीन है अर्थात् इसकी स्थापना कितनी सार्थक है।
3. नवीन ज्ञान एवं नयी ऊर्जा का संचार होता है, इसलिए प्रशासन को इनके प्रशिक्षण की निरन्तर व्यवस्था करनी चाहिए।
4. शैक्षिक प्रशासन को चाहिए कि डायट एवं अन्य निजी संस्थानों में प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षणार्थी प्रशिक्षण के प्रति गम्भीर रहे। प्रशिक्षण की सार्थकता तभी है कि शिक्षक मानसिक रूप से भी प्रशिक्षित किए जाये।
5. प्रशिक्षण के उपरान्त परीक्षा में अच्छे अंक या ग्रेड पाने वाले अभ्यर्थियों को पुरस्कृत किया जाए जिससे अन्य अभ्यर्थियों को प्रेरणा प्राप्त हो।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. कपिल, एच0के0 (2010), अनुसंधान विधियाँ, एच0पी0 भार्गव बुक हाउस, 4/230 कचेहरी घाट, आगरा।
2. कुलकर्णी (2011), प्राथमिक विद्यालय में कार्यरत् बी.एड. प्रशिक्षित शिक्षकों की शिक्षण योग्यता तथा शिक्षण अभिवृत्ति के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन
3. गेडाम, विनोद वि. (2011): शिक्षक शिक्षा दशा तथा नवीन दिशाएँ, शिक्षा में नवीन प्रवृतियाँ, ISBN 978-81-313-1259-9, ए.पी.एच. पब्लिशिंग कार्पोरेशन अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली।
4. गुप्त, सुशील प्रकाश (2012), अनुसंधान संदर्शिका : सम्प्रत', कार्यविधि एवं प्रविधि, विपिन इण्टरप्राइजेज, इलाहाबाद।
5. गुप्ता, एस0पी0 (2013), अनुसंधान विधियाँ, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद। अप्रैल नई दिल्ली।

तालिका 1

क्र.	समूह	संख्या (N)	मध्यमान (M)	मानक विचलन (S.D.)	मध्यमानों का अन्तर (M1~M2)	मानक त्रुटि (σ_D)	t-मान	सार्थकता स्तर
1.	सहायता प्राप्त महाविद्यालयों के शिक्षक	6	112.17	13.35	14.22	6.37	2.23	0.05 स्तर पर असार्थक
2.	स्ववित्तपोषित महाविद्यालयों के शिक्षक	20	97.75	9.79				

****

अन्तः पारस्परिक संबंध

डॉ. रिटा बिश्ट*

प्रस्तावना – क्लेयर के अनुसार – परिवार से हम सम्बन्धों की इस व्यवस्था को समझते हैं, जो माता–पिता और संतानों के मध्य सम्बन्धों की तथा एक दूसरे के प्रति कर्त्तव्यों की व्यवस्था होती हैं, इस प्रकार परिवार न केवल बालक की शिक्षा में वरन्, उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।परिवार का सामाजिक पर्यावरण बालक को दूसरों से संबंध बनाने के अनुभव व कौशल प्रदान करता हैं और इन संबंधो को स्थापित प्रदान करने के लिए धीरे–धीरे प्रेम पूर्वक व्यवहार करना सीखता हैं, जिससे बालक संबंधों के प्रत्युत्तर तथा स्थायित्व के लिए अपनी आक्राकमता को नियन्त्रित करता हैं, जो उसकी सामाजिक अन्नत: क्रिया को बढ़ाता है।

समस्या का औचित्य – संसार में बच्चों की जनसख्या वाला दूसरा बड़ा देश भारत हैं। देश की पूर्ण जनसंख्या में 0 से 19 वर्ष के बालकों की 50 प्रतिशत सहभागिता हैं। आज के ये बालक कल के राष्ट्र निर्माता हैं, जो राष्ट्र के निर्माण व विकास की मानवीय ऊर्जा का एक बड़ा शक्तिशाली स्त्रोत हैं, एवं ये भारत के सामाजिक व आर्थिक भविष्य के भी निर्माता है। किन्तु दुर्भाग्यवश इन बालकों की इस बड़ी जनसंख्या का एक प्रमुख भाग अनाथ, असहाय एवं तिरस्कृत तथा नकारे गए बालकों का है एवं देश के बढ़ते हुए शहरीकरण व पाश्चात्यकरण से इन बालकों की संख्या बढ़ती जा रही है। यदि हम मानवता के इतने बड़े भाग को नकारते हैं, तो देश के भविष्य के लिए अनेक समस्याओं उत्पन्न हो जाएगी। अत: समाज के लोगों में इन बालकों के पूर्ण विकास के लिए अपने कर्त्ताव्यों को निभने व उपलब्धि हेतु अभिप्रेरित करने में यह अध्ययन महत्वपूर्ण हैं क्योंकि आज का बालक ही कल के राष्ट्र का भविष्य है। देश के उज्ज्वल भविष्य के लिए इच्छित युवाओं के निर्माण की नींव बचपन में ही रखी जाती हैं किन्तु प्रारंभिक काल में तरूण पौधा ही झुका होगा तो पेड़ कैसे सीधा खड़ा रहेगा।

अनेक सामाजिक स्वयंसेवी संस्थाए, राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं पर से वंचित/तिरस्कृत/नकारे गए/असहाय बालकों की देखभाल कर रहीं हैं, इनमें प्रमुख एस.ओ.एस. बालग्राम संस्था है, जो भारत में ही नहीं वरन् संपूर्ण विश्व की उन आत्माओं की रक्षा करने के लिए प्रयत्नशील है, जो बाल्यकाल से स्वजनों के सानिध्य व दुलार से वंचित है। जिससे ये बालक भी अपनी शक्ति की संभावना का पूर्ण विकास कर सके। बालक के जीवन से सम्बन्धित सभी आयामों के पूर्ण विकास में संख्या द्वारा प्रदत्त पारिवारिक वातावरण प्रमुख है।

समस्या अभिकथन – प्रस्तुत अध्ययन द्वारा शोधकत्री यह जानना चाहती हैं कि एस.ओ.एस. बालग्राम संस्था द्वारा प्रदत्ता पारिवारिक किस हद तक सामान्य परिवारों में शिक्षा के प्राथमिक बालकों के अनौपचारिक अभिकरण की भूमिका निभा रहा है। एस.ओ.एस. बालग्रोम के जीवन के विभिन्न आयामों (अन्नत: पारस्परिक सम्बन्ध) के विकास पर कैसा प्रभाव पड़ता हैं ? का अध्ययन करने हेतु शोधकर्त्री ने निम्नलिखित शोध विषय का चयन किया – एस.ओ.एस. बालग्राम के बालकों की पालन पोषण पद्धति का उनके जीवन के विभिन्न आयामों (अन्नत: पारस्परिक सम्बन्ध) पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन।

शोध के उद्देश्य :

1. एस.ओ.एस. बालग्राम के बालकों की पालन पोषण पद्धति का उनके अनन्त: पारस्परिक सम्बन्धों पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।

शोध की परिकल्पनायें – प्रस्तुत शोध की समस्या हेतु निम्नलिखित परिकल्पनाएँ निर्धारित की गई हैं :

1. सम्प्रत्यात्मक
2. क्रियात्मक

सम्प्रत्यात्मक प्राकल्पना – एस.ओ.एस. बालग्राम (संस्थागत) व सामान्य परिवार के बालकों की पालन पोषण पद्धति का उनके अन्त: पारस्परिक सम्बन्धों के विकास पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।

क्रियात्मक 1.1 – संस्थागत व सामान्य परिवारों के बालकों के अन्त: पारस्परिक सम्बन्धों पर प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अन्तर नहीं है।

क्रियात्मक 1.2 – एस.ओ.एस. बालग्राम (संस्थागत) व सामान्य परिवारों के बालकों के अन्त: पारस्परिक सम्बन्धों की विचलनशीलता में सार्थक अन्तर नहीं है।

1. सम्प्रत्यामकता प्राकल्पना :– सामान्य परिवारों के बालकों की पालन पोषण पद्धति का उनके अन्त: पारस्परिक सम्बन्धों के विकास पर लिंग भेद के कारण सार्थक प्रभाव पड़ता है।

क्रियात्मक 2.1 – सामान्य परिवारों के लड़के लड़कियों के अन्त: पारस्परिक सम्बन्धों पर प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अन्तर नहीं है।

क्रियात्मक 2.2 – सामान्य परिवारों के लड़के लड़कियों के अन्त: पारस्परिक सम्बन्धों की विचलनशीलताओं में सार्थक अन्तर नहीं है।

सम्प्रत्यात्मक प्राकल्पना :– एस.ओ.एस. बालग्राम के बालकों के पालनपोषण पद्धति का उनके अन्त: पारस्परिक सम्बन्धों विसि के पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।

क्रियात्मक 3.1 – एसओएस बालग्राम के लड़के लड़कियों के अन्त: पारस्परिक सम्बन्धों पर प्राप्तांको के मध्यमानों में सार्थक अन्तर नहीं है।

क्रियात्मक 3.2 – एसओएस बालग्राम के लड़के लड़कियों के अन्त: पारस्परिक सम्बन्धों की विचलनशीलताओं में सार्थक अन्तर नहीं है।

सम्प्रत्यात्मकता प्राकल्पना :– एसओएस बालग्राम व सामान्य परिवारों

* डायरेक्टर, दीपशिखा कॉलेज ऑफ टेक्नीकल एजुकेशन, जयपुर (राज.) भारत

के लड़कों की पालन पोषण पद्धति का उनके अन्त: पारस्परिक सम्बन्धों के विकास पर सार्थक प्रभाव पडता है।

क्रियात्मक 4.1 – एसओएस बालग्राम व सामान्य परिवारों के लड़कों के अन्त: पारस्परिक सम्बन्धों पर प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अन्तर नहीं है।

क्रियात्मक 4.2 – एस.ओ.एस. बालग्राम व सामान्य परिवारों के लड़कों के अन्त: पारस्परिक सम्बन्धों की विचलनशीलता में सार्थक अन्तर नहीं है।

1. सम्प्रत्यात्मक प्राकल्पना :- एस.ओ.एस. बालग्राम व सामान्य परिवारों की लड़कियों की पालन पोषणपद्धति का उनके अन्त: पारस्परिक सम्बन्धों के विकास पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।

2. क्रियात्मक 5.1 :- एस.ओ.एस. बालग्राम सामान्य परिवारों की लड़कियों के अन्त: पारस्परिक सम्बन्धों पर प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अन्तर नहीं है।

3. क्रियात्मक 5.3 :- एस.ओ.एस. बालग्राम व सामान्य परिवारों की लड़कियों के अन्त: पारस्परिक सम्बन्धों की विचलनशीलताओं में सार्थकत अन्तर नहीं हैं।

अनुसंधान की विधि :- अनुसंधान समस्या की प्रकृति तथा प्रस्तावित उद्देश्यों के स्वरूप को देखते हुए शोधकर्त्री द्वारा सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया हैं। भारत में एस.ओ.एस. बालग्राम की 32 संस्थायें कार्यरत हैं, जिसमें बालकों की जनसंख्या लगभग 2,00,000 हैं। शोधकर्त्री के लिए सम्पूर्ण जनसंख्या का अध्ययन करना संभव नहीं था। इसलिए दिल्ली व जयपुर (उत्तरप्रदेश) के एस.ओ.एस. व दो सामान्य राजकीय विद्यालय जयपुर, राजस्थान के बालकों को सद्देश्य न्यादर्श विधि द्वारा 269 लड़कों व लड़कियों को अध्ययन हेतु न्यादर्श में चुना हैं, जिनकी आयु 12 से 18 वर्ष हैं।

प्रस्तुत शोध में लिए जाने वाले न्यादर्श का स्वरूप निम्न प्रकार निर्धारित किया गया हैं

न्यादर्श का सारणीयन निम्न प्रकार हैं –

क्र.	संस्था का नाम	लड़के	लड़कियों	कुल
1.	एस.ओ.एस. बालग्राम, जयपुर	15	40	55
2.	एस.ओ.एस. बालग्राम, दिल्ली (बयाना)	25	56	81
3.	पं. दीनदयाल उपाध्याय रथखाना, जयपुर	70		70
4.	बालिका राजकीय विद्यालय, बनीपार्क, जयपुर		63	63
	कुल	110	159	269

प्रयुक्त उपकरण :-

अन्त: पारस्परिक मूल्यों के मापन हेतु – डॉ. लूनार्ड वी. गार्डन द्वारा निर्मित पारस्परिक मूल्य मापनी।

प्रयुक्त सांख्यिकी – प्रस्तुत अध्ययन से सम्बन्धित परीक्षणों का विधिवत् प्रशासन करके विश्लेषण किया गया है। अध्ययन में प्रयुक्त की गई सांख्यिकी इस प्रकार हैं –

1. मध्यमान 2. टी अनुपात परीक्षण
3. एफ रेशा

अध्ययन की परिसीमाए :

1. वर्तमान अध्ययन हेतु भारत के उत्तर, पश्चिम, पूर्व, दक्षिण में से केवल उत्तर क्षेत्रीय (दिल्ली व जयपुर के) एस.ओ.एस. बालग्राम को ही चुना हैं।
2. केवल जयपुर के 2 राजकीय विद्यालयों के लड़के व लड़कियों को ही न्यादर्श में सम्मिलित किया है।
3. पर्याप्त संख्या में बालक उपलब्ध न होने के कारण न्यादर्श में 269 बालकों का ही चयन किया गया।
4. एसओएस बालग्राम में लड़कों की संख्या व उपस्थित कम होने के कारण न्यादर्श में अधिक लड़कियों को सम्मिलित किया गया।
5. न्यादर्श में 12 से 18 वर्ष के बालकों का ही चयन किया गया हैं।
6. अध्ययन में केवल अन्त: पारस्परिक सम्बन्धों को ही लिया गया हैं।
7. बालकों का पालन पोषण करने वाली अनेक संस्थाओं में से केवल एसओएस बालग्राम संस्था को ही अध्ययन हेतु चुना गया है।
8. एसओएस बालग्राम के लड़के व लड़कियों का केवल सामान्य परिवारों में परिवरिश पाने वाले लड़के व लड़कियों से ही तुलनात्मक अध्ययन किया हैं।

शोध के निष्कर्ष – शोधकर्त्री द्वारा अपने उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए बनाई गई है। परिकल्पनाओं के आधार पर निम्न निष्कर्ष प्राप्त हुए –

सम्प्रत्यात्मक परिकल्पना 1 – एसओएस बालग्राम (संस्थागत) व सामान्य परिवार के बालकों की पालन पोषण पद्धति का उनके अन्त: पारस्परिक सम्बन्धों के विकास पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।

भिन्न परिवारों की पालन पोषण पद्धति का उनके बालकों के अन्त: पारस्परिक सम्बन्धों के विकास पर प्रभाव का अध्ययन करने के लिए दो नकारात्मक क्रियात्मक परिकल्पना 1.1 व 1.2 का प्रयोग किया जो अस्वीकृत हुई है। इससे यह निष्कर्ष निकलता हैं कि एसओएस बालग्राम व सामान्य परिवारों की पालन पोषण पद्धति उनके बालकों की अन्त: पारस्परिक सम्बन्धों के विकास को प्रभावित करती है। सामान्य बालकों में स्वतंत्रता, नेतृत्व, समाज स्वीकारोक्ति व अभिभावक स्वीकृति अधिक है। जबकि एसओएस बालक अधिक अनुरूपवादी हैं। इसका अभिप्राय यह हैं कि एसओएस बालग्राम के परिवारों का लगभग समान वातावरण हैं जिनमें बालकों को सामाजिक अनत: क्रिया के अवसरों की कमी हैं और संस्था के नियम व परम्परा के पालन में भी कठोरता हैं।

सम्प्रत्यात्मकता परिकल्पना 2 – सामान्य परिवारों के बालकों की पालन पोषण पद्धति का उनके अन्नत: पारस्परिक सम्बन्धों के विकास पर लिंगभेद के कारण सार्थक प्रभाव पड़ता है।

प्रकृति प्रदत्ता परिवारों की पालन पोषण पद्धति का उनके अन्नत: पारस्परिक सम्बन्धों के विकास पर प्रभाव का अध्ययन करने के लिए दो नकारात्मक क्रियात्मक परिकल्पना 2.1 व 2.2 का प्रयोग किया है, जो अस्वीकृत हुई है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि परिवारों के पालन पोषण पद्धति बालकों के अन्नत: पारस्परिक सम्बन्धों के विकास को लिंगभेद के कारण प्रभावित करती हैं। लड़कों में नेतृत्व गुणों का अधिक विकास है। जबकि लड़कियाँ अनुरूपवादी अधिक है। अर्थात् परिवारों में लड़कों को अपेक्षाकृत अधिक स्वतंत्रता व नेतृत्व के अवसर प्राप्त हो रहे हैं।

सम्प्रत्यात्मक परिकल्पना 3 – संस्थागत परिवारों के बालकों की पालन पोषण पद्धति का लिंगभेद के कारण उनके अन्नत: पारस्परिक सम्बन्धों के विकास पर लिंगभेद के कारण पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करने के लिए दो नकारात्मक क्रियात्मक परिकल्पना 3.1 व 3.2 का प्रयोग किया हैं जिसमें परिकल्पना 3.1 स्वीकृत एवं 3.2 अस्वीकृत हुई है।

इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि एसओएस बालग्राम की पालन पोषण पद्धति बालकों के अन्नत: पारस्परिक सम्बन्धों के उनके लिंगभेद के कारण प्रभावित नहीं करती। इसका अभिप्राय यह है कि बालग्राम के लगभग सभी घरों में आपसी सम्बन्धों के विकास के लिए लगभग समान पारिवारिक वातावरण हैं अर्थात् सभी एसओएस बालग्राम में बालकों को समान संस्था के नियम व माँ एवं निर्देशकों की अनुपालना व अनुरूपता प्राप्त हैं और सभी बालकों को समान सामाजिक अन्नत: क्रिया के अवसर प्रदान किए जाते हैं। एसओएस लड़कियों के अन्नत: पारस्परिक सम्बन्धों के विकास में अपेक्षाकृत अधिक विचलनशीलता संभवत: उनके व्यक्तिगत पारस्परिक मूल्यों व परिवार में माँ की उनके (गुणों) के प्रति मान्यता व दृष्टिकोणें में भिन्नता के कारण ही हैं।

सम्प्रत्यात्मकता परिकल्पना 4 – एसओएस बालग्राम व सामान्य परिवारों के लड़कों की पालन पोषण पद्धति का उनके बालकों के अन्नत: पारस्परिक सम्बन्धों के विकास पर प्रभाव का अध्ययन करने के लिए दो नकारात्मक क्रियात्मक परिकल्पना 4.1 व 4.2 का प्रयोग किया हैं, जो अस्वीकृत हुई है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि एसओएस बालग्राम की पालन पोषण पद्धति उनके लड़को के अन्नत: पारस्परिक सम्बन्धों के विकास को प्रभावित करती हैं अर्थात् एसओएस बालग्राम के बालकों में आपसी सम्बन्धों का विकास अपेक्षात्मक कम हैं, इससे ऐसा प्रतीत होता हैं कि एसओएस बालकों को सामाजिक अन्न्त: क्रिया के अवसर भी कम उपलब्ध है एवं सामाजिक व अभिभावक स्वीकृति भी समुचित नहीं

सम्प्रत्यात्मक परिकल्पना 5 – एसओएस बालग्राम व सामान्य परिवारों की लड़कियों की पालन पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।सामान्य परिवार व एसओएस परिवारों की पालन पोषण पद्धति का लड़कियों के अन्नत: पारस्परिक सम्बन्धों के विकास पर प्रभाव का अध्यन करने के लिये दो नकारात्मक क्रियात्मक परिकल्पना 5.1 व 5.2 का प्रयोग किया हैं, जो अस्वीकृत हुई है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि सामान्य परिवार व एसओएस बालग्राम की पालन पोषण पद्धति उनकी लड़कियों के अन्नत: पारस्परिक सम्बन्धों के विकास को प्रभावित करती हैं, अर्थात् सामान्य परिवार की लड़कियों में आपसी सम्बन्धों का विकास अपेक्षाकृत उच्च स्तरीय है। इससे ऐसी प्रतीत होता है, बालग्राम के परिवारों की लड़कियों को सामाजिक अन्नत है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

चर प्रस्तुत अध्ययन में निम्नलिखित स्वतंत्र व आश्रित चर हैं

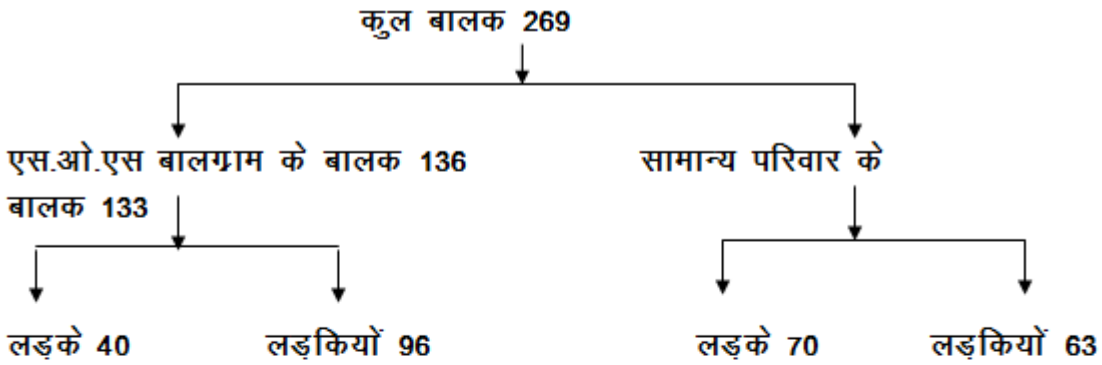

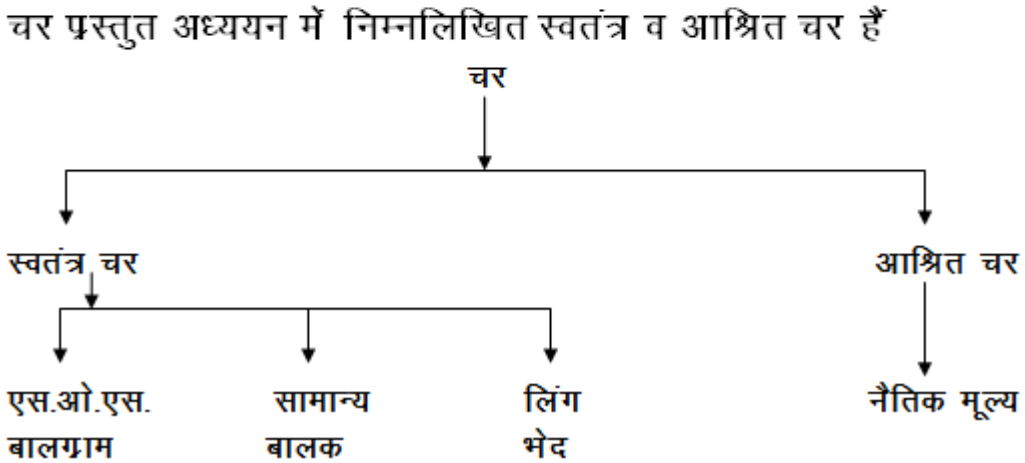

****

श्रीमद्भगवद्गीता में निहित मानव की व्यवसायात्मिका बुद्धि की वर्तमान में प्रासंगिकता का अध्ययन

लक्ष्मी चौहान *

प्रस्तावना – भगवान श्री कृष्ण 'श्रीमद्भगवद् गीता' के द्वितीय अध्याय में 'व्यावसायात्मिका बुद्धि' निरुपित करते हुए कहते है :-

'व्यावसायित्मका बुद्धिरेकेह कुरूनन्दन।
बहुशाखा ह्यनन्तश्च बुद्धयोऽव्यवसायिनाम।।
(अध्याय-2/1)

हे अर्जुन! – इस कर्मयोग में निश्चयात्मिका बुद्धि एक ही होती है, किन्तु अस्थिर विचार वाले विवेकहीन संकाम मनुष्यों की बुद्धि निश्चय ही बहुभेदों वाली और अनन्त होती है।

'श्रीमदभगवद् गीता'' के सन्दर्भ में महाभारत में दो ही पात्र महत्वपूर्ण है – महारथी, महायोगी श्री कृष्ण और मनुष्यों में श्रेष्ठ कौन्तेय, पार्थ, धनुर्धर अर्जुन। व्यावसायित्मका बुद्धि के सन्दर्भ में महाभारत का संशयग्रस्त अर्जुन, द्रौण शिष्य के रूप में अपने लक्ष्य संधान में कितना दृढ़ निश्चयी और स्पष्टदर्शी है। वह केवल अपने लक्ष्य पर दृष्टि केन्द्रित करता है। पुन: श्रीकृष्ण उसे इसी निश्चयात्मिका बुद्धि की ओर आमन्त्रित करते है और धनुर्धारण करने का आह्वान करते है।

आध्यात्मिक दृष्टिकोण पर आधारित व्याख्याएँ – गीता को प्रस्थानत्रयी अर्थात् वैदिक प्रस्थान, दार्शनिक प्रस्थान एवम् स्मृति प्रस्थान में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। इस पर सभी सम्प्रदायों के आचार्यो ने अपनी टीकाएँ दी हैं जिसमें से प्रमुख है – शंकराचार्य जी की टीका, रामनुजाचार्य जी की टीका, वल्लभाचार्य जी की टीका एवम् माधवाचार्य जी की टीका। इनमें श्री शंकरभाष्य एवम् रामानुजाचार्य भाष्य लोकप्रिय एवम् विश्व प्रसिद्ध है। स्वामी मधुसूदन की टीका भी उल्लेखनीय है।

भगवान आद्य जगद्गुरु शंकराचार्य की टीका इस समय विद्यमान टीकाओं में सबसे प्राचीन मानी जाती है। महान् आध्यात्मवादी एवं अद्वैतवादी दार्शनिक तथा ''ब्रह्म सत्यं जगत मिथ्या'', 'अहं ब्रह्मास्मि'', 'जीवो ब्रह्मैवनापर:'' के समर्थक श्री शंकराचार्य के अनुसार गीता का उपदेश है इस बाह्य संसार को मिथ्या मानते हुए एक मात्र परम् बह्म को सत्य मानकर उसी की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करना। श्री शंकराचार्य का मत है कि गीता जहाँ मन को शुद्ध करने के लिए साधन के रूप में है वहाँ कर्म अत्यन्त आवश्यक है, किन्तु ज्ञान प्राप्त होने पर कर्म दूर छूट जाता है। ज्ञान और कर्म एक-दूसरे के ठीक वैसे ही विरोधी है, जैसे प्रकाश और अन्धकार। वे 'ज्ञान कर्म समुच्चय' के दृष्टिकोण को स्वीकार नहीं करते। उनके मतानुसार गीता हमें बन्धनों से छूटने का उपाय सिखाती है। केवल धर्म करने की ही प्रेरणा नहीं देती वरन् अन्ततोगत्वा ज्ञान ओर सन्यास का मार्ग ही मोक्ष प्राप्ति हेतु उपयोगी है।

सामाजिक दृष्टिकोण पर आधारित व्याख्याएँ – अनेक महापुरूषों ने गीता को अपने जीवन में अपनाकर एवं कर्मयोग से सामाजिक क्रांति कर गीता को सामाजिक हित वाली मानकर वैसी ही टीकाएँ लिखी हैं। जिनमें बालगंगाधर तिलक की टीका जीवन को रणक्षेत्र मानकर उसमें कूदने के लिये प्रेरित करती प्रसिद्ध टीका – 'गीता रहस्य' है, तो वहीं दूसरी ओर वैराग्य से परिपूर्ण श्री अरविन्दो की टीका – 'एस्सेज ऑन गीता'' एक क्रान्तिकारी टीका है। इसके साथ-साथ गांधी जी की अनासक्ति प्रधान गीता व्याख्या, स्वामी विवेकानन्द की ओजस्विनी वाणी से ओतप्रोत गीता साहित्य तथा डॉ. राधाकृष्णन के गीता पर लेख, गीता के सामाजिक पक्ष को समृद्ध करती अनेकानेक कृतियाँ हैं।

लोकमान्य तिलक अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'गीता-रहस्य'' में गीता को उपयोगी बताते हुए कहते है कि यह एक नैतिक ग्रन्थ है। गीता में कर्म की प्रधानता है। उनका मत है कि हमारी सामाजिक समस्याओं का समाधान श्रीकृष्ण के सन्देश में ही अन्तर्निहित है। 'गीता-रहस्य'' में उन्होंने कहा है कि गीता में जिस सिद्धान्त का प्रतिपादन हुआ है, उसका सम्बन्ध समाज की यथार्थ समस्याओं से है और ज्ञान तथा भक्ति उनका मुख्य विषय न होकर कर्म ही मुख्य विषय है।

शैक्षिक एवम् मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण पर आधारित व्याख्याएँ – इस क्षेत्र में भी अनेक विचारकों ने गीता पर अपनी व्याख्याएँ प्रस्तुत की हैं। इसमें सर्वप्रथम नाम आता है – आचार्य विनोबा भावे, का उनकी 1932ई. में प्रकाशित 'गीता प्रवचन'' ने समाज में वैचारिक क्रान्ति उत्पन्न कर दी। गीता पर इतनी शैक्षिक एवम् सहज मनोवैज्ञानिक व्याख्या अन्यत्र कहीं भी उपलब्ध नहीं है। स्वामी अखण्डानन्द सरस्वती ने भी गीता दर्शन (भाग-7), 'गीता व मानव धर्म'' आदि पुस्तकों में अत्यन्त सुन्दर शैली में गीता की शैक्षिक व्याख्याएँ प्रस्तुत की हैं।

भगवत के प्रभावशाली व्याख्याकार पं. रामचन्द्र डोगरे की पुस्तक 'श्रीमद्भगवत रहस्य'' भी प्रतीकात्मक मनोविज्ञान पर आधारित है। उन्होंने भागवद के विचारों एवं सिद्धान्तों को मानव जीवन से जोड़ा तथा मनोविज्ञान की ओर मोड़ा है।

शोध अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्त्व – महर्षि वेद व्यास द्वारा रचित विश्व की महानतम् काव्य रचना 'महाभारत'' के भीष्म पर्व की अंग स्वरूपा 'श्रीमद्भगवद गीता'' सचमुच एक कालजयी कृति है। कालजयी कृति मनुष्य जीवन और वैश्विक जीवन के सम्बन्धों – अन्तर्सम्बन्धों के परिप्रेक्ष्य में नवीन प्रश्न उठाती है और युगीन सन्दर्भो में अपनी प्रासंगिकता को अक्षुण्ण बनाए रखती है। 'श्रीमद्भगवद गीता'' का सौन्दर्य इस तथ्य में निहित है कि वह जीवन पलायन या विमुख होने का स्वर अनुगूंजित नहीं करती अपितु जीवन और कर्म के संग्राम में एक निष्काम कर्म यौद्धा की तरह कार्यरत होने का आव्हान देती है।

* शोधार्थी (शिक्षा) पेसिफिक यूनिवर्सिटी, उदयपुर (राज.) भारत

मुक्त खइगेडनहंवादी धृत्सुत्साह समन्वित:।
सिद्धयसिद्धयो र्निविकार: कर्त्ता सात्विक उच्चयते।।
(अध्याय-2-श्लोक-41)

श्रीकृष्ण कहते है - 'कोई भी मनुष्य इस संसार से विमुख होकर पूर्णता को प्राप्त नहीं कर सकता।'' आसक्ति से रहित, अहंभाव से हीन, धैर्य तथा शक्तियुक्त और कार्यसिद्ध होने तथा न होने में हर्ष शोक आदि विकारों से रहित कर्मशील व्यक्ति ही सात्विक व्यक्ति कहा जाता है।

यह सच है कि 'श्रीमद्भगवद गीता'' कर्म, ज्ञान, भक्ति मार्ग की त्रिवेणी है और भिन्न-भिन्न कालखण्डों में इसे अनुपम कृति में भिन्न-भिन्न दार्शनिकों, चिन्तकों और कर्मयौद्धाओं की चिन्तन धाराओं को ध्वनित और अनुप्राणित किया है। शंकराचार्य ज्ञान मार्ग की महत्ताा को सर्वाधिक स्वीकार करते है। रामानुज और रामानन्द भक्ति मार्ग को, तिलक और गांधी कर्म मार्ग को अधिक महत्वपूर्ण बताते है। स्वामी विवेकानन्द उसके आध्यात्मिक दक्ष को प्रस्तुत करते है।

स्वामी विवेकानन्द जी के शब्दों में - 'उपनिषदों से संगृहित आध्यात्मिक सत्यों के मनोरम पुष्पों का सुन्दर पुष्प गुच्छा'' 'श्रीमद्भगवद गीता है।''

शोध अनुसंधान का औचित्य विवेक की दृष्टि से - सम्पूर्ण जगत में मानव की रचना अद्धितीय एवं अद्भूत है। सभी जीवों में न्यूनाधिक कर्मशक्ति विद्यमान है। भाव शक्ति भी सभी को प्राप्त है। परन्तु विवेकशक्ति मानव मात्र को ही प्रदत्त है। इन तीनों का सामन्जस्य करना मानव की सामर्थ्य है, जिससे वह निर्भिक, नि:शंक, निर्विकार तथा निश्चिन्त होकर अपने रचयिता को प्रेम प्रदान करता हुआ उससे अभिन्न हो जाता है। शोक सभी विकारों का मूल है। प्राणी जब इस नश्वर जगत में आता है तो जगत के विविध पदार्थ, जीव को आकर्षित करते हैं। वह आकर्षण ही जीवन की असक्ति है। आसक्ति से काम, वासना, मोह की उत्तपत्ति होती है, विवेक ही इस पर नियन्त्रण कर सकता है।

पारिभाषिक शब्दों की व्याख्या - प्रस्तुत शोध अध्ययन के परिप्रेक्ष्य में निम्नलिखित शब्दों को प्रयुक्त किया जाना है -

1. श्रीमद्भवद्गीता-श्रीमद्भवद्गीता का शाब्दिक अर्थ है - श्रीमद् + गीता, श्रीमद् का अर्थ, सम्माननीय, शोभायुक्त। भगवद् का अर्थ है, भगवान धर्म एवं श्रीयुक्त तथा गीता का अर्थ है - गीत रूप में संबद्ध। तदानुसार मानव के चारों पक्षों धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के लिए कहा गया अद्भूत आलोकिक ज्ञान ही श्रीमद्भवद्गीता है।
2. कर्मयोग - कर्मयोग का शाब्दिक अर्थ है - कर्म + योग। कर्म का अर्थ - काम, कार्य, कर्त्ताव्य। योग का अर्थ है - समत्व की प्राप्ति अर्थात् सिद्धि और असिद्धि, सफलता और विफलता में समभाव रखना अर्थात् ऐसे कार्य जो समभाव से निष्काम रूप से किए जाए, वही कर्म योग है।
3. व्यावसायात्मिका बुद्धि - संस्कृत में बुद्धि शब्द के अनेक अर्थ है। यह शब्द ज्ञान के अर्थ में आया है। इस 'बुद्धि'' शब्द का ही 'समझ, इच्छा, वासना या हेतु' अर्थ है परन्तु बुद्धि शब्द के पीछे 'व्यावसायात्मिका'' विशेषण है। इसलिये इस श्लोक के पूर्वाध में उसी शब्द का अर्थ इस तरह होता हैं। व्यवसाय अर्थात् कार्य-अकार्य का निश्चय करने वाली बुद्धि - इन्द्रिय। भेद दिखलाना ही आवश्यक हो तो वासनात्मक बुद्धि कहते है। व्यावसायात्मक बुद्धि के स्थिर या एकाग्र न रहने से प्रतिदिन भिन्न-भिन्न वासनाओं से मन व्यग्र हो जाता है ; और मनुष्य ऐसे अनेक झंझटों में पड़ जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रजनीश आचार्य 'गीता दर्शन'' सम्पादन चिन्मय सत्यार्थी, ओशो इन्टरनेशनल फाउण्डेशन (2003)।
2. गोयन्दका श्री हरिकृष्णदास 'श्रीमदभगवद्गीता शंकर भाष्य'' गीता प्रेस गोरखपुर (1999)।
3. गोयन्दका श्री हरिकृष्णदास 'श्रीमदभगवद्गीता रामानुज भाष्य'' गीता प्रेस गोरखपुर (2001)।
4. Bhandari, Rohit (2014) "Vocational Maturity of senior secondary school students in relation to their family environment".
5. LingZay, TenZin (2014) "A comparative study of the vocational interest of the students of Arts, Science and Commerce studying at graduation level with special reference to bareilly city".
6. Thakor, Hina, P. (2015) "A study of vocational interest of higher secondary school student in context of some variables. Kadi Sarvavishwa Vidhyalaya.

****

मानव अधिकार शिक्षा: आवश्यकता एवं विवेचन

गिरधारीलाल भालसे * शोभाराम सोलंकी **

शोध सारांश – विश्व जहाँ एक ओर 21 वीं सदी में प्रवेश करके विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी में निरंतर बढ़ोतरी हासिल कर रहा है, वहीं दूसरी ओर गरीबी, तनाव, शोषण, अलगाव, अज्ञानता, युद्ध का डर, अशान्ति, स्वतंत्रता का हनन, और सामाजिक न्याय पर कुठाराघात जैसी अनेक समस्याएँ चुनौती बन रही है। इस चुनौती का सामना कैसे किया जाए? यह प्रश्न सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। यूनेस्को ने अपनी सिफारिशों एवं क्रिया–कलापों द्वारा मानव अधिकार शिक्षा के संवर्द्धन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की गई है। 1924 में यूनेस्को ने इस सम्बन्ध में मुख्य बात यह कही कि शिक्षा अन्तर्राष्ट्रीय समझ, सहयोग एवं शान्ति के लिए हो तथा आधारभूत स्वतंत्रता एवं मानव अधिकार से सम्बन्धित हो।

प्रस्तावना – वश्व में आज आपसी समझ के विकास की आवश्यकता है, ताकि दूसरे के प्रति उत्तरदायित्व निभा सके। वास्तव में प्रत्येक व्यक्ति को भावी समाज एवं अपने जीवन को आगे बढ़ाने में अपनी बात कहने का अधिकार है और रहेगाा। शिक्षा नीति में भी व्यक्तिगत भिन्नता के आधाार पर शिक्षा प्राप्त करने हेतु बालकों को प्रोत्साहित करना चाहिए। शिक्षा द्वारा व्यक्ति में साथ–साथ रहने की इच्छा का पोषण होना चाहिए। **डेलर आयोग** के अनुसार जानकारी का प्रसार हो रहा है, परन्तु ज्ञान की शक्ति क्षीण हो रही है। इनके बीच की खाई को पाटना होगा, ताकि भयानक त्रासदी को रोकने के लिए वर्तमान प्रवृत्तियों का रूख बदला जा सके।

मानव अधिकार शिक्षा से तात्पर्य – वह शिक्षा जो मानव को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक कराती है तथा सही जीवन जीने की कला सिखाती है, वहीं मानव अधिकार शिक्षा है। मानव अधिकार शिक्षा सम्बन्धी **मुख्य बिन्दु–**शिक्षा को मानव अधिकारों की श्रेणी में लिया गया है संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर के अनुच्छेद–26 में निम्न बिन्दुओं के अनुसार विवेचन किया गया है।

1. प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा का अधिकार है। यह शिक्षा प्रारम्भिक एवं बुनियादी अवस्था में अनिवार्य एवं नि:शुल्क होगी।
2. शिक्षा का उद्देश्य मानव व्यक्तित्व का पूर्ण विकास तथा मानव अधिकारों एवं बुनियादी स्वायत्तताओं के प्रति सम्मान रहेगा।
3. मानव अधिकार शिक्षा, नीति निर्धारकों एवं क्रियान्वयन करने वालों के समक्ष शिक्षा व्यवस्था के लक्ष्य प्रस्तुत कर सकेगी, जिससे शिक्षा के परिणाम सभी को प्रभावित कर सकेंगे।
4. मानव अधिकार शिक्षा द्वारा समूची मानवता के लिए विज्ञान एवं संस्कृति के संरक्षण तथा प्रसार के माध्यम से प्रगति और सहयोग प्राप्त हो सकेगा।
5. इस शिक्षा से जिम्मेदारी,शांति, धैर्य और साहस का प्रादुर्भाव हो सकेगा। जिससे हमारे चारों ओर व्याप्त तनाव को दूर करने में मदद मिलेगी। इन्हीं तनावों को डेलर आयोग ने 21वीं सदी का केन्द्र बिन्दु माना है।
6. मानव अधिकार शिक्षा लोगों के मानवीय पक्ष की चारित्रिक विशेषताओं को उभारने में मदद करेगी, जिससे विश्व नागरिकता के निर्माण में सहयोग मिल सकेगा।
7. आधारभूत मानवीय शिक्षा बच्चों को अपने जीवन में ज्ञान, प्रयोग तथा व्यक्तिगत विशेषताओं को विकसित करने में सहयोग दे सकेगी।
8. वर्तमान में खाईयाँ पैदा करने वाली प्रवृत्तियाँ, हिंसा और जातीय स्पर्धा मानव अधिकार शिक्षा में सम्मिलित की जा सकती है। साथ–साथ रहना सीखने से व्यक्ति, समूह, समुदाय एवं समुदाय एवं समाज परस्पर के झगड़े से बचेंगे। शिक्षा का यही एक विशेष पक्ष होगा । जो झगड़े को रोकने तथा हल करने के उपाय सीखा सकेगा।

मानव अधिकार एवं पाठ्यक्रम– विद्यालयीन शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर मानव अधिकार शिक्षा को विभिन्न विषयों में समाहित किया गया है। इसके अन्तर्गत एक विशिष्टि विषय का अध्ययन विषिष्ट रूप में नहीं कराया जाकर मानव अधिकार शिक्षा के विभिन्न घटकों को शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकों में डाला गया है। जो घटक सम्मिलित किए गए हैं उसमें वर्तमान भारतीय जीवन के विभिन्न क्षेत्र तथा राजनीति, अर्थ तंत्र, समाज, संस्कृति सम्बन्धी चुनौतियां एवं समस्याएं है। शैक्षणिक संस्थानों के पाठ्यक्रमों में भारतीय संविधान में वर्णित मौलिक अधिकार, कर्त्तव्य, सबके लिए शिक्षा, अनुसूचित जाति–जनजाति की प्रमुख समस्याएं, समाज में नारी का स्थान, समाज और बालक के अधिकार, विश्व राष्ट्रों की पारस्परिक अन्तर्निभरता, सहयोग तथा सहअस्तित्व की आवश्यकता, मानव अधिकार का अर्थ, सार्वजनिक घोषणाएं, रंगभेद नीति तथा मानव अधिकारों की समस्याएं आदि विभिन्न आयामों को सम्मिलित किया गया है। प्राथमिक स्तर पर नागरिकों के अधिकार तथा कर्त्तव्य, संयुक्त राष्ट्र संघ, मानव अधिकार तथा जीवन को सुखी बनाने वाले साधन आदि का समावेष है।

यद्यपि पाठ्यक्रम की अवधारणा एवं उद्देश्यों से ऐसा प्रतीत होता है कि मानवाधिकारों का समावेश उचित मात्रा में हुआ है। किन्तु सत्य यह है कि सामान्यत: एकाकी रूप से प्रस्तुत किया गया है। वर्तमान में मानवअधिकारों

* शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

के एकीकृत रूप से विभिन्न परिस्थितियों को अनुकूल बनाने की आवश्यकता है। धर्मनिरपेक्षता, प्रजातांत्रिक व्यवस्था, राष्ट्रीय एकता, लिंग, समानता, शांति आदि सभी परिवेष में मानव अधिकारों की स्पष्ट रूप से व्याख्या की जानी चाहिए। दैनिक जीवन के उदाहरणों से इसके हनन एवं अनुपालन के उदाहरण दिए जाने चाहिए। वास्तविकता यह है कि मानवअधिकारों के सैद्धांतिक पक्ष को औपचारिकता के साथ बिना जागृति पैदा किए प्रस्तुत कर दिया जाता है और इसके व्यावहारिक पक्ष को गौण समझा जाता है।

सहशैक्षिक गतिविधियों एवं कक्षा के बाहरी क्रियाकलापों में इसकी कमी परिलिक्षित होती है। उन्हें मानवअधिकारों की सामान्य जानकारी हेतु कोई सामग्री तक उपलब्ध नहीं होती है। अत: यह आवश्यक है कि विद्यालय कार्यक्रमों में मानव अधिकार शिक्षा प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में दी जानी चाहिए। क्योंकि शिक्षा ही मानव मानवअधिकारों की प्रथम न्यास है, इसलिए शिक्षा युक्त समस्त कार्यकृमों में मानवअधिकारों का दृष्टिकोण दृष्टिगत होना नितान्त आवश्यक है। भारत सरकार के निर्देश पर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा देश के विश्वविद्यालयों में इस दिशा में कार्य करना सफलता का द्योतक है। राष्ट्रीय अध्यापक परिषद् (NCTE) व राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रषिक्षण परिषद् (NCERT) द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर मानव अधिकार शिक्षा के प्रति जागरूकता लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई जा रही है।

उपसंहार–हमारे देश की जनतांत्रिक शिक्षा व्यवस्था में मनुष्य को अधिकारों के हनन से जागरूक करना तथा कर्त्तव्यों से अवगत कराना सर्वाधिक जरूरी है। आज राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर निरन्तर मानव अधिकारों का उल्लंघन हो रहा है। हिंसा, तोड़फोड़, आगजनी, आतंक, उग्रवाद, भृष्टाचार, शोषण एवं एवं अत्याचार जैसी घृणित घटना से मानव समाज को बचाना होगा। 21वीं सदी में वही व्यक्ति आगे बढ़ सकेगा, जिसने सही जीवन जीने की कला सीख ली है। भारत जैसे बहुसंस्कृति वाले राष्ट्र में जहां अनेकानेक जाति, प्रजाति व धर्म के लोग निवास कर रहे हैं, सही जागरूकता लाने में मानव अधिकार शिक्षा ही महत्वपूर्ण दायित्व निभा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जेक्स डेलर–'' लर्निंग द ट्रेजर विदिन,'' यूनेस्को प्रतिवेदन,1996
2. संयुक्त राष्ट्र संघ चार्टर, अनुच्छेद–26
3. राष्ट्रीय अध्यापक परिषद् (NCTE) द्वारा प्रकाषित मॉड्यूल
4. एन सी ई आर टी– हेण्ड बुक ऑन ह्युमन–राईट्स'

****

अनुसंधान उपकरण : साक्षात्कार

डॉ. अनिता भदौरिया *

प्रस्तावना – साक्षात्कार शोध सामग्री के संग्रह का एक सशक्त माध्यम है। साक्षात्कार द्वारा व्यक्ति की आंतरिक स्थिति के विषय में जानकारी प्राप्त की जाती है। यह आमने-सामने बैठे दो व्यक्तियों के बीच शाब्दिक आदान-प्रदान की प्रक्रिया है। जिसमें एक व्यक्ति अर्थात् साक्षात्कारकर्ता द्वारा दूसरे व्यक्ति से कुछ जानकारी प्राप्त करने अथवा उसका अभिमत जानने का प्रयास किया जाता है। व्यक्ति के विषय में जानकारी प्राप्त करने की अर्थात् उसके विचारों, सामाजिक पृष्ठभूमि, आकांक्षाओं, व आन्तरिक तनावों, उसकी प्रेरणा के स्त्रोतों, मान्यताओं, भावनाओं आदि के विषय में जानकारी प्राप्त करने की एक प्रमुख विधि है। इस विधि का प्रयोग व्यवहार विज्ञान के अनेक क्षेत्र में हुआ है। टॉमस तथा जनानैकी का 'दा पौलिष पीजेंट'' तथा एडौरनो का 'दा एथोरिटेरियन पर्सनालिटी'' इसके प्रमुख उदाहरण हैं। स्टौफर का 'दा अमेरिकन सोल्जर'' भी इसी का उदाहरण है। व्यवहार विज्ञानों में साक्षात्कार को अनुसंधानो की एक तकनीक के रूप में स्वीकार किया गया है।

साक्षात्कार के प्रकार –संरचना के दृष्टिकोण से साक्षात्कार के दो प्रकार हैं। प्रथम संरचनायुक्त साक्षात्कार के नाम से जाना जाता है। इस प्रकार के साक्षात्कार में समक्षी से पूछे जाने वाले प्रश्नों का स्वरूप, उनकी संख्या, उनके पूछने का उद्देश्य, साक्षात्कार का समय आदि सब कुछ पूर्व निर्धारित रहता है। प्रश्नों को किस क्रम में पूछा जायेगा यह भी निश्चित रहता है। इसकी सम्पूर्ण कार्यविधि कठोर एवं अपरिवर्तित रहती है। ये साक्षात्कार अधिक वैज्ञानिक होते हैं तथा इसके माध्यम से प्राप्त सूचनाएँ, शोध समस्या तथा उसकी परिकल्पनाओं से संबंधित होती है। सूचनाओं के संग्रह एवं उसकी व्याख्या में आत्मनिष्ठता, तुलनात्मक दृष्टिकोण से कम होती है। इसमें साक्षात्कारकर्ता को सृजनशीलता, कल्पना एवं बौद्धिक क्षमता का रचनात्मक प्रयोग करने का अवसर नहीं मिलता। अत: बहुत सी महत्वपूर्ण संबंधित सूचनाएँ उसके हाथ नहीं लग पातीं और वे केवल सतही ही रह जाते हैं।

संरचनाविहीन साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता पूर्णतया स्वतंत्र होता है, किसी प्रकार के नियम अथवा बंधन उस पर नहीं लगाए जाते। व्यापक रूप में समस्या का सामान्य उद्देश्य उसके सामने रहता है। इस नियंत्रणमुक्त प्रणाली में साक्षात्कारकर्ता ही नहीं समक्षी को भी उत्तर देने की पर्याप्त स्वतंत्रता होती है। वह जो भी चाहे कह सकता है, जितनी देर तक चाहे अपनी बात कह सकता है। साक्षात्कारकर्ता जब देखता है कि अब समक्षी विषय से बहुत हट चुका है, तो उसका ध्यान विषय की ओर मोड़ने हेतु कुछ कह सकता है अथवा प्रश्न पूछ सकता है। इस प्रकार संरचनाविहीन साक्षात्कार की विषयवस्तु, दिशाएँ, उद्देश्य, परिकल्पनाएँ, क्रम, प्रक्रिया, प्रत्युत्तरों का स्वरूप एवं अभिलेखन की विधि आदि पूर्वनिश्चित, कठोर एवं प्रमाणीकृत नहीं होते और न ही उनमें कोई क्रमबद्धता होती है। इस प्रकार के साक्षात्कार में समक्षी को सहज रूप में अपने अनुभवों, अपने विचारों, अपनी मान्यताओं, भावनाओं आदि को खुलकर व्यक्त करने के लिए प्रेरित किया जाता है। यह प्रयास किया जाता है कि समक्षी अपनी मुक्त वार्ता के माध्यम से अपनी अभिरूचियों, अभिव्यक्तियों, प्रबल संवेगों, महत्वपूर्ण घटनाओं की अभिव्यक्ति करे और समस्या संबंधी आवष्यक जानकारी उपलब्ध करा सके ताकि अभ्यांतरिक जगत की विशेषताएँ उजागर हो सकें।

अनिर्देशित साक्षात्कार – इस साक्षात्कार में क्रियाकलाप की दिशाएँ निर्दिष्ट नहीं होतीं और न ही समक्षी पर नियम, नियंत्रण लगाए जाते हैं। इसका उद्देश्य समक्षी के अभ्यांतर में छिपी उन प्रेरणाओं, अज्ञात अभिवृत्तियों, व्यक्तिगत आकांक्षाओं, मानसिक द्वन्दों एवं भय आदि की जानकारी प्राप्त करना होता है, जो उसके व्यवहारों एवं समस्याओं का कारण होती हैं। इस साक्षात्कार के माध्यम से अत्यंत व्यक्तिगत जानकारियाँ एकत्र की जाती हैं। मनोवैज्ञानिक समस्याओं के कारणों को जानने व व्यक्तित्व मूल्यांकन की यह एक महत्वर्णूण विधि है। कार्ल जौजर्स, पियाजे तथा डिक्सन ने अपने सिद्धान्त का प्रतिपादन इसी प्रकार के साक्षात्कारों द्वारा संग्रहित सामग्री के आधार पर किया है। इस साक्षात्कारों के माध्यम से उपलब्ध सामग्री द्वारा नवीन परिकल्पनाओं का निर्माण कर उनका सत्यापन, प्रयोगात्मक आकल्पों द्वारा किया जा सकता है।

केन्द्रीयकृत साक्षात्कार – इस साक्षात्कार का एक केन्द्र बिन्दु होता है, वह सम्पूर्ण क्रिया उसी के आसपास घूमती है। पूर्व निर्धारित लक्ष्य पर साक्षात्कारकर्ता द्वारा अपने ढंग से कार्य करने की स्वतंत्रता इस साक्षात्कार में होती है। इन्हें अर्द्धसंरचनायुक्त साक्षात्कार भी कहा जाता है।

व्यक्तिगत एवं सामूहिक साक्षात्कार– व्यक्तिगत साक्षात्कार की स्थिति में एक समय में केवल एक व्यक्ति का साक्षात्कार किया जाता है। इसके द्वारा व्यक्तिगत जानकारी मिलने की संभावना रहती है व समक्षी सामुहिक साक्षात्कार की तुलना में अधिक आश्वस्त एवं स्वतंत्र महसूस करता है। सामूहिक साक्षात्कार में एक साथ कई व्यक्तियों का साक्षात्कार किया जाता है। इसके द्वारा व्यापक जानकारी प्राप्त होती है परन्तु कभी-कभी एक या दो व्यक्ति समूचे समूह पर छा जाते हैं तथा अन्य लोगों को अपनी अभिव्यक्ति का अवसर नहीं देते।

एक साक्षात्कारकर्ता एवं बहुसाक्षात्कारकर्ता साक्षात्कार – चयन साक्षात्कारों में प्राय: एक से अधिक साक्षात्कारकर्ता होते हैं। ये साक्षात्कारकर्ता अपने-अपने क्षेत्रों में विशेषज्ञ होते हैं। इन साक्षात्कारों की एक बड़ी कठिनाई यह होती है कि साक्षात्कारकर्ताओं के बीच कभी-कभी बहुत अधिक मतभेद होता है और परिणाम असंदिग्ध नहीं हो पाते।

* कॅरियर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

साक्षात्कार की प्रक्रिया – साक्षात्कार एक ऐसी प्रक्रिया है, जो साक्षात्कारकर्ता एवं समक्षी के बीच घटित होती है, जिसके निश्चित उद्देश्य होते है। इस क्रिया के सम्पन्न होने का पदक्रम निम्न है :–

1. साक्षात्कार हेतु तैयारी के लिए सूचनाओं से संबंधित प्रश्नों का निर्माण कर समक्षी के साथ रैपर्ट स्थापित करने हेतु तैयारी करना। समक्षियों के वैयक्तित्व की जानकारी, उसकी रूचियों, मान्यताओं, आर्थिक–सामाजिक पृष्ठभूमि आदि के विषय में जानना, उचित, बैठक व्यवस्था तथा साक्षात्कार के उद्देश्यों एवं परिकल्पनाओं को निष्चित करना।
2. रैपर्ट स्थापित करना अत्यंत आवश्यक है ताकि एवं साक्षात्कारकर्ता के बीच की दूरी कम हो जाए तथा समक्षी का साक्षात्कार के काम और साक्षात्कारकर्ता के साथ तादात्मय स्थापित हो जाये।

साक्षात्कार में संबंधित सूचना प्राप्त करने हेतु पहले सामान्य प्रष्न व बाद में धीरे–धीरे विशिष्ट प्रश्न पूछते हुए समस्या के मूल में आना चाहिए। उत्तरों को ध्यान से सुनते हुए उनके पीछे छिपे भावों एवं संवेगों को समझने का प्रयास किया जाना चाहिए। उत्तर भ्रामक, अस्पष्ट, विरोधाभाषी एवं तथ्यों को छुपाने वाले ना हों। प्रश्न एक सामान्य गति से पूछते हुए आगे बढ़ना चाहिए। पूछे गये प्रश्नों की भाषा सरल एवं प्रभावशाली होनी चाहिए व साक्षात्कारकर्ता के हाव–भाव प्रेरक होने चाहिए। सूचनाओं का अभिलेखन, विश्लेषण एवं निष्कर्षों का आधार होता है। अभिलेखन में व्यवधान उत्पन्न ना हो इसके लिए टेप रिकार्डर व फिल्म द्वारा अभिलेख तैयार करना सर्वोत्तम है।

साक्षात्कार विधि की उपयोगिता – यद्यपि साक्षात्कार एक आत्मनिष्ठ प्रक्रिया है, तो भी एक योग्य प्रशिक्षित एवं कुशल साक्षात्कारकर्ता उसे अनुसंधान की अत्यंत उपयोगी विधि के रूप में बदल सकता है। अनुसंधान की कई स्थितियों में साक्षात्कार द्वारा विषिष्ट एवं महत्वपूर्ण शोध–सामग्री का संग्रह किया जा सकता है। साक्षात्कार द्वारा प्राप्त सूचनाएँ अधिक विश्वसनीय एवं शुद्ध होती हैं। इसमें समक्षी की पृष्ठभूमि का पता चल जाता है।

साक्षात्कार द्वारा प्रश्नों को तत्काल संवार्ता के माध्यम से नया मोड़ दिया जा सकता है। पूर्व निर्धारित जानकारी के अलावा और भी कई अन्य प्रकार की जानकारी प्राप्त हो जाती है, जो दिए गए प्रत्युत्तरों को समझने, उन्हें सार्थक बनाने व उनकी व्याख्या करने में सहायक है। भाषा, प्रश्नों के स्वरूप, परिस्थिति की जटिलता, समक्षी की कठिनाइयाँ आदि के दृष्टिकोण से तत्काल हेर–फेर एवं परिवर्तन किया जाना संभव होता है। यह अनपढ़ व्यक्तियों के लिए उपयोगी साधन है।

साक्षात्कार विधि की सीमाएँ – यह विधि, समय शक्ति एवं धन के दृष्टिकोण से व्यवहारिक नहीं है। साक्षात्कार हेतु कुशल एवं प्रशिक्षित साक्षात्कारकर्ताओं की आवश्यकता होती है। कई बार साक्षात्कारकर्ता अपनी मनोवैज्ञानिक दुर्बलताओं से मुक्त नहीं हो पाता। साक्षात्कारकर्ता के रंग–रूप व्यक्तित्व भाषा आदि का प्रभाव समक्षी पर पड़ता है और परिणामों की विश्वसनीयता का स्तर गिर जाता है तथा इसके द्वारा प्राप्त परिणामों की विश्वसनीयता व वैद्यता का निर्धारण नहीं किया जा सकता है।

साक्षात्कार को अधिक उपयोगी बनाने हेतु यह आवष्यक है कि सम्पूर्ण साक्षात्कार एक पूर्व निर्धारित आकल्प पर आधारित हो। एक प्रशिक्षित साक्षात्कारकर्ता ही अपने समक्षी को सहज, आश्वस्त व निर्भय रखते हुए सफलतापूर्वक इस कार्य को सम्पन्न कर सकता है। उन्नत तकनीकि जैसे टेप रिकार्डर जैसे साधनों का उपयोग कर अभिलेखन को और उपयोगी बनाया जा सकता है। एक कुशल साक्षात्कारकर्ता को अपनी अभिनीतियों एवं धारणाओं से सामग्री को प्रभावित नहीं होने देना चाहिए। उसे अन्त तक तटस्थ एवं वस्तुनिष्ठ बने रहने का प्रयास करना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Asthana, Bipin, Research Methodology 2010, Agrawal Publication, Agra.
2. Kothari C.R., Research Methodology 2004 New Age International.
3. Upagade, Viju- Research Methodology 2010 S. chand.
4. Gupta K. Shashi – Research Methodology – 2014 Kalyani Publishers.
5. Cauvery R – Research Methodology – 2013 – S. chand.

****

A study on anxiety behavior among the Basketball Players and non Basketball Players

Dr. Ramneek Jain *

Abstract - The review was done to evaluate the critical distinction of Anxiety conduct among the Basketball Players and non Basketball Players. The Ex-post-actuality inquire about technique was embraced. To accomplish the reason 300 Basketball and non Basketball were chosen haphazardly as subject, the age running from 18 to 25 year. The poll nervousness test was controlled. The information relating to variable in this review has been inspected by utilizing "t" test. The "t" esteem is 0.12 is lesser than table esteem. The conclusion is drawn that there is no huge contrast in nervousness conduct of among the Basketball Players and non Basketball Players as it is not acclimated. It may be because of their living condition and neediness made them to deal with their feeling.
Key Words - Anxiety, "t" test, SD, Mean, Basketball Players, Non-Basketball Players.

Introduction - The weight experienced by players particularly at an expert level is perceived as impacting playing execution. Substantial playing plans, rivalry for group puts, the media and fans and also the weight to win trophies all have an influence in players growing high anxiety and uneasiness levels. Indeed, even experienced players can experience the ill effects of pre-match tension. Creating approaches to control this is essential so as to keep players from "falling" separated. Also, tension level will be chosen by individual way of life and social condition.

Anxiety - Anxiety (Uneasiness) is a physiological reaction to a genuine or emarginated risk. It is a complex passionate state described by a general dread or premonition typically joined by strain. It is identified with fear and tear and is often connected with disappointment, either genuine or expected. It frequently needs to do with between individual relations and social circumstances. Sentiment dismissal and uncertainty are typically a piece of tension. As indicated by Frost (1971), tension is "an uneasiness and sentiment premonition regularly joined by a powerful urge to exceed expectations". Subsequently, uneasiness state emerges from flawed adjustments to the anxiety and strains of life and is caused by over activities trying to meet these troubles. Different parts of the self-idea have been related with be general test tension. In an investigation of the connection between a confidence and test uneasiness in evaluations 4 through 8, numerous and numerous 11 (1975) discovered factually noteworthy negative relationships between's simply the measures regard and each of the measures of general and content – tension, when scores were broke down by aggregate gathering, review level, and sex.

Bowing (1957). The relationships of nervousness with both extroversion and neuroticism were observed to be critical. Be that as it may, the course of connections if there should be an occurrence of extroversion was negative and in the event of neuroticism positive.

Rokeach and Fruchter, (1959) reasoned that fanaticism as identified with uneasiness. These underlying discoveries prompted Rokeach's dispute that obstinacy "is nothing than an aggregate system of psychoanatical safeguard components ".Although some conflicting outcomes have been acquired, the general pattern appears to sonfirm Roktach's discoveries by demonstrating a positive connection amongst opinion and tension

Mukherjee (1969), has uncovered that those with high scored on the show Anxiety scale tend to rate themselves bring down on determination and higher on flawlessness measurements than those scoring low.

A multivariate investigation that the high gathering communicated a general substandard mental self portrait than the low gathering.

Despite the fact that some prior reviews had revealed no noteworthy contrast as far as uneasiness level between gatherings of realized and non-completed subjects,

Chand and Grau (1977) have examined the relationship of saw self and perfect self appraisals with high and low levels of nervousness in school ladies. Subjects with a high level of nervousness were found to have an altogether more prominent error between their apparent self and perfect idea than subjects who had low levels of uneasiness.

A separate investigation of self-appraisals of understudies having differential show nervousness,

Witkins et al (1977) found an affirmation of a speculation converse connection between levels of self-realization and uneasiness. These last laborers talked about their outcomes in connection to the applied refinement amongst weakening

* **Assistant Professor (Physical Education) Shri J.J.T. University, Jhunjhunu (Rajasthan) INDIA**

and encouraging nervousness and their separate impact on mental growth.On the premise of their reviews, Rokeach and his partners

Extraversion and neuroticism dimensions of personality as measured by I be Maudsley personality stock, were related with scores on the Manifest uneasiness scale,

The present examiner (1985) in one of his reviews reasoned that (i) the focused nervousness diminishes " with the expansion in age on account of the male competitors yet it increments on account of female athletes,(ii) on account of male and female competitors, the aggressive uneasiness in the Indian competitors has no association with their experience of investment in rivalry, (ii) the Indian competitors have direct level of aggressive tension when contrasted with the specimen standards demonstrating the transformed U-shape the connection amongst execution and nervousness. In another review, he (1986) found that there were no noteworthy contrasts in the tension wellsprings of competitors, regardless of whether guys or females on the premise of four unique classifications of competitors i.e. sprinters, center and long separation runners, hurlers and jumpers. Additionally there were no huge contrasts in the tension scores of hockey players whether guys or females on the premise of their playing position i.e. advances, focus and backs.

Methodology

Statement of problem : The purpose of the study is to assess the sports competitive anxiety among the Basketball Players & non-Basketball Players of University level of Dr. Bhim Rao Ambedkar University, Agra.

Variables: Independent:- Basketball and Non-Basketball of University players.

Dependent Variable - Anxiety behavior.

Limitations :

1. The study is constrained to the measuring the level of nervousness among the Basketball Players and non-Basketball.
2. The study is constrained to the Basketball Players and non-Basketball Players from Dr. B. R. Ambedkar University, Agra (U.P.)
3. The Study is constrained the age gathering of male Players (Students) 18 to 25 years as it were.

Delimitation - The present review tries to investigate test the level and degree of tension, among the Basketball and non-Basketball Players .

Results And Discussion - With the end goal of the present review two examples were drawn from the Basketball Players and non-Basketball Players of Dr. B. R. Ambedkar University, Agra at irregular. The aggregate specimen comprised of 300 understudies of equivalent training capability. The Basketball Players test comprised to 150 U.G. and P.G. understudies who have taken an interest and spoken to in various athletic meet at various levels and non-Basketball test comprised of 150, U.G. and P.G. understudies partaken in any games exercises. The two specimens were chosen from various P.G. Bureau of Dr. B. R. Ambedkar University, Agra.

Table – 1 : Shows the sample design and sample compositions of Basketball Players and non-Basketball Players

Students	Basketball Players	Non-Basketball Players
Arts	50	50
Science	50	50
Commerce	50	50
Total	**150**	**150**

The subjects were divided into groups to facilitate the administration of competitive anxiety scale and locus of control scale. Each group consisted of 150 U.G. & P.G. Students. The entire sample consisted of female students were excluded from the study in order to eliminate the influence of such factors as would result from lack of sex homogeneity.

Test Administration

Tools

Anxiety - The Sinha's Comprehensive nervousness scale was regulated to two examples of U.G. and P.G. The Sinha's Comprehensive nervousness scale was regulated to two examples of U.G. and P.G. understudies, who were having a place with Basketball Players and non-Basketball Players gathering. The competitors test comprised of 50 P.G. understudies who were studying in one or other Under Graduate and Post Graduate. Course and has taken an interest in Basketball exercises at various levels of rivalry. The non-Basketball players test comprised of those understudies who were examining in various U.G. and P.G. Courses and who did not partake in various levels of various games exercises.

At first example, the Sinha's complete nervousness scale and separate answer sheets were issued to every understudy in the gathering. They were made a request to experience the direction given in the front page . At that point for the entire gathering the directions were perused out noisily and technique making in the appropriate response sheet was exhibited on the chalkboard. Above all else, the subjects were made a request to sheet was likewise disclosed to the gathering. The subjects were educated to be free in working their reactions. The SCAT were regulated in a decent and tolerant climate and it was kept up all through the organization to all gatherings concerning as could reasonably be expected.

They were additionally educated that the test is neither a trial of their insight nor of their capability. While there was noting the question supervision was done to know whether they were taking after

Directions in noting SCAT, or not, individual information sheet was additionally checked to know whether they have filled on all the data that was given on the individual information sheet

Scoring - Inventory was scored accurately by the help of the manual in the present study. After completing the scoring of all 300 answers and sheets for both anxiety of both

Basketball Players and non-Basketball Players, they were statistically analyzed to answer the problems that were set for the investigation.

Statistical Analysis - To know the significant difference of anxiety behavior among o the Basketball Players and non-Basketball Players, mean, variance, standard deviation and 't' were calculated. The results are discussed here.

Table – 2 : Table Showing the mean, SD and acquired 't' value of anxiety behavior of Basketball Players and non-Basketball Players

S.	Variables	Mean	SD	't' Value
1	Non- Basketball Players	42.3	2.52	0.12
2	Basketball Players	41.3	2.60	

The mean scores and standard deviation on non-competitors and competitors were 42.3, 2.52 and 41.3, 2.60 separately which demonstrate that there is very little or little deviation in the uneasiness level of Basketball Players and non-Basketball Players. Both non-Basketball Players and Basketball Players demonstrated practically same level in tension practices. At the point when these scores were subjected to "t" test, the obtained "t" esteem was 0.012 which was lower than "t" table an incentive at 0.05 levels thus. It uncovers that there is no distinction in uneasiness conduct of Basketball Players and non-Basketball Players. Thus planned theory was rejected. This might be because of the way that the respondents comprised to Basketball and non-Basketball are originating from provincial zones they are presented to different exercises and confronted part of issue to seeking after their degree and training and dedicated nature made them to support stretch and oversee uneasiness conduct adequately when they presented to circumstance.

Conclusion - The Study done by scientist uncovers that nervousness conduct will showed by situational figure however Basketball Players and non-Basketball Players decided for this review were originating from the rustic and neediness foundation, these variable made them to develop the practical capacity and overseeing abilities among the Basketball Players and non-Basketball Players of the Dr. B. R. Ambedkar University, Agra

References :-

1. Bryant J.Cratty (1989) Psychology in Contemporary Sports.
2. Connell, K.(1977) The influence of competition on anxiety levels of women's inter-collegiate basketball players. Paper presented at the research section of annual meeting of the American Alliance for Health, Physical Education and Recreation, Seattle, March.
3. Cooper, L(1969) Athletic, activity and personality; A review of the literature. Research quarterly, 40;17-82, March
4. Cosentino, F. and heilbrum, A.B. (1964) Anxiety correlates of sex-role identify in college students, psychological reports, 14:729-730.
5. Cratty, B.J. (1973) Psychology in cotemporary sport, Ch.XI Anxiety, N.J. Prentice-Hall Inc.

****

खेल मनोविज्ञान एवं खेल नीतिशास्त्र

संजय कुमार *

प्रस्तावना – मनोविज्ञान (Psychology) शब्द की उत्पत्ति यूनानी शब्दों से हुई है (Phyche Am¡a Loges) पहले शब्द का अर्थ है आत्मा (Soul) तथा दूसरे शब्द का अर्थ है अध्ययन करना। इस प्रकार मनोविज्ञान को प्राचीन समय में साधारण भाषा में आत्मा का विज्ञान (Science of Soul) कहते थे। जितना पुराना दर्शन शास्त्र माना जाता है, उतना ही पुराना यह आत्मा का विज्ञान भी माना जाता है। प्राचीन दार्षनिक प्रकृति के अध्ययन के साथ–साथ मानव स्वभाव के अध्ययन को भी शिक्षा का एक विषय मानते थे। इसलिए दर्शन के साथ–साथ उन्हें आत्मा के विज्ञान का अध्ययन भी करना पड़ता था। लगभग 16वीं शताब्दी तक इसे इसी नाम से पुकारा जाता था।

1590 में रुडोल्फ गोएकल (Rudolf Geockel) ने मन के अध्ययन के लिए पहली बार मनोविज्ञान शब्द प्रयोग किया। 18वीं शताब्दी के मध्य मे जर्मन वैज्ञानिक मूलर और हैल्म्होज (Muller and Helmtottz) ने स्थापित किया कि शारीरिक प्रक्रिया पर आधारित मानसिक क्रिया–कलापो का वैज्ञानिक तौर पर अध्ययन किया जा सकता है। 1875 ई0 में विल्हेल्म वुंड (Wilhelm wandt) ने सम्भवत: दुनिया की पहली मनोवैज्ञानिक प्रयोगशाला के रुप मे परिभाषित किया और 1879 में उन्होंने मनोविज्ञान की पहली पत्रिका प्रकाशित की। जॉन वॉटसन ने मनोविज्ञान को व्यवहार का विज्ञान के रुप में परिभाषित किया। एन. आउट लाईन ऑफ साइकोलॉजी नामक पुस्तक के रचनाकार विलियम मैक्डूगल है। मैक्डूगल ने बताया कि मनोविज्ञान एक विज्ञान है। जिसका उद्देश्य हमें जीव के व्यवहार को सम्पूर्णता से समझने और नियंत्रण करने से है। 1990 की शुरुआत मे सिग्मंड फायड (Sigmund Freud) ने अपनी मनोविश्लेषणवादी सोच के द्वारा मनोविज्ञान को नई दिशा दी और कहा कि व्यक्ति के प्रत्यक्ष व्यवहार को अभिप्रेरणा की अवचेतन तरंग के बिना नहीं समझा जा सकता। मनोविश्लेषण इस सिद्धांत पर आधारित था कि व्यहार का निर्धारण शक्तिशाली अन्त: शक्तियों जिनमें से अधिकतर अवचेतन मन मे दबी रह जाती है से होता है।

खेल मनोविज्ञान प्रयोगात्मक मनोविज्ञान की एक शाखा है। आधुनिक युग में खेलों और शारीरिक शिक्षा का महत्व इतना बढ़ गया है कि सामान्य शिक्षा का केवल एक अंग ही नहीं रहे बल्कि इनका अपना विशिष्ट अस्तित्व एवं क्षेत्र बन गया है। कुछ समय पहले तक खेलें और शारीरिक शिक्षा सामान्य शिक्षा का एक साधारण अंग समझे जाते थे। इसलिए इनसे संबंधित समस्याओं को परीक्षा मनोविज्ञान की सहायता से समझने और सुलझाने का प्रयास किया जाता था। परन्तु आज कल शारीरिक शिक्षा और खेलों मे आपार परिवर्तन आ चुका है। आजकल खेलों और शारीरिक शिक्षा की समस्याओं को खेल मनोविज्ञान की सहायता से सुलझाया जाने लगा है। जैसे–जैसे शारीरिक शिक्षा का महत्व बढ़ता गया वैसे–वैसे इससे सम्बन्धित समस्याएं भी बढ़ती गयी। खिलाड़ियों और एथलीट के प्रशिक्षण व अभ्यास से लेकर प्रतियोगिता के लिए मैदान में उतरने तक कई प्रकार की समस्याएं सामने आती है। जिन्हें खेल मनोविज्ञान की सहायता से सुलझाया जाता है। केवल इतना ही नहीं बल्कि खेल के दौरान तथा खेल के पश्चात जीत–हार की स्थिति का सामना करने के लिए उन्हें विभिन्न प्रकार की मानसिक स्थितियों मे से होकर गुजरना पड़ता है। जो उनके व्यवहार पर प्रभाव डालती है। इन सभी मानसिक स्थितियों और व्यवहार संबंधी समस्याओं का विश्लेषण और अध्ययन के लिए खेल मनोविज्ञान ने इस आवश्यकता को पूरा किया।

खेल मनोविज्ञान का विकास (Development of Sports Psychology) – कोल मैन ग्रिफिथ (Coleman Griffith) करे खेल मनोविज्ञान का पिता कहा जाता है। उन्होंने पहली खेल मनोविज्ञान प्रयोगशाला संगठित और निर्देशित की जिसमें सीखने, साइको–मोटर दक्षता और व्यक्तित्व अस्थिरता पर विशेष ध्यान दिया गया था। तब से लेकर अब तक खेल मनोविज्ञान निरंतर जारी है। 1920 और 1930 के दशक के दौरान खेल मनोविज्ञान को पूर्वी यूरोप में एक वैज्ञानिक क्षेत्र का दर्जा दिया गया। अन्तर्राष्ट्रीय खेल मानेविज्ञान सोसाइटी की स्थापना 1960 के दशक के आरंभ में हुई। यह इस क्षेत्र का सबसे पुराना संगठन है, खेल मनोविज्ञान कांग्रेस बुलाई गई। 1980 के दशक में खेल मनोविज्ञान बहुत लोकप्रिय हो गया और कई देशों मे राष्ट्रीय सोसायटियों की स्थापना की गई। खेल मनोवैज्ञानिक डानी लैडर्स (Dani Landers) ने खेल मनोविज्ञान में हुई प्रगति को तीन पड़ावो मे विभाजित किया है (1) पहला पड़ाव (1950–65) में शोध पर जोर दिया गया कि खिलाड़ी के व्यक्तिगत खेल प्रदर्शन से क्या संबंध है (2) दूसरे पड़ाव (1966–76) में मनोविज्ञान के उस समय प्रचलित सिद्धांतो को ग्रहण करने और उनका खेल व्यवस्था में परीक्षण करने पर जोर दिया गया। (3) तीसरा पड़ाव (1976 से अब तक) खेलों से सीधे ली गई सूचनाओं और सिद्धांतो पर केन्द्रित है और खेल प्रदर्शन में उत्कृष्टता लाने के लिए मनोवैज्ञानिक दक्षता और रणनीति को विकसित करने से संबंधित है।

खेल मनोविज्ञान की परिभाषा :–

1. जॉन लोथर (John Lauther) के अनुसार खेल मनोविज्ञान वह क्षेत्र है, जो मनोवैज्ञानिक तथ्यों, सीखने के सिद्धांतों, प्रदर्शन तथा खेलकूद मे मानवीय व्यवहार के संबंधो में लागू होता है।
2. के.एम. बर्न्स (K.M. Burns) के अनुसार खेल मनोविज्ञान शारीरिक शिक्षा की वह शाखा है, जिसका संबंध व्यक्ति की शारीरिक सुयोग्यता

* क्रीड़ाधिकारी (अ.वि.) नवीन शासकीय महाविद्यायल, चंदिया, जिला उमरिया (म.प्र.) भारत

से होता है जो कि खेलकूद मे भाग लेने से आती है

3. सिंगर (Singer) के अनुसार – खेल मनोविज्ञान, एथलैटिक्स में व्यक्ति के व्यवहार की खोजबीन करता है।
4. ब्राउनी एवं माहोनी (Browne and Mahoney) के अनुसार – खेल मनोविज्ञान सभी स्तरों पर खेलों और शारीरिक क्रियाकलापों के मनोवैज्ञानिक सिंद्धांतो का विनियोग है।

क्रैटी के अनुसार, खेल मनोविज्ञान के मुख्य तीन उपवर्ग है :

1. **अनुभवात्मक खेल मनोविज्ञान (Expriment sports psychology) –** इससे मनोवैज्ञानिक उतार–चढ़ाव के बारे में शोध किया जाता है जो खिलाड़ी और उसके प्रदर्शन को प्रभावित करते है, वह भी मैदान के माध्यम से अनुभवात्मक अध्ययन से।
2. **शैक्षिक खेल मनोविज्ञान (Educational sports psychology) –** इस व्यापक उपवर्ग का मुख्य उद्देश्य प्रुक्षिकों, खिलाड़ियो व अन्य को शिक्षित करना है, जो खेलों से जुड़े है, विशेषत: खेल पर्यावरण खेल प्रदर्शन और खिलाड़ियों व टीमों के अर्न्तवैयक्तिक प्रभाव के बारे में।
3. **विलनिकल खेल मनोविज्ञान (Clincal sports Psychology) -** यह खिलाड़ी के प्रदर्शन में सुधार के किए मनोवैज्ञानिक हस्तक्षेप उपयोग में लाती है और खिलाड़ी को मनोवैज्ञानिक रुप से समस्याओं से बचाकर उसके प्रदर्शन को बेहतर भी बनाती है।
4. **विकासात्मक खेल मनोविज्ञान (Developmental sports Psychology) -** यह उन मनोवैज्ञानिक अस्थिरताओं से संबंध रखता है, जो विभिन्न आयु वर्गो के बच्चों और युवाओं पर विभिन्न प्रतियोगताओं में अपना असर छोड़ती है।

खेल नीतिशास्त्र – खेल नीति शास्त्र का संबंध खेल के क्षेत्र में नैतिकता से है। इसका अर्थ है कि खेलकूद में नैतिक आचरण करना यदि खिलाड़ी नैतिक मूल्य रखते हो तो उनके लिए ये नैतिक मूल्य केवल खेल के मैदान तक ही उपयोगी नहीं होते बल्कि मैदान के बाहर समाज मे भी उपयोगी होते है। खेल मनोविज्ञान और खेल नीतिशास्त्र का आपस में घनिष्ठ संबंध होता है। समान्यत: खेल कूद अनेक व्यक्तियों के जीवन मे एक महत्वपूर्ण स्थान रखते है। वे काफी लम्बी अवधि तक खेलों मे भाग लेते रहते है। खेलों मे भागीदारी के करण ऐसे अनेक खेल भावना संबंधी गुणो को सीखता है लेकिन इसका अर्थ यह कदापि नहीं है। खेलकूद में भाग लेने से निश्चित रुप से नैतिकता एवं खेल भावना का विकास हो जाए इसके विपरीत, खेल ऐसे अवसर भी प्रदान करता है। जब खिलाडी मे खेल भावना के विपरीत अवगुण आने शुरु हो जाते है तो हम खेल मनोविज्ञान के द्वारा उसके व्यवहार का अध्ययन कर खिलाड़ी के अन्दर खेल नीति शास्त्र स्वछन्द आचरण के लिए प्रेरित कर सकते है। खेलकूद भी जीवन में अन्य क्रियाओं से भिन्न है, उनमें भी ऐसे काफी ऐसे अवसर आते है, जो व्यक्ति के व्यवहार को अच्छा या बुरा बना देते है। यह इस बात पर निर्भर करता है कि लक्ष्य क्या है ? प्रशिक्षण कार्यक्रम की दार्शनिकता कैसी है, कोच का व्यवहार कैसा है, और माता–पिता कैसे है ? लेकिन उचित निर्देशन के द्वारा, खिलाड़ी आवश्यक गुणों को विकसित कर सकते है। उदाहरण के लिए– नेतृत्व, अनुशासन, दृढ़निश्चय, कठिन परिश्रम, सही नियमों का पालन करते हुए खेलना अवति छल–कपट से खेलना, सहानभूति, सहयोग, आपसी सम्मान व आदर की भावना धैर्य का, ईमानदारी भावनाओं के उपर नियतंत्रण आदि।

खिलाड़ियो मे खेल नैतिकता को विकसित करने के उपाय :–

1. **अच्छी क्रियाओं को प्रोत्साहन –** खेल के पहले, खेल के दौरान व खेल के बाद खिलाड़ियों की अच्छी व रचानात्मक क्रियाओं के लिए प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। यदि कोई खिलाड़ी अच्छा व्यंग या अच्छे व्यवहार का प्रदर्शन करता है, तो उस खिलाडी को उसी समय प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। यह कार्य कोच भली भांत कर सकता है, कोच द्वारा इस प्रकार का दिया गया प्रोत्साहन अन्य खिलाड़ियों पर भी अच्छा प्रभाव डालता है। इस प्रकार से वे एक दूसरे से अच्छा व्यवहार करने लगेंगे। उनसे सहयोग की भावना उचित निर्णय लेने की कुशलता, ईमानदारी व नियमों की प्रवृत्ति आदि का विकास भी अच्छा होगा।
2. **सही और गलत के बारे मे विचार विमर्ष –** खिलाड़ियों के कोच या शारीरिक शिक्षा के अध्यापक को खिलाड़ियों से ठीक या गलत क्रियाओं के बारे में विचार–विमर्श करना चाहिए। इस प्रकार का विचार–विमर्श खेल के तुरंत बाद किया जा सकता है। किन्तु यह कहना आसान नहीं है कि क्या ठीक है और क्या गलत है ? एक क्रिया एक खिलाड़ी के लिए ठीक हो सकती है, जबकि दूसरे खिलाड़ी के लिए वही गलत हो सकती है। प्राय: अच्छा या बुरा व्यक्ति की सोच पर निर्भर करता है। ऐसा कहा भी गया है कि, कुछ भी बुरा नहीं होता, केवल सोच ही अच्छा या बुरा बनाती है। केवल तब ही एक कोच ठीक और गलत क्रियाओं का सही निर्णय ले सकता है, जब स्वयं उसकी सोच ही उचित हो। केवल इस प्रकार की अवस्था में स्वस्थ विचार विमर्श हो सकता है। इस प्रकार का विचार–विमर्श सोच ही खेल की नैतिकता और खेल के गुणों को खिलाड़ियों में विकसित करने मे मदद कर सकता है।
3. **नकारात्मक क्रियाओं के लिए दण्ड –** खेलों में नैतिकता को बढ़ावा देने के लिए खेल के दौरान नकारात्मक क्रियाओं के लिए दण्ड दिया जा सके। दण्ड का तरीका उचित होना तथा उसी समय दिया जाना चाहिए जब नकारात्मक क्रिया करता है। यदि कोई खिलाड़ी खेल के दौरान या खेल के तुरंत बाद में विरोधी खिलाड़ियों दर्शकों या खेल अधिकारी के साथ किसी तरह का दुर्वव्यवहार करता है तो हर कीमत पर हतोत्साहित किया जाना चाहिए।
4. **उपहार और प्रशंसा –** खिलाड़ी जब एक अच्छी खेल नैतिकता का प्रदर्शन करता है तो, उसको इनाम दिया जाना चाहिए या कम से कम उसकी प्रशंसा अवश्य की जानी चाहिए। प्राय: हमारी प्रवृत्ति ऐसी होती है कि हम केवल खिलाड़ी के बुरे व्यवहार का ही ध्यान रखते है और इसके विपरीत अच्छे व्यवहार को एक सामान्य बात समझते है। अच्छे व्यवहार या अच्छे खेल भावना की हम प्रशंसा भी नहीं करना चाहते है। अत: खिलाड़ी की अच्छी खेल भावना व नैतिक मूल्यों को भी हमें प्रशंसा अवश्य करनी चाहिए ताकि खेल भावना व खेल नैतिकता को विकसित किया जा सके।
5. **सकारात्मक उदाहरणों का प्रयोग –** यदि एक कोच प्रशिक्षण के दौरान खिलाड़ियों के साथ खेलता तो उसे कुछ सकारात्मक उदाहरणों को खिलाड़ियों के सामने प्रस्तुत करना चाहिए। खिलाड़ी भी कोच के नकारात्मक व सकारात्मक व्यवहार का बारीकी से निरीक्षण करते है। यदि वह जीतने के उद्देश्य से नियमों का उलंघन करता है तो खिलाड़ी भी इसी प्रकार की क्रिया को उचित समझ लेगें, जबकि यह कदम अनैतिक खेल होगा। इसीलिए कोच का व्यवहार भी सब दृष्टि से ठीक होना चाहिए। उसे खिलाड़ियों के सामने कोई नकारात्मक क्रिया नही करनी चाहिए नहीं तो कोच नकारात्मक क्रिया का खिलाड़ियों के उपर नकारात्मक प्रभाव ही होगा।

खेल नैतिक मूल्यों का खिलाड़ियों मे विकास प्राय: इस बात पर भी निर्भर करता है कि नेतृत्व किस प्रकार का है, कुछ कोच जीतने हेतु छल–

कपट व नियमों के उल्लघन को प्राथमिकता देते है, तो दूसरे कोच छल कपट को तो प्रोत्साहन नहीं देते लेकिन वे बहरे–अंधे होने का नाटक कर देते है जैसे कि उन्होंने न कुछ देखा है और न कुछ सुना है। इससे खिलाड़ी घटिया खेल नैतिकता को ही स्वीकार करने लगते है। यदि कोच Fairley और ईमानदारी पर बल देते है, तो खिलाड़ी नैतिक मूल्यों को विकसित करने का एक अच्छा माध्यम है, लेकिन इसका अर्थ यह कदापि नहीं कि केवल खेलकूद में भाग लेने से खिलाड़ी मे इन गुणों की वृद्धि हो जाती है। वास्तव मे खिलाड़ियों में इन गुणों का विकास करने के लिए लगातार प्रयास करने पड़ते है।

निष्कर्ष – आज खेलों में व्यापक रुप से व्यवसायिकरण का बोल–बाला है। ऐसी स्थिति में खिलाडी किसी भी कीमत पर बस विजय प्राप्त करना चाहता है। भले ही उसे खेल के नियमों का उल्लंघन करना पड़े या फिर मैच को फिक्स करना पड़े। खिलाड़ियों का केवल एक उद्देश्य है, धन और यश प्राप्त करना इसके बदले में भले विरोधी खिलाड़ी को नुकसान पहुँचाना या वर्जित दवाओं का उपयोग तक करते है। ऐसी स्थिति में ओलम्पिक खेलों के जन्म दाता डी. कुर्विटीन का कथन खेल के खेल भावना से खेल, खेल में मुख्य विजय प्राप्त करना नहीं बल्कि संघर्ष करना है। ऐसी स्थिति में हमें मनोविज्ञान के द्वारा खिलाड़ी मे खेल भावना एवं नैतिकता का महत्व के बारे में बताकर खिलाड़ियों को खेल को खेल भावना एवं खेल नैतिकता से खेल में भाग लेने के लिए जागरुक कर सकते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. श्रीवास्तव, अजय कुमार – यू.जी.सी. दानिका पब्लिकेशन कम्पनी दिल्ली 2012
2. सिद्धान्त संदीप सिंह : शारीरिक शिक्षा, सिद्धांत पब्लिकेशन लखनऊ 2012
3 पाण्डेय, डा. अशोक कुमार : शारीरिक शिक्षा, उपकार पब्लिकेशन आगरा

****

Intellectual Property Rights and We in India

Sudhish Kumar *

Introduction - Definition – "Intellectual property (IP) is a term referring to creations of the intellect for which a monopoly is assigned to designated owners bylaw.Some common types of intellectual property rights (IPR) are copyright, patents, and industrial design rights; and the rights that protect trademarks, trade dress, and in some jurisdictions trade secrets: all these cover music, literature, and other artistic works; discoveries and inventions; and words, phrases, symbols, and designs."

History of Patent & Copyright Laws – The Statute of Monopolies (1624) and the British Statute of Anne (1710) are seen as the origins of patent law and copyright respectively, firmly establishing the concept of intellectual property.

The first known use of the term 'intellectual property' dates to 1769, when a piece published in the Monthly Review used the phrase.The first clear example of modern usage goes back as early as 1808, when it was used as a heading title in a collection of essays. The German equivalent was used with the founding of the North German Confederation whose constitution granted legislative power over the protection of intellectual property (*Schutz des geistigenEigentums*) to the confederation. When the administrative secretariats established by the Paris Convention (1883) and the Berne Convention (1886) merged in 1893, they located in Berne, and also adopted the term intellectual property in their new combined title, the United International Bureaux for the Protection of Intellectual Property.

Basic Difference between Indian & Western Intellectual Laws – Western Intellectual Laws recognize and give 'Product' based Patents whereas Indian Intellectual Laws also give 'Process' based Patents.

Types of Intellectual Property Rights - There are broadly speaking following seven types of Intellectual property Rights :-

(a). Patents (b).Copyrights (c). Industrial Design Rights (d). Plant Varieties (e).Trademarks (f). Trade dress(g).Trade secrets

(a) Patents - A patent is a form of right granted by the government to an inventor, giving the owner the right to exclude others from making, using, selling, offering to sell, and importing an invention for a limited period of time, in exchange for the public disclosure of the invention. An invention is a solution to a specific technological problem, which may be a product or a process and generally has to fulfil three main requirements: it has to be new, not obvious and there needs to be an industrial applicability.

(b) Copyright - A copyright gives the creator of an original work exclusive rights to it, usually for a limited time. Copyright may apply to a wide range of creative, intellectual, or artistic forms, or "works". Copyright does not cover ideas and information themselves, only the form or manner in which they are expressed.

(c) IndustrialDesign Rights - An industrial design right (sometimes called "design right") protects the visual design of objects that are not purely utilitarian. An industrial design consists of the creation of a shape, configuration or composition of pattern or color, or combination of pattern and color in three-dimensional form containing aesthetic value. An industrial design can be a two- or three-dimensional pattern used to produce a product, industrial commodity or handicraft.

(d) Plant Varieties - Plant breeders' rights or plant variety rights are the rights to commercially use a new variety of a plant. The variety must amongst others be novel and distinct and for registration the evaluation of propagating material of the variety is examined.

(e) Trade marks - A trademark is a recognizable sign, design or expression which distinguishes products or services of a particular trader from the similar products or services of other traders.

(f) Trade Dress - Trade dress is a legal term of art that generally refers to characteristics of the visual appearance of a product or its packaging (or even the design of a building) that signify the source of the product to consumers.

(h) Trade Secret - A trade secret is a formula , practice, process, design, instrument, pattern,commercial method, or compilation of information not generally known or reasonably ascertainable by others by which a business can obtain an economic advantage over competitors or customers. In some jurisdictions, such secrets are referred to as "confidential information" but are generally not referred to as "classified information" in the United States, since that refers to government secrets protected by a different set of laws and practices.

* Assistant Professor (Maths.) Govt. Degree College, Khurai, Distt. Sagar (M.P.) INDIA

Objectives of Intellectual Property Laws - Broadly speaking there are following three Objectives :

(a). Financial Incentive (b). Economic Growth (c).Morality

(a) Financial Incentive - These exclusive rights allow owners of intellectual property to benefit from the property they have created, providing a financial incentive for the creation of an investment in intellectual property, and, in case of patents, pay associated research and development costs.Some commentators, such as David Levine and Michele Boldrin, dispute this justification. In 2013 the United States Patent & Trademark Office approximated that the worth of intellectual property to the U.S. economy is more than US$5 trillion and creates employment for an estimated 18 million American people. The value of intellectual property is considered similarly high in other developed nations, such as those in the European Union. In the UK, IP has become a recognised asset class for use in pension-led funding and other types of business finance. However, in 2013, the UK Intellectual Property Office stated: "There are millions of intangible business assets whose value is either not being leveraged at all, or only being leveraged inadvertently".

(b) Economic Growth - The WIPO treaty and several related international agreements underline that the protection of intellectual property rights is essential to maintaining economic growth. The *WIPO Intellectual Property Handbook* gives two following reasons for **intellectual property laws -** One is to give statutory expression to the moral and economic rights of creators in their creations and the rights of the public in access to those creations. The Second is to promote, as a deliberate act of Government policy, creativity and the dissemination and application of its results and to encourage fair trading which would contribute to economic and social development. Economists have also shown that IP can be a disincentive to innovation when that innovation is drastic. IP makes excludable non-rival intellectual products that were previously non-excludable. This creates economic inefficiency as long as the monopoly is held. A disincentive to direct resources toward innovation can occur when monopoly profits are less than the overall welfare improvement to society. This situation can be seen as a market failure, and an issue of appropriability.The Anti-Counterfeiting Trade Agreement (ACTA) states that "effective enforcement of intellectual property rights is critical to sustaining economic growth across all industries and globally". Economists estimate that two-thirds of the value of large businesses in the United States can be traced to intangible assets."IP-intensive industries" are estimated to generate 72 percent more value added (price minus material cost) per employee than "non-IP-intensive industries".

A joint research project of the WIPO and the United Nations University measuring the impact of IP systems on six Asian countries found "a positive correlation between the strengthening of the IP system and subsequent economic growth."

(c) Morality - According to Article 27 of the Universal Declaration of Human Rights, "everyone has the right to the protection of the moral and material interests resulting from any scientific, literary or artistic production of which he is the author".Although the relationship between intellectual property and human rights is a complex one, there are moral arguments for intellectual property. The arguments that justify intellectual property fall into three major categories-

(a) 'Personality theorists' believe intellectual property is an extension of an individual.
(b) 'Utilitarians' believe that intellectual property stimulates social progress and pushes people to further innovation.
(c) 'Lockeans' argue that intellectual property is justified based on deservedness and hard work.

Infringement, Misappropriation and Enforcement - These are followings :

(a) Patent Infringement
(b) Copyright Infringement
(c) Trademark Infringement
(d) Trade Secret Misappropriation

(a) Patent Infringement - Patent infringement typically is caused by using or selling a patented invention without permission from the patent holder. The scope of the patented invention or the extent of protection is defined in the claims of the granted patent. There is safe harbor in many jurisdictions to use a patented invention for research. This safe harbor does not exist in the United Statesunless the research is done for purely philosophical purposes, or in order to gather data in order to prepare an application for regulatory approval of a drug. In general, patent infringement cases are handled under civil law (e.g., in the United States) but several jurisdictions incorporate infringement in criminal law also (for example, Argentina, China, France, Japan, Russia, South Korea).

(b) Copyright Infringement - Copyright infringement is reproducing, distributing, displaying or performing a work, or to make derivative works, without permission from the copyright holder, which is typically a publisher or other business representing or assigned by the work's creator. It is often called "piracy". While copyright is created the instance a work is fixed, generally the copyright holder can only get money damages if the owner registers the copyright. Enforcement of copyright is generally the responsibility of the copyright holder.

The ACTA trade agreement, signed in May 2011 by the United States, Japan, Switzerland, and the EU, and which has not entered into force, requires that its parties add criminal penalties, including incarceration and fines, for copyright and trademark infringement, and obligated the parties to active police for infringement.

There are limitations and exceptions to copyright, allowing limited use of copyrighted works, which does not constitute infringement. Examples of such doctrines are

the fair use and fair dealing doctrine.

(c) Trademark Infringement - Trademark infringement occurs when one party uses a trademark that is identical or confusingly similar to a trademark owned by another party, in relation to products or services which are identical or similar to the products or services of the other party. In many countries, a trademark receives protection without registration, but registering a trademark provides legal advantages for enforcement. Infringement can be addressed by civil litigation and, in several jurisdictions, under criminal law.

(d) Trade Secret Misappropriation - Trade secret misappropriation is different from violations of other intellectual property laws, since by definition trade secrets are secret, while patents and registered copyrights and trademarks are publicly available. In the United States, trade secrets are protected under state law, and states have nearly universally adopted the Uniform Trade Secrets Act. The United States also has federal law in the form of the Economic Espionage Act of 1996 (18 U.S.C. §§ 1831–1839), which makes the theft or misappropriation of a trade secret a federal crime. This law contains two provisions criminalizing two sorts of activity. The first, 18 U.S.C. § 1831(a), criminalizes the theft of trade secrets to benefit foreign powers. The second 18 U.S.C. § 1832, criminalizes their theft for commercial or economic purposes. (The statutory penalties are different for the two offenses.) InCommonwealth common law jurisdictions, confidentiality and trade secrets are regarded as an equitable right rather than a property right but penalties for theft are roughly the same as the United States.

Criticism :

1. The term "Intellectual Property" - The Alternative Terms
2. Objections to Overbroad Intellectual Property Laws
3. Expansion in Nature & Scope of Intellectual Property Laws

(a) The Term Intellectual Property - Criticism of the term *intellectual property* ranges from discussing its vagueness and abstract overreach to direct contention to the semantic validity of using words like *property* and *rights* in fashions that contradict practice and law. Many detractors think this term specially serves the doctrinal agenda of parties opposing reform in the public interest or otherwise abusing related legislations; and that it disallows intelligent discussion about specific and often unrelated aspects of copyright, patents, trademarks, etc.

(b) The Alternative Terms - In civil law jurisdictions, intellectual property has often been referred to as intellectual rights, traditionally a somewhat broader concept that has included moral rights and other personal protections that cannot be bought or sold. Use of the term *intellectual rights* has declined since the early 1980s, as use of the term *intellectual property* has increased.

(c) Objections to Overbroad Intellectual Property Laws - Some critics of intellectual property, such as those in the free culture movement, point at intellectual monopolies as harming health (in the case of pharmaceutical patents), preventing progress, and benefiting concentrated interests to the detriment of the masses,and argue that the public interest is harmed by ever-expansive monopolies in the form of copyright extensions, software patents, andbusiness method patents. More recently scientists and engineers are expressing concern that patent thickets are undermining technological development even in high-tech fields like nanotechnology.

Benefits for India :-

1. Production of Generic Medicines in Pharmaceuticals Arena
2. Genetically Modified Crops in Agricultural Arena.

Conclusions - There is need to balance Intellectual Property Rights of the 'Creator' on the one hand and Rights of Consumers. For example Consumers need cheap and reliable medicines made by trusted Pharmaceuticals firms. In this regard role of Govt. agencies is important.

Reference :-

1. Open ended material basically in shape of primary data freely available like Wikipedia on Internet and other similar books.

****